डॉ. बाबासाहब आंबेडकर
ओपन युनिवर्सिटी

SECM-04
हिन्दी

खंड

1

हिन्दी शिक्षण : सैद्धान्तिक पक्ष

इकाई–1

भाषा की प्रकृति एवं प्रकार्य

इकाई–2

भाषा अधिगम प्रक्रिय तथा शिक्षण

इकाई–3

विद्यालयीय स्तर पर भाषा

इकाई–4

हिन्दी शिक्षण की व्यवस्था एवं सामग्री

लेखक	
डॉ. रवीन्द्र अंधारिया	श्री गुलाबराय संघवी शिक्षण महाविद्यालय, भावनगर
परामर्शक और पुनः परामर्शक (विषय)	
डॉ. सोनल पटेल	गूजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद.
डॉ. आर. एन. ठाकुर (निवृत्त)	आर. बी. सागर कॉलेज ऑफ एज्युकेशन, अहमदाबाद.
परामर्शक (भाषा)	
डॉ. जयश्री गुर्जर	डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद.
संपादन और संयोजन	
प्रो. (डॉ.) अजीतसिंह राणा	निर्देशक (शिक्षणशास्त्र) प्रोफेसर, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद.
संयोजन सहाय	
डॉ. मीना आई. राजपूत	डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद.

प्रकाशक : कुलसचिव, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद-382481

आवृत्ति : प्रथम आवृत्ति - 2020, **नकल :** 600

द्वितीय आवृत्ति - 2021, **नकल :** 600

ISBN :

Copyright © Registrar, Dr. Babasaheb Ambedkar Open University, Ahmedabad.
December 2020

While all efforts have been made by editors to check accuracy of the content, the representation of facts, principles, descriptions and methods are that of the respective module writers. Views expressed in the publication are that of the authors, and do not necessarily reflect the views of Dr. Babasaheb Ambedkar Open University. All products and services mentioned are owned by their respective copyrights holders, and mere presentation in the publication does not mean endorsement by Dr. Babasaheb Ambedkar Open University. Every effort has been made to acknowledge and attribute all sources of information used in preparation of this Self Learning Material. Readers are requested to kindly notify missing attribution, if any.

ES-115 : हिन्दी शिक्षण प्रविधि

खंड-1 हिन्दी शिक्षण : सैद्धान्तिक पक्ष

इकाई-1 भाषा की प्रकृति एवं प्रकार्य

इकाई-2 भाषा अधिगम प्रक्रिया

इकाई-3 विद्यालयीय स्तर पर भाषा

इकाई-4 हिन्दी शिक्षण की व्यवस्था एवं सामग्री

खंड-2 भाषिक योग्यताओं का विकास

इकाई-1 हिन्दी के भाषिक तत्त्व-1

इकाई-2 हिन्दी के भाषिक तत्त्व-2

इकाई-3 श्रवण एवं मौखिक अभिव्यक्ति के कौशल का विकास

इकाई-4 पठन योग्यता

इकाई-5 लिखित अभिव्यक्ति कौशल का विकास

खंड-3 साहित्यिक विद्याओं का शिक्षण एवं व्याकरण शिक्षण

इकाई-1 कविता-शिक्षण

इकाई-2 निबन्ध शिक्षण

इकाई-3 गद्य की अन्य विद्याओं का शिक्षण

इकाई-4 व्याकरण-शिक्षण

खंड-4 मूल्यांकन, क्रियात्मक शोध तथा समुन्नयन कार्य

इकाई-1 भाषा संप्राप्ति मूल्याकंन

इकाई-2 निदानात्मक एवं उपचारात्मक कार्य

इकाई-3 क्रियात्मक शोध

इकाई-4 समुन्नयन कार्य

इकाई 1

भाषा की प्रकृति एवं प्रकार्य

: रूपरेखा :

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 भाषा क्या है ?

1.3.1 भाषा की परिभाषा

1.4 भाषा की प्रकृति

1.4.1 भाषा ध्वनियों का समूह

1.4.2 भाषा एक व्यवस्था है

1.4.3 भाषा प्रतीकों की व्यवस्था

1.4.4 भाषा सामाजिक सम्पदा

1.4.5 भाषा निरन्तर परिवर्तनशील

1.4.6 कठिनता से सरलता की ओर जाना

1.5 भाषा के प्रकार

1.5.1 परिनिष्ठित भाषा

1.5.2 विभाषा

1.6 हिन्दी भाषा का स्वरुप

1.6.1 राष्ट्रभाषा

1.6.2 राजभाषा

1.6.3 प्रयोजनमूलक हिन्दी

1.7 भारत की भाषानीति

1.8 भाषा के तत्त्व

स्वन – रूप – वाक्य

1.9 भाषा के प्रकार्य

1.9.1 अभिव्यक्ति

1.9.2 सन्देशवहन

1.10 सारांश

1.11 बोध प्रश्न के उत्तर

1.1 प्रस्तावना

इस इकाई में भाषा की परिभाषा, प्रकृति और प्रकार्यों के विषय में जानकारी प्राप्त करेंगे। भाषा के प्रकारों में खास कर हिन्दी राष्ट्रभाषा, राजभाषा तथा प्रयोजनमूलक हिन्दी के विषय में विशेष प्रस्तुति होगी।

हम हिन्दी भाषा शिक्षक बनने जा रहे हैं। शिक्षा प्राप्ति का भाषा सर्वाधिक सशक्त माध्यम है। इसी कारण भाषा शिक्षण अन्य विषयों के शिक्षण की अपेक्षा कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है। भाषा ही व्यक्तित्त्व विकास का माध्यम है, इससे स्वस्थ अभिरुचियाँ और अभिवृत्तियाँ जन्म लेती है तथा पनपती है। हमारे बौद्धिक व सांस्कृतिक विकास भाषा पर निर्भर करता है। अत: जीवन में भाषा का महत्त्व को देखते हुए भाषा शिक्षण अधिगम (अध्ययन) प्रक्रिया को अधिक से अधिक प्रभावी बनाने की आवश्यकता है।

इन मुद्दों को मद्देनज़र रख यहाँ भाषा क्या है, भाषा की प्रकृति क्या है, भाषा का स्वरूप, भाषा के प्रकार्य, हिन्दी भाषा के विविध प्रकारों का परिचय दिया गया है। यहाँ संकेतात्मक प्रस्तुति होगी। विशेष वाचन के लिए आप सन्दर्भ ग्रंथों का प्रयोग कर सकते हैं।

1.2 उद्देश्य

- भाषा, प्रकृति तथा प्रकार्यों के विषय में अपने विचार अभिव्यक्त कर सकेंगे।
- हिन्दी भाषा के स्वरूपों को स्पष्ट कर सकेंगे।
- जीवन में भाषा का महत्त्व स्पष्ट कर सकेंगे।

1.3 भाषा क्या है ?

भाषा भावाभिव्यक्ति का माध्यम है, इसी कारण भाषा का अर्थ व्यापक होता है। जिन जिन से भावाभिव्यक्ति हो सकती है (आँख से, सिर एवं हाथ के संचालन से, आदि) वे तमाम भाषा के अन्तर्गत आते है। पशु-पक्षियों की बाली भी भाषा के अन्तर्गत रखी जाती है।

भाषा शब्द संस्कृत के भाष धातु से निष्पन्न हुआ है जिसका अर्थ है व्यक्त वाणी। व्यक्त वाणी का अर्थ है स्पष्ट और पूर्ण अभिव्यंजना और वह उच्चारित या वाचिक भाषा। इसी कारण 'भाषा' मनुष्य का वाचिक भाषा के लिए संगत प्रतीत होता है, भाव-बोधन के अन्य माध्यमों के लिए नहीं। मैक्समूलर ने ठीक ही लिखा है कि "भाषा यदि प्रकृति की देन है तो निस्सन्देह यह प्रकृति की अन्तिम और श्रेष्ठ रचना है जिसे प्रकृतिने केवल मनुष्य के लिए ही सुरक्षित रखा था।" वस्तुत: भाषा एक मानवीय कलाकृति है, भाषा के कारण ही मनुष्य मनुष्य है।

विज्ञानियों के अनुसार मनुष्य की शारीरिक और मानसिक रचना इस प्रकार की है वह विभिन्न प्रकार की ध्वनियाँ उत्पन्न करने में समर्थ है। उसकी वागिन्द्रयाँ अन्य प्राणियों की वागिन्द्रियों से भिन्न हैं। इसी कारण बाह्य वातावरण और परिस्थितियों की उत्तेजना से विभिन्न वस्तुओं के लिए प्रतीकात्मक शब्दों को उत्पन्न कर सकता है। इसी प्रकार धीरे धीरे भाषा की उत्पत्ति और विकास होता चला गया। भाषा ज्ञानप्राप्ति का आधार होने के कारण वह शिक्षा के समस्त क्रियाकलापों का आधार हैं।

1.3.1 भाषा की परिभाषा

प्राचीन काल में महर्षि पतंजलिने लिखा था, 'व्यक्ता वाचि वर्णा येषां त इमे व्यक्त वाच:' अर्थात् जो वाणी वर्णों में व्यक्त होती है, उसे भाषा कहते हैं। कालान्तर में पाश्चात्य एवं भारतीय भाषा-विज्ञानियों ने भाषा के इस 'व्यक्त वाच' को विस्तार से विश्लेषित किया है।

बोल्क तथा ट्रेगर : A Language is a system of arbitrary vocal symbols by means of which a society group cÅo-operates.

अर्थात् भाषा यादृच्छिक ध्वनि प्रतीकों की वह व्यवस्था है, जिससे एक सामाजिक समूह परस्पर सहयोग करता है।

चोम्स्की : I will consider a language to be a set of sentences each finite in length and constructed of finite set of elements.

चोम्स्की ने वाक्य को भाषा कहा है, ध्वनि प्रतीकों को नहीं। यद्यपि ध्वनि प्रतीकों के सार्थक समुच्चय को ही वाक्य कहा जाता है। लेकिन केवल मात्र ध्वनि किसी भा प्रकार के अर्थ का वाहक नहीं हो सकती। किन्तु जब ध्वनि प्रतीक शब्द रुप में तथा शब्दरुप वाक्य रुप में सुनियोजित होते है तब अर्थ सम्प्रेषित करने में समर्थ होते हैं। चोम्स्की ने इसी कारण वाक्य को भाषा का आधार माना है।

डॉ. भोलानाथ तिवारी :

भाषा उच्चारण अवयवों से उच्चरित, यादृच्छिक ध्वनि प्रतीकों की वह व्यवस्था है, जिसके द्वारा समाज-विशेष के लोग आपस में विचारों का आदान-प्रदान करतें हैं।

डॉ. देवेन्द्रनाथ शर्मा :

भाषा यादृच्छिक, रूढ उच्चरित ध्वनि संकेतों की वह प्रणाली है जिसके माध्यम से मनुष्य परस्पर विचार विनिमय, सहयोग तथा भावाभिव्यक्ति करते हैं।

इन परिभाषाओं के अध्ययन से ज्ञात होता है कि भाषा के सन्दर्भ में कोई अभिप्राय सम्पूर्ण नहीं है। ध्वनि प्रतीकों से वाक्य तक की बातें होती हैं। इन पर से भाषा विषयक कुछ बिन्दू अवश्य उभरे हैं, जो इस प्रकार है **:**

(1) भाषा उच्चारण अवयवों से निसृत ध्वनियाँ का समूह है। (2) भाषा में प्रयुक्त ध्वनि समूह सार्थक होते है। (3) ध्वनि समूह के अर्थ यादृच्छिक होते है। (4) भाषा में प्रयुक्त ध्वनि प्रतीकों के समूह में एक व्यवस्था होती है। (5) जो समाज इस व्यवस्था को समझता है वहाँ ही उस भाषा का प्रयोग हो सकता है (6) भाषा मनुष्य के विचार विनिमय का माध्यम है। (7) उच्चरित ध्वनियाँ विश्लेषणीय होती है।

इतनी चर्चा के पश्चात् भाषा के सम्बन्ध में इतना कहा जा सकता है कि भाषा उच्चारण अवयवों से निसृत विश्लेषण योग्य, सार्थक, यादृच्छिक ध्वनि प्रतीकों की वह व्यवस्था है, जिसके माध्यम से समाज के विशेष वर्ग के लोग परस्पर विचार विनिमय करते हैं।

बोध प्रश्न :

1. भाषा को प्रकृति की श्रेष्ठ रचना क्यों कहा गया है ?

....

....

....

....

....

....

2. आप की दृष्टि में भाषा क्या है ?

....

....

....

....

....

....

1.4 भाषा की प्रकृति

भाषा शिक्षण करने से पूर्व भाषा की प्रकृति को समझना आवश्यक है। कई विद्वान प्रकृति को विशेषता भी कहते हैं। किन्तु विशेषता की नींव प्रकृति पर निर्भर करती है। अतएव यहाँ हम भाषा की प्रकृति शब्द प्रयोग ही करेंगे।

1.4.1 भाषा ध्वनियों का समूह

जैसा कि आगे उल्लेख हो चुका है कि भाषा शब्द भाष् धातु से बना है। भाष् का अर्थ होता है बोलना। फलत**:** भाषा का अर्थ होता है जो बोली जाती है। वह वस्तुत**:** भाषा ध्वनि अवयवों से निसृत ध्वनिसमूह है। मनुष्य (भाषक) अपने भावों, विचारों और अनुभूतियों को भलीभाँति प्रकट करने के लिए ध्वनि प्रतीकों और भाषिक प्रतीकों का प्रयोग करता है।

1.4.2 भाषा एक व्यवस्था है

निः सन्देह भाषा ध्वनियों का समूह है किन्तु ये ध्वनियाँ यह नियमानुसार संगठित नहीं होती है तब तक ध्वनिसमूह भाषा नहीं कहलाता प्रत्येक भाषा की एक निश्चित व्यवस्था होती है, व्याकरण होता है। उस व्यवस्था के अनुसार ध्वनियों का संघटन होता है तब वह भाषा कहलाती है। उदाहरण के तौर पर ....

1. मनहर पुस्तक पढ़ता है। – हिन्दी भाषा की व्यवस्था
2. Manhar reads a book - अंग्रेजी भाषा की व्यवस्था

दोनों भाषाओं की व्यवस्था में अन्तर है। जब तक व्यवस्था का निर्वाह नहीं होता तब तक ध्वनि समूह किसी भी अर्थ का बोधन नहीं कराता।

1.4.3 भाषा प्रतीकों की व्यवस्था

भाषा में वाक्य शब्दों से बनता है। लेकिन यह शब्द क्या है ? शब्द ध्वनिसमूह है। ध्वनिसमूह से एक शब्द प्रतीक का निर्माण होता है। उदाहरण के तौर पर – 'पानी लाओ'। पानी एक प्रकार का ध्वनि समूह है। इसके उच्चारण से हिन्दी भाषी के मस्तिष्क में पानी नामक द्रव का चित्र (बिम्ब) उपस्थित होता है। इस से स्पष्ट है कि भाषा एक व्यवस्था है और इसके अन्तर्गत ध्वनि, शब्द और वाक्यरचना सम्बन्धी उपव्यवस्थाएँ हैं। अतएव किसी भी भाषा की व्यवस्था को समझने के लिए इन तीनों को समझना आवश्यक है।

1.4.4 भाषा सामाजिक सम्पदा है।

भाषा जन्मदत्त सम्पदा नहीं है वह अर्जित सम्पदा है। अर्थात् भाषा वरदान नहीं, वरन प्रयत्नपूर्वक सीखी जा सकती है। लेकिन समाज के सम्पर्क से ही भाषा अर्जित की जा सकती है। वास्तविकता यही है कि भाषा का जन्म ही समाज में होता है, उसका विकास भी समाज में ही होता है तथा उसका प्रयोग भी समाज में होता है। इस दृष्टि से भाषा सामाजिक सम्पदा है।

1.4.5 भाषा निरन्तर परिवर्तनशील है।

भाषा वस्तुतः भाषा के मौखिकी रुप के लिए प्रयुक्त होता है। लिखित रुप तो उसके पीछे पीछे चलता है। व्यक्ति भाषा का मौखिकी रूप अनुकरण से सीखता है। लेकिन अनुकरण सदैव अपूर्ण रहता है। इसी कारण भाषा निरन्तर परिवर्तनशील होती है।

1.4.6 कठिनता से सरलता की ओर अग्रसर होती है।

सत्य यही है कि मनुष्य कम से कम श्रम में अधिकाधिक कार्य करना चाहता है। मनुष्य की यहीं अभिवृत्ति (एटीट्युड) भाषा के प्रयोग के लिए भी उत्तरदायी है। उदाहरणार्थ, 'रेफ्रीजिरेटर' को केवल 'फ्रिज' कहकर काम लिया जाता है। मुखसुख की वज़ह से भाषा कठिन से सरल होती गई है। कंटक के बदले काँटा हो गया।

1.5 भाषा के प्रकार

भाषा व्यक्त और अव्यक्त दोनों प्रकार की होती है। फिर भी उच्चरित भाषा ही महत्त्वपूर्ण होती है। इस से विचार विनिमय होता है, उससे सन्दशों का आदान-प्रदान हो सकता है। इन सब के बावजूद भाषा वैयक्तिक भी है। इसका जन्म व्यक्ति के मन मस्तिष्क में होता है। किन्तु जब व्यक्ति उसका उच्चारण करता है तब भाषा सामाजिक वस्तु हो जाती है। तब वह व्यवहार में आने लगती है। अतः उसका एक स्वरुप दृढ हो जाता है। व्यावहारिक दृष्टि से भाषा के दो प्रकार हैं। (1) परिनिष्ठित भाषा (2) विभाषा। अब हम दोनों प्रकारों को समझेंगे।

1.5.1 परिनिष्ठित भाषा

भाषा का आदर्श रूप वह है जिसमें वह एक बहतर समुदाय के विचार विनिमय का माध्यम बनती है, अर्थात् उसका प्रयोग शिक्षा, शासन और साहित्य रचना के लिए होता है। हिन्दी, अंग्रेजी, रूसी, फ्रान्सीसी इसी श्रेणी की भाषाएँ हैं, भाषा के इस रुप को मानक आदर्श या परिनिष्ठित कहते हैं। अंग्रेजी में 'स्टैन्डर्ड' शब्द प्रयुक्त होता है। परिनिष्ठित भाषा विस्तृत क्षेत्र में प्रयुक्त और व्याकरण से नियंत्रित होती है।

1.5.2 विभाषा (बोली)

एक परिनिषष्ठत भाषा के अन्तर्गत अनेक विभाषाएँ या बोलियाँ हुआ करती है। भाषा के स्थानीय भेद से प्रयोग भेद में जो अन्तर पड़ता है उसी के आधार पर विभाषा का निर्माण होता है। जैसा हमने देखा है, प्रत्येक व्यक्ति की भाषा दूसरे व्यक्ति की भाषा से भिन्न होती है। ऐसी स्थिति में यह असम्भव है कि बहुत दूरतक भाषा की एकरुपता कायम रखी जा सके। स्वभावत: एक भाषा में भी कुछ दूरी पर भेद दिखाई देने लगता है। यह स्थानीय भेद, जो मुख्यत: भौगोलिक कारणों से प्रेरित होता है, विभाषा के जन्मदाता होते हैं।

उदाहरणार्थ –

जाता हूँ। – खड़ीबोली

जात हीं। – ब्रजभाषा

जात हुई। – भोजपुरी

जाही। – मगही

इन चारों उदाहरणों से विभाषा का स्वरुप स्पष्ट हो जाता है।

इनके अतिरिक्त अपभाषा, विशिष्ट भाषा, कुटभाषा, कृत्रिम भाषा, मिश्रित भाषा जैसे अनेक गौण प्रकार होते हैं।

चूँ कि हम हिन्दी भाषा शिक्षा के लिए अध्यापक होने जा रहे हैं इसी हेतु हमें हिन्दी भाषा के विभिन्न रुपों का भी परिचय कर लेना चाहिए।

1.6 हिन्दी भाषा का स्वरुप

हिन्दी अध्यापक को हिन्दी के तीन रुपों से अवगत होना चाहिए - (1) राष्ट्रभाषा हिन्दी (2) राजभाषा हिन्दी (3) प्रयोजनमूलक हिन्दी

अब यहाँ तीनों रुपों का परिचय प्रस्तुत किया गया है।

1.6.1 राष्ट्रभाषा हिन्दी

भारत द्वारिका से पूरी, कन्याकुमारी से काश्मिर तक फैला एक बहु भाषिक तथा बहु सांस्कृति समाजवाला देश है। यहाँ हमची बोम्बे का नारा भी लगता है तो ये ही लोग भारतमाता की जय जयकार भी करते हैं। यहाँ अल्लाहो अकबर के नारों के सामने हर हर महादेव के नारों की भी टक्कर होती है। वहाँ सारे जहाँ से अच्छा हिन्दूस्ताँ हमारा के समूह गान भी गाये जाते है। इस देश को एक सूत्र से बाँधे रखना बहुत ही दुष्कर कार्य है। ऐसी स्थिति में राष्ट्रीय एकता का दायित्व भाषा पर आ जाता है। भाषा ही जनमानस की अभिव्यक्ति का उपकरण है, हिन्दी भाषा इसके लिए उपयुक्त मानी गयी है। वह सम्पर्क भाषा के रूप में भी उपयुक्त समझी गई है क्यों के ....

हिन्दी भारत की गंगा है।

वह जन को जन से जोडेगी

वह अवरोधों को तोडेगी

संस्कृति संगम की प्रतीक

गीर्वाण-सुता यह गंगा है ..... हिन्दी भारत की

आज हिन्दी ने अपने पंख पसारे है। अब वह क्षेत्रीय, प्रान्तीय या राष्ट्रीय भाषा नहीं रही, किन्तु अब वह विश्वभाषा हो चुकी है।

1.6.2 राजभाषा

जिस भाषा का प्रयोग केन्द्रीय सरकार अपने कार्य, व्यापार व अन्य प्रान्तों के साथ सरकार कामकाज व पत्रव्यवहार हेतु करती हे, उसे राजभाषा कहते है। यह भाषा देश के बहु संख्यकों की भाषा होती है तथा देश के सभी प्रान्तों के लोग इसे सामान्य रुप से समझते हैं। संविधान के अनुसार भारतीय संघराज्य की राजभाषा हिन्दी एवं लिपि देवनागरी है। स्वतंत्रता के पश्चात् यह निश्चय किया गया था कि संविधान लागू

होने के 15 वर्ष तक अंग्रेजी भाषा का प्रयोग भी हिन्दी के साथ-साथ होता रहेगा किन्तु राजनीतिक कारणों से अंग्रेजी का प्रयोग आज भी हिन्दी के साथ धडल्ले से हो रहा है ।

1.6.3 प्रयोजनमूलक हिन्दी

प्रयोजनमूलक हिन्दी सामान्य हिन्दी एवं साहित्यिक हिन्दी से सर्वथा भिन्न है । प्रयोजन शब्द का अर्थ है - उद्देश्या जिस भाषा का प्रयोग किसी विशेष प्रयोजन के सिद्धि के लिए किया जाए, उसे प्रयोजनमूलक भाषा कहा जाता है । हिन्दी में यह शब्द Functional Language के रूप में प्रयुक्त किया जाता है, जिसका तात्पर्य है - जीवन की विविध विशिष्ट आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उपयोग में ली जानेवाली भाषा । इसका प्रमुख लक्ष्य जीविकायार्जन का साधन बनना होता है । आज यह प्रशासन, कार्यालय, बैंक, मीडिया, विधि, कृषि, वाणिज्य, तकनिकी विज्ञान, शैक्षिक आदि क्षेत्रों में भी प्रयुक्त हो रही है, अतएव आजकल इस भाषा की शिक्षा का महत्त्व बढ़ रहा है । जब तो पाठ्यक्रमों में भी इसका समावेश किया जाने लगा है ।

भाषा विज्ञानियों ने भाषा का वर्गीकरण इस प्रकार किया है ।

(1) भाषा$_1$: भाषिक की जो मातृभाषा होती है वह भाषा$_1$ कही जाती है । इसकी शिक्षा अनिवार्य होती है ।

(2) भाषा$_2$: भाषा$_2$ उस भाषा को कहा जाता है जो भाषा$_1$ की सगोत्रीय भाषा है । गुजरात में हिन्दी द्वितीय भाषा कही जाएगी । गुजराती व हिन्दी दोनों का उद्‌भव संस्कृत भाषा से हुआ है । अत: दोनों सगोत्रीय है । अध्येता को भाषा$_2$ की शिक्षा देनी चाहिए ।

(3) भाषा$_3$: भाषा$_3$ उस भाषा को कहा जाता है जो भाषा$_1$ की सगोत्रीय व होकर भी प्रयोग में लायी जाती है । गुजरात में अंग्रेजी का स्थान तृतीय भाषा के रूप में रहेगा क्यों कि अंग्रेजी का जन्म लेटिन भाषा से हुआ है । वह गुजराती भाषा की सगोत्रीय भाषा नहीं है ।

1.7 भारत की भाषा नीति

भारत बहुभाषा-भाषी राष्ट्र है । इसी लिए भारतवर्ष में एक ही प्रकार की भाषा नीति होना आवश्यक है । भारतीय संघ सरकार ने आजादी के पश्चात् एकाधिक शिक्षाआयोगों की नियुक्तियाँ की थी । सर्व प्रथम शिक्षा आयोग सन् 1948 में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग नियुक्त हुआ था । तब से लेकर 1986 में नयी शिक्षानीति का प्रस्ताव पारित हुआ तब तक के सभी शिक्षा आयोगों ने मातृभाषा शिक्षा के अतिरिक्त राष्ट्रभाषा हिन्दी तथा विदेशी भाषा के रुप में अंग्रेजी की शिक्षा के लिए सिफारिशें की भीं । इस से स्पष्ट होता है कि चाहे पाठशाला शिक्षण हो या महाविद्यालयी शिक्षण हो दोनों के पाठ्यक्रम में हिन्दी शिक्षा का स्थान अवश्य रहेगा ।

इस प्रकार भारत सरकार ने त्रिभाषा सूत्र में भाषा नीति स्वीकार की भी । त्रिभाषा सूत्र इस प्रकार है **:**

1. मातृभाषा अथवा प्रादेशिक भाषा की शिक्षा
2. संघ की राजभाषा (हिन्दी) अथवा संघ की सहायक राजभाषा अंग्रेजी
3. आधुनिक भारतीय भाषा अथवा विदेशी भाषा जो (1) और (2) के अन्तर्गत न आती हो ।

भारत की भाषा समस्या सुलझाने के लिए तथा राष्ट्र की अखंडितता बरकरार रखने लिए त्रिभाषा सूत्र श्रेष्ठ समाधान था ।

बोध प्रश्न :

3. भाषा केवल मात्र ध्वनियों का समूह क्यों नहीं है ?

....

....

....

....

....

....

4. भारत की भाषा नीति का परिचय दीजिए।

....

....

....

....

....

....

5. हिन्दी भाषा के विविध रुपों का परिचय दीजिए।

....

....

....

....

....

....

1.8 भाषा के तत्त्व

भाषा प्रतीकात्मक व्यवस्था है। यह व्यवस्था अनेक तत्त्वों के समुच्चय का परिणाम होती है। भाषा मात्र ध्वनियों का समूह नहीं है। किन्तु जब ध्वनियाँ व्याकरण सम्मत अथवा रुढि अनुसार व्यवस्थित नहीं होती है तब तक उनसे बोधन सम्भव नहीं होता है। अर्थात् व्यवस्था अनिवार्य है। व्यवस्था का अर्थ है भिन्न भिन्न उपादानों (तत्त्वों) को सुचारु रुप से आयोजित करना। तब प्रश्न यह होता है कि भाषा के ये तत्त्व कौन से है ? अध्यापक को इन तत्त्वों की पहचान होनी चाहिए तथा अध्यापन के समय इनको लक्ष्य में रखना चाहिए। भाषा के तत्त्व इस प्रकार है **:**

भाषा के तत्त्व

स्वन	**रूप**	**वाक्य**	**अर्थ**
(ध्वनि)	**(शब्द)**		

स्वन : स्वन का सरल अर्थ है भाषण ध्वनि। भाषा की नींव में स्वन है। भाषा के वाक्‌रूप में स्वन रहता है। भाषण अवयवो द्वारा उत्पन्न तथा निश्चित श्रवणगुणवाली ध्वनि भाषण ध्वनि कही जाती है। इस प्रकार वाक् ध्वनिको स्वन कहा जाता है। अ, क्, क्ष्, उ, इ आदि स्वन हैं।

रूप : रूप का सरल अर्थ है ऐसा स्वनिम समूह जिसमें अर्थ निहित हो। रूप या रुपिम का सरल अर्थ है शब्द। महर्षि पतंजलिने कहा है – शब्द कर्ण से उपलब्ध, बुद्धि से ग्राह तथा प्रयोग से स्फूरित होनेवाली आकाशव्यापी ध्वनि है। रुपिम के लिए भाषा विज्ञानी सपीर कहते हैं, 'किसी एक विचार के प्रतीकात्मक तथा भाषण रुप को शब्द कहते है। रुप का अर्थ है शब्द।'

वाक्य : सरल शब्दों में कहे तो पूर्ण अर्थ की प्रतीति करानेवाले शब्द समूह को वाक्य कहते हैं। आचार्य विश्वनाथने वाक्य से अर्थ की प्रतीति करानेवाले तीन गुणों को अनिवार्य माना है। ये गुण है योग्यता, आकांक्षा तथा आसक्ति। वाक्य में शब्दों का गूम्फन योग्य होना चाहिए। यदि वह योग्य होगा तो श्रोता के मन में आकांक्षा जगाएगा। आकांक्षा की परिपूर्ति के हेतु श्रोता प्रयुक्त शब्दों के लिए आसक्त होगा अर्थात् अर्थ निष्पन्न करने के लिए चेष्टा करेगा।

1.9 भाषा के प्रकार्य

प्रकृति ने केवल मनुष्य को ही भाषा का वरदान दिया है। अन्य पशु पक्षी अपनी बातें उतनी आसानी से व्यक्त नहीं कर सकते। प्रकृतिने मनुष्य को भाषा का वरदान देकर उसे अपनी बात, विचार, मनोभाव, संवेदनाएँ तथा बोध को पूरी तरह व्यक्त करने का सामर्थ्य प्रदान किया है। हम इनको भाषा के प्रकार्य कहेंगे।

1.9.1 अभिव्यक्ति

भाषा मनुष्य के संवेगों, भावों और विचारों की अभिव्यक्ति का प्रमुख साधन है। मनुष्य ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा परिवेश के साथ निरन्तर क्रिया प्रतिक्रिया करता रहेता है। इसके परिणाम स्वरुप उसके मन में संवेग, भाव एवं विचार स्फूरित होते रहते हैं तथा आवश्यकतानुसार व्यक्त होते रहते है । आत्माभिव्यक्ति की स्वाभाविक प्रवृत्ति ही मनुष्य को भाषा सीखने ले लिए प्रेरित करती है। नवजात शिशु आरम्भ में अपने मस्तिष्क में ध्वनियों को संग्रह करता है। इनके द्वारा वह नयी शब्दावली सीखता है और जोड़ता है। ये इकाइयाँ उच्चारण तथा अर्थ बोध सम्बन्ध होती हैं। ये मस्तिष्क के स्नायु कोषों में अंकित हो जाती हैं। उसके शारीरिक व मानसिक वृद्धि के साथ-साथ इन इकाइयों में भी निरन्तर वृद्धि होती चलती है। परिणामतः बालक को अपने संवेगों, भावों और विचारों को अभिव्यक्त करने की शक्ति प्राप्त होती है।

अच्छी या प्रभावी अभिव्यक्ति के लक्षण इस प्रकार है : स्पष्ट उच्चारण, आरोह-अवरोह के साथ मौखिकी अभिव्यक्ति, श्रोता सुनकर अर्थबोध कर सके ऐसी गति में बोलना, पूरे वाक्यों में बोलना, उचित बलाघात का प्रयोग करना आदि।

1.9.2 सन्देशवहन

भाषा का दूसरा प्रकार्य है संदेशों का वहन करना। अर्थात् सन्देश श्रोता तक पहुँचाना। दूसरे शब्दों में कहें तो सम्प्रेषण। भाषा यद्यपि ध्वनियों सा समूह है किन्तु वास्तव में भाषा सार्थक ध्वनियों का समूह है। इसी कारण भाषा को प्रत्यायन का माध्यम कहा जाता है। वक्ता जो भी अभिव्यक्ति करता है वह श्रोता तक पहुँचती है। श्रोता इसे ग्रहण करता है। वह जो ग्रहण करता है वह मात्र ध्वनियाँ नहीं होती हैं। उसके साथ साथ कोई न कोई सन्देश होता हो क्यों कि ये ध्वनियाँ सार्थक होती हैं। निरर्थक ध्वनियों की अभिव्यक्ति को हम प्रलाप कहेंगे। इस का कोई अर्थ नहीं होता। इस प्रकार भाषा का दूसरा प्रकार्य है सन्देशवहन। भाषा के इस प्रकार के प्रकार्य के कारण ही तो समाज बनता है, विकसित होता है। व्यक्तिगत एवं सामुदायिक गतिविधियों की नींव में है भाषा तथा भाषा के ये प्रकार्य।

बोध प्रश्न :

6. भाषा के तत्त्व उदाहरण के साथ स्पष्ट करें।

....
....
....
....
....
....

7. भाषा के प्रकार्यों को समझाइए।

....
....
....
....
....
....

1.10 सारांश

इस अध्याय में भाषा का परिचय दिया गया है, यकीनन् भाषा प्रकृति की ओर से मनुष्य को मिला श्रेष्ठ वरदान है। भाषा के कारण ही मनुष्य तथा समाज का विकास सम्भव हुआ है। भाषा ज्ञान प्राप्ति का आधार है इसी कारण शिक्षा के समस्त क्रियाकलापों में इसका अनिवार्य स्थान है, शिक्षा में भाषा शिक्षण महत्त्वपूर्ण अंग है।

भाषा सार्थक ध्वनियों का समूह मात्र नहीं है बल्कि एक व्यवस्था भी है। वह प्रतीकों की व्यवस्था है। साथ ही साथ वह सामाजिक सम्पदा है। इसी कारण वह निरन्तर परिवर्तनशील है।

भाषा के कई प्रकार होते है, जैसे कि परिनिष्ठित भाषा, विभाषा। भाषा के उपयोग अनुसार राष्ट्रभाषा, राजभाषा, प्रयोजनमूलक भाषा जैसे प्रकार होते हैं, भाषा विज्ञानी की दृष्टि से भाषा$_1$, भाषा$_2$ तथा भाषा$_3$ जैसे प्रकार किये जा सकते हैं।

भारत बहुभाषा-भाषी देश है। इसके फलस्वरुप भारत में राष्ट्रभाषा का प्रश्न सदैव ज्वलनशील रहा है। इस सन्दर्भ में भारत की भाषानीति जो त्रिभाषासूत्री नीति है इसकी भी चर्चा की गयी है। भारत का प्रत्येक बालक मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा सीखेगा, दूसरी भाषा के तौर पर हिन्दी या अंग्रेजी सीखेगा तथा कोई न कोई अर्वाचीन भारतीय भाषा सीखेगा।

भाषा के ये प्रकार्य अभिव्यक्ति तथा सन्देशवहन की भी चर्चा की गई है।

1.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. भाषा को प्रकृति की श्रेष्ठ रचना इसीलिए कहा गया है कि भाषा भावाभिव्यक्ति का साधन ही नहीं सम्प्रेषण-प्रत्यायन का माध्यम भी है। सामाजिक, व्यैक्तिक विकास की ऊर्जा है, भाषा न होती तो मनुष्य एवं दूसरी योनियों में कोई अन्तर नहीं रह जाता। इन कारणों से भाषा को प्रकृति की श्रेष्ठ रचना कही गयी है।

2. मेरी दृष्टि में भाषा उच्चारण अवयवों से निसृत विश्लेषण योग्य, सार्थक, यादृच्छिक ध्वनि प्रतीकों की वह व्यवस्था है, जिसके माध्यम से समाज के विशेष वर्ग के लोग परस्पर विचार विनिमय करते हैं। इस प्रकार भाषा सम्प्रेषण का साधन, सामाजिक प्रक्रिया का आधार, चिन्तन का माध्यम, साहित्य संस्कृति का आधार है।

3. भाषा केवल ध्वनियों का समूह नहीं है क्यों कि वह सम्प्रेषण का साधन है, सम्प्रेषण के लिए अनिवार्य तत्त्व है अर्थपूर्णता। ध्वनि में कोई अर्थ नहीं होता किन्तु ध्वनि समूह को अर्थपूर्ण बनाया जा सकता है। अतएव भाषा अर्थपूर्ण ध्वनि समूह है। अर्थवाले ध्वनि समूह प्रलाप है, कोलाहल है।

4. भारत एक बहु भाषा-भाषी देश है। यहाँ देश को जोड़नेवाली एक भाषा अनिवार्य है। तब भारत सरकार ने त्रिभाषा सूत्र भाषानीति का स्वीकार किया। इसका अर्थ है प्रत्येक शिक्षार्थी मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा सीखेगा। दूसरी राष्ट्रभाषा के रुप में हिन्दी शीखेगा अथवा संविधान में जब तक यह सुविधा है तब तक अंग्रेजी सीखेगा। तथा तीसरी भाषा के रुप में कोई आधुनिक भारतीय भाषा की शिक्षा प्राप्त करेगा अथवा विदेशी भाषा सीखेगा।

5. हिन्दी भाषा के प्रमुख तीन रुप है। (1) राष्ट्रभाषा (2) राजभाषा (3) प्रयोजनमूलक हिन्दी भाषा। चूँ कि भारत वर्ष में अधिकतम जनसंख्या हिन्दी का प्रयोग करती है इसलिए हिन्दी को सम्पर्क भाषा के रुप में प्रतिष्ठित करने के प्रयत्न हुए है। यह सम्पर्क भाषा ही राष्ट्रभाषा के रुप में मनोनित होती है। किन्तु कतिपय राजनीतिक कारणों से सरकारी कामकाज में हिन्दी का प्रयोग अनिवार्य कर उसे राजभाषा का दरज्जा दिया गया किन्तु विभिन्न व्यवसायो, वाणिज्य आदि में हिन्दी के प्रयोग के लिए प्रयोजनमूलक हिन्दी का रुप निर्मित हुआ।

6. बेशक भाषा प्रतीकात्मक व्यवस्था है। यह व्यवस्था अनेक तत्त्वों से बनी हुई है। भाषा के प्रमुख तत्त्व इस प्रकार है। स्वन (ध्वनि), रुप (शब्द), वाक्य तथा अर्थ। स्वन पर से स्वनिम, स्वनिमों के समूह से रुपिम तथा रुपिमों की योजनाबद्ध व्यवस्था वाक्य। वाक्य किसी न किसी अर्थ का बोधन कराता है।

7. भाषा के प्रमुख प्रकार्य दो है। (1) अभिव्यक्ति (2) बोधन-अर्थ समप्रेषण अभिव्यक्ति में मनोगत की अभिव्यक्ति। अच्छी अभिव्यक्ति के लक्षण इस प्रकार है : शुद्ध उच्चारण, अनुतानपूर्ण, आरोह अवरोह युक्त, अर्थबोधन के लिए सक्षम।

   अर्थ सम्प्रेषण को सन्देशवहन भी कहा जा सकता है। भाषा सन्देश को श्रोता तक पहुँचाती है।

इकाई 2

हिन्दी भाषा अधिगम प्रक्रिया तथा शिक्षण

: रूपरेखा :

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 भाषा अर्जन प्रक्रिया

2.3.1 बालक का भाषा से साक्षात्कार

2.3.2 बालक के विकास में भाषा की भूमिका

2.4 अधिगम (सीखना) प्रक्रिया

2.4.1 भाषा अधिगम प्रक्रिया

2.4.2 भाषा अधिगम की विशेषताएँ

2.4.3 भाषा अधिगम नियम एवं सिद्धांत

2.5 भाषा शिक्षण प्रक्रिया

2.5.1 भाषा अधिगम और भाषा शिक्षण

2.5.2 भाषा शिक्षण के सिद्धांत

2.5.3 शिक्षण सूत्र

2.1 प्रस्तावना

आप लोगों ने हिन्दी भाषा अध्यापक बनने का संकल्प किया है, धन्यवाद ! यह एक स्तुत्य संकल्प है। प्रथम अध्याय में हमने भाषा के विषय में चर्चा की है। अब यहाँ भाषा सीखने (अधिगम) तथा सिखाने (शिक्षण) के विषय में चर्चा करेंगे। वैसे हमारा निरीक्षण है कि बालक सुनकर तथा अनुकरण कर भाषा सीख लेता है। लेकिन भाषा के उच्चस्तरीय कौशलों की प्राप्ति हेतु इसका शिक्षण भी आवश्यक होता है। यहाँ हिन्दी द्वितीय भाषा के सन्दर्भ में चर्चा की जाएगी।

भाषा अर्जन की प्रक्रिया एक स्वाभाविक, सहज और अनौपचारिक प्रक्रिया है जो कक्षा में भाषा अधिगम से भिन्न है। इसका तात्पर्य है कि शिशु अपने परिवेश से श्रवण और अनुकर की प्रक्रिया द्वारा अपने आप भाषा सीखता है। वह पारिवारिक परिवेश में बोली जानेवाली भाषा की ध्वनियों को सुनकर ग्रहण करता है और उन्हें व्यक्त करने की कोशिश करता है। उत्तरोत्तर वह कुछ ध्वनियों, शब्द, एक शब्दीय वाक्य, और द्विशब्दीय वाक्यों से गुजरते हुए सरल, छोटा वाक्य बनाना सीख जाता है। स्वत: भाषा अर्जन की यह प्रक्रिया दो वर्ष की अवस्था तक चलती रहती है। आगे चलकर विधिवत औपचारिक भाषा शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के माध्यम से होने लगता है। भाषा अर्जन के ये दोनों ही पक्ष अपने आप में महत्त्वपूर्ण है।

इस इकाई में भाषा सीखने के इन दोनो पक्षों – स्वत: भाषा अर्जन और औपचारिक शिक्षण द्वारा भाषा अधिगम प्रक्रियाओं के संबंध में अध्ययन करेंगे।

2.2 उद्देश्य

- भाषा अर्जन प्रक्रिया का वर्णन कर सकेंगे।
- बालक के विकास में भाषा की भूमिका स्पष्ट कर सकेंगे।
- भाषा अधिगम प्रक्रिया को समझा सकेंगे।
- भाषा–शिक्षण प्रक्रिया का परिचय दे सकेंगे।
- भाषा शिक्षण के सिद्धांत व सूत्रों को अपने शिक्षण में प्रयोग कर सकेंगे।

2.3 भाषा अर्जन प्रक्रिया

बालक का भाषा सीखना एक सहज स्वाभाविक प्राकृतिक प्रक्रिया है। भाषा सीखने के लिए वह नाना प्रकार की प्रयुक्तियों का प्रयोग करता है। ये प्रयुक्तियाँ इस प्रकार है।

अनुकरण : बालक जो जो भी सुनता है उसका अनुकरण करने के लिए तत्पर रहता है। बालक प्रारम्भ से ही अनुकरणशील होता है। यह अनुकरण के तीन पक्ष है।

1. बालक जब नये व्याकरणिक रुप सुनता है, तो वह उनका अनायास अनुकरण करता है।
2. इन नये रुपों का सहज अभ्यास द्वारा वह अपने व्यवहार में शामिल कर लेता है।
3. वह सरल रुपों का पहले अनुकरण करता है, जटिल रुपों का बाद में अनुकरण करता है।

अभिव्यक्ति की व्यग्रता : नवीन भाषायी प्रयोगों को सीखते समय बालक सीखे हुए प्रयोगों को लगातार दोहराते रहते है। वस्तुत: इसके मूल में अपने आपको सहज अभिव्यक्त करने की व्यग्रता होती है। वह अर्जित भाषा प्रयोगो को अभिव्यक्त करने के लिए आतुर रहता है।

अभ्यास : भाषा अर्जन प्रक्रिया में अभ्यास की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। परिवार में माता–पिता तथा अन्य सदस्यों के बीच शिशु भाषाई प्रयोगों को सहज रुप से दोहराता रहता है। यह दोहराने का अभ्यास इतना सहज होता है कि अनुकरण और स्वतंत्र प्रयोग में अन्तर करना कठिन जो जाता है।

बारंबारता एवं संक्षिप्तता : भाषा अर्जन प्रक्रिया में भाषाई प्रयोगों की बारंबारता बालक के भाषाई विकास में उपयोगी सिद्ध होती है। बालक जिन रुपों को बारबार सुनता है उन्हें वह जल्दी सीख लेता है। साथ ही बारंबारता द्वारा सीखे हुए रुपों का व्यवहार में प्रयोग करने में उसका आत्मविश्वास बढ़ता है। फिर भी लम्ब, जटिल तथा अल्प प्रयोगवाले भाषाई रुपों के सीखने में उसे कुछ समय लगता है।

2.3.1 बालक का भाषा से साक्षात्कार

जन्म से ही बालक विभिन्न प्रकार की ध्वनियाँ सुनने लगता है। आरम्भ में वह इसका अर्थ नहीं समझ पाता। किन्तु शनैः शनैः वह अपने माता-पिता, भाई-बहन तथा अन्य व्यक्तियों के सम्पर्क में आने लगता है, उनके व्यवहारों को देखने लगता है, तब वह ध्वनियों का अर्थबोध करने लगता है। उतना ही नहीं वह ऐसे भी भाषिक रुपों का उपयोग भी करने लगता है।

यह सर्व स्वीकृत तथ्य है कि बालक में भाषा सुनकर समझने की कुशलता भाषा के प्रयोग से पहले से ही होती है। सामान्यतया 8-10 महीने की अवस्था वाले बालक में प्रतीकात्मक आंगिक संकेतों, अनुतान, शब्द और पदबंधो को समझने का प्रमाण मिलता है। बालक के भाषाई विकास का यह महत्त्वपूर्ण काल है। भाषा सम्बन्धी व्यक्तिगत भिन्नता के पीछे यही भाषाई अनुभव होते है।

बालक के भाषा के प्रथम साक्षात्कार में प्रथम भाषा में प्रयुक्त ध्वनियों का अंतर पहचानता है फिर उन्हें सीखता है। परन्तु इन पर उनका पूरा अधिकार 4-6 वर्ष की आयु तक ही अंतर पहचानना सीखता है। प्रथम वर्ष की समाप्ति तक उसमें सरल तथा संक्षिप्त निर्देशों को समझने की योग्यता विकसित हो जाती है। 2-3 वर्ष की आयु तक में वह अधिक मिलते-जुलते शब्दों को न्यूनतम ध्वनि-भिन्नता के आधार पर पहचानने लगता है। इतनी चर्चा के अन्त में निष्कर्ष रुप कहा जा सकता है कि बालक के भाषा अर्जन का एक निश्चित क्रम होता है। भाषा अर्जन में भाषा बोधन भी समाविष्ट है।

2.3.2 बालक के विकास में भाषा की भूमिका

शारीरिक और मानसिक दृष्टि से स्वस्थ शिशु जन्म के लगभग छह माह से ही धीरे धीरे अपनी मातृभाषा अर्जन करने लगता है। दो ढ़ाई वर्ष की आयु का शिशु अपने माँ-बाप, अपने घर-परिवार तथा आसपड़ोस के बाल मित्रों के सम्पर्क में आते हुए बड़ी तेजी से अपनी मातृभाषा का अर्जन करता है। इस प्रकार बच्चा अपने बचपन में बिना स्कूल गये तथा बिना किसी भी प्रकार की औपचारिक शिक्षा पाए अपने परिवार में पलते समय जो भाषा सहज रुप से सब से पहले सीखता है, उसे अपनी मातृभाषा कहते है।

मातृभाषा बालक को व्यापक सन्दर्भ से जोड़ती है। वह उसकी सामाजिक पहचान निर्धारित करती है। शिशु के रुप में बालक का प्रारम्भिक चिन्तन अपनी मातृभाषा के माध्यम से होता है। उसकी सारी अवधारणाओं (संकल्पनाओं) का निर्माण उसी भाषा के माध्यम से होता है।

बचपन में सीखी गई भाषा बालक के व्यक्तित्त्व के विकास का मूलाधार बनती है। आइए बालक के व्यक्तित्व के विकास के निम्नलिखित पक्षों पर विचार करें ....

(क) मानसिक विकास :

बचपन के आरम्भिक दिनों में विचार-विनिमय का आधार मातृभाषा ही है। बालक की समस्त मानसिक शक्तियों (कल्पना, ध्यान, स्मृति, चिन्तन, मनन) के विकास का माध्यम मातृभाषा ही है। भाषा के अभाव में बालक का मानसिक विकास असम्भव है।

(ख) संवेगात्मक विकास :

भाषा बालक से संवेगों की अभिव्यक्ति का माध्यम है, यह सच है कि हर्ष, क्रोध, भय, घृणा, चिंता आदि भावों की अभिव्यक्ति कुछ अन्य संकेतों से भी सम्भव है। पर सभी भावों की स्पष्ट अभिव्यक्ति संकेतों द्वारा संभव नहीं है। उनके लिए हमें भाषा का सहारा लेना पड़ता है। इसके अतिरिक्त भाषा बालक के संवेगात्मक विकास का आधार ही नहीं बल्कि संवेगों के उदात्तीकरण का भी माध्यम है।

(ग) नैतिक विकास :

भाषा के माध्यम से ही बालक अपने सम्पर्क में आनेवाले छोटों तथा बड़ों के प्रति स्नेह एवं आदर प्रकट करना सीखता है। सत्य बोलने या अच्छे आचरण की शिक्षा भी आरम्भ से परिवार के लोगों से ही उसे मिलती है।

जीवन मूल्यों एवं आदर्शो के बारे में वह परिवार से ही सीखता है। अतः भाषा बालक के नैतिक विकास की आधारशीला है।

(घ) सामाजिक विकास :

बालक अपने परिवार तथा पड़ोस के अन्य बच्चों के साथ लड़ता, झगड़ता, खेलता रहता है। इन सब क्रियाकलापों का माध्यम भाषा ही होती है। भाषा के ही माध्यम से सामाजिक गुणों तथा व्यवहार कुशलता का विकास होता है।

बोध प्रश्न :

1. भाषा अर्जन प्रक्रिया को स्पष्ट कीजिए।

....

....

....

....

....

....

2. बालक के विकास में भाषा की क्या भूमिका है ?

....

....

....

....

....

....

2.4 अधिगम (सीखना) प्रक्रिया

व्यूत्पत्ति की दृष्टि से देखें तो अधिगम दो शब्दों के मेल से बना है अधि + गम। यहाँ अधि का अर्थ है अधिक अथवा भली प्रकार तथा 'गम' का अर्थ है जाना। इसका अर्थ यह हुआ कि किसी बात या विषय के समीप अच्छी तरह जाना और उसकी बहुत जानकारी प्राप्त करना। मनुष्य अपने अनुभवों के आधार पर कई काम करना सीखता है। अनुभवों के फलस्वरुप व्यवहार में हुआ स्थायी और वांच्छनीय परिवर्तन अधिगम कहलाता है।

विभिन्न विद्वानों ने अधिगम की परिभाषा इस प्रकार दी है —

गेट्स **:** 'प्रशिक्षण एवं अनुभव के द्वारा व्यवहार में होनेवाले परिवर्तनों को अधिगम कहते है'।

फ्रोनबैक **:** 'अधिगम (सीखना) अनुभव के परिणाम स्वरुप व्यवहार में परिवर्तन द्वारा व्यक्त होता है।'

हमारा निरीक्षण है कि हम केवल अपने अनुभवों से ही नहीं सीखते बल्कि दूसरों के अनुभवों से भी लाभ उठाते है। अधिगम सरल प्रक्रिया न होकर एक जटिल प्रक्रिया है जिसके फलस्वरुप हमारे व्यक्तिगत का न केवल बौद्धिक पक्ष प्रभावित होता है, अपितु शारीरिक, मानसिक, सांवेगिक और सामाजिक पक्ष भी। इस प्रकार अधिगम केवल ज्ञान और कौशल तक ही सीमित नहीं होना चाहिए, इसके द्वारा हमारी अभिरुचि, अभिवृत्ति आदि में वांछनीय परिवर्तन आना चाहिए। अत**:** हम कह सकते है कि **:**

अधिगम एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके फलस्वरुप बालक में ज्ञान, कौशल, आदत, अभिवृत्ति और अभिरुचि आदि का विकास होता है।

अधिगम की प्रक्रिया में व्यक्ति के जीवन में स्थायी परिवर्तन आ जाता है।

2.4.1 भाषा अधिगम प्रक्रिया

भाषा अर्जन में अधिगम प्रक्रिया का विशेष महत्त्व है। विद्यालय में प्रवेश लेने पर बालक की विधिवत् शिक्षा प्रारम्भ हो जाती है और वह भाषा सीखने सिखाने के आधारभूत सिद्धांतो और प्रयोगों को काम में लाने लगता है। भाषा के अघिगम में अनेक युक्तियाँ काम करती है। आइए, हम इतना परिचय करें ......

(क) **अभ्यनुकूलन :** हर क्रिया के लिए एक उत्तेजना की आवश्यकता होती है और उसके कारण अनुक्रिया होती है। बालक प्रारम्भिक भाषा अभ्यनुकूलन द्वारा सीखता है जैसे अगर उसे भूख लगी है तो वह एक ध्वनि द्वारा, प्रतीक द्वारा, इशारे के द्वारा अपनी बात बड़ों तक पहुँचाएगा। इस ढंग से सफल होने पर पुनर्वसन (प्रतिपोषण) होगा और इससे उसके मन में साहचर्य द्वारा शब्द और वस्तु का संबंध दृढ हो जाएगा।

(ख) **अनुकरण :** अनुकरण एक सामान्य प्रक्रिया है जो बचपन से लेकर बूढ़ापे तक चलती रहती है। बालक के लिए तो अनुकरण का बड़ा महत्त्व है क्योंकि भाषा अर्जन में ही नहीं हर तरह के कार्यों में बालक बड़ों का अनुकरण करता है।

(ग) **प्रयत्न एवं त्रुटि :** अनुकरण प्रक्रिया के दौरान बालक देखता है, अनुकरण करता है। प्रारम्भ के वर्षो में अनुकरण में वह कुछ असफल भी रहता है फिर भी बारबार कोशिश करता है और इस प्रकार प्रयत्न करते हुए सफलता प्राप्त करता है। यह प्रवृत्ति उसके भाषा अधिगम और भाषा प्रयोग में देखी जाती है।

(घ) **अंतदृष्टि :** हर बालक में सूझ होती है। चाम्स्कीने कहा है कि भाषा सीखने के दौरान बालक कोरी स्लेट नहीं होता। उसके पास जन्मजात भाषा अर्जन युक्ति होती है जिसके द्वारा वह भाषा की मूलभूत संरचनाओं को ग्रहण करता है। तथा अपनी अंतदृष्टि द्वारा कई तरह की संरचनाओं का उत्पादन करता है। इसी मुक्ति के कारण वह गलत और सही वाक्यों में अंतर कर पाता है। बालक इस मुक्ति का प्रयोग भाषा अर्जन के प्रत्येक स्तर पर करता है।

संक्षेप में भाषा अधिगम में अधिगम की अनेक विधियों का योगदान होता है।

2.4.2 भाषा अधिगम की विशेषताएँ

अधिगम प्रक्रिया औपचारिक और अनौपचारिक परिवेश में घकती है। अनौपचारिक अधिगम प्रक्रिया सहज एवं स्वाभाविक रुप से गतिशील रहती है परन्तु औपचारिक अधिगम अथवा कक्षा शिक्षण प्रक्रिया पूर्व निर्धारित उद्देश्यों, योजनाओं और विधिवत शिक्षण द्वारा नियंत्रित होती है। भाषा अधिगम की विशेषताएँ इस प्रकार है :

1. कौशल केन्द्रित अधिगम :

भाषा के दो प्रकार के प्रकार्य है – अभिव्यक्ति तथा दूसरा बोधन, अभिव्यक्ति दो प्रकार की। एक लिखित दूसरी मौखिक। ये कौशल हैं। इसे हस्तगत करना ही भाषा अधिगम है। अतएव यह कौशल केन्द्री अधिगम है। यह ज्ञानात्मक विषयों का अधिगम नहीं है। भाषा अधिगम का लक्ष्य भाषाई व्यवहार की कुशलता उत्पन्न करना है, जिससे भाषा का उच्चरित तथा लिखित रुप के माध्यम से संप्रेषण दक्षता विकसित हो सके।

2. भाषा के मानक रुप का अधिगम :

भाषा अधिगम की यह दूसरी विशेषता है। चूँ कि भाषा एक सामाजिक सम्पदा है इसी कारण समाज में इसके कई रुप उपलब्ध होते हैं। किन्तु औपचारिक शिक्षण का मुख्य उद्देश्य भाषा के मानक रुप से ही शिक्षार्थी को परिचित कराना होता है। तथा उसके प्रयोग की कुशलता विकसित करना होता है।

3. भाषाई आदतों का निर्माण :

यह तीसरी विशेषता है, शिक्षार्थी में अच्छी भाषाई आदतें डालने का लक्ष्य होता है औपचारिक शिक्षा का भाषा स्वयं एक आदत है। शुद्ध उच्चारण, मानक लिपि में लिखना, अनुतानपूर्वक बोलना आदि अच्छी भाषाई आदतों के उदाहरण हैं।

4. संस्कृति सन्दर्भ :

भाषा और संस्कृति का गहन संबंध है। रोबर्ट लेडो के अभिप्राय में बालक मातृभाषा अधिगम में भाषाई संस्कृति को सहज एवं स्वाभाविक रुप से आत्मसात् करता है। संस्कृति की समझ विकसित होने पर भाषा अधिगम की प्रक्रिया समुचित रुप से गतिशील होती है एवं भाषा व्यवहार की कुशलता में क्रमिक उन्नति होती है।

2.4.3 भाषा अधिगम नियम एवं सिद्धांत

अधिगम एक प्रकार की प्रक्रिया है। एसके विभिन्न मनोविज्ञानियों ने भिन्न भिन्न नियम दिये हैं। इन में से थोर्नडाइक के दिये नियमों को यहाँ प्रस्तुत किये गये है। भाषा अधिगम में भी ये नियम उपयोगी है।

(क) **तत्परता का नियम :** कुछ भी सीखने के लिए प्रथम तो शिक्षार्थी उसको सीखने ले लिए तत्पर होना चाहिए। इसी तरह यदि बालक भाषा सीखने के लिए मचल रहा हो तब उसे भाषा शिक्षण आरम्भ कर देना चाहिए। तत्पर्यता के नियम की उपेक्षा करने से शिक्षणकार्य व्यर्थ चला जाता है। यदि शिक्षक बालक की क्षमता को ध्यान में रखकर इसे धैर्य के साथ पाठ्यवस्तुको सीखने के लिए तैयार करता है तो अधिगम अधिक प्रभावपूर्ण होता है। शिक्षार्थी अपनी क्षमता से अधिक कठिन पाठ के लिए तत्पर नहीं होते। अभ्यास भी शिक्षार्थियों की इच्छा के अनुकूल होना आवश्यक है तभी वे उसके लिए तत्पर होंगे।

(ख) **अभ्यास का नियम :** एक कहावत है – 'बारबार के अभ्यास से जडपति हौ सुजान' इस में अभ्यास का महत्त्व प्रस्तुत किया गया है। अभ्यास के मूल में प्रयत्न एवं भूल का सिद्धांत कार्य करता है। बालक बार बार अभ्यास द्वारा उसी तरह भाषा सीख लेता है जैसे बार बार प्रयास द्वारा चलना, खाना, या किसी बंद चीज को खोलना सीखता है। अभ्यास कार्य में शिक्षार्थी की क्षमता, तत्परता और इच्छा का ध्यान रखना चाहिए।

(ग) **कार्य के परिणाम का नियम :** जिस कार्य का परिणाम मनभावन हो, वह कार्य बारबार करने की चाह होती है मनमें रहती है। अधिगम के लिए भी यह इतना ही यथार्थ है। अधिगम भी एक प्रकार का कार्य है। दण्ड की अपेक्षा पुरस्कार अधिगम को अधिक प्रभावित करता है क्यों कि बालक उन कार्यो से दूर रहना या बचना चाहता है जिन से उसे कष्ट पहुँचता है और उन कार्यो में रुचि दिखाता है जिस से उसे सुख मिलता है।

बोध प्रश्न :

3. भाषा अधिगम प्रक्रिया को स्पष्ट कीजिए।

....
....
....
....
....
....

4. भाषा अधिगम नियमों का महत्त्व समझाइए।

....
....
....
....
....
....

2.5 भाषा शिक्षण प्रक्रिया

सामान्यत**:** शिक्षण का अर्थ होता हो प्रदान करना, जानकारी देना, कुशलता विकसित करना। भाषा शिक्षण से हमारा तात्पर्य शिक्षण की उस विशिष्ट व्यवस्था से है जिसके द्वारा भाषाई कुशलता का विकास सम्भव हो।

भाषाई कुशलता का सम्बन्ध भाषा के चार कौशलो से है – श्रवण (सुनना), कथन (बोलना), पठन (पढ़ना) तथा लेखन (लिखना)। इनका वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया जा सकता है **:**

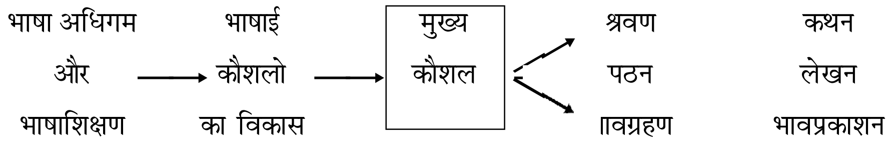

भाषा शिक्षण का मुख्य दायित्व भाषा शिक्षक का है। वह शिक्षार्थियों की योग्यका, रुचि तथा आवश्यकतानुसार पाठ्य सामग्री को व्यवस्थित करता है तथा उसके शिक्षण की योजना तैयार करता है । विविध प्रकार के तकनीकों तथा साधनों एवं युक्तियों की सहायता से वह शिक्षण सामग्री को बड़ी कुशलता से प्रस्तुत करने का प्रयास करता है । इससे शिक्षार्थी अधिगम के लिए प्रेरित हो जाते है ।

2.5.1 भाषा अधिगम और भाषा शिक्षण

भाषा शिक्षण तथा भाषा अधिगम का सम्बन्ध एक सिक्के के दो पहलू जैसा है । प्रभावी अधिगम के लिए प्रभावी शिक्षण आवश्यक है । स्पष्ट है कि भाषा शिक्षण व भाषा अधिगम दोंनो का सम्बन्ध शिक्षार्थी से है। शिक्षार्थी की आयु, योग्यता, स्तर तथा अन्य विशिष्टताएँ शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावित करती है। किसी भी कार्य को सीखने की जन्मजात क्षमता का भी भाषा अधिगम एवं शिक्षण में समुचित महत्त्व होता है। सभी बच्चों में भाषा सीखने की समान गति नहीं होती । वैयक्तिक भिन्नता का प्रभाव भाषा अधिगम तथा भाषा शिक्षण पर पड़ता है।

अधिगम–शिक्षण प्रक्रिया के चार प्रमुख घटक है –

- शिक्षार्थी / अध्येता
- शिक्षक / अध्यापक
- पाठ्यसामग्री
- शिक्षण–विधि

इनमें परस्पर संबद्धता के फलस्वरुप अधिगम और शिक्षण की प्रक्रिया प्रभावी ढंग से गतिशील होती है। यह बात निम्न लिखित से स्पष्ट हो जाएगी :

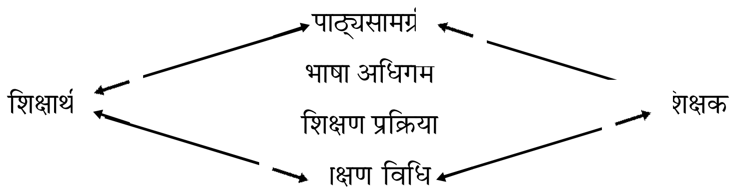

2.5.2 भाषा-शिक्षण के सामान्य सिद्धांत

शिक्षण कला भी है, विज्ञान भी है। इसके कुछ सामान्य सिद्धान्त होते हैं। प्रत्येक शिक्षक को हर प्रकार के पाठ पढ़ाते समय इन्हें ध्यान में रखने चाहिए।

रुचि जागृत करने का सिद्धांत : बालक के लिए शिक्षण उस समय तक कारगर नहीं होगा जब तक उस में उसे सीखने की रुचि जागृत न हो जाए। वर्षो पहले, बालक को दंड या अनुशासन द्वारा नियंत्रित करके ज्ञानार्जन के लिए प्रेरित किया जाता था पर अब इस बात पर बल दिया जाने लगा है कि बालक के शिक्षण में उसकी रुचि को जागृत करना आवश्यक है। अगर हम अपने व्यवहार के बारे में भी सोचे तो हम पायेगे कि किसी वस्तु पर हमारा ध्यान तभी केन्द्रित हो पाता है जब हमारी उसमें रुचि हो ।

अब प्रश्न यह उठता है कि यदि किसी विषय या उस विषय के किसी एक पक्ष में बालक की रुचि न हो तो क्या ज्ञान सम्बन्धी जानकारी बिलकुल ही न दी जाए ? उदाहरण के तौर पर बालक की रुचि कहानी, नाटक, निबन्ध आदि पढ़ने में तो है पर व्याकरण जानने में नहीं है तो क्या भाषा शिक्षण के उद्देश्यों की दृष्टि से यह उचित होगा ? क्या इस प्रकार बालक का भाषा सम्बन्धी ज्ञान अधूरा नहीं रह जाएगा ? तब ध्यान देने योग्य बात यह है कि शिक्षक को व्याकरण सम्बन्धी जानकारी रोचक बनाकर प्रस्तुत करनी चाहिए ता कि बालक की रुचि जागृत हो ।

प्रेरणा का सिद्धांत : रुचि और प्रेरणा के सिद्धांत को अलग सिद्धांतो का रुप न देकर एक ही सिद्धांत मानना ठीक होगा क्यों कि रुचि जागृत होने पर अधिगम की प्रेरणा मिलती है। प्रेरणा से ही बालक में रुचि का विकास होता है।

प्रेरणा का सिद्धांत अधिगम की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और उपयोगी है। किन्तु उचित अवसर पर उसका उचित प्रयोग बहुत ही आवश्यक है। रुचि, आवश्यकता और प्रयोजन शिक्षा की दृष्टि से उपयोगी प्रेरक है। उद्देश्यहीन, प्रयोजन रहित कार्य मानसिक शिथिलता उत्पन्न कर देता है। अतएव भाषाशिक्षण भी प्रयोजनपूर्ण तथा सोददेश्य होना चाहिए।

क्रिया द्वारा सीखने का सिद्धांत : क्रिया द्वारा अधिगम का सिद्धान्त काफी महत्त्वपूर्ण है। बालक को भी सीखने में उसी समय आनन्द आता है जब वह क्रिया द्वारा अपने आप सीखता है। इस सिद्धांत का मतलब है यह है कि बालक को जो कुछ भी सिखवाया जाए, वह उसको निष्क्रिय श्रोता बनाकर नहीं अपितु उसमें उसकी सक्रिय प्रतिभागिता सुनिश्चित की जाए।

जीवन से जोड़ने का सिद्धांत : इस सिद्धांत का मतलब यह है कि किसी भी विषय को पढ़ाते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि वह जीवन में आनेवाली परिस्थितियों से सम्बन्धित है या नहीं। बालक उन बातों, विषयो को सरलता से सीखता है जो उसके जीवन से संबंधित होते है। यदि कोई बात उसके जीवन से संबंधित नहीं हो तो बालक उसे सीखने में रुचि नहीं लेता। इसी दृष्टि से भाषा शिक्षण में बालक के अपने अनुभवों को उदाहरणार्थ लेने से बालक को भाषा की जटिलता समझने में आसानी होती है।

इन चार सिद्धांतों के अतिरिक्त कुछ अन्य सिद्धांत भी हैं जिनका शिक्षणकार्य करते समय ध्यान रखना आवश्यक है —

1. शिक्षण उद्देश्यपूर्ण हो। बिना उद्देश्य के शिक्षण सफल नहीं हो सकता।
2. पाठ्यसामग्री उद्देश्योन्मुख हो। शिक्षक पाठ्यसामग्री का चुनाव इस प्रकार करें कि वह शिक्षण के उद्देश्यों को पूरा कर सकें।
3. विभाजन का सिद्धांत इस बात पर जोर देता है कि पाठ्यक्रम को कितनी इकाइयों अथवा पाठों में बाँटा जाए ताकि बालक सरलता से एक स्तर से दूसरे स्तर पर जा सके।
4. पुनरावृत्ति का सिद्धांत **:** पठित सामग्री की उपर्युक्त पुनरावृत्ति से बालक का अधिगम दृढ होता है और साथ ही उसमें स्पष्टता भी आती है।

2.5.3 शिक्षण सूत्र

शिक्षण के सामान्य सिद्धांतो के अतिरिक्त शिक्षण को अधिक प्रभावी बनाने के हेतु से शिक्षणविदोंने अपने प्रयागों के आधार पर कुछ सूत्रों का प्रतिपादन किया है। शिक्षणकार्य के दौरान इन सूत्रों के उपयोग से शिक्षक अपने शिक्षण कार्य को अधिक सरल, सुगम, स्पष्ट, एवं रोचक बना सकता है।

कुछ प्रमुख शिक्षण सूत्र इस प्रकार है —

1. अज्ञात से अज्ञात की ओर
2. सरल से जटिल की ओर
3. मूर्त से अमूर्त की ओर
4. पूर्ण से अंश की ओर
5. विशेष से सामान्य की ओर
6. आगमन से निगमन की ओर

अब इनकी व्याख्या कर समझने की कोशिश करेंगे ....

1. **ज्ञात से अज्ञात की ओर :** इसका तात्पर्य यही है कि बालकों के पास जो ज्ञान है उसी पर नये ज्ञान की नींव रखी जाए। बालक जो कुछ जानते है उसीको आधार बनाकर वह सिखाना चाहिए जो वे नहीं जानते। अत**:** सब से पहले शिक्षक को बालक के पूर्वज्ञान की जानकारी प्राप्त करनी चाहिए, जैसे — शाहजहाँ को विषय में पढ़ाते समय ताजमहल से शुरु करना चाहिए क्यों कि ताजमहल ज्ञात है और शाहजहाँ अपेक्षाकृत अज्ञात। ज्ञात और अज्ञात के बीच का संबंध स्पष्ट हो जाने से बालक की रुचि जागृत हो जाती है।
2. **सरल से जटिल की ओर :** इस सूत्र में स्पष्ट रुप से संकेत है कि बालक को पहले सरल का ज्ञान देना चाहिए फिर जटिल का जिसे समझना सामान्यत**:** बालक के लिए कठिन होगा।

इसका मतलब यह हुआ कि बालक को सब से पहले वह सिखाना चाहिए जो वह सरलता से सीख सके। यहाँ सरल का अर्थ है बालक की दृष्टि से सरल। शिक्षक अधिकतर इस बात का ध्यान नहीं रखते और अपनी दृष्टि से सरल और अपनी दृष्टि से सरल और कठिन का निर्णय करते हैं। किसी विषय की मोटी मोटी बातें तो बालक के लिए सरल होती है पर विस्तार से दिया हुआ ज्ञान कठिन होता है। सरल से जटिल के सूत्र द्वारा बालक एक के बाद दूसरी बात सीखने को सरलता से तैयार हो जाता है। अत: शिक्षक को चाहिए कि पाठ्यक्रम को इस तरह विभाजित करे कि सरलता से जटिलता के आधार पर बालक क्रमिक रूप से ज्ञान प्राप्त करता चले। उदाहरणार्थ पहले भाषा के सरल भाषिक रूप प्रस्तुत हों बाद में जटिल रुप।

3. **मूर्त से अमूर्त की ओर :** यह हमेशा ध्यान रखना चाहिए कि शिशु का मानसिक विकास इतना नहीं होता कि वह कम उम्र में ही सूक्ष्म अमूर्त को समझ सके। केवल दृश्यमान वस्तुओं के द्वारा ही उस में सूक्ष्म को समझने की क्षमता का विकास किया जा सकता है। परंतु इस शक्ति के विकास के लिए हमें मूर्त से अमूर्त के सूत्र को ध्यान में रखना होगा। उदाहरण के लिए 'दोस्ती' की संकल्पना समझने के लिए पहले हमें मूर्त रुप से 'दोस्त' परिचित कराना होगा। परंतु बालक को अधिक समय तक मूर्त पर अटकाए रखना उचित नहीं है।

4. **पूर्ण से अंशकी ओर :** इस सूत्र के अनुसार बालक को जो कुछ सिखाया जाए उसे पहले पूर्ण रुप में सामने रखा जाए और बाद में अंश को स्पष्ट किया जाए। यह सूत्र 'गैस्टान्ट' मनोविज्ञान पर आधारित है। इसके अनुसार हम पहले पूर्ण का प्रत्यक्षीकरण करते है, फिर उसके अंशों का, अंगों का। भाषा अधिगम में बालक वाक्यों को एक इकाई के रुप में सीखता है और बाद में उसके अलग अलग अंशो पर ध्यान देता है। पर ध्यान रहे कि पूर्ण का यह ज्ञान जटिल न हो। इसी दृष्टि से वाक्य को पूर्ण इकाई माना जाए न कि पूरे अनुच्छेद को।

5. **विशेष से सामान्य की ओर :** बालक को विशेष ज्ञान से सामान्य ज्ञान की ओर ले जाना चाहिए। इस का अर्थ यह है कि पहले उदाहरण प्रस्तुत किये जाए और फिर उन उदाहरणों के आधार पर नियम बनाए जाये। 'गुलाब' एक प्रकार का फूल है पर गेंदा, चम्पा, चमेली आदि फूलों के अन्य प्रकार हैं। पहले हम एक एक फूल विशेष से परिचित कराएँ फिर बताएँ कि इस प्रकार की सभी वस्तुएँ फूल कहलाती है।

6. **आगमन से निगमन की ओर :** इस सूत्र के अनुसार अनेक उदाहरण देकर नियम का निर्धारण किया जाता है। शिक्षक इस सूत्र का उपयोग विभिन्न विषयों के शिक्षण में कर सकता है। व्याकरण के पाठ में इस उपयोग इस प्रकार हो सकता है – विभिन्न वाक्य लेकर उसमें नाम बतानेवाले शब्दों को छाँटने के लिए कहा जाए। फिर यह पूछा जाए कि यह नाम किस प्रकार का है, क्या वह किसी व्यक्ति का नाम है ?, क्या यह स्थान का नाम है ? आदि अब बताया जा सकता है कि इसी प्रकार के सभी नामों को संज्ञा कहा जाता है। इसी प्रकार व्याकरण के अन्य मुद्दो (विशेषण, सर्वनाम, क्रिया के काल, आदि) को छाँटने के लिए कहा जा सकता है।

   इस सूत्र के अनुसरण से बालक की रुचि जागृत रहती है। प्रत्येक स्तर पर कार्य करने के पश्चात् उसे आगे कार्य करने की प्रेरणा मिलती है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस सूत्र के उपयोग में शिक्षक को अधिक मेहनत करनी पड़ती है। किन्तु उसका परिश्रम व्यर्थ जाता, क्योंकि इस सूत्र के अनुप्रयोग से शिक्षार्थी का अधिगम स्थायी और सार्थक हो जाता है।

बोध प्रश्न :

5. भाषा शिक्षण प्रक्रिया आरेख के साथ समझाइए।

....

....

....

....

....

....

6. क्रिया द्वारा शिक्षण का सिद्धान्त स्पष्ट करें।

....

....

....

....

....

....

7. शिक्षण कार्य में शिक्षण सूत्र किस प्रकार उपयोगी होते हैं ?

....

....

....

....

....

....

2.7 सारांश

भाषा अर्जन प्रक्रिया एक स्वाभाविक, सहज और अनौपचारिक प्रक्रिया है। यह कक्षा में भाषा अधिगम से भिन्न है, बालक अपने पारिवारिक परिवेश में सुनकर भाषा ग्रहण करता है तथा फिर बोलने का प्रयास करता है। वह कुछ ध्वनियों, शब्द, एक शब्दीय वाक्य, द्विशब्दीय वाक्यों से बढ़ता हुआ धीरे धीरे भाषा प्रयोग करना सीख जाता है।

भाषा अर्जन में बालक सहजता, अनुकरण, अभिव्यक्ति की व्यग्रता, अभ्यास, बारंबारता एवं संक्षिप्तता नामक युक्तियों का आश्रय लेता है। आठ से दस महीने की अवस्था वाला शिशु प्रतिकात्मक आंगिक संकेतों, अनुतान, शब्द, पदबन्धों को समझने लगता है।

दो ढ़ाई वर्ष का बच्चा बिना विद्यालय गये अपने परिवार, पड़ोस तथा मित्रों के सम्पर्क में आकर सब से पहले जिस भाषा को सीखता है उसे मातृभाषा कहा जाता है। यह भाषा शिशु को व्यापक सन्दर्भो से जाड़ती है। उसकी सामाजिक पहचान बनाती है। किन्तु विभिन्न अवसरों पर इसका उचित प्रयोग करने के लिए मानक भाषा सीखना आवश्यक है। इससे उसका मानसिक, सांवेगिक, सामाजिक, तथा नैतिक विकास होता है जिससे उसके व्यक्तित्त्व में निखार आता है।

अधिगम शब्द का अभिप्राय किसी बात या विषय में जानकारी प्राप्त करना है। अनुभवों के फलस्वरुप व्यवहार में हुआ स्थाई और वांछनीय परिवर्तन अधिगम कहलाता है। यह एक जटिल प्रक्रिया है। अधिगम केवल ज्ञान और कौशल तक ही सीमित नहीं रहना चाहिए, इसके द्वारा हमारी अभिरुचि एवं अभिवृत्ति आदि में भी वांछनीय परिवर्तन होना चाहिए। भाषा अर्जन में अधिगम का विशेष महत्त्व है। इस में अभ्यनुकूलन, अनुकरण, प्रयत्न एवं त्रुटि तथा अन्तदृष्टि नामक युक्तियाँ काम करती हैं।

भाषा अधिगम तथा अन्य विषयों के अधिगम में तफावत होता है। आज्ञात्मक वस्तुओं में विषयवस्तु पर अधिकार शिक्षार्थी का लक्ष्य होता है, जब कि भाषा अधिगम का लक्ष्य भाषाई व्यवहार की कुशलता होता है। इसमें शिक्षार्थी भाषा को रह कर नहीं सीखाता है अपितु भाषाई नियमों को अन्तदृष्टि द्वारा आत्मसात करता है। इसके द्वारा बालक भाषा का मानक रुप ग्रहण करता है।

भाषा शिक्षण द्वारा भाषायी कुशलता का विकास किया जाता है। जिसके अन्तर्गत श्रवण कौशल, भाषण कौशल, पठन कौशल और लेखन कौशल का विकरास करने का प्रयास किया जाता है। भाषा शिक्षण के प्रमुख चार घटक संबंध है — शिक्षार्थी, शिक्षक, पाठ्यसामग्री तथा शिक्षणविधि। भाषा शिक्षण के प्रमुख चार सिद्धांत है — रुचि जागृत करना, प्रेरणा का सिद्धांत, क्रिया द्वारा सीखना तथा जीवन से जोड़ने का सिद्धांत। शिक्षण को प्रभावी करने के लिए शिक्षण सूत्र भी दिये गये है। जैसे कि ज्ञात से अज्ञात की ओर जाना।

2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. भाषा अर्जन प्रक्रिया अर्थात् सहज, स्वाभाविक तथा अनौपचारिक रुप से भाषा सीखने की प्रक्रिया शिशु जन्म के पश्चात् दस महीने तक श्रवण और अनुकरण द्वारा ध्वनियों को ग्रहण करता है। फिर अभिव्यक्ति की व्यग्रता तथा अभ्यास, आदि युक्तियों से भाषा अर्जन करता है।

2. बालक के विकास में भाषा की अहम भूमिका होती है। पारिवारिक परिवेश तथा गली महोल्ले के मित्रों से सीखी हुई भाषा मातृभाषा कहलाती है। जैसे जैसे भाषा पर बालक का प्रभुत्व बढ़ता जाता है वैसे वैसे ही उसका मानसिक, सांवेगिक, सामाजिक तथा नैतिक विकास होने लगता है। भाषा ही तो व्यक्तित्त्व में निखार लाती है।

3. अधिगम दो शब्दों से बना एक शब्द है : अधि + गम। अधि का अर्थ है अधिक तथा गम का अर्थ है जाना, जानना। भाषा अधिगम का अर्थ है भाषा की अधिक जानकारी पाना। भाषा अधिगम में अनेक युक्तियाँ काम करती है — अभ्यनुकूलन, अनुकरण, प्रयत्न एवं त्रुटि तथा अन्तदृष्टि। इन युक्तियों के द्वारा भाषायी कौशलों का विकास भाषा अधिगम है।

4. भाषा अधिगम के कई नियम है, सिद्धांत है। अधिगम एक प्रकार की सक्रियता है। इस प्रभाव या सफल करने में ये नियम सहायक होते है, जैसे तत्परता का नियम। मनोविज्ञान का निष्कर्ष है। अत: वे बहुत ही उपयोगी है।

5. भाषा शिक्षक भाषा शिक्षण करता है। यह औपचारिक भाषा शिक्षण से सम्बन्ध है। अतएव भाषा शिक्षण के प्रमुख चार घटक तत्त्व हैं। इनका पारस्परिक सम्बन्ध अधोलिखित आरेख से स्पष्ट होता है।

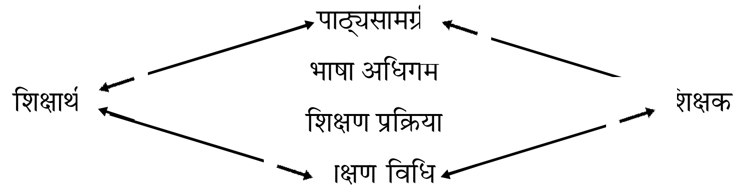

6. क्रिया द्वारा शिक्षण का अर्थ है प्रथम क्रियानुभव और बाद में शिक्षण। बालककोसीखने में उसी समय आनन्द आता है जब वह क्रिया द्वारा अपने आप सीखता है। इस सिद्धांत से शिक्षक को यह सूचना मिलती है कि बालक को जो कुछ सिखाया जाए, वह उसको निष्क्रिय श्रोता बनाकर न सिखाए बल्कि उसकी सक्रिय सहभागिता के द्वारा सिखाए। यह सिद्धांत बहुत ही महत्त्वपूर्ण है।

7. अधिगम मनोविज्ञान ने अधिगम को प्रभावी करने के लिए अनेक प्रयोग किये है। उन प्रयोगों के फलस्वरुप शिक्षण सूत्र प्रस्तुत किये है। ज्ञात से अज्ञात की ओर, सरल से जटिल की ओर, विशिष्ट से सामान्य की ओर आदि इन सूत्रों के विनियोग से शिक्षक अपने शिक्षण कार्य को अधिक सरल, सुगम, स्पष्ट एवं रोचक बना सकता है।

इकाई 3

विद्यालय स्तर पर भाषा

: रूपरेखा :

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 हिन्दी भाषा शिक्षण के उद्देश्य

3.3.1 भाषा शिक्षण के उद्देश्य

3.3.2 हिन्दी भाषा शिक्षण के सामान्य उद्देश्य

3.3.3 गुजरात राज्य में हिन्दी शिक्षण के उद्देश्य

3.3.4 सामान्य उद्देश्य व विशिष्ट उद्देश्य की अवधारणा

3.3.5 NcÅERT द्वारा सूचित विशिष्ट उद्देश्य

3.3.6 अन्य भाषा (भाषा$_2$) के रुप में हिन्दी शिक्षा के उद्देश्य

3.4 वर्तमान विद्यालयीय पाठ्यक्रम में हिन्दी का स्थान

3.5 सारांश

3.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.7 सन्दर्भ ग्रंथ

3.1 प्रस्तावना

इस पाठ्यक्रम के प्रथम खण्ड की तीसरी इकाई है 'विद्यालय स्तर पर भाषा'। हिन्दी भाषा के सन्दर्भ में यहाँ चर्चा होगी। चूँ कि गुजरात हिन्दीत्तर भाषी प्रान्त है। यहाँ मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा गुजराती है। इसलिए यहाँ हिन्दी को मातृभाषा के रुप में न देखकर अन्य भाषा या द्वितीय भाषा के रुप में स्वीकार किया जाएगा। अतः चर्चा भी इस परिप्रेक्ष्य में होगी। दूसरें शब्दों में कहे तो त्रिभाषा सूत्र के सन्दर्भ विद्यालय स्तर पर हिन्दी भाषा को स्थान व महत्त्व समझेंगे।

भाषा मानव जीवन का अविभाज्य अंग है। वह मानव की अपनी आकांक्षाओं, वृत्तियों एवं मनोगत भावों की अभिव्यक्ति का साधन है। इसके अतिरिक्त भाषा के द्वारा ही हम दूसरों के विचारो को ग्रहण करते है। इस प्रकार भाषा व्यक्तित्व विकास की ऊर्जा है।

मननुष्य जितनी अधिक भाषाएँ जानता होगा, व्यक्तिगत उतना विकसित होगा। ग्लोबल विश्व की परिकल्पना को चरितार्थ करने के लिए भी विभिन्न भाषा-भाषी लोगों से सम्पर्क बढ़ाना आवश्यक हो जाता है। तब सम्पर्क भाषा का महत्त्व बढ़ जाता है। हिन्दी भारतीय समाज के लिए सम्पर्क भाषा है। विविधता में एकता की यह मजबूत कड़ी है। इसी हेतु शिक्षक को हिन्दी भाषाशिक्षाके लिए समर्थ होना होगा।

इस इकाई में हिन्दी भाषा शिक्षा के उद्देश्यों की विविध दृष्टिकोणों से चर्चा की गई है। विद्यालय स्तर पर हिन्दी का स्थान स्पष्ट किया गया है।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :

- अन्य भाषा के रुप में भाषा शिक्षण के उदेश्य स्पष्ट कर सकेंगे।
- भाषा शिक्षण के सामान्य व विशिष्ट उद्देश्यों का निरुपण कर सकेंगे।
- गुजरात राज्य में हिन्दी भाषा शिक्षक के उद्देश्य लिख पाएँगे।
- गुजरात के हिन्दी पाठ्यक्रम को मूल्यांकन कर पाएँगे।

3.3 हिन्दी भाषा शिक्षण के उद्देश्य

भाषा शिक्षण सौद्देश्य प्रक्रिया है। अतएव भाषा शिक्षक को हिन्दी भाषा शिक्षण के उद्देश्यों से अवगत होना ही चाहिए। कोई भी व्यवसाय तब ही सफल हो सकता है जब उसका व्यवसायी उक्त व्यवसाय के उद्देश्यों से अवगत हो। बिना उद्देश्य जाने व्यवसाय करना हवा में मुठ्ठियाँ उछालने के समान है। शिक्षा का सम्बन्ध समाज के नव निर्माण के साथ है। इसी कारण इसका महत्त्व बढ़ जाता है। हिन्दी भाषा शिक्षण को सफल करने के लिए यहाँ उद्देश्यों की चर्चा की जा रही है। चर्चा का लक्ष्य माध्यमिक शिक्षा स्तर विशेष कर रहेगा।

3.3.1 भाषा शिक्षण के उद्देश्य

भारतीय भाषाओं के शिक्षण के सन्दर्भ में जो अखिल भारतीय संगोष्ठी इ.स. 1958 में आयोजित की गयी थी उसमें अधोलिखित उद्देश्य निर्धारित किये गये थे।

1. **ग्राह्यात्मकता :** इसके अन्तर्गत बोली हुई भाषा को समझना, लिखित भाषा को पढ़ना और समझना, पुस्तक के पाठों को क्रमशः बढ़ती हुई गति से पढ़ना तथा शब्द भंडार, सूक्ति-भंडार, मुहावरों व कहावतें आदि भंडार अभिवृद्ध करना आदि।
2. **अभिव्यंजनात्मक :** इस उद्देश्य के अन्तर्गत भाषिक कौशल इस प्रकार होंगे। सुन्दर एवं प्रभावात्मक ढंग से वाचन करना, शुद्ध व स्पष्ट भाषा में तीव्र गति से लिखना, पठित अंशो का विस्तृतीकरण करना, पठित शब्दों, मुहावरों, सूक्तियाँ आदि का प्रयोग करना, दूसरों के साथ प्रभावशाली ढंग से बातचीत करना, पठित सामग्री का मूल भाव (संवेदना) को छाँटना, भावों को क्रमबद्ध रुप में प्रस्तुत करने की क्षमता प्राप्त करना, दूसरों से सम्मुख अपने विचारों को स्पष्टता से रखना, सन्दर्भ सामग्री का प्रयोग करना आदि।
3. **सराहनात्मक :** इस उद्देश्य के अनुसार छात्रों में भाषा तथा साहित्य के प्रति स्थायी प्रेम और रुचि जाग्रत होनी चाहिए अतएव उनमें निम्नलिखित कौशलों की ओर ध्यान देना चाहिए —

साहित्य के सुन्दर उदाहरणों का चयन करना, उनका उचित स्थान पर प्रयोग करना, सत् साहित्य पहचानना, लोक साहित्य (लोक गीत, लोक कथा, रुढियाँ, आदि का संग्रह करना, काव्य सौन्दर्य की सराहना एवं उसमें आनन्द लेना ।)

4. **रचनात्मक अथवा सृजनात्मक :** इस उद्देश्य के अन्तर्गत निम्नांकित कौशल्यों के विकास की अपेक्षा है – मौलिक निबन्ध लेखन, तथा अन्य विद्याओं (कहानी, संवाद, जीवनी, कविता आदि) का लेखन, पत्र व्यवहार की क्षमता, भाषण देने की क्षमता, विद्यालयों में पत्रिका आदि का सम्पादन ।

3.3.2 हिन्दी भाषा शिक्षण के सामान्य उद्देश्य

हिन्दी भाषा शिक्षण के सामान्य उद्देश्य अधोलिखित है **:**

1. शिक्षार्थियों को शुद्ध एवं स्पष्टरुप में बोलना एवं लिखना सिखाना ।
2. शिक्षार्थी को शुद्ध, सरल, स्पष्ट एवं प्रभावोत्पादक रुप में अपने भावों, अनुभूतियों एवं विचारों को व्यक्त करने में निपूण करना ।
3. शिक्षार्थी को आरोह-अवरोह के साथ वाचन कला में दक्ष करना ।
4. शिक्षार्थी मौखिक एवं लिखित भाषा में निहित विचारों और भावों को समझ सकें ।
5. शिक्षार्थी की पठन-पाठन में रुचि निर्माण करना तथा साहित्य के रसास्वादन की क्षमता अभिवृद्ध करना ।
6. शिक्षार्थी को हिन्दी भाषा की विवध शैलियों से अवगत करना ।
7. विविध लोकोक्तियाँ तथा मुहावरों का बोध कराना ।
8. शिक्षार्थी की रचनात्मक एवं सृजनात्मक क्षमता का विकास करना ।
9. मानव जीवन की विविध परिस्थितियों का ज्ञान कराकर उन्हें भावि जीवन के लिए तैयार करना ।
10. शिक्षार्थी के ज्ञान, विवेक एवं चरित्र का विकास करना ।

3.3.3 गुजरात राज्य में हिन्दी शिक्षण के उद्देश्य

राष्ट्रीय भाषा नीति के त्रिभाषा सूत्र के अनुसार जिन प्रान्तों में हिन्दी मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा नहीं है वहाँ द्वितीय भाषा के रुप में, सम्पर्क भाषा के रुप में हिन्दी भाषा शिक्षण प्राथमिक व माध्यमिक स्तर पर अनिवार्य रुप से देने की व्यवस्था की गयी है । इस सन्दर्भ में गुजरात राज्य में भी प्राथमिक व माध्यमिक स्तर पर हिन्दी शिक्षण दिया जा रहा है । यहाँ माध्यमिक स्तर पर हिन्दी शिक्षा के उद्देश्य प्रस्तुत किये गये है **:–**

1. शिक्षार्थी सरल हिन्दी में बोलकर अपने विचार प्रस्तुत कर सकें ।
2. शिक्षार्थी शुद्ध और सरल-स्पष्ट हिन्दी में लिखकर अपने विचार व्यक्त कर सकें ।
3. सुनी हुई हिन्दी भाषा को शिक्षार्थी भलीभाँति समझ सकें ।
4. शिक्षार्थी हिन्दी पाठ्यसामग्री को पढ़कर उसका बोधन कर सकें ।
5. शिक्षार्थी हिन्दी पाठ्यसामग्री सुश्रव्य ढंग से पढ़ सकें ।
6. शिक्षार्थी सामान्य पत्राच्चार कर सकें ।
7. शिक्षार्थी आवश्यकतानुसार आवेदन पत्र आदि लिख सकें ।
8. शिक्षार्थी हिन्दी के द्वारा ज्ञान प्राप्ति कर सकें ।
9. शिक्षार्थी सूक्तियाँ, बोधवाक्य आदि पढ़कर समझ सकें ।
10. शिक्षार्थी विज्ञप्ति, सूचनाएँ तथा जाहिरात पढ़कर व सुनकर समझ सकें ।

3.3.4 सामान्य उद्देश्य व विशिष्ट उद्देश्य की अवधारणा

शिक्षा एक जटिल प्रक्रिया है । भाषा शिक्षा भी जटिल प्रक्रिया है । इस में मनोविज्ञान, सामाजिक विज्ञान

व दर्शनशास्त्र की महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है । शिक्षण विधि क्या होनी चाहिए इसका उत्तर शिक्षा मनोविज्ञान देता है, शिक्षा कहाँ देनी है इसका उत्तर सामाजिक विज्ञान देता है तथा शिक्षा क्यों देनी है उसका उत्तर दर्शनशास्त्र देता है। शैक्षिक उद्देशों का निर्धारण दर्शनशास्त्र के द्वारा होता है। दर्शनशास्त्र में तीन शब्द प्रयुक्त है **:** Goal - ध्येय, Aim - लक्ष्य, Objective - उद्देश्य। जब किसी कार्य या प्रक्रिया के ध्येय के सम्बन्ध में चर्चा होती है तब वह उसके सामान्य उद्देश्य की श्रेणी में आती है। सामान्य उद्देश्य के लक्षण इस प्रकार है **:**

(1) सामान्य उद्देश्य :

- ❖ **सामान्य उद्देश्य एक व्यापक परिकल्पना है :** जैसे कई शिक्षाकारों ने शिक्षा के ध्येय की चर्चा करते हुए कहा है कि व्यक्ति का चरित्र निर्माण शिक्षा का ध्येय है । इसे शिक्षा का सामान्य उद्देश्य कहा जा सकता है ।
- ❖ **सामान्य उद्देश्य दीर्घकालीन होते है :** इन्हें चरितार्थ करने में काफी समय लगता है, जैसे चरित्र गहन यह कोई तत्काल सिद्ध होनेवाला उद्देश्य नहीं है। इसके चरितार्थ होने में कई वर्ष लग सकते हैं।
- ❖ **सामान्य उद्देश्य कई छोटे-मोटे उद्देश्यों का समुच्य है :** इससे अभिप्राय यह है कि सामान्य उद्देश्य तब ही चरितार्थ होता है जब इसके पूर्व इसके आनुषांगिक कई छोटे-मोटे उद्देश्य चरितार्थ हुआ करते है।

(2) विशिष्ट उद्देश्य :

दर्शनशास्त्र का Objective शब्द विशिष्ट उद्देश्य का पर्याय है । जब किसी प्रक्रिया का निष्पादनलक्षी विचार किया जाता है तब विशिष्ट उद्देश्य का जन्म होता है। ये विशिष्ट उद्देश्य प्रक्रिया के परिष्कार के मार्गदशक है। विशिष्ट उद्देश्य के लक्षण इस प्रकार है **:**

- ❖ ***यह एक ही व्यवहार को इंगित करता है :*** अर्थात् इसका दायरा सीमित है। सामान्य उद्देश्य व्यापक होता है जब कि विशिष्ट उद्देश्य सीमित होते हा। वह लक्ष्यगामी होते है। वह किसी एक ही व्यवहार का इंगित करता है।
- ❖ **इसका निष्पादन दृश्य है :** प्रक्रिया विषयक विशिष्ट उद्देश्य का अर्थ है प्रक्रिया का निष्पादन दृश्यमान होना चाहिए। उदाहरण के तौर पर यदि शिक्षक ने यह विशिष्ट उद्देश्य रखा है कि शिक्षार्थी स्वर संधि विग्रह कर सकेंगे तो प्रक्रिया के अंत में शिक्षार्थी विग्रह करने में सफल होगा।
- ❖ **ये अल्पकालीन होते है :** विशिष्ट उद्देश्यों की संसिद्धि में अधिक समय की आवश्यकता नहीं रहती है । शिक्षक जब तास पाठ नियोजन करता है तथा तास विशेष के लिए जिन उद्देश्यों को तय करता है वहीं विशिष्ट उद्देश्य होते है।
- ❖ **ये मूल्यांकनक्षम होते है :** इसकी परिणति का मूल्यांकन हो सकता है। यदि चरित्र गठन का उद्देश्य रखा गया है तो उसका मूल्यांकन कठिन होगा । किन्तु अध्येता विकट स्थिति में भी सत्याचरण करेगा ऐसा उद्देश्य रखा हो तो कक्षा में विकट स्थिति निर्माण कर अध्येता को आचरण का अवसर दिया जाए। तब उसके आचरण का मूल्यांकन हो सकता है।

  सामान्य उद्देश के लिए जो जो अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन की श्रेणी तैयार की जाती है वही विशिष्ट उद्देश्य है । इस प्रकार सामान्य व विशिष्ट उद्देश्यों की अवधारणा समझ कर अब NcÅERT द्वारा सूचित हिन्दी भाषा शिक्षण के उद्देश्यों की जानकारी प्राप्त करेंगे ।

3.3.5 NcÅERT द्वारा सूचित विशिष्ट उद्देश्य

सब से पहले दो शब्द**:** विषयवस्तु तथा योग्यता का संक्षिप्त विवेचन करेंगे । विषयवस्तु के अन्तर्गत उन साधनों की चर्चा होती है जो कक्षा में प्राप्त होनेवाले उद्देश्यो की प्राप्ति में सहायक होते है तथा योग्यताओं के अन्तर्गत उन अपेक्षित व्यवहार परिवर्तनों का निर्धारण किया जाता है जिनके उत्पन्न होने से निश्चित उद्देश्यों की प्राप्ति का संकेत मिलता है। यह पर सामान्य उद्देश्य तथा विशिष्ट उद्देश्यों (परिवर्तन की भाषा में) रखते है। तथा दोनों की सिद्धि के हेतु किन किन सामग्री की सहाय ली जा सकती है इसका वर्तन करते है।

सामान्य उद्देश्य : 1 सुनकर अर्थग्रहण करने की योग्यता प्राप्त करना

श्रुत सामग्री		**विशिष्ट उद्देश्य : अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन**
आदेश निर्देश	1.	शिक्षार्थी धैर्यपूर्वक तथा मनोयोगपूर्वक सुनेगा।
वार्तालाप	2.	वह सुनने के लिए शिष्टचार का पालन करेगा।
प्रवचन	3.	ग्रहणशीलता की मनः स्थिति बनाये रखेगा
सस्वर पठन–भाषण	4.	शब्दों, मुहावरों और उक्तियों का प्रसंगानुकूल
वाद विवाद	5.	वह महत्त्वपूर्ण विचारों, भावो एवं तथ्यों का चयन कर सकेगा, इनका परस्पर सम्बन्ध समझ सकेगा। मूल्यांकन कर सकेगा।
रेडियो प्रसारण	6.	वक्ता के मनोभाव को समझ सकेगा।
टी. वी. प्रसारण	7.	केन्द्रीय भाव या विचार को ग्रहण कर सकेगा।
	8.	सारांश ग्रहण कर सकेगा।

सामान्य उद्देश्य : 2 बोलकर अभिव्यक्त करने की योग्यता प्राप्त करना

मौखिक अभिव्यक्तिरुप सामग्री		**विशिष्ट उद्देश्य : अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन**
वार्तालाप	1.	शिक्षार्थी सुश्रव्या वाणी में प्रसंगानुसार उचित गति के साथ बोल सकेगा।
सस्वर पठन	2.	वह शुद्ध उच्चारण व स्वर उतार–चढ़ाव के साथ बोल सकेगा।
भाषण	3.	उचित विराम के साथ बोल सकेगा।
वाद-विवाद	4.	उचित हावभाव के साथ बोलते हुए शिष्टाचार का पालन कर सकेगा।
	5.	व्याकरण सम्पत भाषा का प्रयोग कर सकेगा।
	6.	प्रसंगानुकूल शब्दों, मुहावरों तथा सूक्तियों का शुद्ध प्रयोग कर सकेगा।
	7.	वह अभीष्ठ सामग्री प्रस्तुत कर सकेगा।
	8.	क्रमबद्धता, सुसम्बद्धता तथा विषय की एकता बनाये रखेगा।

सामान्य उद्देश्य : 2 पढ़कर अर्थग्रहण करने की योग्यता प्राप्त करना

पठित सामग्री		**विशिष्ट उद्देश्य : अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन**
कविता	1.	शिक्षार्थी धैर्यपूर्वक व मनोयोगपूर्वक पढेगा तथा ग्रहणशीलता की
कहानी		स्थिति बनाए रखेगा।
निबंध	2.	विषयानुसार उचित गतिपूर्वक पढ़ सकेगा।
एकांकी	3.	वह शुद्धि उच्चारण व आरोह–अवरोह के साथ भावानुरुप सस्वर
जीवनी		वाचन करेगा।
नाटक	4.	शब्दों, मुहावरों तथा वाक्यांशों का प्रसंगानुकूल अर्थ व भाव समझ सकेगा।
उपन्यास	5.	महत्त्वपूर्ण विचारों, भावों एवम् तथ्यों का चयन कर, उनका परस्पर सम्बन्ध स्थापित कर सकेगा। तथा मूल्यांकन कर सकेगा।
	6.	लेखक के मनोभाव को समझ सकेगा।
	7.	केन्द्रीय भाव या विचार ग्रहण कर सकेगा।
	8.	सारांश ग्रहण कर सकेगा।

सामान्य उद्देश्य : 4 लिखकर अभिव्यक्ति करने की योग्यता प्राप्त करना

लिखित अभिव्यक्ति के रुप	विशिष्ट उद्देश्य : अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन
निबन्ध	1. शिक्षार्थी सुपाठ्य लेख आवश्यक गति के साथ लिख सकेगा।
कहानी	2. शब्दों की शुद्ध वर्तनी तथा व्याकरण सम्मत भाषा का प्रयोग कर सकेगा।
संवाद	
आत्मकथा	3. वह विराम चिह्नों का यथोचित प्रयोग कर सकेगा।
जीवनी	4. लेखन कार्य में परिच्छेद ठीक प्रकार बना सकेगा।
पत्र, प्रार्थना पत्र	5. वह विभिन्न रचनावाले वाक्यों का शुद्ध गठन कर सकेगा।
	6. प्रसंगानुसार उचित शब्दों, मुहावरो व सूक्तियों का प्रयोग कर सकेगा।
	7. वह अभीष्ठ सामग्री प्रस्तुत करेगा।
	8. लेखन में क्रमबद्धता, सुसम्बद्धता तथा एकता बनाए रखेगा।
	9. वह लिखित अभिव्यक्ति के विभिन्न रुपों के माध्यम से अपने भाव एवं विचार व्यक्त कर सकेगा।

सामान्य उद्देश्य : 5 भाषा के तत्त्वों का ज्ञान प्राप्त करना

भाषा के तत्त्व	विशिष्ट उद्देश्य : अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन
उच्चारण (स्वर, व्यंजन	1. शिक्षार्थी इन्हें पहचान सकेगा।
संयुक्ताक्षर, आदि)	2. वह इनका प्रत्याभिज्ञान कर सकेगा।
वर्तनी	3. वह इनके अशुद्ध रुपों में त्रुटियाँ पकड़ सकेगा।
शब्दभेद (पर्यायवाची,	4. वह इनके उदाहरण दे सकेगा।
विलोमार्थी)	5. वह इनकी तुलना कर सकेगा।
रुपान्तर (वचन, लिंग)	6. वह इनमें परस्पर अन्तर बता सकेगा।
उपसर्ग, प्रत्यय	7. वह इनका परस्पर सम्बन्ध बता सकेगा।
संधि-समास	8. वह इनका विश्लेषण कर सकेगा।
शब्द भंडार (शब्द, मुहावरें,	9. वह इनका संश्लेषण कर सकेगा।
लोकोक्तियाँ आदि)	

सामान्य उद्देश्य : 6 विषयवस्तु का ज्ञान प्राप्त करना

विषयवस्तु	विशिष्ट उद्देश्य : अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन
व्यावहारिक ज्ञान	उद्देश्य संख्या 5 में दिये गये ज्ञान के अन्तर्गत सभी अपेक्षित परिवर्तन।
तथ्य व घटनाएँ	
सांस्कृतिक मूल्य	
जीवनगत अनुभूतियाँ	
सदाचार साहित्यिक व	
धार्मिक प्रवृत्तियाँ	
पौराणिक गाथाएँ	

सामान्य उद्देश्य : 7 रचनाकार्य के विभिन्न रुपों का ज्ञान प्राप्त करना

रचना कार्य	विशिष्ट उद्देश्य : अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन
मौखिक :	
वार्तालाप, भाषण, वादविवाद, साक्षात्कार, चित्रअध्ययन, कहानी कहना आदि	उदेश्य संख्या 5 में दिये गये ज्ञान के अन्तर्गत सभी अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन।
लिखित :	
पत्र, निबन्ध, संवाद, सार लेखन, कहानी, जीवनी, आत्मकथा आदि	

सामान्य उद्देश्य : 8 साहित्य की विविध विद्याओं का ज्ञान प्राप्त करना

साहित्य की विद्याएँ	विशिष्ट उद्देश्य : अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन
काव्य (प्रबन्ध, मुक्तक) गीत, गद्यगीत, आदि निबन्ध, कहानी, एकांकी नाटक, उपन्यास आदि	उद्देश्य संख्या 5 में दिये गये ज्ञान के अन्तर्गत सभी अपेक्षित परिवर्तन।

3.3.6 अन्य भाषा (भाषा) के रुप में हिन्दी शिक्षा के उद्देश्य

शिक्षण की दृष्टि से प्रत्येक भाषा की दो स्थितियाँ है। मातृभाषा एवं अन्य भाषा। अन्य भाषा की दृष्टि से उसकी शिक्षण स्थितियाँ मातृभाषा से अधिकत्तर भिन्न होती है।

आप जानते है कि बालक विद्यालय आने से पूर्व ही मातृभाषा का उपयोग करने लगता है। बालक मातृभाषा के तत्त्वों को सरलता से ग्रहण कर लेता है जब कि अन्य भाषा के तत्त्व व कौशल प्रयासपूर्वक सीखने पड़ते है। तब मातृभाषा के अनुभव तथा गठन का प्रभाव उसके द्वितीय भाषा अध्ययन पर भी पड़ता है। फलतः उसका मातृभाषा का ज्ञान द्वितीय भाषा के अधिगम में व्याघात उत्पन्न करता है। शिक्षक के नाते आप ध्यान रखें कि द्वितीय भाषा शिक्षण अन्य भाषा या द्वितीय भाषा के रुप में होता है। अन्यभाषा या द्वितीय भाषा शिक्षण के उद्देश्य इस प्रकार है :

- **कौशलात्मक उद्देश्य :** भाषा कौशलो के विकास से शिक्षार्थी में निम्नलिखित व्यवहारगत परिवर्तन होंगे।
- **सुनना :** हिन्दी में मौखिक विचारों को सुनकर समझ सकेंगे।

  आकाशवाणी तथा दूरदर्शन पर प्रसारित कार्यक्रमों को सुनकर समझ सकेंगे।

  दूरदर्शन पर हिन्दी सुनकर दृश्यों से उसकी संगति बैठा सकेंगे।
- **बोलना :** हिन्दी के माध्यम से अपने विचारों को मौखिक रुप से बोलकर प्रकट कर सकेंगे।

  हिन्दी के माध्यम से अपने विचारों की यथा सम्भव शुद्ध उच्चारण के साथ एवं उपयुक्त शब्दावली का प्रयोग करते हुए मौखिक अभिव्यक्ति कर सकेंगे।
- **पढ़ना :** लिखित रुप से व्यक्त विचारों को पढ़ सकेंगे।

  लिखित रुप से व्यक्त विचारों को पढ़कर समझ सकेंगे।
- **लिखना :** हिन्दी के माध्यम से अपने विचारों को लिखित रुप में व्यक्तकर सकेंगे।

  पढ़े हुए अंशो को सारांश के रुप में लिख सकेंगे।

3.3.7 कक्षाध्यापन के सम्बन्ध में शैक्षिक उद्देश्य

कक्षा में हिन्दी अध्यापन के द्वारा शिक्षार्थी के व्यवहार में कौन कौन से परिवर्तन अपेक्षित है ? इसके उत्तर देते ये उद्देश्य बैन्जामीन ब्लूम महोदय ने कक्षाध्यापन के पश्चात् शिक्षार्थी के व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तनो को चार वर्गों में विभाजित किया है।

1. ज्ञानात्मक (नोलेज)

2. बोधात्मक (कम्प्रिहेन्सन)

3. प्रयोजनात्मक (एप्लीकेशन)

4. मूल्यांकनात्मक (इवेल्यूएशन)

प्रत्येक वर्ग के अन्तर्गत अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन इस प्रकार है :

1. ज्ञानात्मक उद्देश्य :

शिक्षार्थी में अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन इस प्रकार है .....

- हिन्दी भाषा के तत्त्वों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- हिन्दी भाषा की शब्दावली सीख सकेंगे।
- हिन्दी भाषा के व्यावहारिक व्याकरण का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- हिन्दी व मातृभाषा की वाक्य रचनाओं में अन्तर जान सकेंगे।
- हिन्दी की विद्याओं का सामान्य परिचय प्राप्त करेंगे।

2. बोधात्मक उद्देश्य :

शिक्षार्थी में व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन इस प्रकार है .....

- पाठ्यसामग्री को पढ़कर उसका अर्थ समझ सकेगा।
- श्रुत सामग्री को सुनकर अर्थ समझ सकेगा।
- सामग्री से प्रमुख मुद्दों को वर्गीकृत कर सकेगा।
- सामग्री का व्यंजनार्थ समझ सकेगा।
- सामग्री का सारांश लिख/बोल सकेगा।

3. प्रयोजनात्मक उद्देश्य :

शिक्षार्थी के व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन इस प्रकार है :

- नये शब्दों की संरचना कर सकेगा।
- वाक्य परिवर्तन कर सकेगा।
- पूछे गये प्रश्नों के उत्तर दे सकेगा।
- रुपरेखा के आधार पर कहानी लिख सकेगा।
- आरेख तथा कोष्टक को पढ़कर अर्थघटन कर सकेगा।

4. मूल्यांकनात्मक उद्देश्य

शिक्षार्थी के व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन इस प्रकार है :

- पठित सामग्री के विषय में अपना अभिप्राय दे सकेगा।
- पाठ्य सामग्री का अर्थघटन कर उसकी योग्यता के विषय में निर्णय दे सकेगा।
- पाठ्य/श्रव्य सामग्री का विवेचन कर सकेगा।

बोध प्रश्न :

1. गुजरात में हिन्दी शिक्षण के प्रमुख चार उद्देश्य लिखें।

....

....

....

....

....

....

2. कक्षाध्यापन के उद्देश्यों के मुख्य क्षेत्र लिखें।

....

....

....

....

....

....

3. प्रथम भाषा तथा द्वितीय भाषा शिक्षण के उद्देश्यों में अन्तर क्या है ?

....

....

....

....

....

....

प्रथमभाषा तथा द्वितीय भाषा के शिक्षण उद्देश्यों में अन्तर

- प्रथम भाषा तथा द्वितीय भाषा के शिक्षण उद्देश्यों में अन्तर होना स्वाभाविक है। प्रथम भाषा मातृभाषा है। हिन्दीत्तर प्रान्तों में हिन्दी द्वितीय भाषा है।
- मातृभाषा बालक के मानसिक एवं भावात्मक रचना का आधार एवं साधन है। अतः मातृभाषा में हम साहित्यिक सौन्दर्यबोध, नैतिक मूल्यों का उत्कर्ष एवं व्यक्तित्व विकास करते हैं परन्तु द्वितीय भाषा के उद्देश्य मूलतः कौशलात्मक, ज्ञानात्मक सौन्दर्य बोधात्मक, रचनात्मक और अभिरुच्यात्मक उद्देश्यों तक ही सीमित रखते है।
- हिन्दीतर प्रान्तों में हिन्दी जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सीखी नहीं जाती है। वहाँ तो सम्पर्क भाषा के हेतु से सीखी जाती है।
- कुछ विचारकों का मत है कि प्रथम भाषा तथा द्वितीय भाषा शिक्षण में भाषाई कौशलों का क्रम मातृभाषा कौशलों के क्रम से भिन्न हो जाता है। द्वितीय भाषा में पढ़ने का अभ्यास होने पर ही बोलने का अभ्यास हो पाता है। अतः पढ़ना और बोलना एक साथ होता है।
- द्वितीय भाषा में पठन कौशल पर विशेष बल देने की आवश्यकता है।
- द्वितीय भाषा में 'अर्थबोध' महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है।

बोध प्रश्न :

4. द्वितीय भाषा में किन किन कौशलों पर अधिक बल दिया जाता है ? तर्कपूर्ण उत्तर दीजिए।

....

....

....

....

....

....

3.4 वर्तमान विद्यालयीय पाठ्यक्रम में हिन्दी का स्थान

औपचारिक शिक्षा का एक आवश्यक पक्ष विभिन्न विषयों का अध्ययन एवं अध्यापन है। ज्ञान विज्ञान के इन सभी विषयों को हम भाषा के माध्यम से ही पढ़ते एवं पढ़ाते है। अतः विद्यालयीय पाठ्यक्रम में भाषा

का महत्त्वपूर्ण स्थान है। विद्यालय के पाठ्यक्रम में भाषा का अध्ययन अनेक रुपों में होता है। जैसे मातृभाषा, राजभाषा, सांस्कृतिक भाषा तथा विदेशी भाषा।

हिन्दी भाषा का अध्ययन विद्यालय के पाठ्यक्रम में दो रुपों में किया जाता है।

1. मातृभाषा के रुप में
2. राजभाषा के रुप में

- **हिन्दी : मातृभाषा के रुप में**

भारत एक बहुभाषी देश है। यहाँ मातृभाषा के पद पर प्रतिष्ठित अनेक भाषाएँ है जो भिन्न भिन्न राज्यों में शिक्षा का माध्यम है। हिन्दी को उत्तर प्रदेश, बिहार, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान, मध्यप्रदेश, हरियाणा तथा दिल्ली में मातृभाषा के रुप में मान्यता प्राप्त है। अतः इन प्रदेशों में विद्यालय के पाठ्यक्रम में मातृभाषा के रुप में हिन्दी भाषा का अध्ययन अध्यापन होता है। साथ ही साथ हिन्दी विद्यालयीय शिक्षा का माध्यम भी है।

- **हिन्दी : राजभाषा के रुप में**

भारतीय संविधान ने हिन्दी को भारत की राजभाषा घोषित किया है। हिन्दी भाषी प्रदेशों में हिन्दी मातृभाषातथा राजभाषा दोनों ही है। किन्तु हिन्दीतर भाषी प्रदेशों में हिन्दी केवल राजभाषा है, उनकी मातृभाषा अलग है। अतः इन प्रदेशों में हिन्दी अन्यभाषा के रुप में पढ़ाई जाती है।

- **त्रिभाषा सूत्र के सन्दर्भ में हिन्दी का पाठ्यक्रम में स्थान**

भारत एक बहुभाषी देश है। प्रत्येक प्रदेश की अपनी मातृभाषा है और वहाँ शिक्षा का माध्यम भी है। इसके अतिरिक्त विभिन्न कारणों से भारत में अंग्रेजी को भी विशिष्ट स्थान प्राप्त है। एक ओर तो वह संविधान के अनुसार सह राजभाषा के स्थान पर है तो दूसरी ओर अन्तर्राष्ट्रीय संदर्भ में सम्प्रेषण एवं ज्ञान-विज्ञान का माध्यम है।

भारत की इस विशिष्ट भाषिक स्थिति को देखते हुए त्रिभाषा सूत्र की संकल्पना की गयी है। त्रिभाषा सूत्र के अनुसार माध्यमिक स्तर पर बालक को कम से कम तीन भाषाएँ पढ़नी होंगी – प्रदेश की भाषा (जिसे मातृभाषा का दर्जा प्राप्त है)। हिन्दी तथा अंग्रेजी। इस सन्दर्भ में शिक्षा आयोग ने (1964-66) एक संशोधित त्रिभाषा सूत्र प्रस्तुत किया है। जो इस प्रकार है :

1. मातृभाषा या क्षेत्रीय भाषा
2. केन्द्र की राजभाषा (हिन्दी) या सह राजभाषा
3. एक आधुनिक भारतीय भाषा या विदेशी भाषा जिसे नंबर 1 या 2 में न रखा गया हो तथा जो शिक्षा के माध्यम से भिन्न हो। इस प्रकार हिन्दी भाषी प्रदेशों के विद्यालयी पाठ्यक्रमों में त्रिभाषा सूत्र का स्वरुप इस प्रकार है – प्रथम भाषा हिन्दी, द्वितीय भाषा अंग्रेजी, तृतीय भाषा संस्कृत या अन्य कोई।

बोध प्रश्न :

5. त्रिभाषा सूत्र लिखिए।

....
....
....
....
....
....

3.5 सारांश

इस इकाई में हमने जाना कि भाषा शिक्षण सौद्‌देश्य प्रक्रिया है। अतएव भाषा शिक्षक को भाषा शिक्षण के उद्‌देश्य से अवगत होना चाहिए। इ.स.1958 में आयोजित भाषा शिक्षण विषय राष्ट्रीय संगोष्ठी में भाषा

शिक्षण के प्रमुख चार उद्देश्य — ग्राह्यात्मक, अभिव्यंजनात्मक, सराहनात्मक तथा रचनात्मक अथवा सृजनात्मक निर्धारित किये थे ।

त्रिभाषा सूत्र के अनुसार जिन प्रान्तों में मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा हिन्दी नहीं है वहाँ द्वितीय भाषा या राज भाषा के रुप में हिन्दी का अध्यापन होता है वहा हिन्दी भाषा शिक्षा के उद्देश्य इस प्रकार है : कौशल्यात्मक, तथा ज्ञानात्मक ।

NcÅERT ने हिन्दी भाषा शिक्षा के प्रमुख 8 उद्देश्य घोषित किये है – सुनकर अर्थग्रहण करने की योग्यता प्राप्त करना, पढ़कर अर्थग्रहण करने की योग्यता प्राप्त करना, बोलकर अभिन्यक्त करने की योग्यता प्राप्त करना, लिखकर अभिव्यक्त करने की योग्यता प्राप्त करना, भाषा के तत्त्वों का ज्ञान प्राप्त करना, विषय वस्तु का ज्ञान प्राप्त करना, रचना कार्य के भिन्न भिन्न रुपों का ज्ञान प्राप्त करना, साहित्य के विविध रुपों का ज्ञान प्राप्त करना । इन सब के अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तनों की भी सूचि दी गई है ।

गुजरात में हिन्दी भाषा शिक्षा के प्रमुख चार उद्देश्य है — सरल हिन्दी में बोलकर विचार प्रस्तुत करना, सुनी हुई हिन्दी भाषा को समझना, हिन्दी में पठन सामग्री को पढ़कर उसका बोधन करना, तथा लिखकर अभिव्यक्त करना । इस के अतिरिक्त सूचनाएँ, विज्ञप्तियाँ आदि पढ़कर या सुनकर समझना भी उद्देश्य है ।

इस इकाई में कक्षाध्यापन के लिए हिन्दी शिक्षा के व्यवहारगत (विशिष्ट) उद्देश्य की भी चर्चा की गई है । ब्लूम टैक्सोनोमी को द्वितीयभाषा के अध्यापन के अनुसार स्वीकार की गई है । तदानुसार ज्ञानात्मक, बोधात्मक, प्रजोजनात्मक एवं मूल्यांकनात्मक उद्देश्यों की चर्चा की गई है ।

वर्तमान विद्यालयीय पाठ्यक्रम में हिन्दी का स्थान निर्धारित करने त्रिभाषा सूत्र का सन्दर्भ लिया गया है। जहाँ मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा हिन्दी नहीं है वहाँ हिन्दी द्वितीय भाषा के रुप में पाठ्यक्रम में स्थान रखती है ।

3.6 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. गुजरात में हिन्दी भाषा शिक्षण के प्रमुख चार उद्देश्य इस प्रकार है :
   1. सुनकर हिन्दी अभिव्यक्ति को समझना
   2. पढ़कर हिन्दी अभिव्यक्ति को समझना
   3. सरल हिन्दी में बोलकर अभिव्यक्त करना
   4. सरल हिन्दी में लिखकर अभिव्यक्त करना
2. कक्षाध्यापन के उद्देश्यों के प्रमुख चार क्षेत्र इस प्रकार है :
   1. ज्ञानात्मक क्षेत्र
   2. बोधात्मक क्षेत्र
   3. प्रयोजनात्मक क्षेत्र
   4. मूल्यांकनात्मक क्षेत्र
3. प्रथम भाषा तथा द्वितीय भाषा शिक्षा के उद्देश्यों में निम्नांकित अन्तर है :
   1. प्रथम भाषा का हिन्दी शिक्षा के उद्देश्यों में साहित्यिक सौन्दर्य बोध, नैतिक मूल्यों का उत्कर्ष एवं व्यक्तित्व विकास प्रमुख है जब कि द्वितीय भाषा शिक्षा के उद्देश्य कौशल्यात्मक, ज्ञानात्मक, अभिरुचात्मक विशेष होते है ।
   2. हिन्दीतर भाषी प्रान्तों में हिन्दी की शिक्षा जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नहीं सीखी जाती वरन् देश के अन्य अहिन्दी भाषी राज्यों से सम्पर्क स्थापन के लिए तथा अखिल भारतीय स्तर पर सम्पर्क साधन के लिए सीखी जाती है ।
4. द्वितीय भाषा में पठन कौशल पर विशेष बल दिया जाता है । द्वितीय भाषा में अर्थबोध महत्त्वपूर्ण है । द्वितीय भाषा में पढ़ने के अभ्यास के साथ–साथ बोलने का अभ्यास भी हो जाता है ।

5. त्रिभाषा सूत्र इस प्रकार है :

- मातृभाषा या प्रादेशिक भाषा
- केन्द्र की राजभाषा (हिन्दी) अथवा सह राजभाषा (अंग्रेजी)
- आधुनिक भारतीय भाषा या विदेशी भाषा

3.7 सन्दर्भ ग्रंथ

इकाई 4

हिन्दी शिक्षण की व्यवस्था एवं सामग्री

: रूपरेखा :

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 हिन्दी शिक्षण में पाठ्यपुस्तक

- 4.3.1 हिन्दी पाठ्यपुस्तक का स्वरुप
- 4.3.2 पाठ्यपुस्तक के गुण
- 4.3.3 अध्ययन पक्ष
- 4.3.4 पाठ्यसामग्री का प्रस्तुतीकरण
- 4.3.5 अभ्यास
- 4.3.6 हिन्दी भाषा शिक्षण की पाठ्यपुस्तक का रुपात्मक पक्ष
- 4.3.7 सहायक पुस्तकों का निर्माण

4.4 हिन्दी शिक्षण में दृश्य-श्रव्य सामग्री का प्रयोग

- 4.4.1 यांत्रिक दृश्य उपकरण
- 4.4.2 सहज दृश्य उपकरण
- 4.4.3 यांत्रिक श्रव्य उपकरण
- 4.4.4 श्रव्य के सहज साधन
- 4.4.5 दृश्य-श्रव्य यांत्रिक उपकरण
- 4.4.6 दृश्य-श्रव्य के सहज साधन
- 4.4.7 उदाहरण एवं साक्ष्य, दृश्य एवं मौखिक

4.5 हिन्दी शिक्षण में पाठ्य सहगामी क्रियाएँ एवं उनकी उपयोगिता

- 4.5.1 उपयोगिता एवं महत्त्व
- 4.5.2 पाठ्यचर्या सहगामी क्रियाएँ

4.6 हिन्दी शिक्षक के गुण एवं अपेक्षाएँ

- 4.6.1 शिक्षक के गुण
- 4.6.2 हिन्दी शिक्षक से अपेक्षाएँ

4.7 सारांश

4.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.9 उपयोगी पुस्तकें

4.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में हमने जाना कि पाठ्यक्रम में भाषा का स्थान है; मातृभाषा की क्या अवधारणा है एवं मातृभाषा शिक्षण के क्या उद्देश्य है तथा विद्यालयीय पाठ्यचर्या में हिन्दी भाषा का स्थान क्या है ? साथ ही हमने यह भी जाना कि प्रथम, द्वितीय एवं अन्य भाषा के रुप में हिन्दी शिक्षण के उद्देश्यों में क्या अन्तर है ?

इस इकाई में हम हिन्दी शिक्षण की व्यवस्था एवं विषय सामग्री के अंतर्गत हिन्दी की पाठ्य पुस्तक का महत्त्व, उसका स्वरुप, निर्माण-सिद्धांत, उसकी रचना प्रक्रिया एवं विशेषताओं का परिचय प्राप्त करेंगे ।

साथ ही हिन्दी शिक्षण में दृश्य श्रव्य सामग्री एवं पाठ्य सहगामी क्रियाओं की प्रभाविता एवं उनके प्रयोग पर भी विचार करेंगे । इसके अतिरिक्त यह भी विवेचन करेंगे कि एक हिन्दी शइक्षक से क्या-क्या अपेक्षाएँ की जाती है और उसमें कौन-कौन से गुण होने चाहिए।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई पढ़ने के बाद आप :

- हिन्दी शिक्षण में पाठ्य पुस्तक के महत्त्व का विवेचन कर सकेंगे ।
- हिन्दी की पाठ्य पुस्तक तथा सहायक पुस्तकों के स्वरुप, निर्माण-सिद्धांत एवं उनकी विशेषताएं बता सकेंगे ।
- हिन्दी शिक्षण के उपयुक्त दृश्य-श्रव्य सामग्री का प्रयोग कर सकेंगे ।
- हिन्दी शिक्षण में पाठ्य सहगामी क्रियाओं के महत्त्व को समझकर उनका आयोजन करने में समर्थ हो सकेंगे ।
- हिन्दी शिक्षक में अपेक्षित गुणों एवं विशेषताओं की जानकारी प्राप्त कर उन्हें अपनाने के लिए प्रेरित होंगे ।

4.3 हिन्दी शिक्षण में पाठ्यपुस्तक

आइए विचार करें कि हिन्दी शिक्षण में पाठ्य पुस्तकों का क्या महत्त्व है ?

- हिन्दी पाठ्य पुस्तक कक्षा के लिए आधार का कार्य करती है । इसके द्वारा पाठ्य विषय, कविता, कहानी, लेख, निबन्ध, एकांकी, आदि का स्वरुप सामने आ जाता है ।
- पाठ्य पुस्तक से हिन्दी के शिक्षक पाठ्य सामग्री को विभिन्न पाठों एवं इकाइयों में विभाजित करे व्यवस्थित रुप में प्रस्तुत कर लेते है ।
- पाठ्य पुस्तक शिक्षक एवं शिक्षार्थी दोनो के लिए प्रतिदिन संचेतक की तरह कार्य करती है । शिक्षक एवं शिक्षार्थी दोनों ही अपने विषय सीमा के विस्तार के प्रति सतर्क एवं अवगत रहते है ।
- पाठ्य पुस्तक बालकों को स्वाध्याय के लिये प्रेरित करती है । आवृत्ति के लिये भी यह बहुत उपयोगी सिद्ध होती है । बालक विषय सामग्री को सरलता से ही आत्मसात कर लेते है ।
- सामूहिक शिक्षण व्यवस्था में पाठ्य पुस्तक बहुत ही आवश्यक एवं उत्तम शैक्षणिक साधन है । भाषा व साहित्य के अध्ययन अध्यापन में पाठ्य पुस्तक अनिवार्य है ।
- पाठ्य पुस्तकों के माध्यम से पाठ्य सामग्री के रुप में साहित्य, संस्कृति, धर्म, कला, भूगोल, इतिहास, ज्ञान-विज्ञान, वाणिज्य-उद्योग, व्यापार, मनोरंजन, खेलकूद आदि अनेक प्रकार के विषयों का समावेश होता है । इस प्रकार हिन्दी शिक्षण में अनेक स्त्रोतों से प्राप्त पाठ्य सामग्री एकत्र उपलब्ध होती है ।

4.3.1 हिन्दी पाठ्यपुस्तक का स्वरुप

पाठ्य पुस्तक के दो पक्ष होते हैं अध्ययन पक्ष एवं रुपात्मक पक्ष ।

अध्ययन पक्ष के अन्तर्गत विषय सामग्री सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है, उसके चयन व संगठन का विशेष महत्त्व है ताकि विद्यार्थी का ज्ञान विकसित हो सके । बाह्य अथवा रुपात्मक पक्ष में पाठ्य पुस्तक का स्वरुप अच्छी जिल्द से युक्त आकर्षक, मुद्रण स्पष्ट व पठनीय, कागज उत्तम स्तर का एवं अधिक समय तक चलने वाला तथा अच्छी प्रकार के टाईप का होना सम्मिलित है ।

4.3.2 पाठ्यपुस्तक के गुण

1. भाषा ज्ञान की वृद्धि

भाषा की पाठ्य पुस्तक का प्रथम गुण है — भाषा ज्ञान की वृद्धि। अत: प्रत्येक पाठ में ज्ञान-विज्ञान की चर्चा सामान्य जानकारी तक सीमित हो एवं भाषा ज्ञान एवं कौशल की वृद्धि पर विशेष ध्यान देना अभीष्ट है।

2. उपयुक्तता

भाषा शिक्षण की पुस्तक प्राथमिक, माध्यमिक, वरिष्ठ माध्यमिक कक्षाओं एवं बालको की आयु एवं बोध के अनुरुप हो, ताकि इस आयु के आधार पर पाठ्य पुस्तकों का उपयोग उनके व्यक्तित्व के उत्तरोत्तर वृद्धि का साधन बन सके।

3. रोचकता

रुचि से अध्ययन सरल बन जाता है। रुचि का सिद्धांत एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है, अत: पुस्तकों में रुचिकर सामग्री का संकलन अधिक अपेक्षित है।

4. जीवन से सम्बद्धता

शिक्षा का सम्बन्ध शिक्षार्थी के वर्तमान तथा भावी जीवन से होता है अत: पाठ्य पुस्तकों का निर्माण करते समय उन्हें जीवन के अनुभवों से सम्बन्धित करना अभीष्ट है।

5. क्रमबद्धता

पाठ्य पुस्तक के पाठों का आयोजन सरल से जटिल की ओर के शिक्षा सूत्र पर किया जाना चाहिए ताकि छात्रों को बोधगम्य प्रतीत हो एवं वे विषय बोध के साथ-साथ भाषिक तत्त्वों का क्रमिक ज्ञान प्राप्त कर सकें।

6. आदर्शवादिता

पाठ्य पुस्तकों का निर्माण करते समय देश, संस्कृति इतिहास के आदर्शों से युक्त पाठों का संकलन आवश्यक है ताकि छात्र नया संदेश एवं प्रेरणा प्राप्त कर अपने जीवन में आदर्श एवं मूल्यों की स्थापना कर सकें।

7. व्यवहारिकता

पाठ्य पुस्तकों की संरचना में ध्यान दिया जाना चाहिए कि वे छात्रों की व्यावहारिक बुद्धि का विकास कर सकें एवं उन्हें लोकाचार की शिक्षा दे सकें।

8. भाषा की शुद्धता

हिन्दी भाषा शिक्षण की पाठ्य पुस्तक भाषा की दृष्टि से शुद्ध होनी चाहिए। ताकि छात्र अपनी भाषा शुद्ध कर सकें एवं अपनी भाषा की त्रुटियों का सुधार कर सकें। शुद्धता के अन्तर्गत वर्तनी, विरामचिन्हों के प्रयोग, व्याकरण, वाक्य रचना तथा शब्दप्रयोग पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। पाठ्य पुस्तक शिक्षार्थी के लिए आदर्श होती है अत: पाठ्यपुस्तक में निहित कोई भी अशुद्धि उस के भाषा ज्ञान को दूषित कर सकती है।

9. विविधता

हिन्दी भाषा की पाठ्य पुस्तक के निर्माण में यह अति महत्त्वपूर्ण तथ्य है कि पुस्तक में साहित्य की सभी विद्याओं-गद्य, पद्य, नाटक, निबन्ध, कहानी, संस्मरण आदि का संकलन हो। हिन्दी भाषा की पुस्तक सभी विद्याओं का प्रतिनिधित्व कर सके। साथ ही प्रत्येक काल की रचनाओं का संकलन भी इसे विविधता प्रदान करेगा। इसके अतिरिक्त इन विद्याओं में शैलीगत विविधता हो यथा तुकान्त-अतुकान्त कविता प्रत्येक रस का आस्वादन भी आवश्यक है। इसी प्रकार प्रकृति - वर्णनात्मक, भावात्मक, कथात्मक, विचारात्मक लेखों का संकलन पाठ्य पुस्तक को विविधता प्रदान करता है।

4.3.3 पाठ्यपुस्तक का अध्ययन पक्ष

अध्ययन पक्ष का मूल सन्दर्भ पाठ्य सामग्री से है। इस से शिक्षार्थी साहित्य के अपार भंडार से चुने हुए महत्त्वपूर्ण अंशों के अध्ययन से साहित्य एवं संस्कृति का आवश्यक प्राथमिक परिचय प्राप्त कर सकता है। अध्ययन पक्ष की समुचित व्यवस्था से वह साहित्य प्रासाद के प्रवेश द्वार पर खड़ा हो सकता है। जहाँ से वह साहित्य संस्कृति तथा ज्ञान एवं विज्ञान के विस्तृत उपवन से अपनी रुचि के अनुसार पुष्पों एवं फेलों का आस्वादन कर सकता है।

◆ **पाठ्य सामग्री**

1. **उद्देश्य**

   हमने पिछली इकाई में मातृभाषा शिक्षण के उद्देश्यों पर विचार किया है, अतः पाठ्य पुस्तक की पाठ्य सामग्री से इन उद्देश्यों की पूर्ति होनी चाहिए। विशेष रुप से ज्ञान का विकास, बोधगम्यता, मौलिकता, साहित्यकि रसानुभूति, साहित्यक रुचि का विकास एवें वांछित अभिवृत्तियों का पोषण करने वाली सामग्री भाषा-पुस्तक की आत्मा है।

2. **राष्ट्रीय लक्ष्य**

   राष्ट्रीय लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए पाठ्य सामग्री एक महत्त्वपूर्ण साधन है। अतः पाठ्य पुस्तक की पाठ्य सामग्री, राष्ट्रीय लक्ष्य यथा-एकता, जनतंत्र, सामाजिकता, धर्म निरपेक्षता आदि को समाहित करनेवाली होनी चाहिए। इसमें राष्ट्र प्रेम, नागरिकता का प्रशिक्षण, राष्ट्रीय सम्पत्ति की रक्षा, सामाजिक स्वास्थ्य, जनसंख्या नियन्त्रण, प्रदूषण प्ररिहार जैसे महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय विषयों का समावेश किया जा सकता है।

3. **विद्यार्थी**

   वर्तमान शैक्षिक विचार के अनुसार शिक्षा बाल केन्द्रित होनी चाहिए। विद्यार्थी के व्यक्तित्त्व के विकास के लिए पाठ्य वस्तु आधार का काम करती है। अतः पाठ्य वस्तु विद्यार्थी की आवश्यकताओं, रुचि, मानसिक परिपक्क्ता विभिन्न बौद्धिक स्तर के अनुरुप होनी चाहिए। विद्यार्थी के लिए हिन्दी भाषा शिक्षण की पुस्तक साधन के साथ साध्य भी है, अतः साध्य के रुप में पाठ्य पुस्तक शिक्षार्थी के भाषा ज्ञान को पुष्ट एवं परिपूर्ण करने वाली होनी चाहिए।

4. **भाषिक कौशल**

   हिन्दी भाषा शिक्षण की पाठ्य पुस्तकों की पाठ्य सामग्री भाषिक कौशलों का विकास करनेवाली होनी चाहिये। पाठ्य पुस्तक नवीन शब्द संरचनाओं, शब्द कोष विस्तार, मुहावरें, लोकोक्तियों, शब्द युग्म आदि के माध्यम से शिक्षार्थी में भाषिक कौशलों को विकसित करने में सक्षम होनी चाहिए।

5. **समयानुरुप पाठ्य सामग्री संयोजन**

   पाठ्य वस्तु की उत्कृष्टता के साथ-साथ इसका संयोजन संतुलित होना आवश्यक है। भाषिक योग्यताओं के विकास के लक्ष्य को पूर्ण करनेवाली शैक्षणिक सामग्री का पाठ्यक्रम के लिए निर्धारित समय के साथ संतुलन आवश्यक है, ताकि शिक्षण काल में प्रत्येक पाठ से साथ समान व्यवहार हो एवं सभी पाठों का ज्ञान एवं रसास्वादन हो सके।

6. **अन्य विषयों की पुस्तकों से सह-सम्बन्ध**

   चूँकि मातृभाषा शिक्षा का माध्यम है, अतः अन्य विषयों के साथ सह सम्बन्ध के अवसर उपलब्ध कराए जाने चाहिए किन्तु अन्य विषयों की पुस्तकों के पाठों-ज्ञान, विवरण आदि की आवृत्ति भाषा शिक्षण की पाठ्यपुस्तकों में नहीं होनी चाहिए। इस से विषय की पुनरावृत्ति के कारण पाठ्य पुस्तक उबाने वाली प्रतीत होगी।

4.3.4 पाठ्यसामग्री का प्रस्तुतीकरण

प्रस्तुतीकरण में निम्न बिन्दुओं पर विचार करना आवश्यक है **:**

1. पाठ्यसामग्री

2. पाठ का शीर्षक

3. पाठ की प्रस्तावना अथवा भूमिका (शिक्षकों व विद्यार्थियों के प्रति)

4. रचनाकार का परिचय

5. शब्दकोष, व्याख्या, टिप्पणी, अन्त: कथाएँ, सन्दर्भ

6. अभ्यास

1. विषय सामग्री

विषय सामग्री के कतिपय गुणों एवं अनिवार्यताओं की चर्च हम इसी इकाई में संक्षेप में कर चुके है। उन बिन्दुओं को ध्यान में रखकर पुस्तक निर्माण के समय पाठ की अनिवार्यताओं पर हम ध्यन देंगे । हम यह जान चुके है कि पाठ के प्रस्तुतीकरण में प्रत्येक साहित्यिक विद्या एवं शैलीगत विविधता के आधार पर प्रतिष्ठित लेखकों की रचनाओं का संकलन किया जाता है । अत: यह निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना पाठ्य पुस्तक लेखक का कर्तव्य होता है **:**

- पाठ के विषय की भूमिका रुचिकर हो ।
- भावों में सुसम्बन्धता एवं क्रमबद्धता हो ।
- वर्णन का प्रत्येक बिन्दु, कथा के घटनाचक्र का प्रत्येक मोड़ तथा नाटक का प्रत्येक अंश परस्पर सम्बन्द हों एवं उनका उत्तरोत्तर विकास हो ।
- उपसंहार स्पष्ट एवं सारगर्भित हो तथा जीवन मूल्यों के सन्दर्भ में प्रभावशाली संदेश से युक्त हो ।
- पाठ का विस्तार तथा लम्बाई शैली के अनुरुप हो ।

पाठ्य पुस्तक निर्माण के अवसर पर इन बिन्दुओं का ध्यान रखने से पाठ अपने आप अर्थपूर्ण हो जाता है ।

2. शीर्षक

पाठ का शीर्षक उत्कंठा जागृत करने वाला, अर्थपूर्ण एवं पाठ्य वस्तु की आत्मा से सम्बन्धित होना चाहिए । शीर्षक पाठ्य वस्तु के प्रति पाठक की रुचि को बढ़ा देता है । मुंशी प्रेमचन्द की कहानियाँ 'नमक का दरोगा', 'दो बैलों की कथा', माखनलाल चतुर्वेदी की प्रसिद्ध कविता 'पुष्प की अभिलाषा' अर्थपूर्ण शीर्षक है । पाठ के निर्माण का यह महत्त्वपूर्ण अंश है, क्योंकि सम्पूर्ण पाठ की पाठ्यवस्तु शीर्षक को केन्द्र बिन्दु बनाकर निर्मित होती है ।

3. पाठ की भूमिका (प्रस्तावना)

पाठ की भूमिका विशेष रुप से पाठ का पूर्व परिचय होता है । इसके अन्तर्गत पाठ का उद्देश्य, उसकी विशेषतायें, शिक्षकों के प्रति निर्देश एवं विद्यार्थियों के प्रति संकेत होते है । यह पाठ के प्रति शिक्षक एवं विद्यार्थी दोनों की पूर्व मानसिकता का उपयोग करते हुए नए पाठ को पढ़ने उत्सुकता पैदा करती है । अत: यह आवश्यक है कि भूमिका रुचिकर एवं पाठ को प्रति उत्कंठा उत्पन्न करने वाली हो ताकि पाठ जिससे शिक्षार्थी में स्वयमेव पढ़ने की इच्छा जागृत हो जाए ।

4. रचनाकार का सामान्य परिचय (माध्यमिक स्तर के लिए)

पाठ की भूमिका का दूसरा अंश रचनाकार का सामान्य परिचय होना चाहिए । यदि शिक्षार्थियों ने इस पाठ के रचनाकार की कोई भी अन्य कृति पूर्व कक्षा अथवा अन्यत्र पढ़ी है, तो इस पाठ के प्रति उनकी अधिक रुचि जागृत हो जायेगी, रचनाकार के प्रति ज्ञान में वृद्धि होगी, उसकी पिछली रचना से तुलना की जा सकेगी । यदि रचनाकार का चित्र भी पाठ्य पुस्तक में उचित स्थान पर जोड़ दिया जाए को उसे देखकर छात्रों में रचनाकार के प्रति एक आत्मीयता उत्पन्न होगी । साहित्यिक अभिवृत्ति जागरण हेतु यह प्रयास उत्तम है ।

5. शब्ददोश, व्याख्या, टिप्पणी, अंत: कथाएँ तथा सन्दर्भ

ये सब बिन्दु विशेषत: छात्र की सहायता के लिए हैं । विशिष्ट, कठिन, नवीन शब्दों का सन्दर्भगत एवं प्रसंगगत अर्थ पाठ के अन्त में अथवा अंक चिन्हित कर पाद-टिप्पणी की तरह भी दिया जा

सकता है। इसी प्रकार व्याख्या, विशिष्ट टिप्पणी, अंत: कथाएँ, सन्दर्भ आदि भी पाठ के अन्त में अथवा पाद-टिप्पणी के रुप में दिए जा सकते है। इससे विद्यार्थी को सहायता मिलती ही है, पाठ भी सरल बन जाता है।

4.3.5 अभ्यास

उपर्युक्त बिन्दुओं पर विचार कर लेने के पश्चात् आवश्यक है कि हम अभ्यास की ओर भी ध्यान दें, क्योंकि अभ्यास का भाषा शिक्षण की पुस्तक में विशेष महत्त्व है। अभ्यास पाठ्य सामग्री की प्रकृति के अनुरुप, शैक्षणिक उद्देश्यों की पूर्ति करने वाला, विद्यार्थी के मानसिक विकास के अनुसार, सीखे गए ज्ञान-विज्ञान एवं भाषिक कार्य की पुष्टि करने वाला होना चाहिए। हम निम्नलिखित बिन्दुओं के आधार पर देखेंगे कि अभ्यास कार्य पाठ्यवस्तु को सार्थक स्वरुप देने में कैसे सहायक हो सकता है।

1. सम्पूर्णता

अभ्यासों की रचना करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि सम्पूर्ण पाठ्य सामग्री के प्रमुख शिक्षण बिन्दुओं का प्रतिनिधित्व हो जाये। इसके साथ ही भाषिक तत्त्वों के ज्ञान की जाँच करने वाले अभ्यास भी आवश्यक है।

पाठ्यवस्तु के मूल बिन्दुओं से इतर या थोड़ा हटकर शिक्षार्थी में योग्यता विकास पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए ताकि छात्र के सामान्य भाषिक एवं साहित्यिक ज्ञानवर्धन को दिशा प्राप्त हो।

2. शैक्षणिक उद्देश्यों की पूर्ति

अभ्यासों की रचना शैक्षणिक उद्देश्यों की पूर्ति को ध्यान में रख कर करनी चाहिए, ये ज्ञान, बोध, अधिव्यक्ति एवं अभिवृत्ति विकास की पूर्ति में सहायक हों। साथ ही अभ्यास, बालक में व्यवहारगत परिवर्तन, ज्ञान-विकास, कौशलों का विकास, समीक्षा-शक्ति का विकास तथा रसास्वादन-प्रवृत्ति आदि सभी बिन्दुओं की जाँच करने वाले होने चाहिए।

3. अभ्यासों की विविधता

भाषा की पाठ्य पुस्तकों में प्राय: अभ्यासों में विषयगत निबन्धात्मक प्रश्न ही पूछे जाते हैं, इससे शिक्षार्थी एक ओर भाषिक तत्त्वों के अभ्यास से वंचित रह जाता है और दूसरी ओर उसके लिए यह रुचिविहीन क्रिया हो जाती है। अत: अभ्यास कार्य के अन्तर्गत विविध प्रकार के कार्य दिए जाने चाहिए जिनमें मौखिक, लिखित एवं क्रियात्मक कार्य को एक निश्चित अनुपात में स्थान देना चाहिए। विविध प्रकार के प्रश्नों यथा निबन्धात्मक, लघु उत्तरीय तथा वस्तुनिष्ठ प्रश्नों का यथोचित समावेश करना आवश्यक है, इससे शिक्षार्थी के बोध व अभिव्यक्ति की भली-भाँति जाँच हो सकती है। इन प्रश्नों में लिखित एवं मौखिक अभिव्यक्ति के प्रश्न अवश्य होने चाहिए।

4. अभ्यासों का स्वरुप या प्रकृति

अभ्यासों में निम्नलिखित प्रकार के प्रश्नों को स्थान दिया जा सकता है जिन से जहाँ एक ओर शिक्षार्थी को पठित विषय वस्तु एवं भाषिक तत्त्वों को निश्चित प्रकार से समझने, उनकी आवृत्ति करने, प्राप्त ज्ञान के विकसित करने एवं सार संक्षेप को समझने में सहायता मिलती है वहीं दूसरी ओर उनके ज्ञान में न्यूनता को पहचानने तथा उसे पूरा करने का अवसर प्राप्त होता है।

(i) **आवृत्ति के प्रश्न :** इन प्रश्नों के द्वारा पाठ के अन्तर्गत पठित सामग्री की आवृत्ति, प्रत्यास्मर्ण एवं अभिव्यक्ति के लिए अवसर उपलब्ध कराया जाता है।

(ii) **विकासात्मक प्रश्न :** पठित सामग्री के अंतर्गत तुलना, विश्लेषण, विस्तार एवं सम्बन्धित योग्यता के लिए ये प्रश्न उपयुक्त होते है। इन में पाठ में पढ़े विषयों से थोड़ा आगे बढ़ कर शिक्षार्थी को सोचने तथा ज्ञानार्जन का अवसर दिया जाता है।

(iii) **निष्कर्ष के प्रश्न :** इन प्रश्नों में पठित सामग्री सा मूल-भाव, विचार, प्रेरणा, जीवन मूल्य तथा विशेष सन्देश का विषय निबन्ध किया जाता है।

इस प्रकार के प्रश्नों में शिक्षार्थी के ज्ञान की जाँच अथवा उस की कमजोरी की जाँच की जाती है, उसके ज्ञान की कमजोरी जान कर उसे दूर किया जा सके।

प्रथम दो प्रकार के प्रश्नों की रचना के लिये आवश्यक है कि वे छात्र की मानसिक परिपक्वता एवं ग्राह्यता के लक्ष्य को पूर्ण करने वाले हो । ये संख्या में आवृत्ति एवं निदान के प्रश्नों से कम हो सकते हैं ।

5. प्रश्न की युक्तियाँ

हम पिछले बिन्दु में देख चुके है कि प्रश्न विविध प्रकार की अभिव्यक्तियों के लिये हों – यथा लिखित, मौखिक एवं क्रियात्मक ।

मौखिक अभिव्यक्ति	–	लघु उत्तरात्मक प्रश्न
	–	भाषिक कौशल के प्रश्न
	–	प्रत्युत्पन्नमति के प्रश्न (तत्काल विचार करके उत्तर दे सकें)
लिखित अभिव्यक्ति	–	निबन्धात्मक प्रश्न
	–	लघु उत्तर प्रश्न
	–	वस्तुनिष्ठ प्रश्न
क्रियात्मक प्रश्न	–	समीक्षात्मक प्रश्न, भाषिक कौशल की जाँच के प्रश्न
		बालक को किसी क्रिया में प्रवृत्त करने वाले प्रश्न

6. शिक्षार्थी

अभ्यास के प्रश्नों की रचना में शिक्षार्थी की मानसिक परिपक्वता तथा भाषा योग्यता का ध्यान रखना आवश्यक है । अभ्यास, सरल एवं रोचक हों, बोझिल नहीं, पाठ्य–वस्तु के अनुरुप हों, समय का निर्धारण प्रत्येक अभ्यास के अनुरुप हो ।

बोध प्रश्न :

1. पाठ्य पुस्तक निर्माण के अध्ययन पक्ष की 5 विशेषताएँ लिखिए ।

....

....

....

....

....

....

2. पाठ्य पुस्तक के 5 गुणों का उल्लेख कीजिए ।

....

....

....

....

....

....

4.3.6 पाठ्यपुस्तक का रुपात्मक पक्ष

इस भौतिक पक्ष एवं बाह्य स्वरुप के आधार पर हिन्दी भाषा शिक्षण की पुस्तक आकर्षक एवं ग्राह्य बन जाती है । आइए पुस्तक के इस पक्ष पर निम्न बिन्दुओं के आधार पर विचार करें –

1. आकार

पुस्तक का आकार, प्रारचना, टंकन आदि का चुनाव शिक्षार्थी की मनोवैज्ञानिक आवश्यकता तथआ शिक्षण युक्ति के अनुसार किया जाना चाहिए । पुस्तक के बाह्य तथा अंदर दोनों ही में स्वरुप का

आकर्षक होना समान रुप से महत्त्वपूर्ण है यद्यपि आजकल पुस्तकों के कई प्रकार के आकारों का प्रचलन है तथापि पुस्तक आकार 8" × 6" सरल एवं सहज है। इस प्रकार की पुस्तक बालक के लिए पढ़ने आदि के समय सम्भालने में सुविधा होती है।

2. प्रचना

पुस्तक की प्रचना (डिजाइन) रंगीन, आकर्षक, पुस्तक का स्पष्ट नाम लिखे होनी चाहिए। इसका पृष्ठ सन्तुलन विषय सामग्री के अनुरुप हो। पुस्तक के प्रथम मुख पृष्ठ, द्वितीय मुख पृष्ठ तथा चतुर्थ मुख पृष्ठ को इस प्रकार बनाया जाए जिस से शिक्षार्थी स्वतः उस की ओर आकृष्ठ हो।

3. जिल्द

जिल्द टिकाऊ एवं सुंदर होनी चाहिए। पुस्तक को किसी भी अंश से खोलने पर उसके मुद्रित अंश जिल्द की सिलाई में दबे न हों तथा पुस्तक खोलने पर पूरी तरह खुलने वाली होनी चाहिए, ऐसा न हो कि पुस्तक खुली रखने के लिए शिक्षार्थी को प्रयासरत रहना पड़े तथा तनिक सी ढील होने पर पुस्तक झट बंद हो जाए।

4. मुख पृष्ठ

मुख पृष्ठ आकर्षक, रंगीन एवं मनोरम होना चाहिए। मुख पृष्ठ पर पुस्तक का नाम, किस कक्षा के लिए निर्धारित है, सम्पादक अथवा लेखक का नाम, प्रकाशक का नाम, प्रकाशन वर्ष, मूल्य आदि का उल्लेख होना चाहिए।

5. कागज़

पुस्तक में प्रयुक्त कागज़ का इतना मोटा होना आवश्यक है कि मुद्रण स्पष्ट दिखाई दे, किन्तु पिछले पृष्ठ पर उसका कोई भी निशान झलकने वाला नहीं होना चाहिए। पाठ्य पुस्तक में घटिया स्तर पर कागज़ प्रयोग करने से पिछले पृष्ठ के अक्षरों का प्रभाव अथवा दबाव अगले पृष्ठ पर दिखाई देता है इससे पठनीय अंश दुरुह हो जाता है, असुन्दर लगता है तथा शिक्षार्थी में पढ़ने की रुचि को घटाता है। पुस्तक का कागज़ टिकाऊ हो तथा सफेद हो। कागज़ में इतनी चमक न हो कि शिक्षार्थी की नेत्र–ज्योति को प्रभावित करे।

6. टाईप

पुस्तक के मुद्रण में प्रयुक्त टाईप स्पष्ट रुप से पठनीय, सुगम एवं सुडौल होना चाहिए। उत्तम स्याही का प्रयोग होना चाहिए। अस्पष्ट तथा त्रुटिपूर्ण टाइप विषय सामग्री की गम्भीरता को नष्ट कर देता है। अक्षर सन्तुलित हों, अक्षरों व शब्दों के मध्य उचित दूरी हो, वाक्यों के विराम चिह्नों की उपयुक्तता (ताकि अर्थ का अनर्थ न हो) टाईप पर ही आधारित होती है। इसी से शिक्षार्थी की रुचि पुस्तक के पठन में बनी रहती है और उसके भाषिक एवं साहित्यिक कौशलों का विकास हो पाता है।

7. मुद्रण

पहले भी आप जान चुके हैं कि मुद्रण स्पष्ट और सुन्दर हो। यह पुस्तक को आकर्षक बना देता है। काला सफेद व रंगीन दोनों प्रकार का मुद्रण उपयुक्त है, किन्तु आकर्षक व स्पष्टता उसकी अनिवार्यता है। चित्रों का मुद्रण भी स्पष्ट होना चाहिए।

8. मूल्य

हिन्दी भाषा शिक्षण की पुस्तक अनिवार्य विषय के अन्तर्गत है। अतः इसका मूल्य अधिक नहीं होना चाहिए। पुस्तक का मूल्य इतना रखा जाए कि भारत में मध्यमवर्गीय माता–पिता की क्रम क्षमता के अनुरुप हो। इसकी अधिक कीमत विषय के प्रति रुचि का हनन भी करती है। सामान्य कीमत से भाषा अध्ययन के प्रति मोह, प्रेम, रुचि के विकास की संभावना भी है।

4.3.7 पाठ्यपुस्तक का महत्त्व

अध्यापन प्रक्रिया में पाठ्यपुस्तक का विशेष महत्त्व है। आगे हमने शिक्षण प्रक्रिया की चर्चा की थी। शिक्षण प्रक्रिया के चार महत्त्वपूर्ण बिन्दु है – शिक्षार्थी, शिक्षक, पाठ्य सामग्री तथा शिक्षण विधि। इन चारों की पारस्परिक आन्तर क्रिया से अध्यापन प्रक्रिया निष्पन्न होती है। यहाँ पाठ्य सामग्री में

पाठ्यपुस्तक सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। पाठ्यपुस्तक के अतिरिक्त सहायक पुस्तकें, दृश्य-श्रव्य सामग्री का समावेश भी पाठ्य सामग्री के अन्तर्गत किया जाता है। लेकिन यहाँ पाठ्यपुस्तक का महत्त्व ही प्रतिपादित किया जाता है।

शिक्षणकार्य में तथा औपचारिक शिक्षा क्षेत्र में पाठ्यपुस्तक का महत्त्व विशेष है। इस में भी भाषा शिक्षण का क्षेत्र हो तब तो पाठ्यपुस्तक अनिवार्य सी हो जाती है। यह भाषा की सभी विद्याओं तथा अंगो — कहानी, कविता, एकांकी, नाटक, निबन्ध जीवनी तथा रिपोर्ताज आदि का प्रतिनिधित्व करती है। रचना, विवरण, वार्तालाप आदि का लेखन कार्य कराने में पाठ्यपुस्तक एव प्रधान साधन सिद्ध होती है। भाषा संबंध ज्ञान एवं योग्यता की अभिवृद्धि में पाठ्यपुस्तक की भूमि का काफी महत्त्वपूर्ण होती है। आधुनिक शिक्षण प्रणाली में पाठ्यपुस्तक मूलाधार का काम करती है। यही भाषा शिक्षण के प्रमुख उद्देश्यों की सिद्धि में सहायक होती है क्यों कि पाठ्यपुस्तक पाठ्यक्रम का प्रतिनिधित्व करती है। पाठ्यपुस्तक के द्वारा भाषायी कौशल्यों का विकास तो होता ही है, साथ ही साथ वह अभिव्यक्ति की विविध शैलियों के उदाहरण भी प्रस्तुत करती है, इससे शिक्षार्थी की शब्द सम्पदा भी अभिवृद्ध होती है। यद्यपि पाठ्यपुस्तक साधन है, साध्य नहीं है तथापि वह कई दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है, जैसे कि,

1. पाठ्यपुस्तक मितव्ययी तथा व्यवस्थित ढ़ंग से ज्ञान प्रदान करने में सहायक होती है।
2. पाठ्यपुस्तक एक समय में अनेक लोगों (शिक्षार्थियों) को प्रभावित कर सकती है।
3. पाठ्यपुस्तक शिक्षार्थी को स्वाध्याय, आत्मचिन्तन और स्व विकार के अवसर प्रदान करती है।
4. वैयक्तिक शिक्षण प्रणाली, जैसे कि डाल्टन विधि, योजना निधि, स्वाध्याय विधि, आदि में पाठ्यपुस्तकों के सहारे शिक्षण प्रक्रिया व्यवस्थित रहती है।
5. पाठ्यपुस्तक के सहारे शिक्षण प्रक्रिया व्यवस्थित रहती है।
6. पाठ्यपुस्तक के सहारे मौन अध्ययन का अभ्यास हो सकता है।
7. शिक्षार्थी एवं शिक्षक दोनों को पाठ्यक्रम की जानकारी पाठ्यपुस्तक से ही होती है।
8. कक्षा में प्राप्त अध्ययन अनुभवों को शिक्षार्थी फूरसत के समय पुनरावर्तन कर सकता है।

4.3.8 वर्तमान पाठ्यपुस्तकों का मूल्यांकन

गुजरात में पाठ्यपुस्तकों का उत्पादन सरकारी निगम करती है। तथा NcÅERT द्वारा प्रचारित पाठ्यक्रम के आधार पर पाठ्यपुस्तकें तैयार की जाती है। उत्तम पाठ्यपुस्तक तैयार करने के लक्ष्य से यह सारा उपक्रम होता है। इसके निर्माण में विषय निष्णात के अतिरिक्त अनुभवी अध्यापक, साहित्य सेवी, कक्षाध्यापन करनेवाले शिक्षक, तजज्ञ, परामर्शक आदि का सहयोग लिया जाता है। पाठ्यपुस्तक लागू करने से पूर्व प्रायोगिक स्तर पर भी इसका उपयोग किया जाता है। तत्पश्चात् अनुभव के आधार पर मूल्यांकन होता है। फिर इस की अन्तिम प्रत तैयार होती है।

माध्यमिक कक्षाओं की प्रवर्तमान हिन्दी पाठ्यपुस्तकों का अनुशीलन करने पर ज्ञात होता है कि इस में राष्ट्रीय पाठ्यक्रम के प्रायः सभी सूचित मुद्दो की अभिव्यक्ति करनेवाले पाठ विद्यमान है। शिक्षार्थी को जीवन के विविध अनुभव प्राप्त हो ऐसी भी रचनाएँ है। पाठ्यपुस्तक ऐसी होनी चाहिए जो शिक्षार्थी को अध्ययन के लिए प्रेरित करें, जो शिक्षार्थी के रसक्षेत्रों को व्यापक बनाएँ, जो शिक्षार्थी को भावी जीवन की समस्याओं से झूझने को सक्षम बनाएँ, जो राष्ट्रभाषा के मुक्त प्रयोग करने को समर्थ बनाएँ। प्रवर्तमान पाठ्यपुस्तके उल्लेख्य तमाम अपेक्षाएँ परिपूर्ण कर सकती है। यथार्थ में पाठ्यपुस्तक तो एक प्रकार का उपकरण है। इसका प्रयोग कैसे किया जाता है इस पर इसकी सार्थकता निर्भर करती है। हालाकि आज शिक्षण उपक्रम परीक्षालक्षी हो गया है, ऐसे माहौल में पाठ्यपुस्तक का महत्तव कम हो गया है। फिर भी यदि इसका यथोचित प्रयोग किया जाएँ तो वह प्रजातांत्रिक मूल्यों के संवर्धन में, वैज्ञानिक अभिवृत्ति के निर्माण में, जीवन मूल्यों के प्रति अभिमुख करने में उपयोगी है।

पाठ्यपुस्तक के बाह्य स्वरुप या उसकी रुपात्मकता की दृष्टि से यह उपयोगी पुस्तक है। मुखपृष्ट पर मूर्धन्य साहित्यकारों की रंगीन छवि मनमोह लेती है। कागज व छपाई वाचन में अवरोध पैदा करनेवालें नहीं है। A4 साईझ का कद करके पुस्तक को अधिक सुन्दर बना दिया गया है। रंगीन चित्र व रंगीन स्याही में छपाई करके पुस्तक को रोचक बना दिया गया है। मूल्य भी अधिक नहीं है, लोगों की जेब के

अनुकूल है। पृष्ठ संख्या भी अधिक नहीं है। अतएव इसे देखते ही शिक्षार्थी के मन में ऊब पैदा नहीं होती है।

बेशक कुछ मर्यादाएँ भी नज़र आती हैं, जैसे कि वर्तनीदोष, तथ्य दोष आदि किन्तु इस की संख्या नहीं के बराबर है।

कुछ मिलाकर हिन्दी पाठ्यपुस्तक के अच्छी है।

4.4 हिन्दी शिक्षण में दृश्य-श्रव्य सामग्री का प्रयोग

अब हम विचार करेंगे कि हिन्दी भाषा शिक्षण में दृश्य-श्रव्य सामग्री का प्रयोग किस प्रकार शिक्षण को रुचिकर, सरल एवं उद्देश्यपूर्ण बनाने में सहायक हो सकता है। हम इनका वर्गीकरण करते हुए इनके प्रकारों की ओर ध्यान देंगे :

दृश्य-श्रव्य सामग्री
- दृश्य
  - यांत्रिक उपकरण
  - सहज उपकरण
- श्रव्य
  - यांत्रिक उपकरण
  - सहज उपकरण

मौखिक उदाहरण/उद्धरण — सहज, शिक्षक द्वारा प्रस्तुत

दृश्य एवं श्रव्य दोनों प्रकार की सामग्रियाँ दो वर्गों में वर्गीकृत की जा सकती है। कुछ सामग्रियाँ यंत्रों के माध्यम से ही चलती है। कुछ को सहज संज्ञा दी गयी है, क्योंकि ये सरलता से किन्हीं उपकरणों के बिना सामान्य रुप में तैयार की जा सकती है। साक्ष्य एकत्रित किये जा सकते हैं। इस प्रकार सरलता से निर्मित व प्रस्तुत वस्तुओं को आप सहज दृश्य, श्रव्य उपकरण की संज्ञा दे सकते है। हम इनका पृथक पृथक अध्ययन करेंगे।

4.4.1 यांत्रिक दृश्य उपकरण

इनके द्वारा सहायक सामग्री को दृश्य रुप से शिक्षार्थियों के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है। इनमें से कुछ की संरचना अति सरल होती है जैसे मैजिक लैंटर्न। इन्हें आप स्वयं भी तैयार कर सकते हैं जब कि कुछ की संरचना अति जटिल होती है तथा उनके संचालन की प्रक्रिया सीखने के लिए विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है जैसे प्रोजेक्टर, कम्प्यूटर आदि। इनका विवरण नीचे दिया जा रहा है।

1. प्रोजेक्टर

यह एक बिजली चलित यंत्र है, जिसमें पहले से ही निर्मित स्लाइड अथवा फिल्म लगाकर दिखायी जा सकती है। स्लाइड को आप सामान्य रुप में देखकर समझ नहीं सकते, किन्तु जब प्रोजेक्टर में स्लाइड लगाकर, अथवा फिल्म की स्ट्रिप लगा कर पर्दे पर दिखायी जाती है, तो दृश्य काफी बड़ा दिखाई देता है। स्लाईड को आवश्यकता अनुसार काफी समय तक दिखा सकते है। हिन्दी भाषा शिक्षण में रचनाकार का जीवन परिचय, साहित्यिक कृतियाँ आदि पर स्लाइड बना सकतें है। किसी स्थान विशेष के वर्णन पर स्थान का चित्र आदि भी प्रभावशाली ढंग से दिखाया जा सकता है। प्रोजेक्टर में चलित फिल्म भी दिखाई जाती है। इसकी प्रदर्शन प्रक्रिया स्लाईड से सर्वथा भिन्न होती है। फिल्म लगाकर बिजली से स्वचलित पद्धति से फिल्म दिखा सकते है। किसी नाटक, कहानी का फिल्मांकन भी इसके माध्यम से हो सकता है। यदि इसमें ध्वनि रिकार्ड नहीं की गई है तो यह मूक फिल्म है, शिक्षक स्वंय इसका वर्णन कर सकते है। इसका प्रभाव शिक्षार्थी के मस्तिष्क पर दीर्घकाल तक एवं चिरस्थायी भी रह सकता है।

2. ओवर हेड प्रोजेक्टर

इस प्रोजेक्टर का प्रयोग लिखकर दिखाने, चित्र बना कर दिखाने या पारदर्शी कागज़ पर पूर्व निर्मित पाठ-प्रक्रिया, सार, चित्रांकन प्रस्तुत किये जा सकते है। कुछ सीमा तक यह श्यामपट्ट के कार्य की पूर्ति भी कर देता है। पारदर्शी कागज़ पर लिखित सामग्री काँच के नीचे लगे बल्ब से

शिक्षक के पीछे, ऊँचाई पर प्रदर्शित (प्रोजेक्ट) हो जाती है। चूँकि पारदर्शी कागज सामने ही होता है अतः शिक्षक को मुड़ कर देखना नहीं पड़ता एवं वह पारदर्शी कागज़ को देखकर विषय को स्पष्ट करता चलता है। कक्षा की ओर शिक्षक की पीठ नहीं होती, इसलिए यह लाभदायक है।

3. मैजिक लैंटर्न

यह एक प्राचीन किन्तु प्रभावी उपकरण है। इसके द्वारा भी किसी स्लाइड अथवा पारदर्शक पर बनी आकृति को सामने रखे परदे पर प्रदर्शित किया जाता है। प्रोजेक्टर के आ जाने से अब इसका प्रयोग प्रायः समाप्त ही हो गया है। फिर भी जहाँ प्रोजेक्टर उपलब्ध नहीं हो वहाँ। वहाँ शिक्षक इसका प्रयोग ढंग से कर सकते है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसकी संरचना बड़ी सरल है तथा इसे स्वयं बनाया जा सकता है।

4. कम्प्यूटर

कम्प्यूटर आधुनिक समय का सर्वाधिक प्रचलित उपकरण है, जिसके बारे में अब आप सब जानते है। यह बिजली से चलने वाला बहुआयामी यन्त्र है। इस में आप लिखित एवं दृश्यात्मक चित्र, आरेख आदि से ज्ञानवर्धन कर सकते है। पूरा पाठ इसमें संकेतों सहित उपलब्ध हो जाता है। छात्र स्वयं इसका प्रयोग सीखकर लाभ उठा सकते हैं। एक बार का तैयार पाठ फ्लॉफी (संग्रहीत पाठ) के अंतर्गत चिरकाल के लिए संग्रहीत हो सकता है। इसके संचालन का प्रशिक्षण प्राप्त कर शिक्षक इसका स्वयं प्रयोग कर सकता है तथा शिक्षार्थियों को सिखा सकता है। कम्प्यूटर के विकास की अनन्त संभावनाएँ है।

5. चित्र विस्तारक (एपी-डायस्कोप)

चित्र विस्तारक दो प्रकार की क्रियाएँ संपादित करता है। एपी की अर्थ है धरातल एवं डाय का अर्थ है मध्य। इस यंत्र के माध्यम से मुद्रित सामग्री पुस्तक आदि को इस यन्त्र के धरातल पर रख कर बड़ा कर के दिखाया जा सकता है। तथा पूर्व निर्मित स्लाइर्ड को यन्त्र के मध्य में बने निर्धारित स्थान पर लगा कर दिखाया जा सकता है। इस यन्त्र में यद्यपि ये दोनों व्यवस्थाएँ उपलब्ध है परंतु एक समय में एक प्रकार की व्यवस्था का ही उपयोग किया जा सकता है। इससे छोटे चित्र को काफी बड़ा करके दिखाया जा सकता है। इसके द्वारा पुस्तक के चित्र भी चार्ट आकार में बड़े दिखाये जा सकते हैं। चित्र को चार्ट के आकार में प्रस्तुत कर सकते है।

4.4.2 सहज दृश्य उपकरण

इसके अंतर्गत हम सरलता से निर्मित दृश्य साधनों की जानकारी प्राप्त करेंगे।

1. चार्ट

चार्ट द्वारा साहित्य का काल विभाजन, व्याकरण के शब्द भेद, प्रक्रिया आदि का दृश्य माध्यम से ज्ञान दे सकते है। चार्ट में चित्रों एवं तथ्यों को अलग-अलग अथवा एक साथ प्रस्तुत कर सके है।

2. चित्र

पाठ को आकर्षक एवं रोचक बनाते है। रेखाओं व रंगो के माध्यम से तथ्यों एवं भावों को आकृति प्रदान की जा सकती है। चित्रों के उपयोग से छात्रों में पाठ के प्रति रुचि, जागृति, भाव एवं सौन्दर्य की अभिव्यक्ति तथा विषय की स्पष्टता के उद्देश्यों की पूर्ति होती है।

3. पोस्टर

यह विज्ञापन शैली से किसी भाव अथवा क्रिया को रंगीन आकर्षक रुप से प्रस्तुत करने का माध्यम है। यह शीघ्रता से संदेश प्रस्तुत करता है, आकृति एवं रंग द्वारा अध्यापित बिन्दु को दर्शाकर कार्य की दिशा निश्चित कर देता है। कक्ष सज्जा हेतु, दीर्घ, प्रभावी सन्देश या सूचना हेतु इनका प्रयोग अधिक लाभप्रद है।

4. मानचित्र और ग्लोब

इनका प्रयोग भूगोल, इतिहास आदि विषयों के लिए अधिक उपयुक्त है, किन्तु भाषा शिक्षण के पाठों में प्रस्तुत भौगोलिक एवं ऐतिहासिक जानकारी हेतु इनका प्रयोग आवश्यक हो जाता है। राष्ट्र

व विश्व के नक्शे में स्थान दर्शाने के लिए यह उपयोगी है। हिन्दी भाषा के व्यवहार के क्षेत्रों, अन्य भाषाओं के क्षेत्रों तथा दोनों के क्षेत्रों को दिखाने के लिए मानचित्र एवं ग्लोब प्रभावपूर्ण दृश्य साधन है।

5. रेखाचित्र

इनका प्रयोग श्यामपट्ट पर तत्काल किया जा सकता है। यदि शिक्षक को रेखाचित्र बनाने का अभ्यास है तो दृश्य सामग्री का यह प्रकार बहुत प्रभावी होता है। रेखाचित्रों के माध्यम से विषय की दुरुहता को कम भी कर सकते है। वर्गीकरण, विभाजन आदि क्रियाएँ प्रकार विभिन्नतायें आदि रेखाचित्रों के माध्यम से प्रस्तुत की जा सकती है। कई शब्दों के अर्थ यथा 'षट्कोण' रेखाचित्र से सहज में ही समझाये जा सकते है।

6. खादी बोर्ड या फ्लैनल बोर्ड

यह वस्तुतः दृश्य सामग्री को प्रस्तुत करने वाला एक साधन है। इसे एक लकड़ी के फ्रेम पर चारों ओर से कपड़े को कस कर किसी भी आकार का बना सकते है। इस पर विभिन्न चित्र, आकृति, कहानी का घटनाक्रम आदि कागज काटों के पिछले हिस्से में रेगमार चिपका कर अथवा कपड़े के काट को खादी एवं फ्लैनल के ही काट द्वारा खादी बोर्ड या फ्लैनल बोर्ड पर चिपका कर विषय को स्पष्ट किया जाता है।

7. श्यामपट्ट

दृश्य साधनों में अति आवश्यक तथा अनिवार्य, सहज उपलब्ध या निर्मित उपकरण है, श्यामपट्ट। यह शिक्षक के लिये सर्वाधिक सहायक उपकरण है जिस पर नवीन विचार, अन्वेषण तथ्य, प्रक्रिया, चित्रांकन सभी को प्रस्तुत किया जा सकता है। कक्षा में श्यामपट्ट की व्यवस्था सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। यह सर्वप्रथम दृश्य उपकरण है। निबन्ध की रुपरेखा, व्याकरण के उदाहरण, परिभाषाएँ, शब्द-वर्तनी, रेखाचित्र आदि को श्यामपट्ट पर प्रस्तुत कर देने से पाठ रोचक बन जाता है। शिक्षक के लिए यह सर्वसुलभ एवं आवश्यक उपकरण है। श्यामपट्ट को शिक्षक का परम मित्र कहा जाता है। यद्यपि परम्परा से श्यामपट्ट काले रंग के होते है परन्तु आज कल सफेद, हरे, नीले आदि रंगो के पट्टों का भी प्रचलन होने लगा है तथा इन पर विविध रंगो के चाकों से लिखा जाता है।

4.4.3 यांत्रिक श्रव्य उपकरण

हम अब विचार करेंगे कि श्रव्य उपकरणों में भी कितने प्रकार के यांत्रिक उपकरण है :

1. आकाशवाणी (रेडियो)

इस उपकरण से आप सभी परिचित है। आकाशवाणी कार्यक्रम की सूची से आप हिन्दी भाषा एवं साहित्य के कार्यक्रमों एवं शिक्षण कार्यक्रमों के प्रसारण दिनांक एवं समय के विषय में जान सकते हैं। भाषा विशेषज्ञों के प्रसारित व्याख्यान साहित्यिक परिचर्चा, भाषा कक्षायें, नाटक, कहानी आदि कक्षा शिक्षण एवं भाषा ज्ञान वृद्धि के लिए अत्यन्त लाभप्रद है।

2. टेपरिकार्डर

यह भी अत्यन्त प्रचलित उपकरण है। रेडियो के नाटक, कहानी वार्ता या किसी भी भाषायी ज्ञान सम्बन्धी कार्यक्रम को आप टेप कर कक्षा में शिक्षण से सम्बन्धित करते हुए सुना सकते है। यह रेडियो से भी अधिक लाभदायक साधन है। बालकों के उच्चारण में सुधार भी इसके द्वारा संभव है। एक ही उपकरण में दोनों का लाभ उठाने के लिए 'एक में दो' भी अत्यन्त प्रचलित है इससे आकाशवाणी तथा टेपरिकार्डर दोनों का लाभ प्राप्त हो सकता है। इसमें शिक्षार्थियों की ध्वनि अंकित कर उनमें शुद्ध उच्चारण के लिए प्रतियोगिता की भावना उत्पन्न की जा सकती है।

3. लिंग्वा फोन एवं ग्रामोफोन

ग्रामोफोन के तैयार रिकार्डों का उपयोग भाषा शिक्षण में बहुत हितकर होता है। वस्तुतः ग्रामोफोन को जब हम भाषा शिक्षण के लिए उपयोग करते हैं तब उसे लिंग्वा फोन कहा जाता है। भाषा सीखने, सुधार करने तथा कहानी, कविता, संवाद, सस्वर वाचन, शब्द उच्चारण, भाषा की

शैलियाँ एवं समालोचना सम्बन्धी पाठों के रिकार्ड अत्यन्त प्रचलित है। भाषा प्रयोगशाला (लेंग्वेजलैब) में ये बहुत लाभप्रद सिद्ध होते है। बाजार में रिकार्डों की उपलब्धि से यह साधन प्रत्येक के लिए व्यक्तिगत रुप से भी लाभप्रद हो सकता है। छात्र का भाषायी कौशल इसके माध्यम से बढ़ाया जा सकता है। टेपरिकार्डर के बहु प्रयोग से इसका प्रभाव कम हो गया है।

4.4.4 श्रव्य के सहज साधन

श्रव्य के सहज साधन किसी प्रकार बना कर रखे नहीं जा सकते, किन्तु यथा अवसर इनका प्रयोग किया जा सकता है। कुछ ध्वन्यात्मक शब्दों – 'फुसफुसाहट', 'कूक', 'चीख', 'धमक' आदि को तत्काल शिक्षक द्वारा अथवा अन्य छात्रों की सहायता से प्रस्तुत कर सकते है।

4.4.5 दृश्य-श्रव्य यांत्रिक उपकरण

1. चलचित्र

वर्तमान समय में चलचित्र केवल मनोरंजन के ही वरन् शिक्षा के प्रभावी साधन के रुप में विकसित हो रहे है। साहित्यकार की जीवनी, कृतियाँ, किसी विशेष साहित्यिक रचना का चल चित्रांकन (फिल्मांकन) मूल अवधारणा को समझने, प्रतिक्रिया करने, चरित्र चित्रण करने, समालोचन करने के लिए उपयुक्त साधन है। साहित्यिक रचना पर उत्तम स्तर की बनी फिल्म को संग्रहीत करके भी रखा जा सकता है। लघु चलचित्र भी इस क्षेत्र में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होते है।

2. दूरदर्शन

चलचित्रों को भी अत्यन्त छोटे उपकरण में प्रस्तुत करने की क्षमता रखने वाला यह उपकरण सर्वाधिक लोकप्रिय है। विभिन्न समय पर विभिन्न विषयों पर शैक्षिक पाठों का प्रसारण कर यह उपकरण बालक के लिए घर में भी शिक्षा उपलब्ध करा देता है। इसके विद्यालयीय कार्यक्रम विद्यालय समय के साथ समायोजित कर प्रस्तुत किये जा सकते है। दूरदर्शन के अनेको चैनल के प्रारम्भ हो जाने के कारण यह सुविधा और सरल रुप से प्राप्त है। जिस प्रकार संगीत तथा खेल चैनल कार्य कर रहे है वैसे ही शिक्षा चैनल भी शुरु किया जा सकता है। जिसमें भाषा शिक्षण का समय भी रखा जा सकता है। आज कल कुछ चैनलों ने इस दिशा में प्रयोग प्रारम्भ कर दिए है। डिस्कवरी चैनल का प्रयास विशेष रुप से स्तुत्य है। दूरस्थ शिक्षा के लिए तो दूरदर्शन एक समर्थ साधन है।

4.4.6 दृश्य-श्रव्य के सहज साधन

ये साधन अन्य सहज दृश्य एवं श्रव्य साधनों की तरह से सरलता से आयोजित किये जा सकते है।

1. नाटक एवं अभिनय

किसी नाटककार का नाटक, एकांकी मंच पर खेल कर एवं मंचित होता देखकर सहज बोध एवं अनुभव प्राप्त होता है। इससे सौन्दर्य बोध एवं भावानुभूति सार्थक होती है। नाटक अभिनीत होता देखने तथा, पात्रों द्वारा संवादों की अभिनयपूर्ण प्रस्तुति से अभिनय करने वालो एवं दर्शकों, सभी को विशिष्ट ज्ञान प्राप्ति एवं आनंदाभूति होती है।

इससे नाटक के रंगमंचीय गुणों की भी समालोचना की जा सकती है।

2. कविता पाठ

कवि द्वारा वाणी के उतार-चढ़ाव एवं भावाभिनय कविता के भावों को प्राण प्रदान करते हैं। प्रत्यक्ष रुप से इस प्रकार के आयोजन विशेष रुप से साहित्यिक अनुभूति एवं भाषायी अभिज्ञान दोनो दृष्टियों से लाभप्रद है।

3. परिभ्रमण

प्रकृति निरीक्षण, ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक स्थलों का परिभ्रमण छात्रों को भाषा व साहित्य के पाठों में उपयोगी सिद्ध हो सकता है। इन पर सामूहिक विचार विमर्श भी किया जा सकता है।

4.4.7 उदाहरण एवं साक्ष्य, दृश्य एवं मौखिक

1. दृश्य साक्ष्य

यह दृश्य उदाहरण अथवा वास्तविक पदार्थों का प्रदर्शन है। इनकी आवश्यकता प्राथमिक कक्षाओं में अधिक पड़ती है। राज चिह्न, झंडे, डाक-टिकट आदि वास्तविक रुप में दिखाकर उनका ज्ञान प्रदान किया जा सकता है। इसी प्रकार फल, फूल, पौधे आदि भी वास्तविक या दृश्य साक्ष्य के रुप में दिखाये जा सकते है। बहुमूल्य वस्तुएँ, रत्न, हीरे तथा जीवित प्राणी दृश्य साक्ष्य में दिखाना अनुचित है।

2. प्रतिरुप, प्रतिमूर्ति या नमूने

वैज्ञानिक, भौगोलिक, ऐतिहासिक पाठों जैसे ताजमहल, अशोक स्तम्भ, सोंची का स्तूप आदि से संबंधित भावनाओं एवं वस्तुओं के नमूने या प्रतिमूर्ति प्रस्तुत करना उपयोगी सिद्ध होता है। इन्हें शिक्षक स्वयं भी तैयार कर सकते है या बाजार से खरीद सकते है।

3. शाब्दिक एवं मौखिक उदाहरण

भाषा शिक्षण में इनका विशेष महत्त्व है। इनके अन्तर्गत शब्द चित्र, जो कठिन-भाव या विचार को सरल बनाने में सहायक सिद्ध होते है, सम्मिलित है। प्रचलित रुपों का प्रयोग, अलंकारों के उदाहरण, कविताओं के भावों की पृष्टि के लिए समान भाव की कविताओं के दृष्टांत या उद्धरण भी मौखिक एवं शाब्दिक उदाहरण है।

प्रेरणाप्रद कहानी, अंतः कथा, सन्त-वचन आदि का उपयोग यथा समय, सरल, प्रेरणापूर्ण एवं शुद्ध उदाहरण के रुप में प्रयोग करना अभीष्ट होगा। बालक की रुचि इन उदाहरणों के माध्यम से बढाई जानी चाहिए। भाषा शिक्षण में सूक्तियों, मुहावरों, लोकोक्तियों, अन्योक्तियों के लिए मौखिक उदाहरण उत्तम होते है।

4.5 हिन्दी शिक्षण में पाठ्य सहगामी क्रियाएँ एवं उनकी उपयोगिता

गद्य, पद्य, नाटक, एकांकी आदि विद्याओं का शिक्षण कक्षा के भीतर तो किया ही जाता है। इनका उपयोग यदि सहगामी क्रियाओं के रुप में किया जाये तो ये रुचिकर, सरल एवं ग्राह्य बन जाते है।

4.5.1 उपयोगिता एवं महत्त्व

- भाषा शिक्षण में पाठ्य-सहगामी क्रियाओं से छात्रों में भाषायी एवं साहित्यिक रुचि का विकास होता है।
- उनकी भाषायी योग्यता एवं साहित्यिक रसानुभूति विकसित होती है।
- वास्तविक आनन्द की प्राप्ति होती है।
- कविता पाठ जैसी क्रियाओं से काव्य रचना की प्रेरणा भी मिलती है।

बोध प्रश्न :

5. दृश्य श्रव्य सामग्री का वर्गीकरण आरेख द्वारा स्पष्ट करें।

....
....
....
....
....
....

6. आकाशवाणी एवं दूरदर्शन का हिन्दी शिक्षण में उपयोग कैसे किया जा सकता है। चार पंक्तियों में उत्तर दें।

....
....
....
....
....

....

4.5.2 पाठ्यचर्या सहगामी क्रियाएँ

- **कविता पाठ सम्बन्धी**

1. कवि जयन्ती

सूर, तुलसी, दिनकर आदि कवियों की जयन्ती का आयोजन एवं उनकी कृतियों का पाठ करना।

2. काव्य गान

कविताओं को गाकर (मीरा, कबीर, सूर, तुलसी के पद) प्रस्तुत करने से कवितायें सरल बन जाती है।

3. कवि सम्मेलन

स्थानीय कवियों को आमंत्रित कर उनकी कविताओं का रसास्वादन किया जा सकता है। इसमें विद्यालय के छात्र एवं शिक्षक भी अपनी स्वरचित कविता का पाठ कर सकते है।

4. काव्य गोष्ठी एवं साहित्य गोष्ठी

कविता एवं साहित्यिक रचनाओं पर गोष्ठी का आयोजन कर विचार-विमर्श किया जा सकता है। बाह्य वक्ता को भी आमंत्रित किया जा सकता है।

5. कवि दरबार

कवि कदबार में छात्र-छात्राओं द्वारा प्रसिद्ध कवियों की कविताएँ कंठस्थ कर अथवा लिखकर मंच पर प्रस्तुत की जाती है। शिक्षार्थी कवियों के तत्कालीन वेश भी पहन सकते है। छात्र-छात्राओं को कवियों की कृतियों का सस्वर पाठ करने से काव्य रसास्वादन, कविता पाठ की योग्यता एवं कविता कण्ठस्थ करने की प्रेरणा भी प्राप्त होती है।

6. समस्या पूर्ति

यह अत्यन्त प्राचीन प्रणाली है, इसके माध्यम से छात्र कविता करने में रुचि लेने लगते है। एक पंक्ति प्रस्तुत कर उसे पूर्ण करने लिए कहा जा सकता है। कोई एक विषय या दो शब्द भी देकर पूर्ति के लिए प्रस्तुत कर सकते है।

7. अंत्याक्षरी

इसके अंतर्गत छात्रों को दो समूहों में विभाजित कर प्रत्येक समूहों द्वारा प्रस्तुत कविता के अन्तिम शब्द से प्रारम्भ कर कविता पाठ करना होता है। जो समूह कविता प्रस्तुत करने में असमर्थ रहता है उस की पराजय मानी जाती है।

8. प्रतियोगिताएँ

हिन्दी कविता, कहानी, नाटक, परिच्छेद लेखन की प्रतियोगिताओं का भी आयोजन किया जाना चाहिए। इससे अधिकाधिक शिक्षार्थियों को इन क्रियाओं में भाग लेने की प्रेरणा एवं अवसर उपलब्ध होते है।

गद्य पाठ संबंधी सहगामी क्रियाएँ

1. अभिनय

इसका उल्लेख पहले भी किया जा चुका है। यह नाटक से संबंधित है। अतः नाटक के भिन्न भिन्न पात्रों का आरोपण छात्रों में किया जाता है। इससे शिक्षार्थियों में अभिनय क्षमता के विकास के साथ भावानुसार स्वर के उचित आरोह-अवरोह के साथ शुद्ध उच्चारणपूर्वक संवाद बोलने की क्षमता आ जाती है।

2. संवाद रचना एवं संवाद कथन

दो या दो से अधिक छात्रों के मध्य प्रयोजनपूर्ण की संरचना, इनको वार्तालाप रुप में प्रस्तुत करना

अत्यन्त रुचिकर एवं रचना की प्रेरणा देने वाली क्रिया है।

3. **साहित्यिक / स्वारस्वत यात्राएँ**

साहित्यिक स्थान भ्रमण का संक्षिप्त विवरण इसी इकाई में पहले किया जा चुका है। साहित्यिक स्थलों, संग्रहालयों, पुस्तकालयों, लेखक, कवि निवास आदि स्थलों पर भ्रमण के कार्यक्रमों द्वारा शिक्षार्थियों में भाषा शिक्षण से भावात्मक संबंध विकसित किए जा सकते हैं।

इस प्रकार आपने देखा कि हिन्दी शिक्षण में कक्षा शिक्षण के अतिरिक्त अनेकों क्रियाओं का आयोजन कर छात्रों में साहित्यक अभिरुचि जागृत की जा सकती है एवं भाषायी योग्यता का विकास किया जा सकता है। यह उनके व्यक्तित्व के संवर्धन में भी सहायक है। इन सब का आयोजन हिन्दी भाषा के शिक्षक का दायित्व है।

बोध प्रश्न :

7. निम्न कथनों के समक्ष हा अथवा नहीं लिखिए।

1. अंत्याक्षरी में स्वरचित कवितायें ही प्रस्तुत की जाती है। [ ]
2. कवि दरबार में कवियों की साक्षात् उपस्थिति अनिवार्य है। [ ]
3. नाटक के मंचन से छात्रों को नाटक की समालोचना करने में सहायता मिलती है। [ ]
4. शिक्षण करते समय मौखिक उदाहरण के अन्तर्गत दृष्टांत दिये जा सकते है। [ ]
5. हिन्दी शिक्षण में पाठ्य सहगामी क्रियाएँ समय को नष्ट करती है। [ ]

4.6 हिन्दी शिक्षक के गुण एवं अपेक्षाएँ

आप हिन्दी भाषा के शिक्षक बनने की तैयारी कर रहे है। अत: आप स्वयं में किन गुणों का विकास करें और आपसे क्या अपेक्षायें हैं, इसकी चर्चा करेंगे।

4.6.1 शिक्षक के गुण

1. शिक्षक राष्ट्र निर्माता होता है एवं हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा है। अत: हिन्दी का शिक्षक बालकों में हिन्दी भाषा के प्रति प्रेम, श्रद्धा एवं सेवा का भाव उत्पन्न कर राष्ट्र को वाणी दे सकता है तथा शिक्षार्थियों में राष्ट्रीय भावना का विकास कर सकता है।
2. शिक्षक का स्वर प्रभावी, ओजपूर्ण, मधुर, स्पष्ट तथा उच्चारण प्रवाहपूर्ण एवं स्वर के उचित उतार-चढ़ाव से युक्त होना चाहिए। अपनी बात स्पष्ट करने व भावानुकूल शिक्षण करने की योग्यता एवं क्षमता उसमें अवश्य होनी चाहिए।
3. अभिव्यक्ति की कुशलता हिन्दी शिक्षक का गुण होना चाहिए। ज्ञानार्जन के पश्चात् अपने ज्ञान की प्रभावशाली अभिव्यक्ति इसकी विशेषता है।
4. शिक्षक भाषा का माध्यम है अर्थात् शिक्षक को चाहिए कि सदा अपनी भाषा का संवर्धन करता रहै एवं भाषायी सम्प्रेषण प्रभावशाली बनाये।
5. हिन्दी शिक्षक का कलात्मक होना भी एक गुण है। साहित्य के कला पक्ष एवं भाव पक्ष को पहचान कर योग्यता एवं भाव से पाठों का अध्यापन करने में उसे सिद्धहस्त होना चाहिए।
6. हिन्दी का शिक्षक अन्वेषण प्रवृत्ति का होगा, तो शिक्षार्थी में अन्वेषण प्रवृत्ति की जागृत्ति होगी। इससे शिक्षार्थी अन्वेषणों के माध्यम से अपने ज्ञान स्तर को विकसित कर सकेंगे। शिक्षक ही इसके लिए छात्रों को प्रेरित कर मार्गदर्शन कर सकते है।
7. हिन्दी शिक्षक की रसग्राह्यता का गुण नयी पीढ़ी में सांस्कृतिक चेतना, सामाजिक कर्तव्य एवं उचित मूल्यों के उन्नयन में सहायक होगा।
8. हिन्दी शिक्षक को सहृद्य एवं सहानुभूतिपूर्ण होना आवश्यक है। छात्रों से उसका व्यवहार आत्मीय हो एवं उनकी कहानियों को समझकर समाधान करने की योग्यता भी उसमें होनी चाहिए। इससे शिक्षार्थियों में हिन्दी भाषा के प्रति रुचि जागृत होगी तथा उनके व्यवहार में परिमार्जन होगा।
9. हिन्दी शिक्षक को सृजनशील एवं रचनात्मक होना आवश्यक है। साहित्य व भाषा दोनों प्रकार के अध्ययन में उसकी सृजनशीलता एवं रचना यथा - शब्द रचना, वाक्य रचना, सन्दर्भ लेखन एवं

काव्य रचना आदि अत्यंत महत्त्वपूर्ण है ।

10. हिन्दी शिक्षक में साहित्यिक अभिरुचि होनी चाहिये एवं उसे साहित्यिक क्रियाओं की जानकारी होनी चाहिए ।

11. हिन्दी शिक्षक का श्यामपट्ट लेख स्पष्ट एवं सुन्दर होना चाहिए । वह शब्दों की शुद्ध वर्तनी का ज्ञाता हो तथा उसका उच्चारण शुद्ध एवं स्पष्ट हो । वह आरेखन, रेखा-चित्रांकन आदि की कला में निपुण हो ।

4.6.2 हिन्दी शिक्षक से अपेक्षाएँ

उपर लिखे गुणों का विकास करना एक शिक्षक के नाते आपका कर्तव्य है, किन्तु समाज व राष्ट्र तथा हिन्दी भाषा के छात्र आपसे विशेष अपेक्षाएँ रखते है :

1. हिन्दी का शिक्षक साहित्य प्रेमी व साहित्य अन्वेषक हो, ताकि नित-प्रतिदिन के ज्ञान में वृद्धि कर सके ।
2. वह पारम्परिक के साथ समसामयिक साहित्यिक ज्ञान भी रखे एवं शिक्षण केसमय अनुकूलन वातावरण की सृष्टि कर सके ।
3. छात्रों में हिन्दी भाषा के प्रति जागरुकता का विकास करना उसका कर्तव्य है ।
4. हिन्दी साहित्य के प्रतिमानों का सजग प्रहरी बना रहे एवं साहित्य के दुर्ग की सतत रक्षा करे ।
5. विद्यालय में हिन्दी भाषाई व साहित्यिक गतिविधियों का आयोजन करें एवं छात्रों को उनमें भाग लेने के लिए प्रेरित करें ।
6. छात्रों में भी साहित्यिक अभिरुचि का विकास करे, साहित्यिक योग्यता का विकास करे एवं विद्यालय में साहित्यिक वातावरण का निर्माण करे ।
7. हिन्दी शिक्षक से यह अपेक्षा है कि वह भाषा एवं साहित्य के शिक्षण को ही महत्त्व प्रदान करे । उस का प्रत्येक कार्य, श्रम-दृश्य सामग्री एवं उपकरणों का प्रयोग, पाठ्य सहगामी क्रियाओं का आयोजन आदि सभी हिन्दी भाषा एवं साहित्य के संवर्धन के लिए हो ।

बोध प्रश्न :

8. हिन्दी शिक्षक के गुणों का संक्षेप में उल्लेख कीजिए । उत्तर पांच पंक्तियों में लिखें ।

....
....
....
....
....
....

4.7 सारांश

4.7.1 महत्त्व

हिन्दी शिक्षण में पाठ्य पुस्तक एवं सहायक पुस्तक एक महत्त्वपूर्ण साधन है । पाठ्य पुस्तक कक्षा के लिए आधार का कार्य करती है । यह शिक्षक एवं शिक्षार्थी दोनों को अपने विषय के सीमा विस्तार के प्रति सजग रखती है । यह शिक्षार्थी को स्वाध्याय के लिए प्रेरित करती है । हिन्दी भाषा एवं साहित्य के अध्ययन एवं अध्यापन के लिए पाठ्य पुस्तक अनिवार्य है ।

4.7.2 स्वरुप

पाठ्य पुस्तक निर्माण के दो पक्ष है — बाह्य पक्ष तथा आन्तरिक पक्ष । बाह्य पक्ष के अंतर्गत पाठ्य पुस्तक का बाह्य स्वरुप, उसकें पाठों का आयोजन, टंकण, मुद्रण, चित्रों के रेग, बाह्य जिल्द, मूल्य, कागज का प्रकार एवं सम्पूर्ण पुस्तक का प्रस्तुतीकरण समाहित होता है ।

आन्तरिक पक्ष विषय सामग्री से सम्बन्धित है । विषय सामग्री शिक्षार्थियों में मानसिक स्तर के अनुकूल हो

तथा निर्धारित पाठ्यक्रम के अनुसार हो। विषय वस्तु में विविधता हो, साहित्यिक विद्याओं – नाटक, कहानी, कविता, निबन्ध सभी का सन्तुलित सम्मिश्रण हो। प्रत्येक काल के रचनाकारों की रचनाओं का सम्मिश्रण भी आवश्यक है।

प्रत्येक पाठ के साथ उसका संक्षिप्त सारांश एवं पाठ के अन्त में अभ्यास के सभी प्रकार के प्रश्न यथा – दीर्घ उत्तर प्रश्न, लघु उत्तर प्रश्न एवं वस्तुनिष्ठ प्रश्नों का सम्मिश्रण हो।

4.7.3 हिन्दी भाषा शिक्षण में श्रव्य-दृश्य सामग्री

हिन्दी भाषा शिक्षण में श्रव्य-दृश्य सामग्री भाषा शिक्षण को सजीवता व सरलता प्रदान करती है। दृश्य सामग्री के अन्तर्गत यांत्रिक उपकरण – प्रोजेक्टर, ओवर हैड प्रोजेक्टर, मैजिक लैंटर्न, चित्र विस्तारक आदि है एवं सहज दृश्य साधनों के अन्तर्गत है — चार्ट, चित्र, पोस्टर, मानचित्र, रेखाचित्र, खादी बोर्ड एवं श्यामपट्ट।

श्रव्य यांत्रिक उपकरण है — रेडियो, टेपरिकार्डर एवं लिंग्वाफोन।

मौखिक उदाहरण, उद्धरण एवं वास्तविक पदार्थ भाव एवं अर्थ स्पष्ट करने में सहायक होते है।

4.7.4 हिन्दी शिक्षण में पाठ्य सहगामी क्रियाएँ

हिन्दी शिक्षण में पाठ्य सहगामी क्रियाओं के अंतर्गत कवि सम्मेलन, कवि गोष्ठी, कविता गान, कवि दरबार, समस्यापूर्ति, कविता पाठ, प्रतियोगिता, अंत्यायक्षरी, अभिनय, सारस्वत यात्रा आदि का आयोजन किया जा सकता है।

4.7.5 हिन्दी शिक्षक के गुण

वह शिक्षार्थियों में राष्ट्रीय भावना का विकास करने वाला हो, सतत अध्ययनशील हो, अन्वेषण प्रवृत्ति का हो, सहृदय, सहानुभूति पूर्ण एवं आत्मीय व्यवहार वाला हो, तथा साहित्यिक रुचि रखता हो।

हिन्दी भाषा शिक्षक से समाज, राष्ट्र एवं शिक्षार्थी अनेक अपेक्षाएँ रखते है उनकी पूर्ति के लिए शिक्षक समसामयिक साहित्यक ज्ञान से परिचित रहे, शिक्षार्थियों में भाषा के प्रति जागरुकता का विकास करे। विद्यालय में साहित्यिक गतिविधियों का आयोजन करे एवं साहित्यिक वातावरण का निर्माण करे।

4.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. पाठ्यपुस्तक के अध्ययन पक्ष की विशेषताएँ :
   1. विविधता से पूर्ण विषय सामग्री
   2. सभी काल के साहित्यकारों की रचनायें
   3. छात्र के मानसिक स्तर के अनुरुप
   4. विषय की गंभीरता
   5. भाषाई उत्कृष्टता
2. पाठ्य पुस्तक के गुण :
   1. भाषा के ज्ञान की वृद्धि
   2. रोचकता
   3. जीवन से संबन्दता
   4. आदर्श वादिता
   5. व्यावहारिकता
3. पाठ्य पुस्तक के रुपात्मक पक्ष की विशेषताएँ :
   1. आकार पुस्तक पकड़ने में सविधा हो
   2. मुख पृष्ठ आकर्षक हो
   3. कागज अच्छा, मोटा और सफेद हो
   4. जिल्द अच्छी हो

5. मूल्य सामान्य हो

4. पाठ्य पुस्तक गंभीर अध्ययन के लिए होती है, सहायक पुस्तक व्यापक अध्ययन के लिए होती है। पाठ्य पुस्तक कक्षा में शिक्षक द्वारा पढ़ाई जाती है, सहायक पुस्तक शिक्षार्थी द्वारा स्वयं पढ़ने के लिए होती है। पाठ्य पुस्तक में प्राप्त भाषाई दक्षताओं की पुष्टि सहायक पुस्तक द्वारा होती है।

5.

यांत्रिक उपकरण

दृश्य-श्रव्य सामग्री — दृश्य

सहज उपकरण

यांत्रिक उपकरण

श्रव्य

सहज उपकरण

मौखिक उदाहरण/उद्धरण — सहज, शिक्षक द्वारा प्रस्तुत

6. आकाशवाणी तथा दूरदर्शन की कार्यक्रम पत्रिका / कार्यक्रम सूची से हिन्दी भाषा शिक्षण के प्रसारणों के दिनांक एवं समय ज्ञात कर तदनुसार शिक्षार्थियों को आकाशवाणी एवं दूरदर्शन के कार्यक्रम सुनाए तथा दिखाए जा सकते है। पाठ समाप्ति के अनन्तर प्रसारित पाठ के विषय में छात्रों से चर्चा की जा सकती है। शिक्षार्थियों की जिज्ञासाओं का समाधान किया जा सकता है तथा अंत में पाठ के विषय में गृहकार्य दिया जा सकता है।

7. 1. नहीं
   2. नहीं
   3. हाँ
   4. हाँ
   5. नहीं

8. शिक्षक के प्रमुख गुण :
   - सतत अध्ययनशील हो।
   - अन्वेषण प्रवृत्ति का हो।
   - सहृदय, सहानुभूतिपूर्ण एवं आत्मीय व्यवहार वाला हो।
   - साहित्यिक रुचि वाला हो।

4.9 उपयोगी पुस्तकें

1. सिंह, निरंजन कुमार : माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।
2. पांडेय, रामशकल : हिन्दी शिक्षण, विनोद पुस्तक मंदिर।
3. अंधारिया, रवीन्द्र : हिन्दी का अध्यापन, वारिषेण प्रकाशन, अहमदाबाद।
4. अंधारिया, रवीन्द्र : हिन्दी अध्यापन विमर्श, बी.एस.शाह प्रकाशन, अहमदाबाद तथा अन्य।

डॉ. बाबासाहब आंबेडकर
ओपन युनिवर्सिटी

SECM-04
हिन्दी

खंड

2

भाषिक योग्यताओं का विकास

इकाई-1

हिन्दी के भाषिक तत्त्व-1

इकाई-2

हिन्दी के भाषिक तत्त्व-2

इकाई-3

श्रवण एवं मौखिक अभिव्यक्ति के कौशल का विकास

इकाई-4

पठन योग्यता

इकाई-5

लिखित अभिव्यक्ति कौशल का विकास

पाठ्यक्रम विशेषज्ञ समिति

प्रो. आर. एन. मेहरोत्रा
पूर्व प्रोफेसर
शिक्षा–विभाग (सी.आई.ई.)
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

प्रो. पी.आर.नायर
पूर्व प्रोफेसर
मैसूर विश्वविद्यालय, मैसूर

प्रो. लोकेश कौल
हिमान्नल प्रदेश विश्वविद्यालय,
शिमला

प्रो.बी.के. पासी
इन्दौर विश्वविद्यालय, इन्दौर

प्रो. एम. एस. यादव
सी. ए. एस. ई. एम. एस.
विश्वविद्याल, बडौदा

प्रो. मल्ला रेड्डी
उपकुलपति
उस्मानिया विश्वविद्यालय
हैदराबाद

प्रो. एम. एस. पदमा
एन.ई.एन्न.यू. शिलोंग

प्रो. ए. एन. जोशी
वाई सी.एम.ओ.यू.नासिक

डॉ. के. अरयुक्कन्तु
निर्देशक, पत्रान्नार पाठ्यक्रम
अन्तामलाई विश्वविद्यालय
अन्नामलाई

प्रो. ए. के शर्मा
निर्देशक, एन.सी.ई.आर.टी
नई दिल्ली

प्रो. वी. के. सभरवाल
शिक्षा विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

प्रो. एम. मियाँ
जामिया मिलिया इस्लामिया
नई दिल्ली

प्रो. सी. एल. आनन्द
पूर्व पी. वी. सी.
इ. गां. रा. मु. विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

प्रो. एम. बी. मेनन
इ. गां. रा. मु. विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

प्रो. एल. सी. सिंह
इ. गां. रा. मु. विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

डॉ. एम. सी. शर्मा
कार्यक्रम समन्वयकर्ता
सैद्धान्तिक
इ. गां. रा. मु. विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

डॉ. सोहनवीर एस. गौधरी
कार्यक्रम समन्वयकर्ता
प्रायोगिक
इ. गां. रा. मु. विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

पाठ्यक्रम निर्माण समिति

पाठ्यक्रम योगदान
श्री निरंजन कुमार सिंह
पूर्व रीडर,
एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली

डॉ. जे. सी. सिन्हा
डीन, शिक्षा संकाय
दलायबाग शिक्षा संस्थान
दलायबाग, आगरा

प्रो. आर. पी. श्री वास्तव
जामिया मिलिया इस्लामिया
नई दिल्ली

प्रो. इन्द्रहास शर्मा
श्री लाल बहादुर शास्त्री
संस्कत विद्यापीठ
नई दिल्ली

विषयवस्तु एवं भाषा संपादन
प्रो. आर. पी. श्रीवास्तव
जामिया मिलिया इस्लामिया
नई दिल्ली

विषयवस्तु एवं भाषा सहसंपादन
डॉ. एम. एल. कौल
इ. गां. रा. मु. विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

इकाई अभिकल्प सम्पादन एवं समन्वय
डो. एम.एल.कौल
इ. गां. रा. मु. विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

परामर्शदाता
प्रो. श्रीधर वसिष्ठ
पूर्व प्रोफेसर, शिक्षा–शास्त्र विभाग
श्री लाल बहादुर शास्त्री
संस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली

डॉ. (सुश्री) नीरा नारंग
एम. वी. कालेज ऑफ एज्यु.
दिल्ली विश्वविद्यालय.

सामग्री निर्माण

प्रो. एस. बी. मेनन
निर्देशक, शिक्षा विद्यापीठ
इ. गां. रा. मु. विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

श्री के. जी. शशि कुमार
अनुभाग अधिकार (प्रकाशन)
शिक्षा विद्यापीठ, इ. गां. रा. मु. विश्वविद्यालय

प्रकाशक : कुलसन्निव, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद-382481

आवृत्ति : प्रथम आवृत्ति - 2020, **नकल :** 600

द्वितीय आवृत्ति - 2021, **नकल :** 600

ES-115 : हिन्दी शिक्षण प्रविधि

खंड-1 हिन्दी शिक्षण : सैद्धान्तिक पक्ष

इकाई-1 भाषा की प्रकृति एवं प्रकार्य

इकाई-2 भाषा अधिगम प्रक्रिया

इकाई-3 विद्यालयीय स्तर पर भाषा

इकाई-4 हिन्दी शिक्षण की व्यवस्था एवं सामग्री

खंड-2 भाषिक योग्यताओं का विकास

इकाई-1 हिन्दी के भाषिक तत्त्व-1

इकाई-2 हिन्दी के भाषिक तत्त्व-2

इकाई-3 श्रवण एवं मौखिक अभिव्यक्ति के कौशल का विकास

इकाई-4 पठन योग्यता

इकाई-5 लिखित अभिव्यक्ति कौशल का विकास

खंड-3 साहित्यिक विद्याओं का शिक्षण एवं व्याकरण शिक्षण

इकाई-1 कविता-शिक्षण

इकाई-2 निबन्ध शिक्षण

इकाई-3 गद्य की अन्य विद्याओं का शिक्षण

इकाई-4 व्याकरण-शिक्षण

खंड-4 मूल्यांकन, क्रियात्मक शोध तथा समुन्नयन कार्य

इकाई-1 भाषा संप्राप्ति मूल्यांकन

इकाई-2 निदानात्मक एवं उपचारात्मक कार्य

इकाई-3 क्रियात्मक शोध

इकाई-4 समुन्नयन कार्य

ISBN :

Copyright © Registrar, Dr. Babasaheb Ambedkar Open University, Ahmedabad.
December 2020

While all efforts have been made by editors to check accuracy of the content, the representation of facts, principles, descriptions and methods are that of the respective module writers. Views expressed in the publication are that of the authors, and do not necessarily reflect the views of Dr. Babasaheb Ambedkar Open University. All products and services mentioned are owned by their respective copyrights holders, and mere presentation in the publication does not mean endorsement by Dr. Babasaheb Ambedkar Open University. Every effort has been made to acknowledge and attribute all sources of information used in preparation of this Self Learning Material. Readers are requested to kindly notify missing attribution, if any.

इकाई 1

हिन्दी के भाषिक तत्त्व–1

: रूपरेखा :

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 वर्ण-विचार

- 1.3.1 मानक हिन्दी वर्णमाला
- 1.3.2 भाषा शिक्षण में उच्चारण-शिक्षण का महत्त्व
- 1.3.3 शुद्ध उच्चारण का तात्पर्य
- 1.3.4 उच्चारण की दृष्टि से हिन्दी वर्णों का वर्गीकरण
- 1.3.5 उच्चारण संबंधी अन्य भाषिक पक्ष
- 1.3.6 उच्चारण संबंधी अशुद्धियों और उनका निराकरण
- 1.3.7 वर्तनी का महत्त्व
- 1.3.8 अशुद्ध वर्तनी के मुख्य कारण
- 1.3.9 उच्चारण और वर्तनी संबंधी शिक्षण-प्रक्रिया

1.4 सारांश

1.5 बोध प्रश्न के उत्तर

1.6 उपयोगी पुस्तकें

1.1 प्रस्तावना

आप पढ़ चुके है कि भाषा एक व्यवस्था है। इस व्यवस्था के अंतर्गत तीन उपव्यवस्थाएँ है। सबसे पहली उपव्यवस्था उसकी ध्वनवि-उपव्यवस्था है। प्रत्येक भाषा की कुछ मूल ध्वनियाँ होती है और उन ध्वनियों की एक मान्य व्यवस्था होती है, जैसे हिन्दी में वर्ण-व्यवस्था जिसका अध्ययन हम इस इकाई में वर्ण-विचार के अंतर्गत करेंगे। इसमें स्वर, उसकी मात्राएँ, व्यंजन, व्यंजनगुच्छ आदि तथा इनके उच्चरित और लिखित रूप लिए जाते है। किन्तु ध्वनि ही भाषा नहीं है। पृथक-पृथक ध्वनि से कोई अर्थ नहीं निकलता। जब कुछ ध्वनियों के मेल से शब्द का निर्माण होता है, तब कोई अर्थ व्यक्त होता है, अर्थात् शब्द से ही किसी पदार्थ, भाव या विचार का बोध होता है, फिर शब्द के अर्थ, रचना और प्रयोग की एक व्यवस्था बन जाती है। अतः भाषा की दूसरी मुख्य उपव्यवस्था शब्द-उपव्यवस्था है। किन्तु अनेक बार एकाकी शब्द से भी हमारा आशय पूरी तरह प्रकट नहीं होता। पूरा आशय प्रगट करने के लिए अनेक शब्दों को मिलाकर वाक्य का निर्माण करना होता है। वाक्य की संरचना के अनेक प्रकार होते है। अतः भाषा की तीसरी उपव्यवस्था वाक्य-उपव्यवस्था है।

भाषा की व्यवस्था को समझने के लिए और उसके प्रयोग की दक्षता प्राप्त करने के लिए हमें ध्वनि, शब्द और वाक्य के बारे में जानना आवश्यक है। इन्हें ही भाषिक तत्त्व कहा जाता है। इन भाषिक तत्त्वों का विचार हिन्दी व्याकरण में वर्ण-विचार, शब्द-विचार और वाक्य-विचार के अंतर्गत किया जाता है। प्रस्तुत इकाई में हम इनमें से वर्ण-विचार और उसकी शिक्षण-प्रक्रिया का अध्ययन करेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :

- हिन्दी ध्वनियों की मानक वर्णमाला से परिचित हो सकेंगे।
- वर्णों का यथास्थान सही प्रयोग कर सकेंगे।
- उच्चारण की दृष्टि से हिन्दी वर्णों का वर्गीकरण कर सकेंगे।
- मौखिक अभिव्यक्ति में शुद्ध उच्चारण का प्रयोग कर सकेंगे।
- वर्तनीगत अशुद्धियों का सुधार कर सकेंगे।
- वर्तनी के अनुसार उच्चारण शिक्षण के लिए उचित प्रक्रिया अपना सकेंगे।

1.3 वर्ण-विचार

भाषा की सबसे छोटी इकाई ध्वनि है। हिन्दी भाषा में ध्वनि के लिए 'वर्ण' शब्द का प्रयोग होता है। ध्वनि शब्द से सामान्यतः उसके उच्चरित रूप का बोध होता है, किन्तु वर्ण शब्द का प्रयोग ध्वनि के उच्चरित और लिखित दोनों रूपों के लिए होता है, अर्थात् वर्ण ध्वनि के उच्चरित और लिखित दोनों रूपों का प्रतीक है।

लिपि – ध्वनियों को अंकित करने के लिए निश्चित किए गए चिह्नों की व्यवस्था को लिपि कहते है। हिन्दी भाषा देवनागरी लिपि में लिखी जाती है।

वर्णमाला – वर्णों के व्यवस्थित समूह को वर्णमाला कहते है। हिन्दी के शुद्ध उच्चारण और शुद्ध वर्तनी दोनों के लिए हिन्दी वर्णमाला का सही-सही ज्ञान आवश्यक है।

1.3.1 मानक हिन्दी वर्णमाला

स्वर : अ आ इ ई उ ऊ ऋ ए ऐ ओ औ ऑ

मात्राएँ : ा ि ी ु ू ृ े ै ो ौ ॉ

व्यंजन के साथ स्वर का जो रूप मिला होता है उसे स्वर की मात्रा कहते है। ऊपर प्रत्येक स्वर के नीचे उसकी मात्रा दी गई है।

'ऑ' स्वर हिन्दी का नहीं है। यह अंग्रेजी से गृहीत स्वर है। 'ऑ' का उच्चारण आ और ओ की बीच में होता है। बोलचाल की हिन्दी में इस ध्वनि का उच्चारण 'आ' जैसा ही होता है इसका प्रयोग अंग्रेजी शब्दों में ही होता है, जैसे ऑफिस, डॉक्टर, कॉलेज आदि। 'अ' की कोई मात्रा नहीं होती। 'अ' स्वर व्यंजन में मिला होता है, जैसे क् + अ = क

अनुस्वार : अं

विसर्ग : अः

हिन्दी वर्णमाला में अं, अः को स्वरों के साथ लिखने की परिपाटी चली जा रही है, पर वास्तव में अं अनुस्वार (ं) और अः (ः) स्वर नहीं है। इनका उच्चारण व्यंजनो की तरह स्वर की सहायता से होता है, जैसे अंक, चंद्र, स्वयं, अतः, प्रातः शतशः आदि। संस्कृत में इन्हें अयोगवाह कहते है। इनका तालमेल न तो स्वरों से है और न व्यंजनों से। स्वर और व्यंजन के बीच की स्थिति होने के कारण इन अयोगवाहों को देवनागरी लिपि में स्वरों के बाद और व्यंजनों के पहले रखा जाता है।

अनुनासिकता चिह्न (ँ) जैसे – पाँच, हँस, ऊँट आदि

व्यंजन

क	ख	ग	घ	ङ
च	छ	ज	झ	ञ
ट	ठ	ड	ढ	ण
त	थ	द	ध	न
प	फ	ब	भ	म
य	र	ल	व	
श	ष	स	ह	

ये सभी व्यंजन अकारांत लिखे हुए हैं। इनमें अ सम्मिलित है। स्वर रहित व्यंजन के नीचे हल चिह्न लगाया जाता है, जैसे क्, च्, ट् आदि।

ऊपर दिए गए क से म तक व्यंजनों में प्रत्येक पंक्त में 5-5 व्यंजन हैं। इन्हें वर्ग के नाम से पुकारा जाता है। प्रत्येक वर्ग के पहले वर्ण से इस वर्ग का नामकरण किया जाता है जैसे क से ङ तक के पाँच वर्णों को कवर्ग, च से ञ तक व्यंजनों को चवर्ग और इसी प्रकार शेष व्यंजनों को टवर्ग, तवर्ग, पवर्ग के नाम से जाना जाता है। य, र, ल, व को अन्तस्थ वर्ण कहा जाता है और श, ष, स, ह, को ऊष्म वर्ण कहा जाता है जिसका उल्लेख आपको इसी इकाई में व्यंजनों का वर्गीकरण के अन्तर्गत मिलेगा।

क़ ख़ ग़ ज़ फ़

ये ध्वनियाँ अरबी फारसी के प्रभाव से हिन्दी में आई है। इन्हे भी व्यंजनों में समाहित माना जाता है।

ड एवं ढ के नीचे बिन्दु लगाने से ड़ एवं ढ़ ध्वनियाँ बनती है। वर्णमाला में इन की गणना पृथक् से नहीं की जाती।

संयुक्त व्यंजन

क्ष (क् + ष), त्र (त् + र), ज्ञ (ज् + ञ), श्र (श् + र)

हल चिह्न (्) – व्यंजन में कोई स्वर नहीं मिला है यह दिखाने के लिए उसके नीचे हल (्) का चिह्न लगाया जाता है जैसे क् , त्

1.3.2 भाषा-शिक्षण में उच्चारण-शिक्षण का महत्त्व

भाषा मूलतः बोलना अथवा मौखिक अभिव्यक्ति है। बोलने अथवा मौखिक अभिव्यक्ति (कथन, वार्तालाप, भाषण अथवा अन्य कोई रूप) की प्रभविष्णुता भाषा के शुद्ध उच्चारण पर निर्भर है। सस्वर वाचन और कविता पाठ में तो शुद्ध उच्चारण का और भी महत्त्व है। अतः भाषा शिक्षण में प्रारम्भः से ही शिक्षार्थियों के शुद्ध उच्चारण पर बल देना चाहिए।

हिन्दी ध्वन्यात्मक भाषा है अर्थात् इसमें वर्ण लिपि-चिह्न और उसकी उच्चरित ध्वनि एक है। यह देवनागरी लिपि की सबसे बड़ी विशेषता है कि एक ध्वनि के लिए एक ही वर्ण है। अतः वर्ण के उच्चारण का सही ज्ञान हो जाने पर शिक्षार्थियों से अशुद्ध उच्चारण की संभावना नहीं रहती। अतः शिक्षक के नाते हमें इस ओर समुचित ध्यान देना चाहिए।

लिपि चिह्न (वर्ण) और ध्वनि की समरूपता के कारण उच्चारण की शिक्षा का महत्त्व और भी बढ़ जाता है, क्योंकि अशुद्ध उच्चारण से वर्तनी की अशुद्धता की संभावना बनी रहती है। उच्चारण-शिक्षण का सर्वोपयुक्त अवसर प्राथमिक कक्षाओं में मिलता है क्योंकि उसी समय मानक देवनागरी वर्णमाला के उच्चरित और लिखित रूपों की विधिवत् शिक्षा दी जाती है, तथापि माध्यमिक स्तर के शिक्षार्थियों के उच्चारण में भी अशुद्धियां होती रहती है। इस दृष्टि से माध्यमिक स्तर पर भी उच्चारण-शिक्षण पर ध्यान देना आवश्यक हो जाता है।

उच्चारण-समस्या का एक कारण है — स्थानीय बोलियों का प्रभाव। हिन्दी एक विशाल क्षेत्र की भाषा है। यह बिहार, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, दिल्ली, राजस्थान और मध्य प्रदेश की मातृभाषा है। इस विशाल क्षेत्र में अनेक बोलियाँ है। शिक्षार्थी इन स्थानीय बोलियों के उच्चारण का प्रभाव लेकर विद्यालय में आते हैं। उनका उच्चारण हिन्दी ध्वनियों के मानक उच्चारण से कुछ न कुछ भिन्न होता है। प्राथमिक स्तर पर समुचित उच्चारण दोषों को दूर किया जा सकता है। शिक्षार्थियों में अशुद्ध उच्चारण की आदत बनी रह जाती है। अत: अशुद्ध उच्चारण की आदत दूर करने और शुद्ध उच्चारण की आदत डालने के लिए माध्यमिक स्तर पर भी प्रयास होना चाहिए।

शिक्षार्थी शिक्षक के उच्चारण का अनुकरण करता है अत: शिक्षक को अपने उच्चारण की शुद्धता के लिए सदा सजग और सचेष्ट रहना चाहिए।

1.3.3 शुद्ध उच्चारण का तात्पर्य

शुद्ध उच्चारण का तात्पर्य मानक उच्चारण से है। आप पढ़ चुके है कि हिन्दी एक विशाल क्षेत्र की भाषा है और इस क्षेत्र में अनेक बोलियाँ है। इन बोलियों के प्रभाव से हिन्दी बोलने वालों में उच्चारण भेद पाया जाता है। इन भिन्नता के रहते हुए भी उच्चारण की दृष्टि से सभी हिन्दी ध्वनियों के मानक रूप मान लिए गए है। शिक्षार्थियों को इस मानक उच्चारण की शिक्षा प्रदान करनी है, जिससे उच्चारण-भेद अथवा उच्चारण दोष दूर हो सके।

शुद्ध उच्चारण का तात्पर्य केवल वर्णों के उच्चारण से नहीं है, वरन शब्द और वाक्य स्तर पर भी शुद्ध उच्चारण से है। शब्द और वाक्य स्तर पर उच्चारण में बलाघात, अनुतान और संगम का भी ध्यान रखना पड़ता है, अत: उच्चारण शिक्षण में वर्णों के शुद्ध उच्चारण के साथ-साथ बलाघात, अनुतान और संगम से भी शिक्षार्थियों को अवगत कराना आवश्यक है।

1.3.4 उच्चारण की दृष्टि से हिन्दी वर्णों का वर्गीकरण

मानक हिन्दी वर्णमाला में आप हिन्दी ध्वनियों के दो रूपों — स्वर और व्यंजन से परिचित हो चुके है। उच्चारण की दृष्टि से पहले हम स्वरों के वर्गीकरण पर विचार करेंगे, तत्पश्चात् व्यंजनों के वर्गीकरण पर।

स्वर और उनका वर्गीकरण

स्वर वे ध्वनियाँ है जिनके उच्चारण में श्वास का अवरोध नहीं होता अर्थात् हवा बिना किसी रुकावट के मुंह से निकलती है। इनका वर्गीकरण निम्नलिखित रूप से किया जाता है।

उच्चारण की मात्रा या अवधि के आधार पर : मात्रा या उच्चारण की अवधि के आधार पर स्वर दो प्रकार के होते है — ह्रस्व स्वर और दीर्घ स्वर।

ह्रस्व स्वर : जिन स्वरों को एक मात्रा में उच्चारित किया जाता है, उन्हें ह्रस्व स्वर कहते है। मात्रा का अर्थ है — उच्चारण का कालमान अर्थात् किसी स्वर का उच्चारण कितनी अवधि में होता है। ह्रस्व स्वर के उच्चारण की अवधि अपेक्षाकृत कम होती है। ह्रस्व स्वर चार हैं अ इ उ ऋ। ऋ का प्रयोग केवल तत्सम शब्दों में ही होता है, जैसे ऋषि, ऋतु इत्यादि। इसकी मात्रा 'ृ' भी संस्कृत तत्सम शब्दों में ही लगती है, जैसे कृषि, अमृत, सृष्टि आदि। ऋ का उच्चारण भी सामान्यत: 'रि' के रूप में होने लगा है, पर लिपि में इसका प्रयोग प्रचलित है। दक्षिण भारत तथा महाराष्ट्र आदि प्रदेशों में 'ऋ' का उच्चारण 'रु' के रूप में होता है। मानकीकरण की दृष्टि से हिन्दी में 'रि' उच्चारण ही व्यवहार में आ रहा है।

दीर्घ स्वर : जिन स्वरों के उच्चारण में एक मात्रा-काल से अधिक समय लगता है, उन्हें दीर्घ स्वर कहते है। दीर्घ स्वर है — आ ई ऊ ए ऐ ओ औ ऑ। इनमें आ ई ऊ क्रमश: अ इ उ के दीर्घ रूप है। ऐ, औ का उच्चारण कभी 'अय' और 'अव' के समान होता है, जैसे — पैसा, मैल, बैल, बैरागी और औरत, मौसम,

मौन आदि और कभी संयुक्त स्वर की तरह, जैसे — मैया (मइया), नैया (नइया), कौवा (कउआ), हौवा (हउआ) आदि। ध्यान दीजिए कि ऐ और औ का संयुक्त स्वर की तरह का उच्चारण वही होता है जहाँ उनके पश्चात् 'य' (मैया), 'व' (कौवा) वर्ण आते है। ऑ के उच्चारण के संबंध में वर्णमाला के प्रसंग में लिखा जा चुका है।

अनुनासिका के आधार पर : अनुनासिका के आधार पर उच्चारण की दृष्टि से स्वरों के दो रूप है **:**

अनुनासिक और निरनुनासिक।

जब स्वर का उच्चारण करते समय कुछ वायु मुख से और कुछ नासिका से निकलती है, तब वह अनुनासिक स्वर कहलाता है। लिपि में अनुनासिक इंगित करने के लिए स्वर के ऊपर चंद्र बिन्दु लगा देते है, जैसे हँसना, चाँद, ऊँट आदि। जहाँ वर्ण की शिरोरेखा के ऊपर मात्रा लगी होती है, वहाँ चन्द्र बिन्दु की जगह अनुस्वार का चिह्न लगाना मान्य हो गया है, जैसे में, मैं, चाँकना आदि। जब स्वर का उच्चारण करते समय वायु केवल मुख से निकलती है, तो वह निरनुनासिक स्वर कहलाता है। अ से औ तक सभी स्वर निरनुनासिक है।

बोध प्रश्न :

1. शुद्ध उच्चारण से क्या तात्पर्य है ? उत्तर तीन पक्तियों में लिखे।

....

....

....

....

....

....

2. शुद्ध उच्चारण किन बातों पर निर्भर करता है ? चार पंक्तियों में स्पष्ट करें।

....

....

....

....

....

....

व्यंजनों का वर्गीकरण

जिन ध्वनियों का उच्चारण करते समय श्वास मुख विवर के कंठ, तालु आदि किसी अवयव से बाधित होकर निकलती है, उन्हें व्यंजन कहते है। इन व्यंजनों का उल्लेख हिन्दी वर्णमाला में किया जा चुका है।

व्यंजनों का वर्गीकरण दो प्रकार से किया जाता है **:**

स्थान के आधार पर : व्यंजनो का उच्चारण कंठ, जिह्वामूल, तालु, मूर्धा, दंत, वर्त्स (दंत मूल), ओष्ठ, दंतोष्ठ और नासिका से होता है। इन उच्चारण स्थानों के आधार पर व्यंजनों को कंठ्य, जिह्वामूलीय, तालव्य, मूर्धन्य, दंत्य, वर्त्स्य (दंतमूलीय), ओष्ठय, दंतोष्ठय और नासिक्य इन नौ वर्गो में रखा जाता है। आगे इनकी तालिका दी जा रही है **:**

कंठ्य **:** क ख ग घ ङ ह (गले से)

जिह्वामूलीय **:** क़ ख़ ग़ (गले से थोड़ा नीचे)

तालव्य **:** च छ ज झ ञ य श (तालु से)

मूर्धन्य **:** ट ठ ड ढ ण ड़ ढ़ ष (मूर्घा भाग से)

दंत्य : त थ द ध न (दाँतों से)

वर्त्स्य : स ज़ र ल (दंत मूल से, जहाँ ऊपर का मसूड़ा व दाँत मिलते है)

ओष्ठ्य : प फ ब भ म (दोनों होठों से)

दंतोष्ठ्य : व फ (निचले होठ और ऊपर के दाँतों से)

नासिक्य : ङ ञ ण न म (मुख और नासिका दोनों से, प्रत्येक वर्ग का अंतिम वर्ण)

प्रयत्न के आधार पर : ध्वनियों के उच्चारण में प्रयत्न तीन प्रकार के होते है :

- श्वास (प्राण) की मात्रा के आधार पर
- स्वरतंत्री में श्वास के कंपन के आधार पर
- जिह्वा अथवा अन्य अवयवों द्वारा श्वास के अवरोध के आधार पर

(i) **श्वास (प्राण) की मात्रा** के आधार पर व्यंजनो के दो भेद है : अल्पप्राण तथा महाप्राण।

अल्पप्राण : वे व्यंजन है जिनके उच्चारण में वायु की मात्रा कम होती है, जैसे — क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म अर्थात् वर्गो के प्रथम, तृतीय तथा पंचम वर्ण। इनके अतिरिक्त क़ ग़ ज़ ड़ य र ल व भी अल्पप्राण व्यंजन है।

महाप्राण : वे व्यंजन है जिनके उच्चारण में श्वास की मात्रा अधिक होती है : ख घ छ झ ठ ढ थ ध फ भ अर्थात् वर्गो के द्वितीय और चतुर्थ व्यंजन इनके अतिरिक्त ढ़ ह भी महाप्राण है।

(ii) **स्वरतंत्री में श्वास का कंपन :** इस आधार पर व्यंजनों के दो भेद है अघोष और सघोष।

अघोष : जिन ध्वनियों के उच्चारण में स्वरतंत्रियों में कंपन नही होता, जैसे क ख च छ ट ठ त थ प फ (वर्गों के प्रथम और द्वितीय वर्ण) इनके अतिरिक्त क ख फ श ष स भी अघोष व्यंजन है।

सघोष : जिन ध्वनियों के उच्चारण में स्वरतंत्रियों में कंपन होता, जैसे ग घ ङ ज झ न ड ढ ण द घ न ब भ म (वर्गों के तृतीय, चतुर्थ, पंचम वर्ण) इनके अतिरिक्त ग़ ज़ ड़ ढ़ र ल व ह भी सघोष व्यंजन है।

(iii) **जिह्वा या अन्य अवयवों द्वारा श्वास का अवरोध :** इस आधार पर व्यंजनों को स्पर्शी, स्पर्श-संघर्षी, संघर्षी उत्क्षिप्त तथा अंतस्थ वर्गो में रखा जाता है।

स्पर्शी : जिन व्यंजनों के उच्चारण में एक उच्चारण अवयव दूसरे उच्चारण अवयव का स्पर्श मात्रा करता है, उन्हें स्पर्शी कहते है, जैसे — क ख ग घ ङ ट ठ ड ढ ण त थ द ध न प फ ब भ म तथा क।

स्पर्श संघर्षी : जिन व्यंजनों के उच्चारण में एक उच्चारण अवयव दूसरे उच्चारण अवयव को इस प्रकार स्पर्श करता है कि श्वास कुछ संघर्ष (रगड़) के साथ निकलती है, उन्हें संघर्षी कहते है, जैसे — च छ झ ञ।

संघर्षी : जिन व्यंजनों के उच्चारण में श्वास रगड़ खाकर निकलता है और रगड़ के कारण श्वास में कुछ उष्मा उत्पन्न होती है, इसलिए इन्हें ऊष्म ध्वनियाँ भी कहते है जैसे — श ष स ह। ख़ ग़ ज़ फ़ भी संघर्षी ध्वनियाँ है।

उत्क्षिप्त : जिन व्यंजनों के उच्चारण में जिह्वा ऊपर उठकर मूर्धा को स्पर्श करती हुई तुरन्त नीचे गिरती है, उन्हें उत्क्षिप्त (ऊपर फेंके हुए) कहते है जैसे — ड़ ढ़।

अंतस्थ : जिन व्यंजनों के उच्चारण में श्वास का अवरोध बहुत ही कम होता है, उन्हें अंतस्थ कहते हैं, जैसे य र ल व इनमें य और व को अर्धस्वर भी कहते हैं, क्योंकि श्वास का अवरोध अत्पल्य होने के कारण इनमें स्वर तत्त्व भी विद्यमान रहता है। 'र' को लुंठित भी कहा जाता है, क्योंकि इसके उच्चारण में जिह्वा आगे की ओर से ऊपर उठकर मूर्धा पर जाकर लुढ़कती है। 'ल' को पार्श्विक कहा जाता है, क्योंकि इसके उच्चारण में जिह्वा ऊपर उठकर मूर्धा तथा तालू से चिपक जाती है और अवरुद्ध श्वास जिह्वा के दोनों ओर (पार्श्वों) से होकर निकल जाता है।

1.3.5 उच्चारण संबंधी अन्य भाषिक पक्ष

उच्चारण की दृष्टि से स्वरों और व्यंजनों के वर्गीकरण पर विस्तार से चर्चा का उद्देश्य यह है कि हम इनके आधार पर शिक्षार्थियों को प्रत्येक वर्ण का शुद्ध उच्चारण बता सकें, किन्तु शब्द और वाक्य स्तर पर शुद्ध उच्चारण के लिए निम्नलिखित भाषिक पक्षों की भी जानकारी आवश्यक है :

अक्षर बलाघात अनुतान संगम

अक्षर

अक्षर शब्द का प्रयोग सामान्यतः स्वरों और व्यंजनों के लिपि चिह्नों अर्थात् वर्णों के लिए किया जाता है, पर व्याकरण की दृष्टि से अक्षर का भिन्न अर्थ है। किसी एक ध्वनि या ध्वनि समूह की एक साथ (अविच्छिन्न) उच्चरित इकाई को अक्षर कहते है। यह शब्द स्तर पर उच्चरित भाषा की लघुतम इकाई है। अक्षर में स्वर की प्रधानता होती है। एक अक्षर में एक से अधिक स्वर नहीं होते, पर उसके आगे या पीछे या दोनों ओर व्यंजन अथवा व्यंजन गुच्छ हो सकता है, जैसे –

एक स्वर	: आ, ऐ, ओ
स्वर के पूर्व एक व्यंजन	: जा, लो, भी
स्वर के पहले और बाद में व्यंजन	: चाल, नीच, खून, मोर
स्वर के पूर्व व्यंजन गुच्छ	: क्या, श्री, स्त्री
स्वर के बाद व्यंजन गुच्छ	: अंत, इत्र, उम्र

शुद्ध उच्चारण की दृष्टि से अक्षर का उच्चारण एक साथ (अविच्छिन्न रूप से) करना चाहिए, खंडित रूप में नहीं।

बलाघात

शब्दों के उच्चारण में अक्षर पर जो बल दिया जाता है, उसे बलाघात कहते है। बलाघात अक्षर के स्वर पर होता है। शब्द कि सभी समान बल से नहीं बोले जाते।

– एक अक्षर वाले शब्दों में बलाघात उसी अक्षर पर होता है, जैसे – वह जो जेल, ओज।

– एकाधिक, अक्षर वाले शब्दों में यदि सभी हस्व हो, तो बलाघात उपांत (अंतिम से पूर्व) अक्षर पर पड़ता है, जैसे – कमल अगणित।

– तीन चार अक्षर वाले शब्दों में यदि मध्य अक्षर दीर्घ हो तो बलाघात उसी पर पड़ता है, जैसे – मसाला, झूमेगा।

– शब्द स्तर पर बलाघात 'अक्षर' पर पड़ता है और वाक्य स्तर पर बलाघात 'शब्द' पर पड़ता है। वाक्य में शब्द पर बलाघात पड़ने से कथन का आशय बदल जाता है, जैसे – आज मैं रामायण पढूँगा। इस वाक्य में 'मैं' पर बल पड़ने से आशय निकलता है कि कल किसी और ने रामायण पढ़ी थी, आज मैं पढूँगा। और रामायण पर बल पड़ने से आशय निकलता है कि मैनें कल कुछ और पढ़ा था, आज रामायण पढूँगा।

अनुतान

बोलने से स्वर में जो उचार-चढ़ाव (आरोह-अवरोह) होता है, उसे अनुतान कहते है। अनुतान सामान्यतः वाक्य स्तर पर होता है, पर शब्द स्तर पर भी हो सकता है, जैसे एक ही शब्द 'अच्छा' के प्रयोग से विभिन्न अनुतान से स्वीकृति, बेमन की स्वीकृति, प्रश्न, आश्चर्य आदि का भाव प्रकट किया जा सकता है। वाक्य में सामान्यतः विराम चिह्नों से अनुतान की पहचान होती है जैसे पूर्ण विराम (।), प्रश्न सूचक विराम (?), आश्चर्य सूचक विराम (!) इन विराम चिह्नो के प्रयोग से एक ही वाक्य के क्रमशः तीन रूप बन जाते हैं जैसे – यह बहुत अच्छा चित्र है। (स्वीकृति) यह बहुत अच्छा चित्र है ? (प्रश्न) यह बहुत अच्छा चित्र है ! (प्रशंसा)।

संगम

शब्दों के उच्चारण में वर्णों के ही उच्चारण का ध्यान नहीं रखना पड़ता, वरन् पदीय सीमाओं का भी ध्यान रखना पड़ता है। इनका सीमा संकेत कहलाता है। किन अक्षरों के बीच में हल्का सा विराम देकर बोलना

है और किन अक्षरों को प्रवाह में एक साथ बोलना है, यह जानना शुद्ध उच्चारण के लिए आवश्यक है, अन्यथा अर्थ भी बदल जाता है, जैसे :

सिरका : एक तरह का तरल पदार्थ

सिर + का : सर से संबंधित

जलसा : उत्सव

जल + सा : जल की तरह

इसी प्रकार वाक्य स्तर पर भी संगम का महत्त्व है, जैसे :

दिये तले + रख दो : दिये के नीचे रख दो

दिये + तले रख दो : दियों के नीचे रख दो

1.3.6 उच्चारण संबंधी अशुद्धियाँ और उनका निराकरण

उच्चारण संबंधी अशुद्धियाँ सामान्यत: निम्नलिखित प्रकार की होती है। इन अशुद्धियों को दूर करने के लिए उनके शुद्ध उच्चारण के अभ्यास के प्रति हमें प्रयत्नशील रहना चाहिए।

हिन्दी वर्णों में ऋ, ञ, ष, ज्ञ के मूल उच्चारण की जगह अब उनका उच्चारण क्रमश: रि, यँ, श, ग्य के रूप में होने लगा है ऋ संस्कृत तत्सम शब्दों में ही प्रयुक्त होता है। जैसे ऋग्वेद, ऋजु, ऋण, ऋतु, ऋषि, ऋद्धि आदि। ऋ के उच्चारणाभ्यास के लिए ऋ की मात्रा 'ृ' वाले शब्द भी बता दिए जाएँ जैसे – कृपा, कृषि, गृह, घृणा, दृश्य, मृत्यु, श्रृंगार, सृष्टि आदि। इसी प्रकार ज्ञ युक्त शब्द भी बता दिए जाएँ भालें ही उसका मूल उच्चारण हम मूल से गए है। ष का उच्चारणँ श के समान हो गया है पर लिखित रूप में उसकी जगह श का प्रयोग अशुद्ध है। ञ का प्रयोग हिन्दी में स्वतंत्र रूप से नहीं होता है।

उच्चारण संबंधी कुछ अशुद्धियाँ

	अशुद्ध	**शुद्ध**
अ, आ संबंधी	समाजिक	सामाजिक
	अराधना	आराधना
	आधीन	अधीन
	अनाधिकार	अनधिकार
इ, ई संबंधी	कवी	कवि
	शांती	शांति
	बुद्धी	बुद्धि
	पितांबर	पीतांबर
	आशिर्वाद	आशीर्वाद
उ, ऊ संबंधी	गूरु	गुरु
	साधू	साधु
	पशू	पशु
	शुन्य	शून्य
	पुज्य	पूज्य
ए, ऐ संबंधी	एतिहासिक	ऐतिहासिक
	एच्छिक	ऐच्छिक
ओ, औ संबंधी	औसर	अवसर
	नौनीत	नवनीत
ऋ, रि, र	किरपा	कृपा

	द्रिष्टि	दृष्टि
	निर्पराध	निरपराध
	प्रथक	पृथक
	सौहार्द्र	सौहार्द
	आर्शिवाद	आशीर्वाद
छ, क्ष, च्छ	छुद्र	क्षुद्र
	दीच्छा	दीक्षा
	छेत्र	क्षेत्र
	छत्रिय	क्षत्रिय
ट, ठ संबंधी	घनिष्ट	घनिष्ठ
	विशिष्ठ	विशिष्ट
	पृष्ट	पृष्ठ
	अभीष्ठ	अभीष्ट
ड़, ढ़, र संबंधी	चड़ना	चढ़ना
	लढ़ना	लड़ना
	लरका	लड़का
न, ण संबंधी	चरन	चरण
	गुन	गुण
	प्रमान	प्रमाण
	प्रनाली	प्रणाली
व, ब संबंधी	बर्षा	वर्षा
	बिषय	विषय
	वहिष्कार	बहिष्कार
श, ष, स, संबंधी	श्रोत	स्रोत
	प्रशाद	प्रसाद
	संतोश	संतोष
	बिसेश	विशेष
	नमष्कार	नमस्कार
लोप–आगम विषय संबंधी	अध्यन	अध्ययन
	स्वालंबन	स्वावलंबन
	अस्नान	स्नान
	चिन्ह	चिह्न
	मध्यान्ह	मध्याह्न

बोध प्रश्न :

3. स्थान और प्रयत्न की दृष्टि से हिन्दी व्यंजनों का वर्गीकरण कीजिए। पाँच पंक्तियों में उत्तर दे ।

....

....

....

....

....

....

4. बलाघात और अनुतान में क्या अन्तर है ? उत्तर चार पंक्तियों में दे।

....

....

....

....

....

....

5. हिन्दी में अशुद्ध उच्चारण के मुख्य कारण क्या है ? उत्तर सात पंक्तियों में लिखें।

....

....

....

....

....

....

1.3.7 वर्तनी का महत्त्व

जिस प्रकार भाषा के मौखिक प्रयोग में उच्चारण की शुद्धता और उसके प्रयोग दी दक्षता आवश्यक है, उसी प्रकार भाषा के लिखित प्रयोग में वर्तनी की शुद्धता और उसके प्रयोग की दक्षता आवश्यक है। वर्तनी का शाब्दिक अर्थ है — वर्तन यानी अनुवर्तन अर्थात् पीछे-पीछे चलना। लेखन व्यवस्था में वर्तनी शब्द-स्तर पर शब्द की ध्वनियों का अनुवर्तन करती है अर्थात् शब्द के लेखन में शब्द की एक-एक करके आने वाली ध्वनियों के लिए लिपि प्रतीकों (वर्णों) के क्या रूप हो और उनका कैसा संयोजन हो यह वर्तनी का कार्य है।

1.3.8 अशुद्ध वर्तनी के मुख्य कारण

- हिन्दी वर्णमाला और वर्णों के प्रयोग का सही-सही ज्ञान न होना
- उच्चारण की अशुद्धता
- व्याकरणिक नियमों की अनभिज्ञता।

आइए इन तीनों बिन्दुओं पर संक्षेप में चर्चा करें।

हिन्दी वर्णमाला का ज्ञान और वर्णों का सही प्रयोग

हिन्दी वर्णमाला के कुछ वर्णों के दो रूप प्रचलित हैं, जैसे **:**

अ	अ्र
ख	रव
छ	छ्
झ	फ
ण	ख
ध	घ
भ	म

इनमें से पहले रूप मानक है और दूसरे रूप परम्परागत। लेखन में हमें वर्णों के मानक रूप का ही प्रयोग करना चाहिए।

व्यंजनों के साथ मात्राएँ : वर्णमाला में स्वरों के साथ उनकी मात्राएँ दी गई है। कोई मात्रा वर्ण के पहले लगती है और कोई वर्ण के बाद, कोई वर्ण के नीचे और कोई वर्ण के ऊपर। इनका ठीक अभ्यास न होने से शिक्षार्थी मात्रा लगाने में भूल कर देते है और वर्तनी की अशुद्धियाँ हो जाती है। मात्रा लगे हुए व्यंजनों को कक्षा में चार्ट द्वारा समझाया जा सकता है, जैसे :

क का कि की कु कू के कै को कौ कों (र के साथ उ ऊ की मात्रा भिन्न प्रकार से लगती है, यथा रु, रू)।

अनुस्वार – कं विसर्ग – कः अनुनासिक – कँ इस प्रकार प्रत्येक वर्ण पर सही ढंग से मात्रा, अनुस्वार, विसर्ग, चंद्रबिन्दु लगाकर चार्ट तैयार कर उसे कक्षा में दिखाया जा सकता है।

संयुक्त व्यंजन की ध्वनियाँ देवनागरी लिपि की विशेषता है। हिन्दी में इनकी संख्या लगभग डेढ़ सौ है। इनके उच्चारण और लेखन में विशेष ध्यान रखना चाहिए। हिन्दी वर्णमाला में चार संयुक्त व्यंजन अलग से दे दिए गए है क्योंकि उनमें दो वर्णों का संयोग होने पर उसका रूप बदल जाता है, और उनकी अपनी पहचान नहीं रहती है यथा क् + ष = क्ष, त् + र = त्र, ज् + ञ = ज्ञ, श् + र = श्र किन्तु अन्य संयुक्त व्यंजनों में ऐसा नहीं है और संयुक्त होने वाले व्यंजनों की पहचान बनी रहती है।

व्यंजनों के संयोग के नियम

- जिन व्यंजनों में खड़ी पाई होती है, दूसरे व्यंजन से संयोग होने पर खड़ी पाई हटा ली जाती है। जैसे ख, ग, घ, च, ज, त, थ, ध, न, प, ब, भ, म, य, ल, व, श, ष, स। वर्णमाला में संयुक्त वर्ण के रूप में आने वाले संयुक्त वर्ण क्ष, त्र में भी खड़ी पाई हटा देते है। इनके साथ संयोग के कुछ उदाहरण है – ख्याति, मग्न, विघ्न, छज्जा, पत्ता, तथ्य, ध्वनि, नगण्य, सुरम्य, शय्या, उल्लेख, श्लोक, कष्ट, स्वीकार, त्र्यंबक।
- क और फ में संयोग होने पर उनकी पूँछ हटाकर दूसरे वर्ण का संयोग किया जाता है, जैसे – पक्का, संयुक्त, परिपक्व दफ्तर, रफ्तार।

  च् + च = च्च, ज + ज = ज्ज, क् + क = क्क रूप अब मान्य नहीं है। क् + त = क्त तथा त् + त = त्त भी अब मानक नहीं है। मानक रूप में इन वर्णों को हल चिह्न से युक्त कर लिखा जाता है जैसे – कच्‌चा, पक्‌का, छज्‌जा।
- ङ, ट, ठ, ड, ढ, द, ह वर्णों के नीचे हल चिह्न लगाकर इनके संयुक्त रूप बनते है, यथा – वाङ्मय, लट्‌टू, चिट्‌ठी, कंठ्‌य, घनाढ्‌य, बुड्‌ढा, चिह्‌न, विद्‌या।
- 'र' का संयोग : जब किसी आधे वर्ण में पूरा 'र' मिलता है, तब एक तिरछी रेखा, उस वर्णके नीचे लगती है, जैसे – प् + र = प्र (प्रकार), म् + र = म्र (नम्रता), क् + र = क्र (चक्र) आदि। ध्यान दीजिए कि प्, म्, क्, हलंत होते हुए भी पूरे रूप में लिखे गए है और 'र' का संयोग उनके नीचे तिरछी रेखा के रूप में हुआ है।

  ट्, ड्, में 'र' का संयोग उनके नीचे (्र) के रूप में होता है, जैसे – राष्ट्र, ड्रम आदि।

  श् और त् में 'र' के संयोग से बने श्र और त्र का उल्लेख पहले किया जा चुका है।
- जब स्वर रहित 'र' किसी पूरे वर्ण में मिलता है तो उसकी ध्वनि (उच्चारण) के आगे वाले वर्ण के ऊपर (र्‍) के रूप में लग जाता है, जैसे – धर्म, सार्थक, सकर्मक आदि। 'र' के संयोग से वर्तनी की त्रुटियाँ प्रायः पाई जाती है क्योंकि रेफ (र्‍) का चिह्न अगले वर्ण पर न लगकर पहले वर्ण पर लगा दिया जाता है, जैसे आशीर्वाद, सर्कमक जबकि शुद्ध रूप है, आशीर्वाद और सकर्मक।
- **विभक्ति चिह्न –** विभक्ति चिह्न सभी प्रकार के संज्ञा शब्दों में शब्द से पृथक लिखे जाते है, जेसे – श्याम ने, श्याम को, श्याम से, श्याम का आदि।

  सर्वनाम शब्द के साथ यदि दो विभक्त चिह्न हो तो उनमें से पहला मिलाकर और दूसरा पृथक लिखा जाता है, जैसे – उसके लिए, इसमें से आदि।

सर्वनाम और विभक्ति के बीच 'ही', 'तक' आदि का निपात हो तो विभक्ति को पृथक लिखा जाता है, जैसे — आप ही के लिए, मुझ तक को !

- **क्रियापद —** संयुक्त क्रियाओं में सभी अंगभूत क्रियाएँ पृथक-पृथक लिखी जाती है, जैसे — पढ़ रहा है, खेल रहा है, खेला करता था, बढ़ते चले जा रहे है, आदि।
- **अव्यय —** समस्त पदों में प्रति, मात्र यथा आदि अव्यय पृथक नहीं लिखे जातें, जैसे — प्रतिदिन, प्रतिशत, मानवमात्र, निमित्तमात्र, यथासमय।
- **अनुस्वार और पंचम वर्ण —** संयुक्त व्यंजन के रूप में जहाँ पंचमाक्षर के बाद सवर्गीय शेष चार वर्णों में से कोई वर्ण हो तो अनुस्वार का ही प्रयोग मान्य है, जैसे — गंगा, चंचल, दंड, संध्या, संपादक। अब इनमें पंचम वर्ण का संयोग (गङ्गा, उञ्च ल, दण्ड, सन्ध्या, सम्पादक) मान्य नहीं है।

  यदि पंचमाक्षर के बाद किसी अन्य वर्ण का वर्ण आए अथवा वही पंचमाक्षर दुबारा आए तो पंचमाक्षर अनुस्वार के रूप में परिवर्तित नहीं होगा, जैसे — वाङ्मय, अन्य, सम्मेलन, सम्मति, चिन्मय, उन्मुख आदि।

अशुद्ध उच्चारण का वर्तनी पर प्रभाव

हिन्दी ध्वनियों के उच्चारण और ध्वनि चिह्नों की समरूपता के कारण अशुद्ध उच्चारण होने से वर्तनी के भी अशुद्ध होने की संभावना बनी रहती है। अतः उच्चारण की शुद्धता और तदनरूप शुद्ध वर्तनी के अभ्यास पर बल देना चाहिए। वर्गीकरण रूप में अशुद्ध उच्चारण के कुछ उदाहरण दिए जा चुके है उन्हें अशुद्ध वर्तनी काभी उदाहरण माना जा सकता है। उच्चारण और वर्तनी की दृष्टि से उन शब्दों के शुद्ध रूप भी लिखे गए है। उनके अभ्यास से वर्तनी की अशुद्धियों की संभावना नहीं रहेगी।

व्याकरणिक नियमों की अनभिज्ञता

शब्द रचना संबंधी व्याकरणिक नियमों की अनभिज्ञता के कारण बहुत सी वर्तनीगत अशुद्धियाँ होती है। इन नियमों में मुख्य है — संधि के नियम, उपसर्ग और प्रत्यय के योग से शब्द रचना के नियम, लिंग वचन विकार संबंधी नियम, सामासिक चिह्न अथवा हाइफन के प्रयोग संबंधी नियम।

आइए इन नियमों को हम समझ लें :

संधि के नियम : यदि दो सवर्ण पास-पास आएँ तो दोंनो के योग से सवर्ण दीर्घ स्वर होता है, जैसे — अ + अ, अ + आ, आ + अ, मिलकर 'आ' होगा। उसी प्रकार इ (ई) + इ (ई) 'ई' होगा। उ (उ) + उ (ऊ) मिलकर 'ऊ' होगा। यह जानकारी न रहने से शिक्षार्थी दोनों सवर्ण स्वरों के मिलने पर भी ह्स्व स्वर लिख देते है, जैसे — स्व + अधीनता = स्वाधीनता की जगह स्वधीनता। कवि + ईश्वर = कवीश्वर की जगह कविश्वर, भानु + उदय = भानुदय की जगह भानुदय। इस प्रकार की अशुद्ध वर्तनी को शुद्ध करने के लिए स्वर संधि के नियम बताने चाहिए।

- इ + अ मिलकर 'य' बनता है, पर शिक्षार्थी संधि नियम की अज्ञानता से य की जगह 'या' लिख देते है — रीति + अनुसार = रीत्यनुसार की जगह रीत्यानुसार, वृत्ति + अनुप्रास = वृत्यनुप्रास की जगह वृत्यानुप्रास।
- स्वर रहित व्यंजन के बाद यदि स्वर जाता है तो उस अपूर्ण व्यंजन में वही स्वर लग जाता है, शिक्षार्थी उसे दीर्घ स्वर कर देते है, जैसे — अन् + अधिकार = अनधिकार की जगह अनाधिकार।
- विसर्गयुक्त उपसर्ग लगाकर शब्द रचना करने में विशेष अशुद्धियाँ पाई जाती है क्योंकि विसर्ग लगने पर उसका क्या रूप बनता है, यह नियम शिक्षार्थियों को स्पष्ट नहीं होता।

  विसर्ग के आगे क, प, फ, हो तो विसर्ग का 'ष्' हो जाता है, जैसे — निः + कपट = निष्कपट, निः + पाप = निष्पाप, निः + फल = निष्फल, दुः + परिणाम = दुष्परिणाम आदि।

  विसर्ग के योग में कुछ अपवाद भी है, जैसे — नमः + काम = नमष्कार, पुरः + कार = पुरष्कार, अंतः + करण = अंतः करण आदि।

  यदी विसर्ग के पूर्व 'अ' हो और आगे घोष व्यंजन हो तो विसर्ग का 'ओ' हो जाता है, जैसे — मनः + योग = मनोयोग, अधः + गति = अधोगति आदि।

उपसर्ग और प्रत्यय के योग से शब्द रचना संबंधी नियम

- 'इक' प्रत्यय लगाकर शब्द-रचना करने में प्रायः त्रुटि पाई जाती है। अ, आ स्वरों अथवा स्वर युक्त व्यंजनों से प्रारम्भ होने वाले शब्दों में 'इक' लगने पर प्रारम्भिक स्वर दीर्घ आ हो जाएगा, जैसे — समाज + इक = सामाजिक, व्यापार + इक = व्यापारिक। इ, ई, ए से आरम्भ होने वाले शब्दों में 'इक' लगने पर इ, ई, ए का ऐ हो जाता है, जैसे शिक्षा + इक = शैक्षिक, नीति + इक = नैतिक, एक + इक = ऐकिक। उ, ऊ, ओ से प्रारम्भ होने वाले शब्दों में 'इक' लगने पर उ, ऊ, ओ, का 'औ' हो जाता है जैसे — उद्योग + इक = औद्योगिक, भूगोल + इक = भौगोलिक, लोक + इक = लौकिक। इन नियमों की अनभिज्ञता के कारण शिक्षार्थी शब्दों के प्रारम्भिक स्वर का सही रूप नहीं बदल पाते।
- **लिंग-वचन विकास संबंधी नियम —** लिंग तथा वचन परिवर्तन के कारण शब्द का जो रूप परिवर्तित होता है, उसे न जानने से शब्द में वर्तनी की अशुद्धियाँ हो जाती है। नदी, स्त्री, लड़की शब्द का जब बहुवचन में प्रयोग होता है तो उनका दीर्घ 'ई' स्वर ह्रस्व बन जाता है और आगे याँ लग जाता है, यथा — नदियाँ, स्त्रियाँ, लड़कियाँ। यह जानकारी न होने से शिक्षार्थी नदीयाँ, स्त्रीयाँ लिखने की भूल करके है। 'स्वामी' शब्द का स्त्रीलिंग 'स्वामिनी' होता है, कवि का 'कवयित्री' होता है।
- जहाँ श्रुतिमूलक य, व का प्रयोग विकल्प से होता है, वहाँ इनका प्रयोग न करके स्वरात्मक प्रयोग ही मानक माना गया है, जैसे — गया-गई, गए। आया-आई, आए। दिखाया-दिखाई, दिखाए। गये-गयी, दिखायी, दिखाये, रूप अब अमानक है।

  ध्यान दीजिए कि जहाँ 'य' श्रुतिमूलक व्याकरणिक परिवर्तन न होकर शब्द का ही मूल तत्त्व है, वहाँ वैकल्पिक स्वरात्मक परिवर्तन की आवश्यकता नहीं, जैसे — स्थायी, अव्ययीभाव, दायित्व आदि। स्थाई, अव्यईभाव, दाइत्व लिखना अशुद्ध रूप होगा।
- **हाइफन अथवा सामासिक चिह्न :** हाइफन (—) लगाने के भी कुछ नियम है। द्वंद्व समास में पदों के बीच हाइफन रहेगा, जैसे — शिव-पार्वती पढ़ना-लिखना। पर सीताराम, राधाकृष्ण बिना हाइफन के ही मिलाकर लिखे जाते है।

  सा, जैसा आदि से पूर्व हाइफन होगा, जैसे — तुम-सा, मोहन-जैसा, चाकू-सा तेज।

तत्पुरुप में हाइफन का प्रयोग केवल वहीं होता है, जहाँ भ्रम की संभावना हो, अन्यथा नहीं। रामराज्य, राजकुमार, गंगाजल, भूपति आदि में हाइफन की आवश्यकता नहीं किंतु भू-तत्त्व, संस्कृति-कोश साहित्य-सम्मेलन जैसे शब्दों में हाइफन लगेगा।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि शुद्ध वर्तनी की दृष्टि से हम शिक्षार्थियों को मानक हिन्दी वर्णमाला के सही ज्ञान और प्रयोग से परिचित कराएँ, हिन्दी शब्दों के शुद्ध उच्चारण का अभ्यास कराएँ तथा शब्द रचना तथा शब्दों के रूप परिवर्तन के नियमों से भली-भाँति अवगत कराएँ। ये क्रियाएँ निश्चित ही शिक्षार्थियों में शुद्ध वर्तनी के प्रयोग की आदत सुदृढ़ करेंगी।

बोध प्रश्न :

6. वर्तनी संबंधी अशुद्धियों के प्रमुख कारण क्या है ?

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

7. अशुद्ध उच्चारण का वर्तनी पर क्या प्रभाव पड़ता है ?

   ....

   ....

....

....

....

....

1.3.9 उच्चारण और वर्तनी संबंधी शिक्षण-प्रक्रिया

पूर्व वर्णित भाषिक तत्त्वों अर्थात् मानक हिन्दी वर्णमाला, उच्चारण, वर्तनी, शब्द और वाक्य के विधिवत् शिक्षण का उपयुक्त प्रारम्भिक विद्यालयीय स्तर (कक्षा 1 से 8 तक) पर मिलता है। अतः अपेक्षा यह है कि शिक्षार्थी शुद्ध उच्चारण और वर्तनी दी दक्षता प्राप्त कर चुके होंगे। आपने माध्यमिक स्तर पर उनके अर्जित ज्ञान और दक्षता को अधिकाधिक विकसित करने का प्रयास करना है। इस दृष्टि से निम्नलिखित उपागम उपयोगी होंगे :

- औपचारिक शिक्षण के माध्यम से भाषिक तत्त्वों के ज्ञान और प्रयोग की दक्षता को अधिकाधिक विकसित तथा समृद्ध करना।
- पाठ्यपुस्तक पढ़ाते समय पाठ में आए हुए भाषिक तत्त्वों के आधार पर यथाप्रसंग तत्संबंधी ज्ञान और प्रयोग की दक्षता को विकसित और समृद्ध करना। इसे पाठ संसर्ग उपागम कह सकते है।
- मौखिक और लिखित रचना-शिक्षण के माध्यम से भाषिक तत्त्वों के ज्ञान और प्रयोग की दक्षता को विकसित और समृद्ध करना। इसे हम रचना-शिक्षण उपागम कह सकते है।

व्यतिरेकी भाषा शिक्षण उपागम

वैसे वर्ण-उच्चारण और वर्तनी-शिक्षण का सीधा माध्यम व्याकरण-शिक्षण है किन्तु वह कभी-कभी सैद्धांतिक और पारिभाषिक होकर रह जाता है। किन्तु आगमन विधि के प्रयोग द्वारा उसे प्रयोगात्मक और व्यावहारिक बनाया जा सकता है। इस प्रकार की शिक्षण-प्रक्रिया में प्रस्तावना के बाद कुछ उदाहरण, उन पर प्रश्नोत्तर विधि से छात्रों से चर्चा, उस आधार पर नियम और निष्कर्ष, नियमों की पृष्टि के लिए पुनः उदाहरण और मूल्यांकन की क्रिया विधि अपनाई जाती है।

इस संबंध में व्याकरण-शिक्षण की इकाई में आप विस्तार से अध्ययन करेंगे, अतः यहाँ उन पर चर्चा न करके अन्य युक्तियों तथा उपागमों की चर्चा की गई है।

ज्ञान के प्रयोगात्मक एवं व्यावहारिक दक्षता को विकसित करने का अवसर भाषा-शिक्षण में पाठ-संसर्ग उपागम एवं रचना-शिक्षण उपागम द्वारा दिन-प्रतिदिन मिलता है। अतः यहाँ इन दो उपागमों पर विस्तार से विचार किया गया है।

पाठ संसर्ग उपागम

इस उपागम की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि पाठ पढ़ते समय शिक्षार्थियों को भाषिक तत्त्वों के ज्ञान और प्रयोग की क्रियात्मक शिक्षा प्राप्त होती है। वे भाषिक तत्त्वों का ज्ञान विषयवस्तु संबंधी तथ्य, भाव और विचार-बोध की प्रक्रिया में प्रासंगिक तथा जीवंत में प्राप्त करते है। वे सिद्धांतों और नियमों के चक्कर से परे प्रत्यक्ष उदाहरण द्वारा प्रयोग और व्यवहार की दक्षता विकसित करते है, इससे उनमें भाषिक दक्षता प्राप्त करने की रुचि बनी रहती है। अतः इस उपागम द्वारा हम उच्चारण, वर्तनी, शब्द और वाक्य की शिक्षण-प्रक्रियाओं पर विचार करेंगे :

उच्चारण शिक्षण

गद्य या पद्य पाठ पढ़ाते समय सस्वर वाचन के माध्यम से उच्चारण शिक्षण का अच्छा अवसर मिलता है। शिक्षक को सहज ही मालूम हो जाता है कि शिक्षार्थियों ने किन-किन शब्दों का अशुद्ध उच्चारण किया है। किसी नैदानिक परीक्षण की आवश्यकता नहीं पड़ती। अतः सस्वर वाचन में अशुद्ध उच्चरित शब्दों के शुद्ध रूपों की ओर शिक्षार्थियों का ध्यान आकृष्ट करना चाहिए। इसके साथ ही वाक्य स्तर पर उचित बलाघात, अनुतान, गति, यति की ओर भी ध्यान देने का अवसर मिलता है। ये सभी उच्चारण के अभिन्न अंग है। कविता-पाठ में इन विशेषताओं का और भी अधिक महत्त्व है। अतः सस्वर वाचन में उच्चारण के सभी पक्ष उसकी शिक्षण प्रक्रिया में आ जाते है।

गद्य पाठों में भाषा-कार्य के अंतर्गत संधि, समास, उपसर्ग, प्रत्यय, लिंग, वचन आदि के कारण शब्द के परिवर्तित रूपों के उच्चारण का यथेष्ट अवसर मिलता है। ऐसे अवसरों पर हमारा यह प्रयास होना चाहिए कि शिक्षार्थी प्रत्येक शब्द और वाक्य स्तर पर शुद्ध उच्चारण के साथ सस्वर वाचन प्रस्तुत करें और बलाघात, अनुतान तथा प्रवाह का भी ध्यान रखें।

शुद्ध उच्चारण के अभ्यास की दृष्टि से पाठ में आए हुए ऐसे शब्दों को श्यामपट्ट पर लिखें जिनकें उच्चारण में शिक्षार्थियों से त्रुटि हुई हो। इससे शिक्षार्थियों का ध्यान उन शब्दों के उच्चारण की ओर बना रहता है। स्मरण रहे कि उच्चारण शिक्षण में शिक्षक के उच्चारण का सर्वाधिक महत्त्व है। उसका आदर्श पाठ शिक्षार्थियों के लिए अनुकरणीय होना चाहिए। इस दृष्टि से शिक्षक को अपने उच्चारण की शुद्धता के प्रति सतत सचेष्ट रहना चाहिए। उच्चारण संशोधन में यह ध्यान रखें कि शिक्षार्थियों द्वारा सस्वर वाचन समाप्त होने के बाद ही उनके अशुद्ध उच्चारण के संशोधन का प्रयास किया जाए, उन्हें पढ़ते समय न टोका जाए।

वर्तनी शिक्षण : पाठ-संसर्ग उपागम द्वारा वर्तनी शिक्षण का अवसर कम मिलता है। गद्य पाठों को पढ़ाते समय भाषा-कार्य के अंतर्गत यथाप्रसंग हम ऐसे शब्दों की ओर शिक्षार्थियों का ध्यान आकृष्ट कर सकते है जिनके लिखने में वर्तनी की अशुद्धियों की सम्भावना रहती है। ऐसे शब्दों को श्यामपट्ट पर भी लिख देना चाहिए।

भाषा कार्य में शब्द रचना, सन्धि, समास, उपसर्ग, प्रत्यय, आदि के प्रसंग में परिवर्तित शब्दों की शुद्ध वर्तनी की ओर भी ध्यान दिलाया जा सकता है। इन परिवर्तिति रूपों के कारण वर्तनी संबंधी क्या अशुद्धियाँ होती है, इनका उल्लेख भाषिक तत्त्व वर्तनी के प्रसंग में किया जा चुका है।

रचना शिक्षण उपागम

भाषिक तत्त्वों के शिक्षण के लिए पाठ-संसर्ग उपागम के अतिरिक्त रचना शिक्षण उपागम भी एक सशक्त माध्यम है। इसके माध्यम से भी उच्चारण शिक्षण, वर्तनी शिक्षण, शब्द-शिक्षण और वाक्य शिक्षण के अच्छे अवसर मिलते है और हमें उनेका लाभ उठाना चाहिए।

रचना के दो रूप है — मौखिक रचना और लिखित रचना। मौखिक रचना में हमें उच्चारण शिक्षण का अधिक अवसर मिलता है और लिखित रचना में वर्तनी शिक्षण का।

उच्चारण शिक्षण : मौखिक रचना के अनेक रूपों — वार्तालाप, कथन या वर्णन, भाषण, परिसंवाद, वाद-विवाद, समाचार दर्शन, कविता सुपाठ आदि में उच्चारण-शिक्षण का अवसर मिलता है। उपर्युक्त रचना स्थितियों में अशुद्ध उच्चारण उनके प्रभाव को नष्ट कर देगा। अतः इनके लिए शिक्षार्थियों को तैयार करते समय उनके शुद्ध उच्चारण पर बल दीजिए। इसके लिए अशुद्ध उच्चरित शब्दों की सूची तैयार करना और उनके शुद्ध उच्चारण का अभ्यास कराना उपयोगी सिद्ध होगा। स्मरण रहे कि इन मौखिक रचना के रूपों में केवल शब्द के शुद्ध उच्चारण का ही महत्त्व नहीं है, अपितु कथन प्रस्तुत करने, भाषण देने, कविता सुपाठ आदि में अनुतान, बलाघात, संगम, गति, यति आदि का भी विशेष महत्त्व है, तभी ये प्रभावपूर्ण सिद्ध हो सकते है। अतः इनके शिक्षण पर भी यथाप्रसंग बल दीजिए।

वर्तनी शिक्षण : लिखित रचना शिक्षण उपागम वर्तनी शिक्षण की दृष्टि से विशेष उपयोगी है। पत्र, प्रपत्र से लेकर व्याख्या, वर्णन, कहानी, सार संक्षेपण, पल्लवन, निबंध आदि लिखित रचना के विभिन्न रूपों में शब्दों की शुद्ध वर्तनी का ध्यान रखना आवश्यक है।

शिक्षार्थियों के लिखित रचना-कार्यों में पाई गई वर्तनी संबंधी अशुद्धियों का संशोधन आवश्यक है। इस संदर्भ में निम्नांकित सुझाव उपयोगी सिद्ध हो सकते है :

वर्तनी की अशुद्धियों को रेखांकित किया जाए और शिक्षार्थियों से स्वयं संशोधन के लिए कहा जाए। उनकी सहायता के लिए पाठ्यपुस्तक, शब्द कोश अथवा कक्षा के लिए तैयार की गई शब्द सूची दी जा सकती है, शिक्षार्थी इन्हें देखकर वर्तनी शुद्ध करें। यह स्वयं संशोधन विधि शिक्षार्थियों में वर्तनी के प्रति सजगता की आदत विकसित करेगी।

यदि शब्दकोश अथवा अन्य स्त्रोत सामग्री न हो तो शिक्षार्थी की रचना-पुस्तिका में प्रत्येक पृष्ठ पर नीचे एक-दो पंक्तियाँ खाली छुड़वा दी जाएँ। शिक्षक अशुद्ध वर्तनी वाले शब्दों को वहाँ लिखें और शिक्षार्थी को शुद्ध रूप लिखने के लिए कहें।

इन प्रयासों के बाद भी यदि शिक्षार्थी से वर्तनी की अशुद्धियाँ होती है तो शिक्षक अशुद्धि निराकरण संबंधी इस प्रकार की अन्य युक्तियाँ ढूँढ़ने का प्रयास करे, जैसे–इनमें से कुछ युक्तियाँ इस प्रकार है :

शिक्षार्थी की रचना पुस्तकों और सत्रीय परीक्षाओं की उत्तर पुस्तिकाओं से वर्तनीगत अशुद्ध शब्दों का चयन और वर्गीकरण किया जाए। वर्गीकरण का एक रूप उच्चारण–शिक्षण के संदर्भ में दिया जा रहा चुका है।

इन अशुद्धियों के निराकरण के लिए अभ्यास तैयार किए जाएँ और उनके आधार शिक्षार्थियों से शुद्ध वर्तनी प्रयोग का अभ्यास कराया जाए।

अभ्यास के बाद मूल्यांकन किया जाए और आवश्यक समझने पर उपचारात्मक शिक्षण की व्यवस्था भी की जाए।

बोध प्रश्न :

8. पाठ–संसर्ग उपागम से क्या अभिप्राय है ? चार पंक्तियों में लिखें।

....

....

....

....

....

....

1.4 सारांश

भाषिक तत्त्व मुख्यतः तीन है — ध्वनि, शब्द और वाक्य। ध्वनियों के सम्यक् संयोजन से शब्द और शब्दों के सम्यक् संयोजन से वाक्य बनते है। वाक्यों के संयोजन से किसी संपूर्ण कथन या रचना का निर्माण होता है। इन तीनों तत्त्वों का विवेचन वर्ण विचार, शब्द विचार और वाक्य विचार के अंतर्गत किया जाता है।

हिन्दी में वर्ण शब्द का प्रयोग ध्वनि के उच्चरित और लिखित दोनों रूपों का द्योतक है। हिन्दी में ध्वनि के लिए एक ही ध्वनि–चिह्न है और उस ध्वनि–चिह्न से वर्ण का उच्चारण किया जाता है। ध्वनियों के उच्चारण और वर्तनी दोनों के परिचय के लिए मानक हिन्दी वर्णमाला का ज्ञान आवश्यक है।

मौखिक भाषा : प्रयोग की प्रभविष्णुता के लिए भाषा के शुद्ध उच्चारण का विशेष महत्त्व है। इसके बिना भाषा प्रभावहीन हो जाती है और अर्थ में भी अस्पष्टता आ जाती है। अतः उच्चारण–शिक्षण पर विशेष बल देने की आवश्यकता है। हिन्दी में उच्चारण दोष के मुख्य कारण हैं — हिन्दी भाषी क्षेत्रों में स्थानीय बोलियों का प्रभाव और मानक हिन्दी उच्चारण की उचित शिक्षा का अभाव। शुद्ध उच्चारण का तात्पर्य केवल वर्णों के उच्चारण से नहीं है अपितु शब्द और वाक्य स्तर पर उचित बलाघात, संगम, अनुतान आदि से भी है।

उच्चारण की दृष्टि से हिन्दी वर्णमाला के स्थानगत एवं प्रयत्नगत वर्गीकरण से परिचित होना आवश्यक है जिससे वर्णों के शुद्ध उच्चारण का अभ्यास किया जा सके। उच्चारण संबंधी अशुद्धियाँ सामान्यतः ह्रस्व–दीर्घ स्वरों और छ–क्ष, ट–ठ, ड–ढ, ऋ–रि–र, व–ब, श–ष–स व्यंजनों से संबंधित होती हैं, इनके आधार पर शब्द सूची तैयार करके उनके शुद्ध उच्चारण का अभ्यास शिक्षार्थियों से कराना चाहिए।

वर्तनी की अशुद्धियों के मुख्य कारण है :

- मानक हिन्दी वर्णमाला तथा मात्राओं का सही ज्ञान न होना
- उच्चारण की अशुद्धता
- व्याकरणिक नियमों विशेषतः संधि, समास, उपसर्ग, प्रत्यय द्वारा शब्द रचना से संबंधित नियमों का ज्ञान न होना।

इन तीनों कारणों को उचित शिक्षण द्वारा दूर करके वर्तनी की अशुद्धियों को दूर किया जा सकता है।

1.5 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. शब्दों में आये अक्षरों का उपयुक्त उच्चारण स्थान से बोलना तथा शब्द के मानक उच्चारण के अनुसार शब्द को बोलना शुद्ध उच्चारण कहलाता है।
2. शुद्ध उच्चारण के अंतर्गत केवल वर्णों का शुद्ध उच्चारण ही नहीं शब्द और वाक्य स्तर पर भी उच्चारण की शुद्धता अपेक्षित है। साथी ही उचित बलाघात, संगम, अनुतान का भी प्रयोग आवश्यक है।
3. स्थान की दृष्टि से कंठ्य, जिह्वामूलीय, तालव्य, मूर्धन्य, दंत्य, ओष्ठ्य, दंतोष्ठ्य, नासिक्य (इनके उदाहरण भी लिखिए) और प्रयत्न की दृष्टि से अल्पप्राण, महाप्राण अघोष, सघोष, स्पर्शी, स्पर्श संघर्षी, संघर्षी उत्क्षिप्त और अन्तस्थ (इनके उदाहरण भी लिखिए)।
4. बलाघात — शब्दों के उच्चारण में अक्षर पर बल।

   अनुतान — बोलने से स्वर में उतार-चढ़ाव।
5. स्थानीय बोलियों का प्रभाव, वर्णों के मानक उच्चारण के शिक्षण का अभाव। (उदाहरणों से स्पष्ट करें)
6. मानक लिपि का सही ज्ञान न होना, अशुद्ध उच्चारण, शब्द रचना और शब्द विकार संबंधी व्याकरणिक नियमों की अनभिज्ञता।
7. अशुद्ध उच्चारण से वर्तनी के भी अशुद्ध रूप में लिखें जाने की संभावना होती है। अतः शुद्ध उच्चारण से ही शुद्ध वर्तनी से शब्द लिखा जा सकता है।
8. पाठ पढ़ाते समय शिक्षार्थियों को भाषिक तत्त्वों के ज्ञान और प्रयोग की क्रियात्मक शिक्षा देना।

1.6 उपयोगी पुस्तकें

सरल हिन्दी व्याकरण और रचना : राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली

मानक हिन्दी व्याकरण और रचना : राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली

हिन्दी व्याकरण : नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी

उच्चारण शिक्षण : सेण्ट्रल पेडागॉजिकल इंस्टीट्यूट, इलाहाबाद

वर्तनी शिक्षण : सेण्ट्रल पेडागॉजिकल इंस्टीट्यूट, इलाहाबाद

माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण: सिंह, निरंजन कुमार, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, तिलक नगर, जयपुर

इकाई 2

हिन्दी के भाषिक तत्त्व–2

: रूपरेखा :

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 शब्द-विचार

2.4 हिन्दी शब्द-भंडार

- 2.4.1 व्युत्पत्ति के आधर पर
- 2.4.2 अर्थ के आधार पर
- 2.4.3 रचना के आधार पर
- 2.4.4 शब्द-शक्ति के आधार पर
- 2.4.5 व्याकरणिक विवेचन के आधार पर

2.5 वाक्य-विचार

- 2.5.1 वाक्य के अंश
- 2.5.2 अर्थ अथवा भावद्योतन की दृष्टि से वाक्य के प्रकार
- 2.5.3 वाक्य में पदक्रम
- 2.5.4 अन्विति
- 2.5.5 संरचना की दृष्टि से वाक्य के प्रकार
- 2.5.6 वाक्य रचना संबंधी अशुद्धियाँ
- 2.5.7 विराम चिह्न

2.6 शब्द और वाक्य की शिक्षण-प्रक्रिया

- 2.6.1 पाठ-संसर्ग उपागम
- 2.6.2 रचना-शिक्षण उपागम

2.7 सारांश

2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.9 उपयोगी पुस्तकें

2.1 प्रस्तावना

पूर्व इकाई 1 की प्रस्तावना में आप पढ़ चुके है कि भाषा की व्यवस्था को समझने के लिए उसके भाषिक तत्त्वों — शब्द और वाक्य के बारे में जानना आवश्यक है। आप यह भी जान चुके है कि हिन्दी व्याकरणों में इन भाषिक तत्त्वों का विचार वर्ण-विचार, शब्द-विचार और वाक्य-विचार के अंतर्गत किया जाता है।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :

- हिन्दी शब्द-भंडार के विभिन्न स्त्रोतों का वर्णन कर सकेंगे।
- लिंग, वचन, विभक्ति, क्रिया, काल आदि की दृष्टि से विभिन्न व्याकरणिक स्थितियों में शब्द में परिवर्तन कर सकेंगे और वाक्य में उनका सही प्रयोग कर सकेंगे।
- वाक्य में उद्देश्य और विधेय बता सकेंगे।
- वाक्य में पदों के क्रम तथा अन्विति प्रक्रिया को जान सकेंगे और तदनुसार शुद्ध वाक्य का प्रयोग कर सकेंगे।
- वाक्य के प्रकारों — सरल, संयुक्त और मिश्र की संरचनात्मक विशेषताओं का उल्लेख कर सकेंगे।
- शब्द तथा वाक्य की शिक्षण-प्रक्रिया से अवगत होकर तत्संबंधी उपागमों का कला-शिक्षण में उचित प्रयोग कर सकेंगे।

2.3 शब्द-विचार

ध्वनियों के ऐसे समूह को शब्द कहते है जिससे कोई अर्थ व्यक्त होता हो। अर्थ ही शब्द का प्रधान लक्षण है। जिस ध्वनि समूह से कोई अर्थ नहीं निकलता वह ध्वनि-समूह शब्द नहीं है। उदाहरणत: क, म, ल ध्वनियाँ है जिनका अपने आप में कोई अर्थ नहीं है। किन्तु इन तीनों को मिलाकर 'कमल' ध्वनि समूह बनता है जिसका एक अर्थ होता है। अत: 'कमल' ध्वनि-समूह एक शब्द हुआ। पर 'मकल' ध्वनि समूह शब्द नहीं है, क्योंकि इसका कोई अर्थ नहीं है। अत: सार्थक ध्वनि समूह ही शब्द है।

यद्यपि भावाभिव्यक्ति की दृष्टि से वाक्य को भाषा की सार्थक इकाई मानते है, किन्तु अनेक दृष्टियों से भाषा की सरलतम, सार्थक और लघुतम इकाई शब्द है। शब्द के अभाव में वाक्य की रचना ही संभव नहीं। भाषा रूपी वृक्ष का मूल शब्द ही है। शब्द किसी न किसी वस्तु, व्यक्ति, भाव, विचार आदि का प्रतीक है और इस कारण अकेला शब्द भी कभी-कभी हमारा आशय प्रकट कर देता है, जैसे — 'आओ,' 'रुको'।

2.4 हिन्दी शब्द-भंडार

जिस भाषा का शब्द-भंडार जितना विशाल होता है, वह भाषा उतनी ही समृद्ध और सम्पन्न मानी जाती है। हिन्दी जीवंत भाषा है, वह अपने विकास-क्रम में अनेक स्त्रोतों से शब्द ग्रहण करती हुई समृद्ध बनती गई है और उसका शब्द-भंडार उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा है। हिन्दी के शब्द भंडार का विवेचन कई दृष्टियों से किया जाता है :

- व्युत्पत्ति के आधार पर
- अर्थ के आधार पर
- रचना के आधार पर
- शब्द-शक्ति के आधार पर

2.4.1 व्युत्पत्ति के आधार पर

व्युत्पत्ति की दृष्टि से हिन्दी शब्-भंडार में चार प्रकार के शब्द आते है :

— तत्सम — तद्भव

— देशज — विदेशी

तत्सम शब्द :

जो शब्द संस्कृत से मूल रूप में हिन्दी में आ गए है, उन्हें तत्सम कहते है। वैसे तो तत्सम का अर्थ है — उसके समान। यहाँ जो शब्द संस्कृत से वैसे के वैसे ही आ गए है उन्हें तत्सम कहा जाता है, जैसे — सूर्य, सृष्टि, वृक्ष, आदि। दर्शन, धर्म, संस्कृति, साहित्य आदि विषयों में तत्सम शब्दों की प्रचुरता है। आज भी वैज्ञानिक, प्रशासनिक, प्राविधिक आदि विषयों से संबंधित शब्दावली में तत्सम शब्द ही आ रहे हैं।

तद्भव शब्द :

जो शब्द संस्कृत से परिवर्तित होकर हिन्दी में आए है, वे तद्भव कहे जाते है। तद्भव का अर्थ है — उससे अर्थात्, संस्कृत से उत्पन्न जैसे — सूरज, आग, पत्थर, आदि। हिन्दी में तद्भव शब्दों की संख्या सर्वाधिक है।

देशज शब्द :

ये मुख्यतः तीन प्रकार के हैं :

- संस्कृत से भिन्न अन्य भारतीय भाषाओं से आए शब्द, जैसे — भिंड़ी, तोरई, साँभर आदि।
- ध्वन्यात्मक शब्द, जैसे — खटपट, चहचहाना, धड़कन आदि।
- ऐसे शब्द जिनका स्रोत नहीं मालूम है, जो न तत्सम है न तद्भव और न विदेशी, जैसे — लोटा, खिचड़ी, टाँग आदि।

विदेशी शब्द :

भारत से बाहर की भाषाओं अरबी, फारसी, तुर्की, अंग्रेजी आदि से जो शब्द हिन्दी में आए है, उन्हें विदेशी शब्द कहते हैं। वर्षो के प्रयोग के कारण अब ये शब्द हिन्दी में घुल-मिल गए हैं। अदालत, किताब, दफ्तर, कॉलेज, स्टेशन जैसे शब्द विदेशी भाषाओं से आए हैं।

2.4.2 अर्थ के आधार पर

अर्थ की दृष्टि से शब्दों के चार रूप हैं :

— पर्यायवाची

— एकार्थी

— अनेकार्थी

— विलोमार्थी या विपरीतार्थक

पर्यायवाची

वे शब्द जिनके अर्थ में समानता हो, पर्यायवाची शब्द कहलाते हैं। इन्हें समानार्थी शब्द भी कहा जाता है। किन्तु आवश्यक नहीं कि अर्थ में समानता होते हुए भी ये शब्द प्रयोग में एक-दूसरे का स्थान ले सकें। कहीं एक शब्द का प्रयोग उपर्युक्त होता है तो कहीं दूसरे का अर्थात् समानार्थी शब्दों में भी परस्पर सूक्ष्म अन्तर होता है। जल और पानी समानार्थक है पर देवताओं के तर्पण में जल शब्द का प्रयोग होता है, पानी का नहीं। 'बहुत' और 'बड़ा' समानार्थक शब्द है पर 'वह बड़ा आदमी है' वाक्य में 'बड़ा' की जगह 'बहुत' का प्रयोग नहीं कर सकते, क्योंकि इससे वाक्य का अर्थ ही बदल जाएगा। भाव यह है कि समानार्थक शब्द कहीं पूर्ण समानार्थक है और कहीं आंशिक। उनके प्रयोग में यह भिन्नता झलक जाती है। शिक्षार्थियों का ध्यान इस और दिलाना बहुत जरूरी है।

पर्यायवाची शब्दों की उपर्युक्त जानकारी शिक्षार्थी की मौखिक और लिखित दोनों प्रकार की अभिव्यक्तियों को प्रभावी बनाती है। अतः उन्हें पर्यायवाची शब्दों का समुचित ज्ञान प्राप्त कराने के लिए उनकी सूची बनाने कि लिए प्रेरित करें। कुछ ऐसे भी शब्द है जो सामान्य रूप से पर्यायवाची लगते हैं, पर उनमें अन्तर होता है, जैसे — अनुभव-अनुभूति, अनुरूप-अनुकूल, अस्त्र, शस्त्र, अवस्था-आयु-वय, इच्छा-कामना, लालसा-अभिलाषा, अहंकार-अभिमान, प्रेम-स्नेह, आशंका-संदेह-संशय आदि। वाक्य प्रयोग द्वारा यह अंतर छात्रों को स्पष्ट कर देना चाहिए।

एकार्थी शब्द

एकार्थी शब्द ऐसे शब्द हैं जिनका अर्थ सभी परिस्थितियों में एक-सा रहता है, जैसे — ऋषि, श्रद्धा, आत्मा, कलंक, मोक्ष, पुरुषार्थ आदि। पारिभाषिक शब्द भी एकार्थी शब्दों की कोटि में आते हैं।

अनेकार्थी शब्द

ये शब्द जो प्रयोग के अनुसार विभिन्न परिस्थितियों में भिन्न-भिन्न अर्थ देते हैं अनेकार्थी सब्द कहलाते है, जैसे — अंबर (वस्त्र, आकाश, कपास), अलि (सखी, भौंरा, कोयल), कनक (सोना, धतूरा), कर (हाथ, किरण, हाथी की सूँड, टैक्स), कल (बीता हुआ दिन, आगामी दिन, मशीन, आराम, चैन, सुन्दर), गति (चाल, दशा, मोक्ष), गुरु (शिक्षक, बड़ा, भारी), तीर (तट, बाण), पत्र (चिट्ठी, पत्ता) आदि।

विलोमार्थी या विपरीतार्थक शब्द

किसी शब्द से विपरीत अर्थ देने वाला शब्द उसका विलोम या विपरीतार्थक शब्द कहलाता है, जैसे — सुख-दुख, हर्ष-विषाद, मान-अपमान, उन्नति-अवनति, अस्त-उदय आदि। ऐसे शब्दों की विस्तत सूची शिक्षार्थियों से तैयार करानी चाहिए।

2.4.3 रचना के आधार पर

रचना के आधार पर हिन्दी शब्दों के तीन वर्ग किए जाते हैं :

— रूढ़

— यौगिक

— योग रूढ़

रूढ़ शब्द

रूढ़ शब्द वे हैं जिनके सार्थक खंड न हो सकें अथवा जो अन्य शब्दों के मेल से न बने हों — हाथ, पैर, सूर्य, दिन, पशु आदि। ये अपने आप में पूर्ण होते हैं।

यौगिक शब्द

यौगिक शब्द वे हैं, जो मूल या रूढ़ शब्दों में अन्य शब्दों या शब्दांशों, उपसर्ग, प्रत्यय आदि के मेल से बने होते हैं। ये शब्द मुख्यत: तीन प्रकार से बनते हैं — उपसर्ग के योग से, प्रत्यय के योग से, और समास द्वारा।

उपसर्ग के योग से

मूल या रूढ़ शब्द में उपसर्ग को योग से बहुत से शब्द बनते हैं, जैसे — अति + आचार = अत्याचार, अनु + ताप = अनुताप आदि। कुछ संस्कृत उपसर्ग है। जैसे — अति, अधि, अनु, उप, दुर, प्रति, वि, सम्, सु आदि। कुछ हिन्दी उपसर्ग हैं जैसे — अ, अन, अद्य, नि, बिन, भर आदि। कुछ उर्दू उपसर्ग हैं जैसे — अल, ऐन, कम, खुश आदि।

प्रत्यय के योग से

शब्द के पश्चात् प्रत्यय लगाकर अनेक यौगिक शब्द बनते हैं, जैसे — बड़ा + आई = बड़ाई, कुछ अन्य प्रत्यय इस प्रकार हैं आऊ, आप, इक, कर, के, का, हारा, आन, पन, हरा, आदि।

समास द्वारा बने यौगिक शब्द

समास द्वारा भी यौगिक शब्द बनते हैं जैसे — राजकुमार, सेनापति, पीताम्बर, पनघट, घुड़सार, आदि।

आप जानते हैं कि समास के चार भेद हैं — द्वंद्व, तत्परुष, अव्ययीभाव, बहुब्रीहि। तत्पुरुष के ही अंतर्गत दो तरह के और समासों — द्विगु और कर्मधारय को भी मान लिया गया है। इन विभिन्न समासों द्वारा बने शब्दों के उदाहरण देकर यौगिक शब्दों की रचना-प्रक्रिया छात्रों को समझानी चाहिए।

यौगिक शब्दों के अंतर्गत युग्म और द्विरुक्त शब्द भी आते हैं। युग्म शब्द का अर्थ है जोड़ा, जैसे — अन्न-जल, बाल-बच्चे, जीव-जंतु, इघर-उधर आदि।

युग्म शब्द कई प्रकार से बनते हैं, जैसे :

- सार्थक और निरर्थक शब्दों के मेल से — कूड़ा-करकट, गलत-सलत, झूठ-मूठ, पूछ-ताछ, आदि।
- निरर्थक शब्दों के मेल से — ऊबड़-खाबड़, अनाप-शनाप, हक्का-बक्का आदि।
- मिलते-जुलते अर्थ वाले शब्दों के मेल से — आचार-विचार, देख-भाल, सीधा-सादा, फटा-पुराना, जैसे-तैसे आदि।
- **विपरीत अर्थ वाले शब्दों के मेल से —** देश-विदेश, जीवन-मरण, पाप-पुण्य, गुण-दोष, रात-दिन, आगे-पीछे आदि।

  विरुक्त शब्द — जहाँ एक ही शब्द की आवृत्ति होती है तो वे द्विरुक्त या पुनरुक्त कहलाते है। जैसे — घर-घर, चलते-चलते, छोटे-छोटे, हरे-हरे, कोई-कोई आदि।

योगरूढ़ शब्द

जो शब्द यौगिक होते हुए भी किसी एक ही अर्थ में रूढ़ हो जाते हैं, उन्हें योगरूढ़ कहते है। 'जलज' का शाब्दिक अर्थ है जल से उत्पन्न पदार्थ, किन्तु उसका रूढ़ अर्थ 'कमल' है। इसी प्रकार 'लंबोदर' और 'दशानन' अपना मूल अर्थ खोकर 'गणेश' और 'रावण' के अर्थ में रूढ़ हो गए हैं।

2.4.4 शब्द-शक्ति के आधार पर

प्रत्येक शब्द से किसी अर्थ का बोध होता है। जिस के द्वारा शब्द के अर्थ का बोध होता है उसे शब्द-शक्ति कहते हैं। शब्द को हम अर्थ का बोधक या व्यंजन कहते हैं। शब्द-शक्ति तीन प्रकार की होती हैं**:**

— अभिघा

— लक्षणा

— व्यंजना

अभिधा :

शब्द की जिस शक्ति से उसके सामान्य प्रचलित अर्थ का बोध होता है, उसे अभिधा कहते हैं। अधिभा से प्रकट होने वाले अर्थ को वाच्यार्थ, अभिधेयार्थ या मुख्यार्थ कहते हैं। कोश में शब्दों के अभिधेयार्थ ही दिए जाते हैं, जैसे — पानी बरस रहा है, वाक्य में 'पानी' वाच्यार्थ मे प्रयुक्त है।

लक्षणा

शब्द की जिस शक्त से शब्द के सामान्य अर्थ की जगह किसी दूसरे अर्थ की कल्पना करनी पड़ती है, उसे लक्षणा कहते हैं और उससे प्राप्त अर्थ को लक्ष्यार्थ कहते हैं, जैसे — उसका पानी उतर गया। इसमें 'पानी' का सामान्य अर्थ न होकर भिन्न अर्थ 'इज्जत/प्रतिष्ठा' लिया जाएगा। 'वह उल्लू है', 'देश की नाव मझधार में है', 'उसके मुख्य पर कालिख पुत गई' आदि वाक्यों में क्रमश**:** 'उल्लू से मूर्खता का, मझधार से गहरे संकट का और कालिख' से बेइज्जती का अर्थ प्रकट हो रहा है। ये अर्थ वाच्यार्थ न होकर लक्ष्यार्थ हैं।

व्यंजना :

शब्द की जिस शक्ति से अभिधेयार्थ के साथ-साथ किसी भिन्न अर्थ का भी बोध होता है, उसे व्यंजना कहते है। व्यंजना से निष्पन्न अर्थ को व्यंग्यार्थ कहते है। 'सवेरा हो गया' या 'सूरज निकल आया' जैसे वाक्य में शब्दों के अभिधेयार्थ के साथ-साथ किसी सोए हुए व्यक्ति को जगाने या उठाने का अर्थ भी निकल रहा है, जिसकी प्रतीति व्यंजना शक्ति से होती है।

2.4.5 व्याकरणिक विवेचन के आधार पर

व्याकरणिक विवेचन की दृष्टि से हिन्दी शब्दों को दो भागो में बाँटा जाता है **:**

— विकारी

— अविकारी

विकारी :

वाक्य में जिन शब्दों के रूप लिंग, वचन और कारक के भेदों के अनुसार बदल जाते हैं उन्हें विकारी शब्द कहते हैं। वाक्य में प्रयुक्त शब्दों को पद कहते हैं। इन विकारी पदों के चार भेद हैं — संज्ञा, सर्वनाम,

विशेषण और क्रिया। व्याकरण में इन विकारी शब्दों का अध्ययन किया जाता है।

अविकारी

अविकारी शब्द वे है जिनका रूप नहीं बदलता। इन्हें अव्यय भी कहते हैं। इनके कुछ उदाहरण हैं **:**

क्रिया विशेषण — अब-जब, यहाँ-वहाँ, भीतर-बाहर, आदि।

संबंध बोधक — के बाहर, के नीचे, की ओर, के सामने, से पहले आदि।

समुच्चय बोधक — और, तथा, किन्तु, परन्तु, अथवा इसलिए आदि।

विस्मयादि बोधक — अरे, ओ, ओ हो, हाय, हे राम, बाप रे आदि।

बोध प्रश्न :

चार पंक्तियों में उत्तर लिखें।

1. हिन्दी शब्दों का विवेचन किन-किन आधारों पर किया जाता है ?

....
....
....
....
....
....

2. हिन्दी शब्दों के विभिन्न स्त्रोतों का उल्लेख कीजिए।

....
....
....
....
....
....

3. यौगिक शब्दों के निर्माण की प्रक्रिया बताइए।

....
....
....
....
....
....

4. अर्थ की दृष्टि से हिन्दी शब्दों को किन वर्गों में बाँटा जाता है ?

....
....
....
....
....
....

2.5 वाक्य-विचार

कभी भाव प्रकट करने के लिए एक शब्द, शब्द-समूह या वाक्यांश भी प्रयुक्त होते हैं, किन्तु वे सांकेतिक होते हैं। उस आंशिक कथन में पूरा वाक्य अंतर्भूत माना जाता है। प्यासा या भूखा बालक जब 'पानी' या 'दूध' कहता है तो समझ लिया जाता है कि उसे पानी चाहिए, दूध चाहिए। संदर्भ के कारण कभी-कभी एक या दो शब्द भी वाक्य का काम करते हैं। इस प्रकार के अधूरे या आंशिक वाक्य प्रायः मौखिक ही होते है। लिखित रूप में पूर्ण एवं शुद्ध वाक्य ही वांछित माना जाता है। अतः शिक्षार्थियों से अपने विचार पूर्ण वाक्यों में व्यक्त करने का आग्रह करें।

पूर्ण वाक्य से तात्पर्य : वाक्य की रचना कई पदों के सार्थक योग से होती है, दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि वाक्य पदों का वह व्यवस्थित समूह है, जिसमें पूर्ण अर्थ देने की शक्ति हो। लड़का बाजार जा रहा है। यह वाक्य अपने में पूर्ण है और स्वतंत्र व्याकरणिक संरचना है, क्योंकि इससे पूरा अर्थ या आशय प्रकट हो रहा है। लेकिन 'लड़का जा रहा है' वाक्य में यह जानने की आकांशा (इच्छा) होती है कि वह कहाँ जा रहा है, अर्थात् इस वाक्य से पूरा आशय नहीं प्रकट हुआ। अतः पूर्ण वाक्य का लक्षण यह है कि उससे पूरी बात प्रकट हो जाए और कोई आकांश न रहे। अतः 'आकांशा-तृप्ति' वाक्य की मुख्य विशेषता है।

वाक्य में आए विभिन्न पद अभिव्यक्ति की दृष्टि से संगत होने चाहिए अर्थात् पदार्थों में परस्पर योग्य संबंध-स्थापन में असंगति न हो। 'वह आग से खेत सींच रहा है' वाक्य पदक्रम की दृष्टि से ठीक है पर आग और सींचना परस्पर असंगत बातें हैं, क्योंकि व्यवहार में यह संभव ही नहीं। अतः यह वाक्य योग्यताहीन (असंगत) है। योग्यता का अर्थ है वाक्य में शब्द के प्रसंगानुकूल भाव बोध कराने की क्षमता। योग्यता की दृष्टि से शुद्ध वाक्य होगा-वह आग से लकड़ी जला रहा है, वह पानी से खेत सींच रहा है। अतः वाक्य के अंशों या संरचकों में योग्यता (संगति) का होना आवश्यक है। इसके बिना वाक्य अर्थहीन होगा। अतः वाक्य की दूसरी प्रमुख विशेषता है योग्यता।

वाक्य के अंशों को बहुत-बहुत देर करके बोला जाए तो उन अंशों से वाक्य नहीं बन पाता। अर्थ तभी निकलता है जब वाक्य के अंश समुचित समय-सीमा में बोले जाए अर्थात् उनमें सामीप्य बना रहे। इस सामीप्य को आसत्ति कहते हैं। 'रमेश .... (एक लंबा व्यवधान, पानी ...(एक लंबा व्यवधान) लाओ' कथन में परस्पर समकालिक संबंध न रहने से अभिव्यक्ति में स्पष्टता नहीं है। 'रमेश ! पानी लाओ' वाक्. पूर्ण और स्पष्ट है। अतः एक शब्द के बाद दूसरे शब्द को समकालिक रूप में इस प्रकार बोला जाए कि पूर्वापर संबंध न टूटे और आशय स्पष्ट रहे। इसे 'आसत्ति' कहते हैं। आसत्ति का अर्थ है 'समीपता' । आसत्ति वाक्य की तीसरी प्रमुख विशेषता है। आसत्ति की दृष्टि से वाक्य में पदों का सही क्रम होना भी आवश्यक है। 'नहीं पर सिर के सींग गधे होते' पदक्रम से बना वाक्य अर्थहीन है। 'गधे के सिर पर सींग नहीं होते' वाक्य ही शुद्ध हे, क्योंकि इसमें पदों का क्रम सही है और अर्थ स्पष्ट है।

इस प्रकार आप देखते है कि वाक्य की पूर्णता के लिए आकांशा-तृप्ति, योग्यता और आसत्ति की अपेक्षा होती है।

इनके आधार पर वाक्य की परिभाषा है — वाक्य सही पदक्रम से योजित ऐसी संरचना है जिसमें परस्पर योग्यता, आकांक्षा-तृप्ति और आसत्ति हो।

2.5.1 वाक्य के अंश

वाक्य छोटा हो या बड़ा उसके दो ही अंग होते हैं — उद्देश्य और विधेय। जिसके बारे में बात कही जाए, उसे उद्देश्य कहते हैं। उद्देश्य के बारे में जो कुछ कहा जाए उसे 'विधेय' कहते हैं।

'राम ने रावण को मारा' वाक्य में 'राम' उद्देश्य और 'रावण को मारा' विधेय है। उद्देश्य के रूप में संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया-विशेषण, क्रियार्थक-संज्ञा और वाक्यांश प्रयुक्त हो सकते हैं।

संज्ञा	— घोड़ा एक बुद्धिमान पशु है।
सर्वनाम	— मैं उनका ऋणी हूँ।
विशेषण	— विद्वान सदा पूजा जाता है।
क्रिया-विशेषण	— वह तेज दौड़ता है।

क्रियार्थक संज्ञा — पढ़ना ज्ञानवर्द्धन का सबसे बड़ा साधन है।

वाक्यांश — भाग्य भरोसे बैठे रहना आलसियों का काम है।

भाव वाच्य में उद्देश्य प्रायः क्रिया में ही सम्मिलित रहता है। 'मुझसे चला नहीं जाता', 'लड़के सेबोलते नहीं बनता' वाक्यों में 'चलना' और 'बोलना' उद्देश्य क्रिया ही के अर्थ में शामिल हैं।

उद्देश्य का विस्तार : उद्देश्य की विशेषता बताने वाले शब्द या शब्द-समूह को उद्देश्य का विस्तार कहते हैं 'सत्य और अहिंसा के प्रतीक विश्ववंद्य बापू भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के एकछत्र नेता थे।' बापू के पहले का शब्द समूह उद्देश्य (बापू) का विस्तार है।

विधेय का विस्तार : विधेय की विशेषता बताने वाले शब्द विधेय का विस्तार कहलाते हैं। 'माली ने उपवन से बड़े-बड़े लाल-लाल गुलाब चुन लिए।' बड़े-बड़े लाल-लाल विधेय (गुलाब) का विस्तार हैं। विधेय में जो अंतिम क्रिया होती है उसे समापिका क्रिया कहते हैं।

2.5.2 अर्थ अथवा भावन्द्योतन की दृष्टि से वाक्य के प्रकार

अर्थ अथवा भावद्योतन की दृष्टि से वाक्य आठ प्रकार के होते हैं :

विधानार्थक : वह वाक्य जिससे किसी बात का होना प्रकट हो, जैसे - मनुष्य विवेकशील प्राणी है। भारत की जनसंख्या नब्बे करोड़ है।

निषेधवाचक : ऐसा वाक्य जिससे किसी विषय का अभाव या अस्वीकृति सूचित हो, जैसे — वह भोजन नहीं करेगा। इस निर्जन वन में जानवर भी नहीं रहते।

आज्ञार्थक : ऐसा वाक्य जिससे आज्ञा, प्रार्थना या उपदेश का अर्थ सूचित हो, जैसे — सदा सत्य बोलो। आज तुम खेलने मत जाना।

प्रश्नार्थक : वह वाक्य जिससे प्रश्न का बोध होता हो, जैसे — तुमने यह पुस्तक क्यों नहीं पढ़ी ? अब यह काम कैसे होगा ?

विस्मयादिबोधक : ऐसे वाक्य जिनसे आश्चर्य, विस्म, हर्ष, शोक, घृणा आदि का बोध होता हो, जैसे — वाह ! तुमने कमाल कर दिया। कैसा सुन्दर दृश्य है !

संदेहसूचक : जिस वाक्य से संदेह या संभावना प्रकट हो, जैसे — शायद आज पानी बरसे। यह काम उस लड़के ने किया होगा।

शर्तबोधक : वह वाक्य जो किसी संकेत या शर्त का बोध कराए, जैसे — आप की आज्ञा हो तो मैं वहाँ जाऊँ। तुम परिश्रम करते तो परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाते।

2.5.3 वाक्य में पदक्रम

वाक्य में पदों के उचित स्थान का विचार पदक्रम कहलाता है। वाक्य रचना करते समय यह विचार करना पड़ता हैं कि पद अर्थात् कर्ता का विस्तार, कर्म, कर्म का विस्तार, पूरक (यदि वाक्य में है) पूरक का विस्तार, क्रिया, क्रिया का विस्तार आदि किस क्रम में रखे जाएँ।

हिन्दी वाक्यों में पदक्रम का नियम निश्चित-सा है। पद का क्रम (स्थान) बदलने से वाक्य अशुद्ध हो जाता है और अर्थ भी स्पष्ट नहीं होता। पदक्रम संबंधी नियम निम्नलिखित है :

- वाक्य में पहले कर्ता, फिर कर्म या पूरक और अंत में क्रिया रखते हैं, जैसे — बालक (कर्ता) पुस्तक (कर्म) पढ़ता है (क्रिया)। राम (कर्ता) विद्यार्थी (पूरक) है (क्रिया)।
- द्विकर्मक क्रियाओं में गौण कर्म पहले और मुख्य कर्म पीछे रखते हैं, जैसे — मैंने (कर्ता) राम को (गौण कर्म) पुस्तक (मुख्य कर्म) दी (क्रिया)।
- विशेषण संज्ञा के पहले और क्रिया विशेषण प्रश्नवाचक के अतिरिक्त क्रिया के पहले आते हैं : जैसे — बड़े प्रसिद्ध (विशेषण) अभिनेता (संज्ञा-कर्ता) आज यहाँ (क्रिया-विशेषण) आए हुए हैं (क्रिया)।
- निषेधवाचक अव्यव 'न', 'नहीं', 'मत' प्रायः क्रिया के पूर्व आते है, जैसे — मैं नहीं पढ़ूँगा, तुम मत आना, जब तक मैं न आऊं तब तक तुम वहीं रहना।

विशेष अर्थ में 'नहीं', 'मत' क्रिया के पूर्व आते हैं, जैसे – मैंने आपको देखा नहीं । उसे बुलाना मत।

- तो, भी, ही, भर, तक, मात्र (निपात) उन शब्दों के बाद आते हैं, जिन पर बल देना होता है, जैसे – वह भी स्कूल जाएगा। तुमने ही उसे मारा था। इनका स्थान बदल जाने से वाक्य में अर्थांतर हो जाता है, जैसे – वह स्कूल भी जाएगा, तुमने उसे ही मारा था। यहाँ 'भी' और 'ही' का स्थान बदल देने से अर्थ भिन्न हो गया।

- शर्तबोधक, समुच्चयबोधक (यदि-तो, यद्यपि-तथापि) प्रायः जोड़ने वाले वाक्यों के प्रारम्भ में आते हैं, जैसे – वह आएगा तो मैं जाउंगा । यद्यपि उसने बहुत परिश्रम किया तथापि सफल नहीं हो सका।

- **बल के लिए विशेष पदक्रम :** बल के लिए हिन्दी वाक्य में पदक्रम बदल भी जाता है, जैसे – लड़के को मैंने नहीं देखा (कर्म का स्थानांतरण) । मैंने बुलाया राम को और आए तुम (क्रिया का स्थानांतरण)।

2.5.4 अन्विति

वाक्य में लिंग, वचन, पुरुष, कारक, काल आदि की दृष्टि से पदों की पारस्परिक संगति को अन्विति कहते हैं। काला घोड़ा दौड़ता है। काली घोड़ी दौड़ती है। इन दोनों वाक्यों में क्रमशः 'घोडा' और 'घोडी' पद कर्ता हैं । उनके लिंग और वचन के अनुसार ही क्रिया और विशेषण में लिंग और वचन की अन्विति है । अन्विति में मुख्यतः कर्ता और कर्म के साथ क्रिया की अन्विति, संज्ञा और सर्वनाम की अन्विति, विशेष्य और विशेषण की अन्विति पर ध्यान देना होता है।

कर्ता और क्रिया की अन्विति

- लिंग के अनुसार – लड़का पढ़ता है। लड़की पढ़ती है। वचन के अनुसार – लड़का पढ़ता है। लड़के पढ़ते हैं। पुरुष के अनुसार – वह पढ़ता है। तुम पढ़ते हो। मैं पढ़ता हूँ। इन उदाहरणों से स्पष्ट है कि कर्ता के साथ यदि कोई परसर्ग (विभक्ति चिह्न) न हो तो क्रिया कर्ता के अनुसार होती है। यदि कर्ता के साथ 'ने' विभक्ति नहीं है तो क्रिया चाहे किसी भी काल में हो, कर्ता के अनुसार अन्वित होगी, जैसे :

  राम रोटी खाता है। शीला रोटी खाती है। (वर्तमान काल), मोहन आम खाता था। पुष्पा आम खाती थी। (भूतकाल) रमेश पुस्तक पढ़ेगा। चंपा पुस्तक पढ़ेगी। (भविष्य काल)

- अनेक कर्ता जब एक ही लिंग के हों तो क्रिया उसी लिंग में बहुवचन में होगी, जैसे – राम, राजीव और अहमद घर जाएँगे (सब पुल्लिंग)। सीता, गीता और पुष्पा स्कूल जाएँगी। (सब स्त्रीलिंग)।

- अनेक कर्ता जब भिन्न-भिन्न लिंग के हों, तो क्रिया बहुवचन, पुल्लिग रूप में होगी, जैसे – एक बकरी, दो भेंड़े कई गाएँ चर रही थी। दो गाएँ एक भालू एक चीता भाग रहे थे।

कर्म और क्रिया की अन्विति

- यदि वाक्य में कर्ता के साथ 'ने' हो तो क्रिया कर्म के लिंग, वचन और पुरुष के अनुसार होगी, जैसे – राम ने पुस्तक पढ़ी, गीता ने पत्र लिखा, मोहन ने पुस्तकें पढ़ी।

- कर्मवाच्य में किया कर्म के अनुसार होती है, जैसे – मुझसे पुस्तक नहीं पढ़ी जाती, मुझसे पुस्तकें नहीं पढ़ी जातीं।

- भाववाच्य में क्रिया पुल्लिग, एक वचन में होती है, जैसे – उस लड़की से चला नहीं जाता, उन लड़कियों से चला नहीं जाता, लड़कों से चला नहीं जाता।

संज्ञा और सर्वनाम की अन्विति

- सर्वनाम का लिंग, वचन और पुरुष उस संज्ञा के अनुसार होते हैं, जिसके लिए उनका प्रयोग हुआ हैं, जैसे – प्रदीप ने कहा कि वह कल अवश्य आएगा। मजदूरों ने घोषणा कर दी है कि वे कल काम पर नहीं आएँगे।

- आदर सूचक भाव व्यक्त करने के लिए सर्वनाम और क्रिया का बहुवचन में प्रयोग होता है, जैसे – पिताजी लखनऊ गए हैं, वे दो दिन बाद आएँगे।

विशेष्य और विशेषण की अन्विति

- विशेषण विशेष्य के पहले हो या पीछे, सदा विशेष्य के लिंग, वचन के अनुसार होता है, जैसे — वह काला लड़का है, वह लड़का काला है ।
- सुंदर, सफेद, लाल, चतुर, चालाक आदि अकारांत विशेषण अपने विशेष्य के अनुसार नहीं बदलतें हैं, जैसे — सुंदर लड़का, सुंदर लड़की, सफेद घोड़ा, सफेद घोड़े, चतुर बालक, चतुर बालिकाएँ आदि ।

2.5.5 संरचना की दृष्टि से वाक्य के प्रकार

संरचना की दृष्टि से वाक्य तीन प्रकार के होते हैं **:**

- सरल वाक्य
- मिश्र वाक्य
- संयुक्त वाक्य

सरल वाक्य

जिस वाक्य में एक या अनेक उद्देश्य हों किन्तु विधेय एक ही हो, वह वाक्य सरल या साधारण वाक्य कहलाता है, जैसे **:**

- मोहन पुस्तक पढ़ रहा है। इसमें उद्देश्य एक है (मोहन) और विधेय भी एक ही है — 'पुस्तक पढ रहा है।'
- मोहन, श्याम और हामिद भोजन कर रहे हैं। इसमें तीन उद्देश्य हैं — मोहन, श्याम और हामिद, किन्तु इन तीनों के लिए विधेय एक ही है — 'भोजन कर रहे हैं' अतः एक ही विधेय होने के कारण उपर्युक्त दोनों वाक्य सरल वाक्य हैं।

सरल वाक्य छोटे भी होते हैं और बड़े भी, शर्त यही है कि विधेय एक ही हो ।

मिश्र वाक्य

जिस वाक्य में एक प्रधान उपवाक्य और एक या अनेक आश्रित उपवाक्य हों, वह वाक्य मिश्र वाक्य कहलाता है ।

मिश्र वाक्य में मुख्य उद्देश्य और मुख्य विधेय के अतिरिक्त एक या अनेक समापिका क्रियाएँ होती है। मुख्य उद्देश्य और मुख्य विधेय युक्त उपवाक्य 'प्रधान उपवाक्य' होता है। शेष उपवाक्य आश्रित उपवाक्य होते है। ये आश्रित उपवाक्य प्रधान उपवाक्य पर आश्रित होते हैं, जैसे **:**

'उसने कहा कि मैं कल तुम्हारे घर आऊंगा' इस वाक्य में 'उसने कहा' प्रधान उपवाक्य है और 'मैं कल तुम्हारे घर आऊंगा' आश्रित उपवाक्य है। 'कि' दोनों उपवाक्यों को जोड़ने वाला संयोजक है। आश्रित उपवाक्य तीन प्रकार के हो सकते है, संज्ञा उपवाक्य, विशेषण उपवाक्य और क्रिया-विशेषण उपवाक्य।

संज्ञा उपवाक्य

सलीम ने कहा कि मैं जोसेफ से मिलूँगा। 'सलीम ने कहा' प्रधान उपवाक्य है, 'मैं जोसेफ से मिलूँगा' आश्रित उपवाक्य है क्योंकि यह सलीम के द्वारा कही हुई बात के लिए प्रयुक्त है।

विशेषण उपवाक्य

तुम ऐसी बात कर रहे हो, जो सबको बुरी लगेगी। 'जो सबको बुरी लगेगी' आश्रित विशेषण उपवाक्य है, क्योंकि यह 'बात' संज्ञा की विशेषता बता रहा है। जो, जिसे, जिनसे, जब, जहाँ आदि से संयुक्त होने वाले उपवाक्य प्रायः विशेषण उपवाक्य होते हैं।

क्रिया-विशेषण उपवाक्य

जब वह आएगा तब मैं चला जाऊंगा। क्रिया-विशेषण प्रधान उपवाक्य की क्रिया की विशेषता बताता है। क्रिया-विशेषण उपवाक्य की पहचान जब, ज्योंही, जब-तब, जब-कभी, जहाँ-तहाँ, जैसे-तैसे, ज्यों-त्यों आदि संयोजक शब्दों के द्वारा की जाती है।

संयुक्त वाक्य

जिस वाक्य में एक प्रधान उपवाक्य और एक या एक से अधिक प्रधान उपवाक्य से समकक्ष (समानाधिकरण) उपवाक्य हो, उसे संयुक्त उपवाक्य कहते हैं। 'रमेश आया और मोहन घर चला गया'। दोनों समानाधिकरण वाक्य हैं, अर्थात् एक-दूसरे पर आश्रित नहीं है। संयुक्त वाक्यों में प्रधान उपवाक्य और समानाधिकरण उपवाक्यों को जोड़ने के लिए 'और', 'किन्तु', 'परन्तु', 'तथा', 'या', 'अथवा' आदि समानाधिकरण संबंध बोधक अव्ययों का प्रयोग किया जाता है।

वाक्यों का रूपांतरण

एक प्रकार के वाक्य को दूसरे प्रकार के वाक्य में परिवर्तन करने की प्रक्रिया को वाक्यों का रूपान्तरण कहते हैं। रूपान्तरण के अभ्यास से शिक्षार्थियों को तीनों प्रकार के वाक्यों की रचना करने की दक्षता प्राप्त होगी, साथ ही शैली की विविधता से भी अवगत होंगे। रूपांतरण के कुछ उदाहरण :

सरल	**मिश्र**	**संयुक्त**
दुर्गंध के कारण यहाँ बैठा नहीं जाता	यहाँ इतनी दुर्गन्ध है कि यहाँ बैठा नहीं जाता	यहाँ दुर्गन्ध है और यहाँ बैठा नहीं जाता
मिश्र	**संयुक्त**	**सरल**
वह जब घर पहुँचा तब उसने अपने भाई को कहाँ पढ़ते हुए देखा	वह घर पहुँचा और उसने अपने भाई को वहाँ पढ़ते हुए देखा	घर पहुँचने पर उसने अपने भाई को वहाँ पढ़ते हुए देखा

2.5.6 वाक्य रचना संबंधी अशुद्धियाँ

वाक्य रचना संबंधी अशुद्धियाँ मुख्यतः दो कारणों से होती है :

(क) वाक्य में सही पदक्रम का न होना, और

(ख) वाक्य के विभिन्न पदों में परस्पर सही अन्विति का न होना। इन दोंनो प्रकार की अशुद्धियों के कुछ उदाहरण नीचे दिए जा रहे हैं –

(क) पदक्रम संबंधी अशुद्धियाँ

अशुद्ध रूप	**शुद्ध रूप**
1. फल बच्चे को काट कर खिलाओ।	1. बच्चे को फल काटकर खिलाओ।
2. सावित्री जो सत्यवान की पत्नी थी, वह एक पतिव्रता नारी थी।	2. सत्यवान की पत्नी सावित्री एक पतिव्रता नारी थी।
3. महात्मा गांधी का देश सदा आभारी रहेगा।	3. देश महात्मा गांधी का सदा आभारी रहेगा।
4. केवल यहाँ दो पुस्तकें रखी हैं।	4. यहाँ केवल दो पुस्तकें रखी हैं।

(ख) अन्विति संबंधी अशुद्धियाँ

अशुद्ध रूप	**शुद्ध रूप**
1. क्या आप पढ़ लिए है ?	1. क्या आपने पढ़ लिया है ?
2. क्या आप आ सकोगे ?	2. क्या आप आ सकेंगे ?
3. यहाँ कल एक लड़का और लड़की बैठी थी।	3. यहाँ कल एक लड़का और एक लड़की बैठे थे।
4. उत्तम चरित्र निर्माण हमारे लक्ष्य होने चाहिए।	4. उत्तम चरित्र निर्माण हमारा लक्ष्य होना चाहिए।

इनके अतिरिक्त वाक्य संबंधी अशुद्धियों के कुछ अन्य प्रकार भी होते हैं, जैसे – अस्पष्ट या शिथिल वाक्य, बेमेल शब्द योजना, कार्य-कारण संबंध का अभाव। इनके कारण भावों की स्पष्ट अभिव्यक्ति नहीं हो पाती। वाक्य रचना में कुछ इस प्रकार के पुनरुक्ति संबंधी दोष भी पाए जाते हैं, जैसे :

अशुद्ध रूप	शुद्ध रूप
1. कृपया आज का अवकाश देने की कृपा करें।	1. आज का अवकाश देने की कृपा करें।
2. केवल महिलाओं मात्र के लिए आरक्षित।	2. केवल महिलाओं के लिए आरक्षित।
3. कश्मीर में अनेक दर्शनीय स्थल देखने योग्य हैं।	3. कश्मीर में अनेक दर्शनीय स्थल हैं।

शिक्षार्थियों में शुद्ध वाक्य रचना की आदत डालने के लिए आप उनकी मौखिक और लिखित अभिव्यक्ति में पाई जाने वाली वाक्य-अशुद्धियों का संकलन करें और उनके आधार पर अभ्यासात्मक कार्य कराएँ।

2.5.7 विराम चिह्न

कामता प्रसाद गुरु के अनुसार शब्दों तथा वाक्यों का परस्पर संबंध बताने तथा किसी विषय को भिन्न भिन्न भागो में बाँटने और पढ़ने में यथा स्थान रुकने के लिए लेखन में जिन चिह्नों का प्रयोग किया जाता है, उन्हें विराम चिह्न कहते हैं।

विराम चिह्नों के प्रयोग से वाक्य के अर्थ में स्पष्टता आती है। लम्बे वाक्यों में तो बिना विराम के उनका अर्थ समझना कठिन हो जाता है।

उच्चारण की दृष्टि से भी विराम चिह्न आवश्यक हैं। इन चिह्नों से सही बलाघात और अनुतान में सहायता मिलती है।

हिन्दी में प्रचलित विराम चिह्न निम्नलिखित हैं :

- पूर्ण विराम (।)
- अल्प विराम (,)
- अर्ध विराम (;)
- प्रश्न चिह्न (?)
- विस्मयादि सूचक या संबोधन (!)
- अवतरण या उद्धरण चिह्न (" ")
- योजक या विभाजन चिह्न (-)
- निर्देशक (डैश) (—)
- कोष्ठक ( )
- हंसपद (‸)

पूर्ण विराम (।) : पूर्ण विराम का चिह्न सभी प्रकार के वाक्यों — सरल, मिश्र, संयुक्त के अंत में लगता है। इसके प्रयोग में त्रुटि की संभावना नहीं रहती।

अल्प विराम (,) : यह चिह्न वाक्य के बीच में लगता है। यह न्यूनतम विराम का द्योतक है। इसका प्रयोग अधिक होता है, अतः इसके नियम जान लेने चाहिए :

- समानपदी कई शब्दों का प्रयोग होने पर प्रत्येक शब्द के बाद अल्प विराम लगाया जाता है, जैसे — दिल्ली, मुंबई, कलकत्ता और चेन्नई भारत के बड़े नगर हैं।
- जब एक ही प्रकार के कई पदबंध या उपवाक्य एक वाक्य में आते हैं, तो प्रत्येक पदबंध या उपवाक्य के अंत में अल्प विराम लगाया जाता है, जैसे 'कश्मीर की सुन्दर झीलें, मनोरम उद्यान, हिममंडित पर्वत मालाएँ और वहाँ के सीधे-सादे लोग पर्यटकों का मन मोह लेते हैं।' इस प्रकार प्रत्येक पदबंध के बाद अल्प विराम किन्तु अंतिम पदबंध के पहले और का प्रयोग होता है।

  प्रत्येक उपवाक्य के बाद अल्प विराम और अंतिम उपवाक्य के पहले और का प्रयोग होता है जैसे — 'जब हम पढ़ते हैं, उस पर विचार करते है, मनन करते हैं और विश्लेषण करते हैं तभी हमारा ज्ञान बढ़ता है'।
- वाक्य के आरम्भ में आने वाले हाँ, नहीं के बाद, जैसे — हाँ, तुम ठीक कहते हो। नहीं, ऐसा संभव नहीं है।

- संबोधन सूचक विराम के लिए विकल्प से, जैसे — मोहन, तुम इधर आओ। संबोधन सूचक विराम की स्थिति में होगा — मोहन ! तुम इधर आओ।
- 'परन्तु', 'लेकिन', 'क्योंकि', 'बल्कि', 'वरन्' आदि से आरंभ होने वाले उपवाक्यों में अव्यय से पहले अल्प विराम का प्रयोग होता है, जैसे — मोहन आज स्कूल नहीं आया, क्योंकि वह बीमार पड़ गया है।
- तारीख के साथ महीने का नाम लिखने के बाद सन् या संवत के पहले, जैसे 15 अगस्त, 1997
- किसी कथन के उद्धृत करने पर उद्धरण चिह्न के पूर्व, जैसे उसने कहा, "मैं' यह कभी नहीं स्वीकार करूँगा।"
- पत्र में संबोधन के बाद, जैसे — प्रिय महोदय, पूज्य पिताजी, प्रिय मित्र।

अर्ध विराम (;) : अर्ध विराम का प्रयोग अल्प विराम की अपेक्षा अधिक समय तक ठहरने के लिए किया जाता है। इसका प्रयोग कम होता है और कहीं-कहीं तो इसका स्थान अल्प विराम ने ही ले लिया है। सामान्यत: इसका प्रयोग निम्नलिखित स्थलों पर होता है :

- समानाधिकरण वाक्यों के मध्य में, जैसे — भारत में स्वतंत्रता संग्राम का शंख महात्मा गांधी ने फूँका; अहिंसा और सत्याग्रह का आरम्भ उन्होंने ही किया; अंग्रेजों के विरुद्ध बड़े-बड़े आंदलनों का नेतृत्व उन्होंने ही किया और अंतत: उन्हें सफलता भी मिली।
- मिश्र अथवा संयुक्त वाक्य में विपरीत अर्थ प्रकट करने वाले उपवाक्यों के बीच में, जैसे — लोग उसे गालियाँ देते; वह उन्हें अपना प्यार देता, लोग उस पर पत्थर फेंकतें; वह उनके कल्याण के लिए ईश्वर से प्रार्थना करता।

प्रश्न चिह्न (?) : यह विराम चिह्न प्रश्न सूचक वाक्य के अंत में प्रस्तुत होता है, जैसे — तुम कहाँ जा रहे हो ?

यदि एक ही वाक्य में छोटे-छोटे कई प्रश्न वाचक वाक्य हों तो पूरे वाक्य की समाप्ति पर ही प्रश्न सूचक चिह्न लगाया जाता है, जैसे — तुम कहाँ गए थे, कैसे आए और क्या चाहते हो ?

विस्मयादि सूचक या संबोधन (!) : यह विराम चिह्न हर्ष, विषाद, घृणा, आश्चर्य, भय आदि सूचक शब्दों, पदबंधों तथा वाक्यों के अंत में लगता है, जैसे — आह ! उसे बड़ी पीड़ा हो रही है (शब्द) इतना ऊँचा महल ! (पदबंध) ! कितना रमणीक दृश्य है ! (वाक्य)

संबोधन के लिए भी इसी चिह्न का प्रयोग किया जाता है, जैसे — साथियों ! आज बलिदान का समय आ गया है।

अवतरण या उद्धरण चिह्न (" ") : इसके दो रूप है इकहरा उद्धरण चिह्न (""). इकहरे उद्धरण चिह्न का प्रयोग कवि या लेखक का उपनाम, पुस्तक या समाचार-पत्रों के नाम लिखने में किया जाता है, जैसे — सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' ने 'परिमल' ग्रंथ की रचना की। 'नंदन' बच्चों की पत्रिका है। सूक्ति या कहावत को स्पष्ट करने के लिए, काव्य पंक्तियों और उपवाक्यों में, जैसे — उस बालक पर यह कहावत चरितार्थ होती है, 'होनहार बिरवान के होत चीकने पात'। तुलसीदास ने ठीक ही लिखा है 'बिनु भय हो हि न प्रीति'।

दुहरे अवतरण चिह्न का प्रयोग लेखक या वक्ता के कथन को यथावत् उद्धृत करने में, जैसे — ''सत्याग्रही के लिए आवश्यक है — सत्य और अहिंसा के प्रति दृढ़ निष्ठा'' — महात्मा गांधी। पंडित मदन मोहन मालवीय ने कहा था, ''विद्यार्थियों को अनुशासन में रहकर अध्यन करना चाहिए।''

योजक या विभाजन चिह्न (-) : इसका प्रयोग सामासिक पदों या पुनरुक्त और युग्म शब्दों के मध्य होता है, जैसे — सुख-दुख, तन-मन-धन आदि।

निर्देशक (डैश) (—) : यह चिन्ह योजक या हाइफन से कुछ बड़ा होता है। इसका प्रयोग किसी उद्धरण या कथन के पहले अल्प विराम के स्थान पर, जैसे — शुक्ल जी का कथन है — ''वैर क्रोध का अचार या मुरब्बा है।'' किन्हीं वस्तुओं या कार्यों का ब्योरा देने में, जैसे — उनकी किसी से नहीं बनती — न मित्रों से और न घर के लोगों से। वह खाने-पीने की बहुत सी चीजें ले आया — मिठाई, नमकीन, सेब आदि।

कोष्ठक (   ) : इसका प्रयोग निम्नलिखित स्थलों पर होता है **:** क्रम सूचक अंकों या अक्षरों के साथ, जैसे **—** दिशाएँ चार होती हैं **—** (1) पूर्व (2) पश्चिम (3) उत्तर (4) दक्षिण। व्याख्यात्मक शब्दों को भी कोष्टक में रखा जाता है, जैसे वासुदेव (वसुदेव के पुत्र कृष्ण) ने कंस का वध किया। ऐसे लोगों (संतों) का दर्शन दुर्लभ है।

हंसपद (‸) : लिखते समय जब कोई शब्द छूट जाता है तो उस स्थान पर हंसपद (‸) लगाकर छूटे शब्द को ऊपर या हाशिए में लिख दिया जाता है। उदाहरण **—** रमेश ने राजू से ‸(कहा) कि तुम घर चले जाओ।

बोध प्रश्न :

5. पूर्ण वाक्य में किन-किन विशेषताओं की अपेक्षा होती है ? दो पंक्तियों में लिखें।

   ....

   ....

6. हिन्दी वाक्यों की पदक्रम-व्यवस्था स्पष्ट कीजिए। उत्तर चार पंक्तियों में दीजिए।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

7. अन्विति का क्या आशय है ? विभिन्न स्थितियों में कर्ता और क्रिया की अन्विति समझाएँ। उत्तर पाँच पंक्तियों में लिखिए।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

8. वाक्य-रचना संबंधी अशुद्धियाँ सामान्यतः किस प्रकार की होती हैं ? उत्तर दो पंक्तियों में दीजिए।

   ....

   ....

   ....

2.6 शब्द और वाक्य की शिक्षण-प्रक्रिया

उच्चारण तथा वर्तनी की शिक्षण प्रक्रिया के प्रसंग में लिखा जा चुका है कि भाषिक तत्त्वों की शिक्षा का सीधा संबंध व्याकरण-शिक्षण से जुड़ा हुआ है। इस दृष्टि से शब्द तथा वाक्य की शिक्षा व्याकरण-शिक्षण का ही अंग है। व्याकरण शिक्षण में इनके पढ़ाने के लिए सर्वोपयुक्त विधि आगमन विधि है। इस विधि में पहले कुछ उदाहरण प्रस्तुत किए जाते हैं, फिर उन उदाहरणों पर चर्चा, विश्लेषण प्रश्नोत्तर विधि से किया जाता है और समान लक्षणों तथा विशेषताओं की पहचान की जाती है। इस आधार पर परिभाषा, नियम तथा निष्कर्ष निकाले जाते हैं। नियम और परिभाषा की पुष्टि के लिए पुनः प्रयोग और अभ्यास कराए जाते हैं। व्याकरण-शिक्षण की इकाई में इस विधि का विस्तार से वर्णन किया गया है। अतः यहाँ हम उस पर चर्चा नहीं कर रहे हैं।

आगमन-विधि के अतिरिक्त शब्द तथा वाक्य-शिक्षण के लिए निम्नांकित पद्धति या उपागम उपयोगी माने गए है **:**

◆ पाठ संसर्ग उपागम

◆ रचना शिक्षण उपागम

इन दोनों उपागमों का उल्लेख उच्चारण तथा वर्तनी-शिक्षण के प्रसंग में भी किया जा चुका है। अब यहाँ शब्द तथा वाक्य-शिक्षण की दृष्टि से इन उपागमों के प्रयोग पर विचार किया जा रहे है।

2.6.1 पाठ-संसर्ग उपागम

शब्द-शिक्षण : शब्द-शिक्षण की दृष्टि से पाठ-संसर्ग उपागम का प्रयोग विशेष उपयोगी है क्योंकि पाठ पढ़ाते समय स्वाभाविक रूप से शब्द-शिक्षण के अवसर मिलते जाते हैं।

सामान्यत: शब्द-शिक्षण सभी विद्याओं के पाठों में संभव है, किन्तु इसका सबसे अधिक अवसर गद्य विशेषत: निबंध-शिक्षण मे मिलता है। साहित्य की अन्य विद्याओं — कविता, कहानी, नाटक, जीवनी आदि के शिक्षण में साहित्यिक सौंदर्य तत्त्वों के बोध, रसास्वादन, चरित्र-चित्रण तथा कथानक की ओर अधिक ध्यान रहता है और इस कारण भाषा-कार्य के लिए सहज रूप में अवसर नहीं मिलता। किन्तु निबंधात्मक पाठों में विषय-वस्तु के बोध का जितना महत्त्व है, उतना ही महत्त्व भाषा-कार्य का भी है। भाषिक कार्यों में भी शब्द-शिक्षण और शब्द-भंडार वृद्धि ही अधिक प्रमुख हैं।

शब्द-ज्ञान के अन्तर्गत पाठ में आए हुए कठिन और अपरिचित शब्दों का केवल अर्थ बता देना ही अभीष्ट नहीं, अपितु उनके आधार पर अधिकाधिक शब्दों का ज्ञान कराना, शब्द-रचना की प्रकिया से अवगत कराना, विभिन्न स्थितियों में शब्द का सही प्रयोग आदि भी अपेक्षित हैं। इनसे शब्द भंडार में अपने आप वृद्धि होती जाती है।

पाठ संसर्ग उपागम के अन्तर्गत शब्द-शिक्षण की अनेक युक्तियाँ अपनाई जा सकती है :

— शब्द के अर्थबोध द्वारा शब्द-शिक्षण

— शब्द रचना द्वारा शब्द शिक्षण

— विशिष्ट शब्द प्रयोगों के ज्ञान द्वारा शब्द-शिक्षण

अर्थ बोध द्वारा : पाठ शिक्षण के समय पर्यायवाची, अनेकार्थी, विलोमार्थी, रूढ़ार्थी, प्रतीकात्मक और पारिभाषिक शब्दों को पाठ में यथाप्रसंग बताकर शब्दार्थ बोध कराया जा सकता है।

शब्द रचना द्वारा : शब्द रचना का ज्ञान शब्दार्थ और शब्द-भंडार वृद्धि दोनों में सहायक होता है। आप पढ़ चुके है कि शब्द रचना तीन प्रकार से होती है — उपसर्ग लगाकर, प्रत्यय लगाकर और समास द्वारा। अत: पाठ में आए हुए यौगिक शब्द के अनुरूप विधि अपानाएँ।

विशिष्ट शब्द-प्रयोगों का ज्ञान : पाठ में यदि लक्षक और व्यंजक शब्द आए हों तो उनके लक्ष्यार्थ और व्यंग्यार्थ स्पष्ट कीजिए और सामान्य अर्थ से उनका अंतर स्पष्ट कीजिए।

यदि कहावतों और मुहावरों का प्रयोग हुआ है तो अर्थ स्पष्ट करते हुए उनमें प्रयुक्त शब्दों की ओर ध्यान दिलाइए। इस प्रकार विशेष संदर्भों में शब्दों की अर्थ-व्यंजकता और विविध-अर्थद्योतन की शक्ति से शिक्षार्थी अवगत होंगे और उनका शब्द-भंडार भी बढ़ेगा।

इन युक्तियों के अतिरिक्त पाठ में प्रयुक्त शब्दों के आधार पर आप और भी युक्तियाँ अपना सकते हैं। यदि पाठ में कोई शब्द विदेशी भाषाओं — अरबी, फारसी, अंग्रेजी आदि से आया है, तो उसे भी बताएँ जिससे शिक्षार्थियों को स्त्रोत का पता चले।

वाक्य शिक्षण : निबंधात्मक पाठों के शिक्षण में वाक्य-शिक्षण का यथेष्ट अवसर मिलता है, अत: इस दृष्टि से पाठ-संसर्ग उपागम का विशेष महत्त्व है। आप जानते हैं कि निबंध में भाषा का उत्कृष्ठ, प्रांजल और ललित रूप पाया जाता है। शिक्षार्थियों का ध्यान ऐसे वाक्यों की ओर दिलाइए। इसके लिए पाठ में प्रयुक्त ललित वाक्य, मुहावरेदार वाक्य और भावोद्दीपक वाक्य से उदाहरण लें। इस तरह की वाक्य रचना के लिए शिक्षार्थियों को प्रोत्साहित भी करें।

विषयवस्तु बोध एवं विचार विश्लेषण संबंधी कार्य कराते समय शुद्ध वाक्यों में ही उत्तर देने या कथन प्रस्तुत करने पर बल दीजिए। देखा जाता है कि हम पाठ विकास में शीघ्रता के कारण शिक्षार्थियों के उत्तर अपूर्ण या बेमेल या शिथिल वाक्यों में स्वीकार कर लेते हैं और आगे बढ़ जाते हैं। इससे शिक्षार्थियों में अधूरे या अशुद्ध वाक्य-रचना की गलत आदत पड़ती है। इसका अवसर कदापि न दें।

2.6.2 रचना-शिक्षण उपागम

शब्द-शिक्षण : रचना-शिक्षण उपागम द्वारा शब्द-शिक्षण का यथेष्ट अवसर मिलता है। रचना-शिक्षण वस्तुत: अर्जित शब्द ज्ञान के प्रयोगात्मक अभ्यास का उपागम है। मौखिक रचना के लिए तैयारी कराते समय शिक्षार्थियों को उपयुक्त शब्दावली के प्रयोग के लिए कहा जा सकता है। किसी एक प्रकरण पर बोलते समय उपयुक्त और अनुपयुक्त शब्दों की पहचान कराई जा सकती है।

विभिन्न प्रकार की मौखिक स्थितियों — वर्णन, भाषण, वाद-विवाद, विचार-गोष्ठी आदि की दृष्टि से उपयुक्त सूचियाँ तैयार की जा सकती हैं और उनके प्रयोग के लिए शिक्षार्थियों को प्रोत्साहित किया जा सकता है। इन अवसरों पर प्रयुक्त संबोधनों, शिष्टाचारों तथा समारोह संबंधी औपचारिक शब्दों के लिए भी उचित परामर्श देना चाहिए।

लिखित रचना में किसी वर्णन या कहानी का रूपांतरण भी शब्द-शिक्षण के लिए उपयोगी प्रक्रिया है। एक वचन में प्रस्तुत कथन को बहुवचन में, पुल्लिंग से स्त्रीलिंग में, उत्तम पुरुष से अन्य पुरुष अथवा अन्य पुरुष से उत्तम पुरुष में रूपांतरण कराया जा सकता है। इससे शब्द के रूप-परिवर्तन की क्षमता बढ़ती है।

शब्द-शिक्षण के लिए पाठ-संसर्ग उपागम और रचना-शिक्षण उपागम के अतिरिक्त सह-शैक्षिक साहित्यिक और सांस्कृतिक कार्यक्रमों में शिक्षार्थियों की सक्रिय भागीदारी भी उपयोगी होती है। मौखिक, लिखित प्रतियोगिताओं के लिए विशिष्ट शब्द सूची तैयार की जा सकती है। अभिनय, कथोपकथन या संवाद में भाग लेने से शब्द-भंडार अपने आप समृद्ध होता है।

वाक्य-शिक्षण : रचना शिक्षण उपागम द्वारा वाक्य-शिक्षण में यशेष्ट सहायता मिलती है। मौखिक और लिखित रचना-शिक्षण में हमारा ध्यान विषय सामग्री और उसके संयोजन पर अधिक रहता है किन्तु हम यदि अभिव्यक्ति-सौंदर्य और शैली की रोचकता पर भी ध्यान दें तो सुललित वाक्य संरचनाओं का स्वत: ही शिक्षण हो जाएगा। शुद्ध वाक्य-संरचना तथा पूर्वापर संबंध का ध्यान रखते हुए वाक्यों का क्रमयोजन रचना को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए आवश्यक है। शिक्षार्थियों के सम्मुख प्रतिष्ठित लेखकों की रचनाएँ उदाहरण के रूप मे रखें और उनकी वाक्य-योजना की ओर ध्यान आकृष्ट करें।

रचना-शिक्षण में हमें उच्चारण, वर्तनी और शब्द-शिक्षण का अवसर मिलता है, उसी प्रकार वाक्य-रचना का भी।

शुद्ध वाक्य-रचना संबंधी अभ्यासों की दृष्टि से निम्नांकित सुझाव उपयोगी होंगे —

- वाक्यों में शुद्ध पदक्रम संबंधी अभ्यास।
- अपूर्ण वाक्यों को पूरा करना अथवा वाक्य में रिक्त स्थानों की पूर्ति।
- वाक्य में अर्थ की दृष्टि से प्रयुक्त अनुपयुक्त शब्द की जगह उपयुक्त शब्द का प्रयोग।
- लिंग, वचन, विभक्ति, पुरुष के अनुसार वाक्य का रूपांतरण।
- संयुक्त, मिश्र, सरल वाक्यों की रचना तथा उनका परस्पर रूपांतरण।
- कर्ता, कर्म और क्रिया की विभिन्न स्थितियों में अन्विति।
- अशुद्ध वाक्यों को शुद्ध रूप में लिखने का अभ्यास।

भाषिक तत्त्वों की शिक्षण प्रक्रिया में हमें दो बातों का सदा स्मरण रखना चाहिए :

(1) भाषा मूलत: व्यवहार और प्रयोग का विषय है। भाषिक तत्त्वों का ज्ञान भाषा के व्यवहार और प्रयोग की दक्षता विकसित करने में नींव का काम करता है। इसके आधार के बिना भाषा की व्यावहारिक कुशलता विकसित नहीं हो सकती। अत: भाषिक तत्त्वों के ज्ञान को व्यवहार और प्रयोग में लाने का सतत अभ्यास अपेक्षित है।

(2) भाषिक तत्त्वों के शिक्षण के लिए उल्लिखित दोनों उपागमों — पाठ-संसर्ग उपागम और रचना-शिक्षण उपागम के क्रियान्वय में यह ध्यान रखें कि भाषिक तत्त्वों की शिक्षा व्यावहारिक हो, विषयवस्तु को ग्रहण करने में सहायक हो, प्रसंगानुकूल हो, उसके कारण पाठ या रचना विकास में असंबद्धता या विषयांतर का व्यवधान प्रतीत न हो अपितु वह पाठ की प्रकृति के अनुरूप आवश्यक सिद्ध हो।

बोध प्रश्न :

9. पाठ-संसर्ग उपागम द्वारा शिक्षार्थियों के शब्द-भंडार की वृद्धि के लिए आप क्या-क्या उपाय कर सकते हैं ? उत्तर चार पंक्तियों में लिखें।

    ....

    ....

    ....

    ....

    ....

    ....

10. पाठ-संसर्ग उपागम और रचना-शिक्षण उपागम से वाक्य-शिक्षण में क्या सहायता मिलती है ? पाँच पंक्तियों में उत्तर दें।

    ....

    ....

    ....

    ....

    ....

    ....

2.7 सारांश

शब्द विचार के अंतर्गत हिन्दी शब्द-भंडार पर निम्नलिखित दृष्टियों से विचार किया गया है — व्युत्पत्ति के आधार पर (तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी) अर्थ के आधार पर (समानार्थी, एकार्थी, अनेकार्थी, विलोमार्थी), रचना के आधार पर (रूढ़, यौगिक, योगरूढ), शब्द-शक्ति के आधार पर (अभिधा, लक्षणा, व्यंजना), व्याकरणिक विवेचन के आधार पर (विकारी — संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया-विशेषण, अविकारी क्रिया विशेषण, संबंध बोधक, समुच्चय बोधक, विस्मयादि बोधक, अव्यय)।

भावाभिव्यक्ति की दृष्टि से वाक्य भाषा की न्यूनतम सार्थक इकाई है। वह पदों का ऐसा व्यवस्थित समूह है जिसमें पूर्ण अर्थ देने की शक्ति हो। पूर्ण वाक्य में आकांक्षा-तृप्ति, योग्यता और आसत्ति की अपेक्षा होती है।

वाक्य के अंग (उद्देश्य, विधेय) अर्थ अथवा भावद्योतन की दृष्टि से वाक्य के प्रकार, वाक्य में पदक्रम, अन्विति, रचना की दृष्टि से वाक्य के प्रकार, वाक्य-रूपांतरण और विराम चिह्न का ज्ञान अपेक्षित है।

उपर्युक्त भाषिक तत्त्वों — ध्वनि, शब्द और वाक्य में प्रयोगात्मक और क्रियात्मक शिक्षण के प्रमुख दो उपागम है : पाठ-संसर्ग उपागम और रचना-शिक्षण उपागम। पाठ-संसर्ग उपागम का तात्पर्य है — पाठ्यपुस्तक के पाठों को पढ़ाते समय यथाप्रसंग भाषिक तत्त्वों की शिक्षा प्रदान करना; पाठ में प्रयुक्त शब्दों और वाक्यों के आधार पर उच्चारण, शब्दार्थ, शब्द रचना, वाक्य संरचना संबंधी दक्षताओं को विकसित करना।

इसी प्रकार मौखिक और लिखित रचना-शिक्षण में इन भाषिक तत्त्वों के ज्ञान और प्रयोग का प्रचुर अवसर मिलता है।

भाषिक तत्त्वों की शिक्षण प्रक्रिया में हमें दो बातों का सदा स्मरण रखना चाहिए :

(1) भाषा मूलत: व्यवहार और प्रयोग का विषय है तथा भाषिक तत्त्वों का ज्ञान भाषा के व्यवहार और प्रयोग की दक्षता प्रदान करने का आधार है; साधन है। अत: भाषा के व्यवहार और प्रयोग का सतत अभ्यास किया जाए।

(2) भाषिक तत्त्वों के शिक्षण के लिए उपर्युक्त दोंनो उपागमों का प्रयोग करते समय सदा ध्यान रखें कि भाषिक कार्य व्यावहारिक हो, विषयवस्तु ग्रहण करने में सहायक हो, प्रसंगानुकूल हो और पाठ्य विषय अथवा रचना-विकास से संबद्ध हो।

2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. व्युत्पत्ति, अर्थ, रचना, शब्दशक्ति और व्याकरणिक विवेचन के आधार पर (प्रत्येक के कुछ उदाहरण भी दें)।
2. तत्सम्, तद्भव, देशज, विदेशी।
3. उपसर्ग, प्रत्यय, समास के प्रयोग द्वारा। युग्म और पुनरुक्त शब्द भी यौगिक के ही वर्ग में आते हैं। वे भी सामाजिक या समस्त पद हैं।
4. समानार्थी, एकार्थी, अनेकार्थी और विलोमार्थी।
5. आकांशातृप्ति, योग्यता और आसत्ति (उदाहरण दीजिए)।
6. सामान्यतः तर्ता, कर्म या पूरक, क्रिया। कर्ता का विस्तार कर्ता के पहले, कर्म का विस्तार कर्म के पहले, क्रिया का विस्तार किया के पहले। द्विकर्मक क्रियाओं में गौण कर्म पहले, मुख्य कर्म बाद में।
7. वाक्य में लिंग, वचन, पुरुष, कारक, काल आदि की दृष्टि से पदों की पारस्परिक संगति।

   'ने' विभक्ति न रहने पर क्रिया सदा कर्ता के अनुसार होती है। अनेक कर्ता जब एक ही लिंग के हों तो क्रिया उसी लिंग में बहुवचन में होगी। अनेक कर्ता जब भिन्न-भिन्न लिंग के हों तो किया बहुवचन, पुल्लिग में होगी। यदि अनेक कर्ता भिन्न-भिन्न वचन में हो तो क्रिया प्रायः बहुवचन में होगी। (उदाहरण दीजिए)।
8. पद्क्रम संबंधी, अन्विति संबंधी। (उदाहरण दीजिए)
9. पाठ में आए हुए शब्दों के आधार पर यथाप्रसंग समानार्थी, अनेकार्थी, विलोमार्थी शब्दों का परिचय; उपसर्ग, प्रत्यय, समास द्वारा शब्द-रचना के उदाहरण, शब्द-शक्तियों (यदि प्रयोग हुआ हो तो) का परिचय आदि के द्वारा शब्द-भंडार वृद्धि।
10. पाठ में प्रयुक्त वाक्यों के आधार पर सरल, संयुक्त, मिश्र वाक्यों की संरचना का परिचय, शैली की दृष्टि से वाक्यों के उदाहरण, ललित प्रयोग वाले वाक्य आदि का परिचय दिया जा सकता है। इसी प्रकार रचना-शिक्षण उपागम में रचना कार्य से संबंधित अभिव्यक्ति के लिए अच्छे-अच्छे वाक्यों के उदाहरण सहायक होते है।

2.9 उपयोगी पुस्तकें

सरल हिन्दी व्याकरण और रचना : राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली

मानक हिन्दी व्याकरण और रचना : राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, नई दिल्ली

हिन्दी व्याकरण : नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी

उच्चारण शिक्षण : सेण्ट्रल पेडागॉजिकल इंस्टीट्यूट, इलाहाबाद

वर्तनी शिक्षण : सेण्ट्रल पेडागॉजिकल इंस्टीट्यूट, इलाहाबाद

माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण: सिंह, निरंजन कुमार, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, तिलक नगर, जयपुर

इकाई 3

श्रवण एवं मौखिक अभिव्यक्ति के कौशल का विकास

: रूपरेखा :

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 श्रवण कौशल का अर्थ एवं महत्त्व

3.3.1 श्रवण कौशल विकास आधारित शिक्षण उद्देश्य

3.3.2 श्रवण के प्रकार

3.4 श्रवण कौशल विकास संबन्धी क्रियाकलाप

3.4.1 शैक्षिक क्रियाकलाप

3.4.2 सह-शैक्षिक क्रियाकलाप

3.5 मौखिक अभिव्यक्ति का अर्थ एवं महत्त्व

3.5.1 मौखिक अभिव्यक्ति शिक्षण के उद्देश्य

3.5.2 मौखिक अभिव्यक्ति के विकास की क्रियाएँ

3.5.3 मौखिक अभिव्यक्ति कौशल की विशेषताएँ

3.5.4 मौखिक अभिव्यक्ति संबंधी त्रुटियाँ एवं उनका निराकरण

3.6 सारांश

3.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.8 सन्दर्भ ग्रंथ

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में हम भाषिक योग्यताओं के विकास के क्रम में श्रवण एवं मौखिक अभिव्यक्ति की दक्षता का अध्ययन करेंगे । हम जानते हैं कि जीवन के प्रत्येक व्यापार में अवसरानुकूल बोलचाल सफलता की कुंजी हैं । अपनी मीठी वाणी, शिष्ट भाषा और वाक्‌चातुर्य से हम अनेक व्यक्तियों को अपना मित्र बना सकते हैं । भावजगत में तो वक्ता की अनुभूति के साथ श्रोता की अनुभूति का तादात्म्य स्थापित करने वाली वाणी की आवश्यकता होती है । अतः भाषिक योग्यताओं के विकास क्रम में श्रवण एवं मौखिक अभिव्यक्ति की दक्षता का विशेष महत्त्व है । जब तक बालक में श्रवण एवं मौखिक अभिव्यक्ति की दक्षता का विकास नहीं होगा तब तक भाषा सीखने तथा सिखाने की प्रक्रिया ही नहीं चल पाएगी । शिक्षार्थी साहित्य की रसानुभूति नहीं कर पाएगा और न ही अपने विचारों एवं भावों को मौखिक रूप में अभिव्यक्त कर पायेगा । भाषा शिक्षण प्रक्रिया में श्रवण एवं मौखिक अभिव्यक्ति एक-दूसरे से जुड़े हुए है । अतः इस इकाई में हम श्रवण एवं मौखिक अभिव्यक्ति की दक्षता का अध्ययन करेंगे ।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :

- श्रवण कौशल के विकास की क्रियाओं की जानकारी दे सकेंगे ।
- मौखिक अभिव्यक्ति के अर्थ एवं महत्त्व का विवेचन कर सकेंगे ।
- मौखिक अभिव्यक्ति के विभिन्न प्रकारों का उल्लेख कर सकेंगे ।
- मौखिक अभिव्यक्ति के विकास की प्रक्रिया बता सकेंगे ।
- अभिव्यक्ति सम्बन्धी त्रुटियों के निराकरण के लिए उपयुक्त शिक्षण प्रक्रिया अपना सकेंगे ।

3.3 श्रवण कौशल का अर्थ एवं महत्त्व

'श्रवण' शब्द 'श्रु' धातु से बना है, जिसका संबंध सुनने की विभिन्न क्रियाओं तथा ध्यानपूर्वक सुनने, अधिगम करने तथा मौखिक संवाद करने आदि से है । 'श्रवण' केवल ध्वनियों का सुनना मात्र नहीं है । श्रवण में किसी कथन को ध्यानपूर्वक सुनने, सुनी गई बात पर चिंतन-मनन करने तथा चिंतन के बाद उस पर अपना मंतव्य स्थिर करके तदनुसार आचरण या व्यवहार करने जैसी क्रमबद्ध प्रक्रियाएँ सम्मिलित हैं । 'श्रवण कौशल' का अर्थ बालक में ऐसी क्षमता का विकास करने से है जिससे कि बालक किसी कथन को ध्यान से सुन सके, उस का सही अर्थ समझ सके, सुनी हुई बात पर चिन्तन एवं मनन कर सके एवं उचित निर्णय ले सके ।

बालक अपने जन्मकाल से ही सार्थक और निरर्थक अनेक प्रकार की ध्वनियाँ सुनना आरंभ कर देता है । माता और संबंधियों के मुख से निकले प्यार के शब्द कुछ महीनों में उसके लिए सार्थक होने लगते हैं । बालक की अधिकांश भाषा शिक्षा उसकी श्रवण द्वारा गृहीत ध्वनियों पर ही अवलंबित होती है । श्रवण शक्ति के इस महत्त्व के कारण ही शायद यह किंवदंती है कि वीर-अभिमन्यु ने चक्रव्यूह भंग करने की शिक्षा अपनी माता के गर्भ में उस समय सीख ली थी जब अर्जुन अपनी पत्नी सुभद्रा को व्यूह-भंग करने की विधि सुना रहे थे । वैदिक काल में जो भी साहित्य था, वह सुनकर याद किया जाता था यही कारण है कि वेद को 'श्रुति' भी कहा जाता है ।

3.3.1 श्रवण कौशल विकास आधारित शिक्षण उद्देश्य

सुनना मानव जीवन की एक अनिवार्य क्रिया है । एक शोधकर्ता के अनुसार मनुष्य अपनी दिनचर्या संप्रेषण-व्यापार में लगाए जाने वाले समय का 45 प्रतिशत सुनने में, 30 प्रतिशत बोलने में और शेष 25 प्रतिशत संयुक्त रूप से पठन और लेखन में लगाता है । विद्यालय में भी शिक्षार्थी लगभग अपना आधा समय सुनने में व्यतीत करता है । श्रवण कौशल के इस महत्त्व को देखते हुए भाषा शिक्षक के नाते हमें इसके विकास के लिए सुनियोजित प्रयास करना चाहिए । इस दृष्टि से उपयुक्त होगा कि हम शिक्षार्थी को ऐसी क्रियाओं में सहभागी बनाएँ जिससे वह :

- धैर्य एवं ध्यानपूर्वक सुनने की कुशलता अर्जित कर सके ।
- शुद्ध एवं अशुद्ध उच्चारण ध्वनियों एवं शब्दों में भेद करने में समर्थ हो सके ।
- श्रुत सामग्री को समझकर स्वराघात, बलाघात, स्वर के उतार-चढ़ाव के अनुसार अर्थग्रहण कर सके । उसके केन्द्रीय भाव या विचार को ग्रहण कर सके ।

- सुनी हुई विषयवस्तु के आधार पर, शिष्टाचारपूर्वक प्रश्न पूछे सके तथा अपनी शंका का समाधान कर सके।
- रेडियो, कैसेट एवं दूरदर्शन पर प्रस्तुत संवादों, समाचारों एवं वार्ताओं को सुनकर समझ सके।

3.3.2 श्रवण के प्रकार

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि जब हम बालक में श्रवण कौशल के विकास की बात करते है तो हमारा आशय केवल यह नहीं होता कि बालक ध्वनियों के सुनने में पारंगत हो वरन वह जो कुछ सुने, उसे समझे, अर्थग्रहण करे, उसे याद रखे, उसके अनुसार कार्य करे अथवा उस पर अपनी प्रतिक्रिया प्रकट करे। श्रवण की इन अपेक्षाओं के आधार पर श्रवण प्रक्रिया के निम्नलिखित प्रकार हैं :

- अवधानात्मक श्रवण
- रसात्मक श्रवण
- विश्लेषणात्मक श्रवण

अवधानात्मक श्रवण

अवधानात्मक श्रवण से आशय है श्रुत सामग्री को ध्यानपूर्वक सुनकर उस के मुख्य तत्त्वों, विचारों, आदेशों-निर्देशों तथा वार्तालाप के सूत्रों आदि को ग्रहण करना। अवधानात्मक श्रवण के विकास के लिए आप शिक्षार्थियों को श्रुत सामग्री के मुख्य बिन्दु सुनाने के लिए कह सकते हैं, अथवा उन्हें श्यामपट्ट पर या कापियों में लिखने के लिए कह सकते हैं । अवधानात्मक श्रवण, श्रवण के अन्य दो प्रकारों की आधारशिला हैं।

रसात्मक श्रवण

उचित स्वराघात एवं अनुतान, उपर्युक्त गति, भाव भंगिमा एवं लहजे के साथ सुनाई गई अथवा पढ़ी गई सामग्री में श्रोता द्वारा आनंदानुभूति करना रसात्मक श्रवण कहलाता है। भाषा-शिक्षण में रसात्मक श्रवण योग्यता के विकास के लिए कविता सर्वोत्तम साधन है।

विश्लेषणात्मक श्रवण

इसमें श्रोता श्रुत सामग्री में प्रस्तुत विचारों, भावों आदि पर तुलनात्मक दृष्टि से विचार करता हुआ अपने पूर्व अनुभवों के आधार पर उनका मूल्यांकन करता है तथा निष्कर्ष निकालता है। भाषा-शिक्षक को विश्लेषणात्मक श्रवण के विकास के प्रति सजग रहना चाहिए क्योंकि सामाजिक व्यवहार में हम विश्लेषणात्मक श्रवण की ही अपेक्षा रखते हैं।

वैसे तो ये तीनों प्रकार के श्रवण परस्पर व्यापी है किन्तु प्रत्येक में श्रोता की मनःस्थिति में भिन्नता होती है। श्रवण के इन तीनों रूपों के शैक्षणिक उद्देश्यों में अंतर होने के कारण कुछ शिक्षा-शास्त्रियों का सुझाव है कि अवधानात्मक श्रवण तथा रसात्मक श्रवण हेतु किए गए सस्वर वाचन के समय केवल वाचक के हाथ में ही पुस्तक हो, श्रोता ध्यानपूर्वक सुनते रहें तभी वे सस्वर वाचन की विशेषताओं की अनुभूति कर सकेंगे। पुस्तक सामने रखकर साथ-साथ पढ़ने के कारण न तो वे श्रुत सामग्री पर पूरी तरह ध्यान केन्द्रित कर पाएँगे और न ही वाचक की भाव भंगिमा, कहने के लहजे की उपयुक्त अनुभूति ही कर पाएंगे।

अतः श्रवण प्रक्रिया के पहले दो रूपों की सार्थकता के लिए यह उचित होगा कि श्रोता व वाचक के बीच कोई व्यवधान न हो।

विश्लेषणात्मक श्रवण की स्थिति में शिक्षार्थी अवश्य ही वाचक के साथ साथ स्वयं भी पुस्तक से पढ़ता जाए, क्योंकि तभी वह विषय सामग्री में वर्णित तथ्य, विचार, भाव आदि पर समीक्षात्मक दृष्टि डाल पाएगा। साथ ही शब्द के श्राव्य रूप के साथ उसकी वर्तनी का संबंध जोड़ने से शब्द विशेष के उच्चरित तथा लिखित दोनों रूपों से परिचित होगा।

3.4 श्रवण-कौशल विकास संबंधी क्रियाकलाप

श्रवण कौशल शिक्षण के उद्देश्य एवं प्रकारों पर विचार करने के पश्चात् भाषा शिक्षक के रूप में हमें यह विचार करना आवश्यक होगा, कि वे कौन से क्रियाकलाप हो सकते हैं, जिनकी सहायता से हम शिक्षार्थियों में श्रवण कौशल का सुनियोजित विकास कर सकेंगे।

3.4.1 शैक्षिक क्रियाकलाप

शिक्षार्थियों को एक कुशल श्रोता बनाने के लिए निम्नांकित शैक्षिक क्रियाकलाप उपयोगी सिद्ध हो सकते है :

- कहानी कहना
- वार्तालाप सुनाना
- प्रकृति एवं देश प्रेम संबंधी कविताएँ सुनाना
- चित्रों की सहायता से कहानी सुनाना
- विद्यालय में 'आज के सुविचार' के रूप में महापुरुषों की सूक्तियाँ सुनाना, समाचार-पत्रों के आधार पर मुख्य समाचार सुनाना।

3.4.2 सह-शैक्षिक क्रियाकलाप

इसके अतिरिक्त विद्यालय स्तर पर श्रवण कौशल विकास के लिए सह-शैक्षिक क्रियाकलाप आयोजित किए जा सकते हैं। ये विद्यार्थियों के श्रवण कौशल को निश्चित रूप से प्रभावित करेंगे। इस दृष्टि से कुछ क्रियाकलाप हो सकते हैं – वाद-विवाद, कहानी, नाटक एवं सुवाचन प्रतियोगिताएँ, सामूहिक बाल सभा, समाचार वाचन आदि।

यहाँ ध्यान देने की बात यह है कि श्रवण तथा मौखिक अभिव्यक्ति, सुनना तथा बोलना दोंनो एक-दूसरे पर आधारित हैं। शिक्षार्थी की श्रवण-दक्षता का पता उसकी मौखिक अभिव्यक्ति के माध्यम से चलता है। अतः शिक्षार्थियों के श्रवण कौशल विकास से संबंधित सह-शैक्षिक क्रियाकलापों का विस्तृत विवेचन इसी इकाई में मौखिक अभिव्यक्ति कौशल के संदर्भ में आगे किया जा रहा है।

बोध प्रश्न :

1. कक्षा-शिक्षण के दौरान श्रवण कौशल विकास के तीन उपाय बताइये।

....
....
....
....
....
....

2. श्रवण कौशल विकास के लिए किन्हीं चार कक्षा-शिक्षणेतर क्रियाकलापों का उल्लेख कीजिए।

....
....
....
....
....
....

3.5 मौखिक अभिव्यक्ति का अर्थ एवं महत्त्व

मनुष्य जब अपने विचारों को दूसरे के समक्ष रखने के लिए भाषा का बोलकर प्रयोग करता है तो उसे मौखिक अभिव्यक्ति कहा जाता है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह अपने दैनिक कार्य-व्यापार में अनेक व्यक्तियों के संपर्क में आता है और भाषा के माध्यम से अपने विचार प्रकट करता है। सामान्यतः विचारों के संप्रेषण के लिए मौखिक अभिव्यक्ति का सहारा लिया जाता है। अशिक्षित व्यक्तियों के पास तो अपने विचारों के आदान-प्रदान का साधन केवल मौखिक अभिव्यक्ति ही है। व्यक्तियों को अधिक संख्या में एक साथ संबोधित करने के लिए मौखिक अभिव्यक्ति का उपयोग किया जाता है।

बालक के विकास की दृष्टि से तो मौखिक अभिव्यक्ति प्रारंभ से ही अत्यन्त आवश्यक रही है। इससे बालक को भाव प्रकाशन का पूर्ण अवसर मिलता है। भाषा शास्त्री इस विचार से पूर्ण सहमत है कि पहली कक्षा के प्रथम छह मास तक पठन एवं लेखन कार्य प्रारंभ ही नहीं किया जाना चाहिए। इस समय तो बालक को संभाषण ही सिखाना चाहिए। 'ज्ञात से अज्ञात की ओर' शिक्षण सूत्र इस तथ्य का प्रमाण है कि मौखिक कार्य ही भाषा शिक्षण का आधार हो क्योंकि यह भाषा की नींव तैयार करता है।

भाषा शिक्षक के उत्तरदायित्व की विवेचना करते हुए भाषा शास्त्री रायबर्न ने अपनी पुस्तक 'मातृभाषा-शिक्षण' में कहा है कि भाषा शिक्षक का प्रारंभिक कार्य बालक के विश्रृंखलित विचारों को श्रृंखलाबद्ध करने तथा उसकी मौखिक अभिव्यक्ति को विकसित करना होता है, क्योंकि व्यक्तित्व विकास के लिए सरल, स्पष्ट व प्रभावशाली मौखिक अभिव्यक्ति का होना आवश्यक होता है।

3.5.1 मौखिक अभिव्यक्ति शिक्षण के उद्देश्य

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर मौखिक अभिव्यक्ति कौशल के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किए जा सकते है :

- शिक्षार्थी शुद्ध, स्पष्ट, स्वाभाविक एवं प्रवाहयुक्त वाणी में वार्तालाप एवं भाषण करने की क्षमता अर्जित कर सकेंगे।
- भावानुकूल, आरोह-अवरोह, बल और अनुतान का ध्यान रखते हुए मौखिक अभिव्यक्ति कर सकेंगे।
- मानक भाषा में सहज भाव से अपनी बात प्रस्तुत कर सकेंगे।
- उचित एवं अवसरानुकूल भाषा शैली का प्रयोग कर सकेंगे तथा आत्मविश्वास एवं अपेक्षित हाव-भाव सहित बोलने में निपुण हो सकेंगे।
- अपने मनोभोवों यथा हर्ष, विषाद, क्रोध, विस्मय आदि को स्वाभाविक एवं भावमय ढंग से अभिव्यक्त करने में समक्ष हो सकेंगे।
- सामाजिक, साहित्यक, वैज्ञानिक विषयों पर आयोजित वार्तालापों एवं परिचर्चाओं में भाग ले सकेंगे।
- स्वागत, परिचय, धन्यवाद, कृतज्ञता, संवेदना, एवं बधाई आदि के लिए उपयुक्त भाषा का प्रयोग कर सकेंगे।
- विचार अभिव्यक्ति के अवसर पर अन्य वक्ताओं से असहमत होते हुए भी अपनी प्रतिक्रियाओं को शिष्ट एवं संयत भाषा में व्यक्त कर सकेंगे।

3.5.2 मौखिक अभिव्यक्ति के विकास की क्रियाएँ

यहाँ हम यह जानने का प्रयत्न करेंगे कि विभिन्न शैक्षिक स्तरों पर शिक्षार्थी की मौखिक-अभिव्यक्ति को किस प्रकार से विकसित किया जा सकता है।

अनौपचारिक बातचीत

कक्षा में तथा कक्षा के बाहर भाषा शिक्षक तथा शिक्षार्थियों के बीच अनौपचारिक लेकिन रोचक बातचीत से छोटे बच्चों की झिझक खुल जाती है तथा उन में आत्मविश्वास उत्पन्न हो जाता है। उन के शब्द-भण्डार में वृद्धि होने के साथ-साथ उनके वाक्य-विन्यास में भी सुधार हो जाता है। ऐसी अनौपचारिक बातचीत आगे चलकर संवाद, कथोपकथन एवं समूह-विचार-विमर्श आदि में भाग लेने के लिए शिक्षार्थियों को अप्रत्यक्ष रूप में उत्प्रेरित करती है।

कहानी कथन

कहानी कथन के माध्यम से शिक्षार्थियों की मौखिक अभिव्यक्ति को विकसित किया जा सकता है। भाषा शिक्षक प्राथमिक स्तर पर छोटे बच्चों को कक्षा में, कहानी एवं घटनाओं के रोचक विवरण प्रस्तुत कर सकता है तथा बच्चों को भी उत्प्रेरित कर सकता है कि ऐसी ही रोचक कहानियाँ वे स्वयं भी सुनाएँ। इस दृष्टि से शिक्षोपयोगी, विनोद प्रिय, साहसिक एवं बाल जीवन से संबंधित कहानियाँ सुनाना उपयोगी रहेगा।

घटना

भाषा शिक्षक के रूप में आपने यह अनुभव किया होगा कि छोटे बच्चों को स्वयं द्वारा देखी या सुनी हुई

बातों या घटनाओं को अपने शब्दों में, सुनाने में बहुत आनंद आता है। उनकी मौखिक अभिव्यक्ति के विकासार्थ माध्यमिक कक्षाओं में शिक्षार्थियों को किसी देखी हुई घटना, दृश्य, खेल-तमाशे आदि पर सुसंबद्ध ढंग से वर्णन करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है। 'मैंने क्या देखा', 'आप बीती', 'मेरा अनुभव' विषयों पर बालक बड़े चाव से वर्णन करेंगे।

चित्र वर्णन

छोटे-छोटे बालकों की मौखिक अभिव्यक्ति को घटना एवं कहानियों पर निर्मित चित्रों के माध्यम से विकसित किया जा सकता है। चित्र या चित्रों की श्रृंखला को कक्षा में प्रस्तुत कर ऐसे प्रश्न पूछे जा सकते है, जो 'क्यों', 'कहाँ', 'कब', 'क्या' से प्रारंभ होते हों।

भाषण

भाषण मौखिक अभिव्यक्ति को विकसित करने का एक अत्यंत उपयुक्त साधन है। शिक्षार्थियों को अपनी रुचि एवं ज्ञान के आधार पर उपयुक्त शीर्षक देकर भाषण करने के अवसर प्रदान किए जा सकते हैं। भाषण देने की कला के समुचित विकास के लिए उन्हें प्रमुख विचारों को यथाक्रम संजोने की विधि, श्रोताओं के अनुसार विषय सामग्री, उचित हाव-भाव प्रदर्शन, वाणी में आवश्यकतानुसार उतार-चढ़ाव, उपलब्ध समय का उचित ध्यान रखने जैसी भाषण- कला संबंधी अपेक्षाओं से अवगत करना चाहिए।

आशु भाषण

आशु भाषण भी शिक्षार्थियों में मौखिक आत्म-प्रकाशन की क्षमता विकसित करने का सशक्त माध्यम है। इसके द्वारा छात्रों की भाषण के दौरान तुरन्त तर्क करने की योग्यता को विकसित किया जा सकता है। इसके लिए कक्षा स्तर के अनुसार कुछ विषय पहले से घोषित किए जा सकते हैं तथा फिर लाटरी डाल कर शिक्षार्थियों को किसी एक विषय पर बोलने के लिए कहा जा सकता है। उच्च माध्यमिक स्तर (कक्षा 9 से 12) पर इसे प्रतियोगिता से रूप में अंतर्विद्यालयीय स्तर पर भी आयोजित किया जा सकता है।

वाद-विवाद

मौखिक अभिव्यक्ति को विकसित करते समय शिक्षार्थियों में तर्कशक्ति, प्रत्युत्पन्न-मति, हाजिर जबाबी, हास्य-व्यंग्य युक्त तथा अपने विचारों को प्रभावी ढंग से संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत करने जैसे गुणों का विकास होता है। बालक-बालिकाएँ तो स्वयं ही ऐसे अवसर पर बोलने के लिए लालायित रहते हैं। यहां हमें शिक्षार्थियों को यह सिखाना होगा कि वे कैसे अपने प्रतिपक्षियों के प्रस्तुत तकों का पूर्व अनुमान कर उनकी काट करने के लिए अपना उत्तर तैयार कर सकते हैं तथा कैसे प्रतिपक्षियों के सुने तर्कों का तुरंत उत्तर देने में प्रत्युत्पन्नमति का प्रयोग कर सकते है।

परिसंवाद तथा विचार-विमर्श

उच्च कक्षाओं यथा कक्षा 9 से 12 के स्तर पर हम सामूहिक विचार-विमर्श अथवा परिसंवाद आयोजित करके भी विद्यार्थियों की मौखिक अभिव्यक्ति का विकास कर सकते हैं। भाषा शिक्षक द्वारा विचार-विमर्श के विषय पहले से ही सुनिश्चित कर लिए जाते हैं। कक्षा को विभिन्न पक्षों के आधार पर अलग-अलग समूहों में विभक्त कर प्रत्येक समूह को विषय का कोई एक पक्ष देकर विचार-विमर्श करने के लिए उत्प्रेरित किया जाता है। लघु समूह के कारण शिक्षार्थी अपने अन्य साथियों की शंकाओं का उत्तर भी दे सकते हैं तथा अपनी जिज्ञासा के समाधान के लिए अपने साथियों से प्रश्न भी कर सकते हैं। आजकल आकाशवाणी एवं दूरदर्शन के 'युवावाणी' जैसे कार्यक्रमों में सामाजिक एवं राष्ट्रीय समस्याओं पर परिसंवाद/चर्चाएँ आयोजित की जाती हैं उन्हें सुनने के लिए शिक्षार्थियों को प्रोत्साहित करना चाहिए।

बाल सभा एवं छात्र संसद

मौखिक अभिव्यक्ति को विकसित किए जानें का यह एक सामाजिक एवं प्रभावी कार्यक्रम है। उस के माध्यम से शिक्षार्थियों को जनतांत्रिक प्रणाली से कार्य सम्पन्न करने की शिक्षा प्रदान की जा सकती है। बाल सभा एवं छात्र संसद में सक्रिय भाग लेने के लिए प्रभावपूर्ण मौखिक अभिव्यक्ति अपेक्षित होती है, विशेषतः सभा के आयोजन के लिए सभापति पद के लिए प्रस्ताव रखना, अनुमोद करना, सभापति एवं श्रोताओं को संबोधित करना, आदि। इससे बालक-बालिकाएँ केवल कुशल वक्ता या श्रोता ही नहीं बनते, वरन उनमें स्वस्थ संसदीय प्रवृत्ति का विकास भी होता है।

अभिनय

मौखिक अभिव्यक्ति कौशल विकास के लिए शिक्षार्थियों में भावानुकूल वाणी, उचित हाव-भाव, आंगिक

अभिनय एवं वाणी में प्रभावोत्पादकता उत्पन्न करने के लिए कक्षा एवं विद्यालय स्तर पर 'रंगमंचीय अभिनय' का आयोजन किया जा सकता है। कक्षा के कुछ बाल-बालिकाओं में तो अभिनय कौशल की विशेष प्रतिभा होती है। इसके द्वारा वे शुद्ध उच्चारण करने, भाव एवं विचारानुसार हाव-भाव प्रकट करने तथा दर्शकों को भाव-मुग्ध करने में सफल हो जाते हैं। भाषा शिक्षण के रूप में हम उपलब्ध कहानियों, एवं अभिनय पाठों पर 'लघु रंगमंचीय अभिनय' आयोजित कर सकते है तथा भावपूर्ण कथोपकथन द्वारा बालकों को भाषा पर स्वतः ही अधिकार प्राप्त कराने में सफल हो सकते हैं। कभी-कभी हम किसी सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक समस्या पर भावपूर्ण कथोपकथन लिख कर छात्रों द्वारा उनका अभिनयात्मक रूप में प्रस्तुतीकरण भी करा सकते हैं। इसके लिए रंगमंचीय साज-सज्जा की आवश्यकता भी नहीं पड़ेगी।

काव्य-पाठ

शिक्षार्थी कविता कंठस्थ करने और उसे सुनाने में गर्व एवं प्रसन्नता का अनुभव करते हैं। वे कंठस्थ की गई कविताओं को सुनाते समय हाव-भाव का प्रदर्शन भी करते हैं। उचित हाव-भाव के साथ कविताएँ सुनाने की यह प्रवृत्ति उनकी मौखिक-अभिव्यक्ति को विकसित करने का सबल माध्यम हो सकती है। अतः अच्छा होगा कि बाल गीत, वर्णनात्मक गीत, प्रयाण गीत, अभिनय गीत आदि का चयन कर शिक्षार्थियों को व्यक्तिगत एवं सामूहिक रूप से कविता-पाठ करने के अवसर प्रदान किए जाएँ।

इलेक्ट्रोनिक साधनों पर बोलने का अध्यास

शिक्षा के प्रभावी माध्यम के रूप में श्राव्य, दृश्य साधनों का चलन दिन पर दिन बढ़ता जा रहा है। आज दूरवर्ती शिक्षा ज्ञानार्जन हेतु प्रभावी विकल्प के रूप में उभर कर आई है। अतः माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तर पर अपने शिक्षार्थियों की मौखिक अभिव्यक्ति के सबल विकास के लिए उन्हें टेप रिकार्डर, वीडियो टेप तथा ध्वनि विस्तारक जैसे इलेक्ट्रोनिक यंत्रों पर प्रभावी ढंग से बोलने के लिए कक्षा स्तर पर शिक्षार्थियों को तैयार करें जिससे वे बिना हिचकिचाहट के संतुलित भाषा तथा छोटे-छोटे वाक्यों में अपने विचारों को प्रस्तुत कर सकें। इसके लिए समय-समय पर शिक्षार्थियों को ध्वनि विस्तारक यंत्रों के माध्यम से प्रार्थना सभा एवं बाल संसद में अपने विचार एवं भाव प्रकट करने के अवसर दिए जाएँ। उनके कविता पाठों के भाषणों, परिसंवादो को टेप कर उन्हें पुनः सुनने के लिए भी पर्याप्त अवसर प्रदान किए जाएँ। इससे उनकी मौखिक अभिव्यक्ति कौशल का मौलिक रूप से विकास किया जा सकता है।

बोध प्रश्न :

3. मौखिक अभिव्यक्ति से क्या अभिप्राय है ? चार पंक्तियों में उत्तर दें।

   ....
   ....
   ....
   ....
   ....
   ....

4. मौखिक अभिव्यक्ति के महत्त्व का प्रतिपादन पाँच पंक्तियों में कीजिए।

   ....
   ....
   ....
   ....
   ....
   ....

5. परिसंवाद और वाद-विवाद में क्या अंतर है ? तीन पंक्तियों में लिखए।

   ....

....

....

....

....

....

6. ध्वनि यंत्रों के द्वारा मौखिक अभिव्यक्ति कौशल का विकास कैसे संभव है, तीन पंक्तियों में स्पष्ट करें।

....

....

....

....

....

....

3.5.3 मौखिक अभिव्यक्ति कौशल की विशेषताएँ

शिक्षार्थियों में मौखिक अभिव्यक्ति कौशल के समुचित विकास के लिए हमें अभिव्यक्ति कौशल की उन विशेषताओं का ज्ञान होना चाहिए जो मौखिक अभिव्यक्ति को प्रभावी बनाती है। अभिव्यक्ति कौशल की कुछ प्रमुख विशेषताएँ हैं **:**

शुद्धता

उच्चारण की शुद्धता मौखिक अभिव्यक्ति का प्रमुख गुण है। शिक्षार्थियों के सामाजिक परिवेश की भिन्नता उनके उच्चारण पर प्रभाव डालती है, जिसके कारण उनका उच्चारण मानक उच्चारण से भिन्न हो जाता है। उदाहरणतः स्थानीय बोलियों के प्रभाव के कारण ही स्कूल को 'इस्कूल' स्टेशन को 'सटेशन', भाषा को 'भासा' के रूप में उच्चरित किया जाता है। अतः भाषा शिक्षक के रूप में हमें चाहिए कि हम शिक्षार्थियों के शुद्ध एवं मानक उच्चारण के प्रति प्रयत्नशील हो।

स्वाभाविकता एवं स्पष्टता

मौखिक अभिव्यक्ति कौशल का दूसका प्रमुख गुण है इसकी स्वाभाविकता एवं स्पष्टता, अर्थात् बालक की बोलचाल एवं अभिव्यक्ति में बनावटीपन न दिखाई दे और उसमें अस्पष्टता न हो। मौखिक अभिव्यक्ति की सार्थकता उसकी सहजता, स्वाभाविकता एवं स्पष्टता में है। यदि अभिव्यक्ति में ये गुण नहीं होंगे तो हम अपनी बात भली प्रकार संप्रेषित नहीं कर पाएँगे।

विचार क्रमबद्धता

अपने विचारों-भावों को भली प्रकार दूसरों तक पहुँचाने के लिए भावों एवं विचारों में क्रमबद्धता होनी चाहिए। विचारों की अव्यवस्थित अभिव्यक्ति के कारण प्रस्तुति का सूत्र भी बिखर जाता है और प्रभाव भी कम पड़ता है। अतः आवश्यक है कि हम मौखिक अभिव्यक्ति में विचारों की क्रमबद्ध प्रस्तुति के लिए बालकों को पर्याप्त रूप से प्रशिक्षित करें।

सशक्तता

अभिव्यक्ति कौशल का एक महत्त्वपूर्ण गुण है सशक्तता। सशक्त अभिव्यक्ति का श्रोताओं पर गहरा प्रभाव पड़ता है। सशक्तता के अभाव में कथन का अपेक्षित प्रभाव नहीं पड़ता और उसकी संप्रेषणता में भी कभी आ जाती है।

प्रवाह

किसी विचार या भाव को अटक-अटक कर या रुक-रुक कर प्रस्तुत करने से संदेश संवाद-विहीन हो जाता है और श्रोता वक्ता की बात को समझ नहीं पाते हैं, अतः अभिव्यक्ति में भाषा तथा भावों का प्रवाह अपेक्षित है। प्रवाह से सारा कथ्य एक इकाई के रूप में संघटित हो जाता है जिससे श्रोता उसे सरलता से ग्रहण कर लेता है।

अवसरानुकूलता

वाणी का प्रयोग विभिन्न अवसरों के अनुकूल ही करना चाहिए। अवसरानुकूल प्रकरण का चुनाव किया जाए। औपचारिक-अनौपचारिक, हर्ष-शोक, आदेश-अनुरोध आदि अवसरों पर अभिव्यक्ति का रूप अलग-अलग होता है। अवसरानुकूल भाषा सामाजिक व्यवहार की एक अत्यावश्यक अपेक्षा है। शिक्षार्थियों को श्रोताओं की आयु, सामाजिक स्तर, स्थिति के स्वरूप आदि को ध्यान में रखकर ही मौखिक अभिव्यक्ति के प्रति सचेत करना चाहिए।

प्रभावोत्पादकता

मौखिक अभिव्यक्ति का प्रमुख उद्देश्य है, वक्ता द्वारा श्रोता या श्रोताओं तक अपने संदेश या सूचनाओं को प्रभावी ढंग से पहुँचाना या संप्रेषित करना। इस प्रभाव को उत्पन्न करने के लिए शुद्धता, अवसरानुकूलता, गतिशीलता, क्रमिकता आदि सभी का योगदान होता है। अतः प्रभावोत्पादकता एक ऐसा गुण है जिसमें मौखिक अभिव्यक्ति से संबंधित सभी गुण विद्यमान रहते हैं।

3.5.4 मौखिक अभिव्यक्ति संबंधी त्रुटियाँ एवं उनका निराकरण

भाषा शिक्षक के नाते, शिक्षार्थियों में मौखिक अभिव्यक्ति के सम्यक् विकास के लिए यह आवश्यक है कि हमें शिक्षार्थियों की मौखिक अभिव्यक्ति संबधी त्रुटियों और उनके कारणों की जानकारी हो ताकि उनके निवारण के लिए हम उपचारात्मक कार्यक्रम आयोजित कर सकें। ऊपर वर्णित अभिव्यक्ति की विशेषताओं का अभाव ही वस्तुतः त्रुटि हैं।

मौखिक अभिव्यक्ति संबंधी वार्तालाप, भाषण एवं विचार-विमर्श में स्पष्टता, सरलता एवं प्रभावोत्पादकता जैसे गुणों का अभाव ही मौखिक अभिव्यक्ति को दोषपूर्ण बनाता है। इस आधार पर मौखिक अभिव्यक्ति में प्रायः निम्नलिखित दोष पाए जाकते हैं :

अधिक या न्यून गति

किसी वाक्य या वाक्य खण्ड को अधिक गति अर्थात् शीघ्रता से या न्यून गति अर्थात् धीरे-धीरे बोलना।

प्रवाह एवं ओजस्विता की कमी

कभी कभी वीर-रस युक्त काव्य-पाठ संबंधी मौखिक अभिव्यक्ति प्रवाह एवं ओजस्विता विहीन बन जाया करती है। वक्ता के स्वर में अपेक्षित ओज और वाणी में प्रवाह न होने के कारण मौखिक अभिव्यक्ति भाव एवं रसहीन हो जाती है। उदाहरणतः — वीर रस की कविता का आजस्विता विहीन, निर्जीव पाठ।

आरोह-आवरोह की अनिश्चितता

मौखिक अभिव्यक्ति में भावानुसार स्वर में उचित आरोह-अवरोह का प्रयोग न करना अथवा वाणी के उतार-चढ़ाव में निश्चितता का न होना मौखिक अभिव्यक्ति का बहुत ही गंभीर दोष है। कभी-कभी कविता वाचक अनावश्यक रूप में आरोह-अवरोह का उपयोग करता है, या नहीं करता है अथवा कहीं कहीं करता है। इससे भावभिव्यक्ति में बाधा उत्पन्न होती है।

मनोवैज्ञानिक दोष

शिक्षार्थियों में अनावश्यक संकोच, भ्रम, भय, झिझक, क्रोध, एवं हीनता आदि के भाव उत्पन्न होने के कारण मौखिक अभिव्यक्ति में स्वाभाविक रूप से दोष आ जाते हैं। परिणामतः मौखिक अभिव्यक्ति में हकलाना, ततलाना, हड़बड़ाना आदि दोष दिखाई देने लगते हैं।

मौखिक अभिव्यक्ति संबंधी त्रुटियों के निवारण हेतु उपचारात्मक उपाय

मौखिक अभिव्यक्ति संबंधी त्रुटियों के अध्ययन के पश्चात् उनके निवारण के लिए यहाँ कुछ उपचारात्मक उपायों पर विस्तार से चर्चा की जा रही है :

उच्चारण अवयवों की जाँच

यदि माता-पिता एवं शिक्षक को कहीं ऐसा अनुभव हो कि बालक की मौखिक अभिव्यक्ति में उच्चारण दोष का कारण उच्चारण अवयवों का दोषपूर्ण होना है तो उसके उच्चारण अवयवों की सघन जाँच कराएँ। चिकित्सक के परामर्श के अनुसार विद्यालय अथवा माता-पिता शिक्षार्थी की अपेक्षित चिकित्सा कराएँ।

शैक्षिक निर्देशन एवं सहायता कार्यक्रम

यदि अन्तर्मुखी शिक्षार्थी संवेगी एवं स्नायविक दोषों से ग्रसित होने के कारण भ्रम, भय, संकोच, अधैर्य, आतंक एवं झिझक आदि का अनुभव कर रहा है तो प्रशिक्षित स्नायविक चिकित्सक अथवा मनौवैज्ञानिक से सहायता लेकर कक्षा एवं विद्यालय में ऐसे प्रेरक वातावरण का सृजन किया जाए जिससे शिक्षार्थियों में आत्मविश्वास का विकास हो, हीन-भावना न आने पाए, तथा उनकी झिझक, संकोच, क्रोध आदि स्वतः समाप्त हो जाएँ और वे अभिव्यक्ति के सामूहिक-कार्यक्रमों में सक्रिय रूप से भाग ले सकें।

सुनियोजित शैक्षिक क्रियाकलापों का विद्यालय स्तरीय आयोजन

बालक-बालिकाओं की मौखिक अभिव्यक्ति संबंधी त्रुटियों के निवारण के लिए शिक्षक अपने साथी अध्यापकों की सहायता से संकोची, भयातुर, बच्चों को कक्षा, सभा, विद्यालय उत्सवों, प्रार्थना स्थल एवं सामूहिक सभाओं में उनकी क्षमतानुसार निर्धारित विषयों पर अपने विचार प्रकट करने के लिए प्रोत्साहित करे तथा उन्हें निरंतर प्रेरणा प्रदान कर यथावसर उनकी प्रशंसा भी करें।

अभिनव प्रयोगों से युक्त उपचारात्मक शिक्षण कार्यक्रम

अभिनव प्रयोग में विश्वास रखने वाले निष्ठावान भाषा शिक्षक माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्तर पर छात्र वर्ग के लघु समूह बनाकर मौखिक अभिव्यक्ति के विकास एवं त्रुटियों के निराकरण के लिए विशेष उपचारात्क शिक्षण का आयोजन भी कर सकते हैं तथा इस दृष्टि से किसी अभिनव प्रयोग की तैयारी कर उसकी उपयोगिता का अध्ययन कर सकते हैं। इस प्रकार के कार्यक्रम के लिए निम्न सोपानों से होकर गुजरना होगा :

- स्तरवार मौखिक अभिव्यक्ति संबंधी सामान्य त्रुटियों तथा शब्द-समूह का आकलन तथा संबंधित विद्यार्थी वर्ग का चयन।
- उच्चारण अशुद्धियों एवं सामान्य त्रुटियों के संभवित कारणों की जानकारी करना।
- अशुद्धियों के संशोधन एवं त्रुटि निवारण के लिए उचित अभ्यास श्रृंखला का निर्माण तथा कक्षा स्तर पर उनका कार्यान्वयन।
- कार्यक्रम के कार्यान्वयन के दौरान अंत में किए गए अभिनव प्रयोग का मूल्यांकन।
- परिणाम-निरूपण एवं अनुवर्ती कार्य।

शैक्षिक प्रौद्योगिकी एवं उपचारात्मक शिक्षण

जहाँ उच्च स्तरीय शिक्षण सुविद्याएँ एवं दृश्य-सामग्री उपलब्ध हो वहाँ भाषा शिक्षक ऐसे 'सुनियोजित शिक्षण कार्यक्रम' आयोजित कर सकता है जिन में दृश्य-श्राव्य टेप, श्राव्य टेप, उपलब्ध मानक ग्रामोफोन रिकार्ड, फ्लोचार्ट आदि उपकरणों के माध्यम से मौखिक अभिव्यक्ति संबंधी त्रुटियों को सुधारा जा सकता है।

बोध प्रश्न :

उत्तर चार पंक्तियों में दें।

7. क्षेत्रीय बोली के प्रभाव से मौखिक अभिव्यक्ति किस प्रकार त्रुटिपूर्ण बन जाती है ? उदाहरण देकर स्पष्ट करें।

   ....
   ....
   ....
   ....
   ....
   ....

8. मौखिक अभिव्यक्ति के विकास में निष्ठावान भाषा अध्यापक के प्रयोगों व परीक्षणों के प्रभाव का विवेचन करें।

   ....

....

....

....

....

....

3.6 सारांश

प्रस्तुत इकाई में 'श्रवण एवं मौखिक अभिव्यक्ति कौशल' के बारे में सम्पूर्ण सामग्री को पढ़ने के बाद आप समझ गए होगें कि :

- 'श्रवण एवं मौखिक अभिव्यक्ति कौशल' एक दूसरे पर आधारित है। जब तक बालक एक कुशल श्रोता नहीं होगा तब तक वह मौखिक रूप में कुशल अभिव्यक्ति भी नहीं कर सकेगा।
- श्रवण कौशल से आशय है बालक में भाषा को सुनने, समझने एवं अर्थग्रहण करने की क्षमता का विकास। विषयवस्तु यदि रोचक है, कक्षा-स्तरानुकूलन है तो बालक उसे सुनेगा तथा समझकर ग्रहण करेगा। उसमें विषयवस्तु को समालोचनात्मक ढंग से सुनने तथा समझने की क्षमता का विकास करना आवश्यक है।
- मौखिक अभिव्यक्ति कौशल का महत्त्व जीवन में सब से अधिक है। छोटी कक्षाओं में विषयपरक सामान्य बातचीत के द्वारा मौखिक अभिव्यक्ति के विकास का प्रयास किया जाना चाहिए। इस कौशल के विकास हेतु औपचारिक बातचीत के साथ-साथ कहानी, कथन, घटना, चित्र वर्णन, भाषण, आशु भाषण, अभिनय तथा काव्य-पाठ जैसे क्रियाकलापों का आयोजन करना भी आवश्यक है।
- अभिव्यक्ति कौशल विकास के हेतु तैयार की गई विषयवस्तु में शुद्धता, स्वाभाविकता, स्पष्टता, विचार क्रमबद्धता, सशक्तता एवं सहजता जैसे गुणों का होना आवश्यक है।
- कक्षा में संकोची, झेंपू, भयातुर बच्चों के विकास के लिए अलग से अभिनव प्रयोगों से युक्त उपचारात्मक कार्यक्रम भी आवश्यक हैं। उनकी उच्चारण अशुद्धियों को भी दूर करने का एक सघन कार्यक्रम बनाया जाना चाहिए।

3.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. – श्रवण विषयवस्तु रोचक हो।

   – इस के रूप एवं आकार की मात्रा निश्चित हो।

   – कक्षा में बालक सक्रिय श्रोता रहे निष्क्रिय श्रोता नहीं।

2. – वाद-विवाद, कहानी, नाटक, सुवाचन प्रतियोगिता आयोजन

   – सामूहिक बाल सभा आयोजन

   – समाचार वाचन श्रवण अवसर

   – दूरभाष सुनने के अवसर

3. मौखिक अभिव्यक्ति का अर्थ है – हृदयगत विचारों को दूसरों के समक्ष प्रस्तुत करने हेतु ध्वनि संकेत युक्त ऐसी भाषा का प्रयोग जिसे दूसरे समझ सकें।

4. – मौखिक अभिव्यक्ति से बालक को आत्म-प्रकाशन का अवसर मिलता है।

   – भाषा शास्त्री रायबर्न के अनुसार भाषा शिक्षक का कार्य बालक के विश्रृंखलित विचारों को श्रृंखलाबद्ध करना है।

   – वैदिक कालीन शिक्षा पद्धति में मौखिक अभिव्यक्ति का महत्त्व।

   – वर्तमान के प्रजातांत्रिक परिवेश में बालक की मौखिक अभिव्यक्ति के विकास का महत्त्व।

5. 'वाद-विवाद' में बालक को किसी एक विषय पर उसके 'पक्ष' या 'विपक्ष' में अपने विचार प्रकट करने होते हैं, जबकि 'परिसंवाद' में चार या पाँच छात्र कक्षा में बैठ कर किसी एक विषय के विभिन्न पक्षों पर अपने विचार प्रकट करते हैं, प्रश्न भी करते हैं तथा उत्तर भी देते हैं।

6. ध्वनि यंत्रों यथा लाउड स्पीकर, टेप रिकार्डर पर बोलने से बालकों में वाणी में प्रवाह गति तथा बोलने की शैली का विकास होगी। उनमें सही, स्पष्ट प्रभावोत्पादक एवं क्रमिक रूप से विचार प्रस्तुत करने का आत्मविश्वास विकसित होगा। उच्चारण अशुद्धियों का भी पता लगेगा।

7. क्षेत्रीय बोली का प्रभाव मौखिक अभिव्यक्ति को त्रुटिपूर्ण बना देता है, यथा ब्रजभाषा में 'सुरेश' को 'सुरेस', 'विशेष' को 'विसेस', 'सतीश' को 'शतीश' या 'सतीस' कहते सुना जा सकता हैं। 'कोई विसेस अंतर नाय पड़े है' क्षेत्रीय भाषा के प्रभाव का ही उदाहरण है।

8. बालक की मौखिक अभिव्यक्ति को प्रभावी बनाये जाने हेतु उच्चारण की शिक्षा का सुनियोजित प्रभाव पड़ेगा। बालक को कक्षा में अशुद्ध उच्चरित शब्दों के उच्चारण कराये जा सकते हैं। मानक टेप एवं रिकार्डों को सुनवाकर अभ्यास कराया जा सकता है। अशुद्ध शब्दों की सूची कक्षा में टंगवाई जा सकती है।

3.8 उपयोगी पुस्तकें

कौशिक, जयनारायण : हिन्दी शिक्षण, हरियाणा साहित्य अकादमी

तिवारी, पुरुषोत्तम : हिन्दी शिक्षण, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर

पाण्डेय रामशकल : हिन्दी शिक्षण, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा

भाई योगेन्द्रजीत : हिन्दी भाषा शिक्षण, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा

लाल, रमनबिहारी : हिन्दी शिक्षण, रस्तोगी पब्लिकेशन, मेरठ

सफाया, रघुनाथ : हिन्दी शिक्षण विधि, पंजाब किताबघर, जालंघर

सिंह, निरंजन कुमार : माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, तिलक नगर, जयपुर

इकाई 4

पठन योग्यता

: रूपरेखा :

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 पठन का महत्त्व
4.4 पठन-प्रक्रिया
4.4.1 प्रत्यभिज्ञान
4.4.2 अर्थग्रहण
4.4.3 मूल्यांकन तथा प्रतिक्रिया
4.4.4 अनुप्रयोग
4.5 पठन के प्रकार तथा प्रयोजन
4.5.1 सस्वर पठन
4.5.2 मौन पठन
4.5.3 गहन पठन
4.5.4 व्यापक पठन
4.6 पठन अभिरुचि का विकास
4.7 पठन अभ्यास
4.8 पठन संबंधी त्रुटियों का निराकरण
4.8.1 अशुद्ध उच्चारण
4.8.2 उपयुक्त बलाघात का अभाव
4.8.3 विराम चिह्न अनुसार न पढ़ना
4.8.4 पठन में आरोह-अवरोह का अभाव
4.8.5 भाव तथा विचार-ग्रहण में कठिनाई
4.9 सारांश
4.10 बोध प्रश्नों के उत्तर
4.11 उपयोगी पुस्तकें

4.1 प्रस्तावना

भाषिक योग्यताओं के विकास से संबंधित खंड की यह चौथी इकाई है। तीसरी इकाई में आपने श्रवण तथा मौखिक अभिव्यक्ति की दक्षता के विकास के अंतर्गत सुनकर अर्थग्रहण तथा बोलकर अभिव्यक्ति की दक्षता का महत्त्व एवं उनके विकास की प्रक्रिया का परिचय प्राप्त किया। प्रस्तुत इकाई में आप पठन-दक्षता के महत्त्व, प्रकार तथा विकास की प्रक्रिया के बारे में जानेंगे।

बच्चों में श्रवण तथा मौखिक अभिव्यक्ति का विकास जन्म के बाद से ही शुरु हो जाता है यह विकास स्वाभाविक तथा अनौपचारिक रूप से होता है। किन्तु पठन तथा लेखन कौशलों को विकसित करने के लिए शिक्षक को पाठ्यपुस्तक, कक्षा-शिक्षण, परीक्षण आदि औपचारिक माध्यमों का सहारा लेना पड़ता है।

शिक्षार्थी में पठन-कौशल का विकास करना भाषा-शिक्षण का एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है। शिक्षा के प्रारम्भिक स्तर पर तो इसका महत्त्व और भी बढ़ जाता है क्योंकि शिक्षार्थी में पठन-कौशल के विकास की नींव यही पर पड़ती है। अतः शिक्षक के लिए आवश्यक है कि वह पठन के महत्त्व, स्वरूप तथा उपयोग को भली-भाँति समझ कर तदनरूप शिक्षण-प्रक्रिया अपनाए। इस इकाई में पठन को इन्हीं पक्षों पर चर्चा की जा रही है।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई पढ़ने के बाद आप :

- पठन का महत्त्व बता सकेंगे।
- पठन-प्रक्रिया के सोपानों का विवेचन कर सकेंगे।
- सस्वर पठन तथा मौन पठन के स्वरूप और उद्देश्य को समझते हुए उनमें अन्तर कर सकेंगे।
- गहन पठन तथा व्यापक पठन में अन्तर बता सकेंगे।
- शिक्षार्थी में पठन अभिरुचि के विकास के उपायों का निरुपण कर सकेंगे।
- पठन अभ्यास संबंधी क्रियाओं का उल्लेख कर सकेंगे।
- पठन संबंधी त्रुटियों के कारण जान सकेंगे तथा उनके निराकरण के उपायों का उल्लेख कर सकेंगे ।

4.3 पठन का महत्त्व

पठन भाषा का एक महत्त्वपूर्ण कौशल है। जीवन तथा जगत के विभिन्न पक्षों का विवरण एवं विवेचन लिखित रूप में संचित रहता है। पठन में दक्ष व्यक्ति ही इस लिखित भंडार का उपयोग कर सकता है। विचारों के ग्रहण, विश्लेषण तथा विवेचन में पठन का विशेष योगदान है। आधुनिक काल में ज्ञान का भंडार बहुत तेजी से बढ़ रहा है। विश्व में प्रतिदिन हजारों पुस्तकें तथा पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही है। हम पठन-योग्यता के द्वारा ही इनसे समुचित लाभ उठा सकते हैं।

अगर हम गहराई से देखें तो पाएँगे कि अपने अधिकार और कर्तव्य के सम्यक बोध के लिए और देश में जनतंत्र को जीवित रखने के लिए प्रत्येक नागरिक में पठन-दक्षता का होना आवश्यक है। आज मुद्रण के इस युग में हम समाचार पत्र तथा पत्रिकाओं को पढ़कर अपने समाज तथा देश की समस्याओं से परिचित होते हैं। इन समस्याओं के समाधान के तरीकों को समझते हैं। इनके बारे में विचार करते हुए तर्कसंगत निर्णय लेते हैं। अतः पठन-दक्षता जनतंत्र की सफलता का एक महत्त्वपूर्ण उपकरण है।

शिक्षार्थी की दृष्टि से भी पठन योग्यता का विकास बहुत महत्त्वपूर्ण है। पठन में पिछड़े हुए बच्चे शैक्षिक प्रगति में भी प्रायः पिछड़े रह जाते हैं। एक ही कक्षा में बार-बार अनुत्तीर्ण होने वाला शिक्षार्थी कुंठाग्रस्त हो जाता है। इस कुंठा और निराशा से बालक में समाज विरोधी भावनाएँ घर कर जाती है। पठन-दक्षता के विकास का शिक्षार्थी के व्यक्तित्व एवं सामाजिक समायोजन से गहरा संबंध है।

सभी विषयों के शिक्षण का माध्यम भाषा होने के कारण पठन कुशल शिक्षार्थी की शैक्षिक उपलब्धि उच्चकोटि की होती है। लेखक के एक शोध से पता चला है कि शिक्षार्थी पठन में जितना अधिक दक्ष होता है, उसकी अन्य विद्यालयीय विषयों में उपलब्धि भी उसी कोटि की होती है।

भारतीय परम्परा में तो पठन को शिक्षा का पर्याय ही मान लिया गया है। लोग प्रायः कहते है कि 'अमुक

व्यक्ति कितना पढ़ा है' या 'तुमने कहाँ तक पढ़ाई की है' आदि। यहाँ पढ़ना था पठन, शिक्षा का समानार्थी ही तो है अतः शिक्षक के नाते हमें चाहिए कि हम शिक्षार्थी की पठन-दक्षता का समुचित विकास करें।

बोध प्रश्न :

1. जीवन में पठन का क्या महत्त्व है ? उत्तर तीन पंक्तियों में लिखें।

....

....

....

....

....

....

4.4 पठन-प्रक्रिया

बहुधा यह मान लिया जाता हैं कि लिखी या छपी हुई शब्दावली को उच्चरित करने की क्षमता ही पठन है। यह धारणा सही नहीं है। इसे हम 'वाचन' कह सकते हैं, 'पठन' नहीं। वाचन शब्द 'वाक्' धातु से बना है जिसका अर्थ है शब्द, वाणी या कथन। वाचन में शब्दों के उच्चारण की प्रधानता होती है, जबकि पठन में अर्थग्रहण पर बल होता है।

पठन एक सोद्देश्य, सार्थक तथा चिंतन प्रधान क्रिया है। पाठक लिखी या छपी हुई शब्दावली का उच्चारण करने के साथ-साथ अर्थग्रहण करता है तथा उसका मूल्यांकन भी करता है।

पठन-प्रक्रिया के अन्तर्गत पाठक की दृष्टि जैसे-जैसे शब्दों और वाक्यों पर घूमती है, वह उनका अभिधेयार्थ (प्रत्यभिज्ञान) समझता हुआ उनमें निहित अर्थ (लक्ष्यार्थ एवं व्यंग्यार्थ) को ग्रहण करता जाता है। वह लेखक के विचार, भाव तथा मंतव्य को समझ कर उनका मूल्यांकन भी करता है। ऐसा करते समय उसके मन में जो प्रतिक्रिया होती है, वह उसके पूर्व अनुभवों के कारण होती है।

स्ट्रँग के मतानुार — "पढ़ते समय व्यक्ति की अनुभूतियाँ जागृत होती हैं और उसमें भावोद्रेक होता है। वह पाठ्यवस्तु को पसंद करता है या नापसंद; उससे सहमत होता है या असमत; उसके प्रति संतोष व्यक्त करता है या असंतोष। पाठक केवल विचार ही नहीं ग्रहण करता वरन् वह विचारों की सृष्टि भी करता है।" इस प्रकार पठन द्वारा अर्जित ज्ञान और अनुभव पाठक के जीवन का अंग बन जाता है। वह उनका अपने दैनिक कार्यकलापों में उपयोग करने लगता है। इस प्रकार पठन प्रक्रिया के चार सोपान हो जाते हैं — प्रत्यभिज्ञान, अर्थग्रहण, मूल्यांकन तथा अनुप्रयोग। आइए, पठन-प्रक्रिया के इन सोपानों पर विस्तारपूर्वक चर्चा करें।

4.4.1 प्रत्यभिज्ञान

पठन-प्रक्रिया के इस चरण को पठन यका यांत्रिक पक्ष भी कह सकते हैं।

प्रत्यभिज्ञान का आशय है — शब्द के दृश्य (रचना) तथा श्राव्य (उच्चारण) रूपों को समझकर उसके स्पष्ट मानसिक बिंब की रचना। शब्द के रूप, ध्वनि और अर्थ तीनों के संयोग से हमारे मस्तिष्क में शब्द का बिंब बनता है। इस बिंब या संप्रत्यय की सृष्टि हमारे पूर्व अनुभवों पर आधारित होती है। पठन में दक्षता प्राप्त पाठक शब्द के प्रत्येक अक्षर को अलग-अलग न देखकर उसे संपूर्ण रूप में देखता है। इतना ही नहीं, कभी-कभी तो वह एक साथ अनेक शब्दों को देखते हुए उनका अर्थ भी समझता जाता है। तीव्र गति से पढ़ने के लिए यह कौशल अत्यन्त आवश्यक है।

4.4.2 अर्थग्रहण

अर्थग्रहण के द्वारा हम पठित सामग्री में निहित अर्थ को भली-भांति समझते है। अर्थग्रहण की दक्षता पाठक से चिन्तन और मनन की अपेक्षा रखती है। इसके लिए आवश्यक है कि अर्थ को समझने के साथ ही उसकी व्याख्या तथा विश्लेषण भी किया जाए। इस दृष्टि से पठन के अनेक पक्ष हो जाते हैं : पढ़ते समय विचारों और घटनाओं के क्रम को समझना, विशिष्ट तथ्यों का चुनाव करना, विस्तृत विवरण

(किसने कहा ? कब कहा ? क्यों कहा ?) आदि की जानकारी प्राप्त करना तथा लेखक के मन्तव्य को समझना। इनके अतिरिक्त अर्थग्रहण योग्यता के अंतर्गत नीचे लिखे कौशल भी सम्मिलित होते हैं :

- शब्दों तथा वाक्यों का प्रसंगानुकूल अर्थ समझना।
- पाठ्य सामग्री में आए विशिष्ट विवरण का चयन करना।
- मुख्य बिन्दुओं तथा महत्त्वपूर्ण विचारों का चुनाव कर उन्हें एक निश्चित क्रम में व्यवस्थित करना।
- मुख्य बिन्दु पर विचार कर सकना।
- सामान्यीकरण कर सकना।
- पठित सामग्री को संक्षिप्त अथवा विस्तारपूर्वक व्यक्त कर सकना।
- सामग्री में निहित निर्देशों का अनुसरण करना।
- पढ़कर निष्कर्ष निकालना।
- संभावित घटनाओं के संबंध में अनुमान लगाना।
- विचारों का विश्लेषण तथा संश्लेषण करना।
- पठित वस्तु का आलोचनात्मक मूल्यांकन करना।

इस प्रकार अर्थग्रहण की दृष्टि से पठन के तीन स्तर हो जाते है; अभिघात्मक, आलोचनात्मक और सृजनात्मक। अभिधात्मक पठन के अंतर्गत पाठ्यवस्तु के अर्थ का तथ्यात्मक निरूपण होता है। आलोचनात्मक पठन लक्ष्यार्थ तथा व्यंग्यार्थ को समझने में सहायक होता है। सृजनात्मक पठन में पाठक स्वानुभव के आधार पर लेखक के विचारों का मूल्यांकन करता हुआ नई कल्पना, नये दृष्टिकोण और निष्कर्ष की स्थापना करता है।

4.4.3 मूल्यांकन तथा प्रतिक्रिया

अर्थग्रहण के साथ ही पाठक गृहीत विचारों की उपयोगिता, औचित्य और विश्वसनीयता का निर्धारण भी करता चलता है। अच्छा पाठक वही है जो लेखक के द्वारा प्रस्तुत घटना, विचार, चरित्र या मन्तव्य को समझते हुए उसका मूल्यांकन करता चले। साथ ही उसके प्रति अपनी वैचारिक और भावात्मक प्रतिक्रिया भी करता रहे। उदाहरण के लिए किसी ऐसे लेख को पढ़ते समय जिसमें बच्चों को कदापि दंडित न करने की बात कही गई हो हम अपने अनुभव के आधार पर समझते है कि अक्षम्य अपराध करने पर बच्चे को दंडित करना आवश्यक है और इसलिए हम लेखक के मत से पूर्णतया सहमत न होकर यह कह सकते है कि छोटी-मोटी गलती कर देने पर बच्चों को दंडित नहीं करना चाहिए। उच्चकोटि का अर्थग्रहण वही है जिसमें पाठक की मूल्यांकन दृष्टि तथा प्रतिक्रिया का संयोग होता है।

कविता पढ़कर रसानुभूति, नाटक पढ़कर साधारणीकरण और निबंध पढ़कर विचारोत्तेजना के मूल में हमारी भावात्मक अथवा मानसिक प्रतिक्रिया ही होती है। इसके अभाव में आलोचनात्मक तथा सृजनात्मक पठन संभव नहीं हैं।

4.4.4 अनुप्रयोग

अनुप्रयोग पठन-प्रक्रिया का अन्तिम सोपान है। पठन का उद्देश्य तभी पूरा होता है जब किसी पुस्तक अथवा रचना को पढ़कर हमारे विचार, व्यवहार, कौशल, अभिरुचि तथा जीवन मूल्यों में विकास तथा परिष्कार दिखाई दें। पठन की सार्थकता इसी बात में है कि पाठ्य सामग्री में निहित जिस भाव, आदर्श अथवा मूल्य से हम सहमत हों उसे आत्मसात कर अपने जीवन में उतार लें।

वस्तुत: पठन अपने में तभी संपूर्ण माना जाएगा जब उसके द्वारा पाठक को विचारों तथा कार्यों में किसी प्रकार का परिवर्तन आए। जो व्यक्ति भूषण की कविता पढ़कर वीर भाव से ओतप्रोत न हो जाए, आचार्य शुक्ल का निबंध पढ़कर उसमें वर्णित गुणों को अपने में न उतार पाए उसने सच्चे अर्थों में न तो भूषण की कविता पढ़ी है और न शुक्ल जी का निबंध। किसी कवि की पंक्ति 'बिना पढ़े नर पशु कहलावे' जितनी सरल और स्वाभाविक है उतनी ही सार्थक और सारगर्भित भी है।

स्पष्ट है कि पठन द्वारा अपने विचार भावना और कार्य में परिवर्तन या विकास लाना ही उसका अनुप्रयोग है।

बोध प्रश्न :

2. 'वाचन' और 'पठन' में अंतर स्पष्ट कीजिए। उत्तर चार पंक्तियों में लिखें।

....

....

....

....

....

....

3. पठन-प्रक्रिया के सोपानों का उल्लेख कीजिए।

(क) ....

(ख) ....

(ग) ....

(घ) ....

4. सृजनात्मक पठन से क्या आशय है ? चार पंक्तियों में स्पष्ट करें।

....

....

....

....

....

....

4.5 पठन के प्रकार तथा प्रयोजन

पठन कि क्रिया दो प्रकार से सम्पन्न होती हैं — 1. सस्वर या मुखर रूप में, 2. स्वरहीन या मौन रूप में।

पठन-प्रक्रिया में शिक्षार्थी पहले सस्वर पठन ही करता है। स्वर सहित पढ़ने का अभ्यास हो जाने के बाद ही वह धीरे-धीरे मौन पठन की ओर अग्रसर होता है। प्राथमिक स्तर के अन्त तक शिक्षार्थी पठन के दोनों प्रकारों — सस्वर तथा मौन पठन से परिचित हो जाता है। माध्यमिक स्तर पर इन का अधिकाधिक अभ्यास और विकास अपेक्षित होता है। अतः उचित होगा कि हम सस्वर पठन और मौन पठन के स्वरूप, प्रयोजन एवं प्रक्रिया को भली-भांति समझ लें।

4.5.1 सस्वर पठन

सस्वर पठन का उद्देश्य है — शुद्ध तथा स्पष्ट उच्चारण, उचित गति, विराम चिह्नों को ध्यान में रखकर प्रवाह एवं प्रभाव के साथ पढ़ने की दक्षता का विकास करना। शिक्षार्थी पढ़ते समय प्रातः मिलती-जुलती ध्वनियों के उच्चारण में अशुद्धि कर जाते हैं, जैसे ए - ऐ, ओ - औ, घ - ध, ह - ढ, ड़ - ढ़, स - ष - श आदि। इसी प्रकार संयुक्ताक्षरों के उच्चारण में भी त्रुटि हो जाती है, जैसे गृह, ग्रह, उद्धार, उद्योग, परिस्थिति, प्रतीक्षा, परिशिष्ट, अन्तर्राष्ट्रीय आदि। इन त्रुटियों का यथासमय सुधार आवश्यक है।

उच्चारण में शुद्धता के साथ-साथ स्पष्टता होना भी आवश्यक है। कुछ शिक्षार्थी पढ़ते समय किसी शब्द को बहुत जल्दी या बहुत धीमी गति से उच्चारित करते हैं। इस कारण वह जो पढ़ रहा है उसे समझने में कठिनाई होती है। अतः उच्चारण में स्पष्टता के साथ ही पाठक को पठन गति पर भी नियंत्रण रखना होता है। सरल और मनोरंजन विषयवस्तु को हम जल्दी-जल्दी भी पढ़े तो श्रोता समझ लेगा। किन्तु भाषा या विचार की दृष्टि से कठिन पाठ्य सामग्री को धीमी गति से पढ़ना आवश्यक हो जाता है।

सस्वर पठन में उच्चारण की शुद्धता व स्पष्टता और उचित गति के साथ-साथ पाठ्य सामग्री की ग्राह्यता के लिए यह भी आवश्यक है कि विराम चिह्नो की अपेक्षाओं को ध्यान में रखकर पढ़ा जाए अन्यथा

अर्थग्रहण में बाधा पड़ सकती है। 'रोको, मत जाने दो' और 'रोको मत, जाने दो' इन वाक्यों में यथास्थान अल्पविराम के अनुसार न पढ़ने से अर्थ का अनर्थ हो जाएगा। इसी प्रकार प्रश्नसूचक और विस्मयादिबोधक विह्न लगे वाक्यों को उचित अनुतान तथा बलाघात के साथ पढ़ा जाना चाहिए तभी भावग्रहण संभव हो सकेगा।

सस्वर पठन में प्रवाह और प्रभाव लाने के लिए आवश्यक है कि हम पाठ्यवस्तु में निहित भाव अथवा विचार की स्वत: अनुभूति करते रहें। विषयवस्तु के साथ पाठक का जितना अधिक तादात्मय होगा, उसके पठन में उतनी ही स्वाभाविकता और प्रभाव उत्पन्न होगा। कविता पढ़ते समय तो भावानुभूति के अभाव में प्रभाव की सृष्टि संभव ही नहीं।

सस्वर पठन में वाचन-मुद्रा तथा वाचन-शैली का विशेष महत्त्व है। पढ़ते समय आँख से पुस्तक की दूरी लगभग एक फुट होनी चाहिए। सस्वर पाठ करते समय बीच-बीच में पाठक का श्रोताओं की ओर दृष्टिपात करना भी आवश्यक है। जहाँ तक संभव हो पुस्तक या पठन सामग्री को बाएँ हाथ में रखें जिससे दाएँ हाथ का आवश्यकतानुसार संचालन किया जा सके। जिस प्रकार मौखिक अभिव्यक्ति के साथ वक्ता अपने भाव एवं विचारों का स्पष्टीकरण करने अथवा उस पर बल देने के लिए स्वाभाविक भाव भंगिमा एवं आंगिक क्रियाओं का प्रयोग करता है, उसी प्रकार सस्वर पाठ करते समय भी पाठक के लिए उचित भाव भंगिमा का प्रयोग आवश्यक है। कविता पाठ में अथवा एकांकी में पात्रानुसार संवाद पढ़ते समय तो भावानुरूप मुखमुद्रा तथा अंग संचालन का महत्त्व और भी बढ़ जाता है।

4.5.2 मौन पठन

मौन पठन के मुख्य रूप से दो प्रयोजन हैं — पाठ्य सामग्री में निहित विचारों को आत्मसात करना तथा पठन-गति में तीव्रता लाना। मौन पठन के द्वारा हम गहराई से अर्थग्रहण करते हुए चिन्तन-मनन एवं तर्क शक्ति का विकास करते हैं। उस समय हमारा सारा ध्यान पाठ्यवस्तु में निहित विचार पर ही होता है। अत: हम एकाग्रचित्त होकर उसका विश्लेषण करते हैं, मूल्यांकन करते हैं और उसके प्रति अपनी मानसिक प्रतिक्रिया भी करते है। चिन्तन और प्रतिक्रिया से हमारे दृष्टिकोण में स्पष्टता आती है, हमारे अनुभव-जगत तथा विचार-क्षेत्र का विस्तार होता है। अवकाश के क्षणों में मनोरंजक सामग्री को पढ़कर आनन्द लेने में मौन पठन बहुत सहायक होता है। उपन्यास और नाटक जैसी वृहदाकार रचनाओं को पढ़ते समय शायद ही कोई सस्वर पठन करता होगा। पुस्तकालय तथा सार्वजनिक स्थानों पर जहाँ जोर से बोलना वर्जित होता है, मौन पठन का व्यावहारिक महत्त्व और भी बढ़ जाता है।

सस्वर एवं मौन पठन के प्रयोजन की जानकारी प्राप्त कर लेने के बाद आइए इन दोनों के स्वरूपो में अंतर पर विचार करें। सस्वर पठन में मौन पठन की अपेक्षा अधिक दृष्टि विराम होते हैं और विरामों के बीच का समय भी अधिक होता है। सस्वर पठन में दृष्टि वाणी से आगे रहती है और मौन पठन में दृष्टि अर्थबोध स्थल से आगे रहती है। मौन पाठ में दृष्टि विराम कम होने के कारण पठन की गति तेज हो जाती है जब कि सस्वर पाठ में ऐसा नहीं होता। उदाहरण के लिए एक वाक्य लीजिए : 'मेरे पिताजी लखनऊ से कल वापस आए' इस वाक्य को पढ़ते समय यदि शिक्षार्थी प्रत्येक शब्द पर रुकता रहा तो कुल आठ दृष्टि विराम होंगे जो मन्द पठन का द्योतक है। मध्यम श्रेणी का पाठक इस वाक्य में तीन विराम देगा, यथा मेरे पिताजी / लखनऊ से / कल वापस आए। किन्तु तीव्र गति से पढ़ने वाला शिक्षार्थी इस वाक्य को केवल दो या एक ही विराम में पढ़ जाएगा। ये विराम न केवल तीव्र गति से पढ़ने के लिए आवश्यक हैं वरन् अर्थग्रहण में भी सहायक होते हैं। यदि किसी ने उपर्युक्त वाक्य में 'पिता' अथवा 'कल' शब्द के उपरान्त विराम दे दिया तो उसके अर्थग्रहण में कठिनाई होगी। मौन पठन में उच्चारण अपेक्षित न होने के कारण विरामों की संख्या कम हो जाती है और फलस्वरूप पठन की गति बढ़ जाती है।

परीक्षणों से ज्ञात हुआ है कि प्रारम्भिक स्तर पर तो सस्वर तथा मौन पठन दोनों में पढ़ने की गति समान होती है किन्तु धीरे-धीरे मौन पठन के अभ्यास द्वारा मौन पाठ में तेजी आ जाती है। यदि छठी कक्षा में सस्वर पठन द्वारा प्रति मिनट पढ़े गए शब्दों की संख्या 170 होगी तो मौन पठन द्वारा यह संख्या प्रति मिनट लगभग 200 शब्द होगी। यह भी पता चला कि जिस बच्चे को मौन पाठ का सक्रिय अभ्यास कराया गया उसके द्वारा प्रति मिनट पढ़े गए शब्दों की संख्या अन्य बच्चों की अपेक्षा अधिक थी। अत: मौन पठन का अभ्यास कक्षा में नियमित रूप से होना चाहिए।

पाठ्य पुस्तक पढ़ाते समय शिक्षक को चाहिए कि गद्यांश का पहले स्वयं सस्वर पाठ (आदर्श पाठ) करे,

फिर शिक्षार्थियों से उसका अनुकरण पाठ कराए। उच्चारण तथा भाषा संबंधी कठिनाई के निवारण के उपरान्त गद्यांश का मौन पाठ कराया जाए। मौन पाठ के समय कक्षा में पूर्ण शान्ति होनी चाहिए। इसके उपरान्त प्रश्नोत्तर विधि से पाठ का विचार विश्लेषण किया जाना चाहिए। कभी-कभी मौन पाठ से पूर्व ऐसे संकेत या प्रश्न दिए जा सकते हैं जिनको ध्यान में रखकर शिक्षार्थी मौन पठन करें। गृहकार्य के रूप में भी पूर्व निर्देश देकर बच्चों को घर पर मौन पठन करने के लिए कहा जा सकता है। दिए गए निर्देश के अनुसार शिक्षार्थी मौन पठन द्वारा किसी प्रश्न का उत्तर या समस्या का समाधान खोजता है। इसे निर्देशित पठन भी कहते हैं। कक्षा कार्य अथवा गृहकार्य के रूप में दिए गए मौन पठन की जांच शिक्षक द्वारा अवश्य की जानी चाहिए।

बोध प्रश्न :

चार पंक्तियों में उत्तर लिखें।

5. सस्वर पठन में कौन-कौन से गुण होने चाहिए।

....

....

....

....

6. शिक्षार्थी के मौन पठन का मूल्यांकन किस प्रकार करना चाहिए।

....

....

....

....

4.5.3 गहन पठन

गहन पठन के द्वारा हम पाठ्य सामग्री के भाव, विचार, भाषा, शैली तथा कलात्मक सौंदर्य की व्याख्या करते हुए उन्हें आत्मसात करते हैं। गहन पठन द्वारा शिक्षार्थी **:**

- पाठ्यवस्तु की भाषा में प्रयुक्त शब्द, पदबंध, वाक्यांश के विशिष्ट अर्थ तथा प्रयोग से परिचित होता है,
- पाठ में निहित विचार या भाव का सूक्ष्म विश्लेषण करता है,
- घटनाओं के औचित्य तथा लेखक के मंतव्य को समझकर उनका मूल्यांकन करता है,
- अपने पूर्व अनुभवों के आधार पर प्रतिक्रिया करते हुए अपनी स्वतंत्र विचारधारा का निर्माण करता है।

किसी लेखक ने ठीक ही कहा है कि गहन पठन करते समय शिक्षार्थी भाषा के प्रत्येक अंग का गहन अध्ययन करता है, विचार की एक-एक बारीकी का अवलोकन करता है, भाव की प्रत्येक लहर में अवगाहन करता है। इसीलिए गद्य पठन को गहन अध्ययन भी कहा जाता है। कक्षा-स्थिति में किसी कविता पाठ अथवा गद्य पाठ का गहन पठन कुछ औपचारिताओं की अपेक्षा रखता है। उदाहरण के लिए यदि पाठ्य पुस्तक की किसी कविता या गद्यांश को पढ़ाना है तो उसका आदर्श पाठ, अनुकरण पाठ, काठिन्य निवारण, सस्वर या मौन पाठ, भाव या विचार विश्लेषण, काव्य सौंन्दर्य अनुभूति या भाषा अध्ययन आदि कार्य किए जाते है। मान लीजिए हमें कक्षा में 'पुष्प की अभिलाषा' नामक कविता पढ़ानी है। पहले हम कविता का आदर्श पाठ करेंगे, फिर शिक्षार्थी उसका सस्वर पाठ करेंगे। काठिन्य निवारण और पुन**:** सस्वर पाठ के उपरान्त कविता में व्यक्त फूल की प्रत्येक चाह को गहराई से समझने का प्रयास करेंगे। जैसे पुष्प किसी सुन्दरी के गले का हार क्यों नहीं बनना चाहता ? वह देवताओं के सिर पर चढ़कर गर्व का अनुभव क्यों नहीं करता ? आदि। मनुष्य जीवन से फूल की तुलना करते हुए हम शिक्षार्थी के मन में यह बैठाने का प्रयत्न करेंगे कि हमें भी इस प्रकार के क्षणिक सुखों की लालसा से दूर रहकर स्वदेश की रक्षा तथा सेवा करनी चाहिए। इसी प्रकार यदि पाठ्य पुस्तक के किसी निबंध पाठ को पढ़ाना है तो उसके

विभिन्न अंशों के आदर्श पाठ, अनुकरण पाठ, काठिन्य निवारण, मौन पाठ, विचार विश्लेषण, भाषा अध्ययन आदि के द्वारा गहराई से अध्ययन की अपेक्षा की जाती है।

4.5.4 व्यापक पठन

व्यापक पठन को द्रुत पठन अथवा विस्तृत अध्ययन भी कहते हैं। इसका प्रयोजन है — शब्दावली विस्तार, ज्ञान परिधि की वृद्धि, पठन रुचि का विकास, मनोरंजन तथा तीव्र गति से पढ़ने की दक्षता का विकास भाषा पर अधिकार करने तथा जीवन और जगत के प्रति दृष्टिकोण को व्यापक बनाने कि लिए व्यापक पठन का अभ्यास आवश्यक है। इसके द्वारा हमारी मौन पठन की दक्षता बढ़ती है जिस से स्वाध्याय की प्रवृत्ति का विकास होता है। पुस्तकालयी अध्ययन में शिक्षार्थी को दक्ष बनाने के लिए व्यापक पठन का अभ्यास सहायक होता है। मनोरंजन के लिए अध्ययन में तो इसकी उपयोगिता और भी बढ़ जाती है। प्रायः हम कहानी और एकांकी तो रुचिपूर्वक पढ़ लेते हैं किन्तु उपन्यास और नाटक जैसे बृहद ग्रंथों को पढ़ने में थकान का अनुभव करने लगते हैं। इसका कारण है व्यापक पठन की दक्षता पर यथेष्ट अधिकार का न होना।

व्यापक पठन के अभ्यास के लिए कक्षा में औपचारिक शिक्षण की उतनी आवश्यकता नहीं जितनी गहन पठन में। इसके लिए निर्देशित पठन का सहारा लेना उपर्युक्त रहता है। सरल कहानी, घटना-वृत्त अथवा जीवनी को पढ़ाते समय कक्षा में शिक्षक उसके महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं का निर्देश करे और उन्हें ध्यान में रखते हुए शिक्षार्थी को दिए गए पाठ का स्वाध्याय करने के लिए कहे। स्वाध्याय के दौरान शिक्षार्थी एक ओर पाठ को अपनी गति और रुचि के अनुकूल पढ़े तो दूसरी ओर शिक्षक द्वारा दिए गए बिन्दुओं को भी ध्यान में रखता जाए। इस प्रकार स्वाध्याय के बाद कक्षा में शिक्षक प्रश्नोत्तर की सहायता से इस बात की जाँच करे कि शिक्षार्थी ने पाठ को पढ़कर भली-भांति समझ लिया है या नहीं।

व्यापक पठन के अभ्यास से शिक्षार्थी में स्वाध्याय तथा स्वावलंबन की प्रवृत्ति का विकास होता है साथ ही शिक्षक अपना समय और श्रम भाषा और विचार की दृष्टि से कठिन पाठों पर लगा सकता है। व्यापक पठन के लिए सहायक पुस्तक के सभी पाठ तथा पाठ्य पुस्तक के वे पाठ लिए जा सकते हैं जो भाषा की दृष्टि से सरल तथा विचार की दृष्टि से सुबोध हों। शिक्षक को चाहिए कि वह शिक्षार्थी द्वारा ऐसे पाठों को स्वतः पढ़ने से पहले उसमें निहित महत्त्वपूर्ण पाठ्य बिन्दुओं का निर्देश कर दे। पाठ का व्यापक अध्ययन कर लेने के उपरांत कक्षा में उस पाठ की सामान्य व्याख्या शिक्षार्थियों की सहायता से ही करे। इस संदर्भ में यह उचित होगा कि शिक्षक शिक्षार्थी की व्यक्तिगत कठिनाइयों की ओर ध्यान देने के साथ ही पाठ को पढ़कर आने वालों की उपयुक्त प्रशंसा तथा न पढ़ने वालों को यशावश्यक चेतावनी भी दे।

इस विवेचन से यह स्पष्ट है कि जिस प्रकार पाठ्य पुस्तक के अध्ययन में गहन पठन उपयोगी होता है उसी प्रकार सहायक पुस्तक और बाल साहित्य को पढ़कर समझने में व्यापक पठन की उपयोगिता है। एक के द्वारा भाषा की विभिन्न कुशलताओं और योग्यताओं का विकास किया जाता है तो दूसरे के द्वारा इन्हीं कुशलताओं का अधिकाधिक अभ्यास तथा योग्यताओं का संवर्धन किया जाता है।

- गहन तथा व्यापक पठन दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। शिक्षार्थी की पठन-दक्षता के विकास में दोनों की ही महत्त्वपूर्ण भूमिका है।
- एक में गहराई है तो दूसरे में विस्तार, एक में विश्लेषण की प्रधानता है तो दूसरे में संश्लेषण की।
- एक अच्छे हिन्दी शिक्षक के रूप में हमें भाषा, भाव तथा विचार की दृष्टि से कठिन एवं गंभीर वस्तु को समझने के लिए गहन पठन का सहारा लेना है तथा अपेक्षाकृत सरल तथा रोचक विषयवस्तु के अर्थग्रहण के लिए व्यापक पठन का।

बोध प्रश्न :

7. नीचे दिए गए प्रश्नों के शुद्ध उत्तर पर सही (✓) का चिह्न लगाएँ :

   गहन पठन का मुख्य उद्देश्य है :

   (क) तीव्र गति से पठन का अभ्यास

   (ख) भाषा, भाव, विचार का विश्लेषण

(ग) ध्वनि, शब्द, वाक्य रचना का विश्लेषण

(घ) रस, छंद, अलंकार का अध्ययन

8. व्यापक पठन का दूसरा नाम है :

(क) गहन अध्ययन

(ख) मौन पठन

(ग) विश्लेषणात्मक पठन

(घ) विस्तृत पठन

4.6 पठन अभिरुचि का विकास

जीवन में पठन के महत्त्व को देखते हुए यह आवश्यक है कि शिक्षार्थी में पठन के प्रति रुचि का विकास प्रारम्भ से ही होता रहे। स्वाभाविक है कि व्यक्ति उसी कार्य को मनोयोगपूर्वक करता है जिसमें उसकी रुचि होती है। पठन अभिरुचियों के संबंध में देश-विदेश में अनेक अध्ययन तथा अनुसंधान किए गए हैं। इनके आधार पर पता चला है कि बच्चों की अभिरुचियाँ उनके भौगोलिक वातावरण, सांस्कृतिक परिवेश, उपलब्ध पाठ्य सामग्री तथा प्रचलित शिक्षण विधि के अनुसार भिन्न-भिन्न होती है। उदाहरण के लिए पहाड़ पर या समुद्र के किनारे रहनेवाले अपने आसपास के वातावरण में पाए जाने वाले दृश्य और कार्य व्यापार से संबंधित पाठ्य सामग्री को पढ़ने में अधिक रुचि लेते है। इसी प्रकार खानपान, वेशभूषा आदि की दृष्टि से उत्तर भारत की संस्कृति दक्षिण की संस्कृति से भिन्न होगी। अत: बच्चे अपने-अपने सांस्कृतिक परिवेश से संबंधित साहित्य को पढ़ने में अधिक रुचि लेते हैं। यह भी देखा गया है कि शिक्षार्थी की पठन अभिरुचि के विकास में शिक्षक की अपनी रुचि तथा मार्गदर्शन का काफी योगदान होता है। यदि शिक्षक पुस्तकालय या किसी अन्य स्रोत से उपलब्ध पठन सामग्री की विशेषताओं की ओर शिक्षार्थियों का ध्यान आकर्षित कर दें तो वे जिज्ञासावश उसे पढ़ने का प्रयास करेंगे। ऐसा करने से उनकी पठन अभिरुचि का निश्चय ही विकास होगा।

शिक्षार्थी कि आयु, लिंग तथा सामाजिक आर्थिक स्थिति भी उसकी पठन अभिरुचि के निर्धारण में सहायक होते हैं। जैसे-जैसे बच्चे का पठन कौशल विकसित होता जाता है वह अपनी पठन सीमा का विस्तार करने लगता है। प्रारम्भ में बच्चे पशु-पक्षियों की कहानियाँ पसंद करते हैं। उन्हें परियों की कहानियाँ तथा लोक कथाओं से संबंधित बाल साहित्य पढ़ना अच्छा लगता है। किशोरों की रुचि विज्ञान, साहसपूर्ण घटनाओं तथा सक्रिय खेलकूद संबंधी साहित्य के पढ़ने में अधिक होती है तो किशोरियाँ घरेलू खेलों तथा साजसज्जा संबंधी साहित्य पढ़ने में अधिक रुचि लेती हैं। सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से अच्छे परिवार के बच्चों को विविध प्रकार की पठन सामग्री सरलता से उपलब्ध हो जाती है। सुशिक्षित माता-पिता के संपर्क में रहने वाले बच्चे में पठन रुचि में विविधता स्वाभाविक है। किन्तु यह भी देखा गया है कि कभी कभी अभावों में पलने वाले बच्चे भी अपनी दृढ़ संकल्प शक्ति के कारण पठन-रुचि के विकास में बहुत आगे होते हैं।

यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि प्राय: सभी बच्चे कथा साहित्य को पढ़ने में अधिक रूचि लेते हैं। हास्यप्रद, साहसिक, कौतुहलपूर्ण, रहस्यपूर्ण, रोमांचक पाठ्य सामग्री, पशुओं और बाल जीवन संबंधी कहानियों कथा जीवनी-साहित्य में बालक और बालिकाओं दोनों की रुचि सर्वाधिक होती है। चुटकुले, व्यंग्य-विनोद तथा चलचित्र से संबंधित पत्रिकाएँ पढ़ने में सभी आनन्द लेते हैं। सरल तथा स्वाभाविक भाषा में लिखी हुई कहानियाँ, उपन्यास, कविताएँ आदि पढ़ने में भी शिक्षार्थी रुचि लेते हैं। भाषा की दृष्टि से कठिन तथा विषय की दृष्टि से उलझी हुई पाठ्यवस्तु के पढ़ने में माध्यमिक स्तर के शिक्षार्थी भी रुचि नहीं लेते। इस स्तर पर बालकों की अपेक्षा बालिकाएँ अधिक विस्तार तथा गम्भीरता के साथ पढ़ती हैं।

पठन अभिरुचि के विकास में शिक्षक की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। जो शिक्षक स्वयं पठन प्रेमी होगा उसके शिक्षार्थियों में पठन रुचि का विकास होना स्वाभावित है। पठन-प्रेमी शिक्षक अपने शिक्षार्थियों में ऐसी पुस्तकें तथा पत्रिकाएँ पढ़ने की जिज्ञासा उत्पन्न कर सकता है जो उनकी रुचि तथा योग्यता के अनुरूप हों। किसी पाठ को पढ़ाते समय भी शिक्षक विविध प्रश्नों तथा उद्धरणों द्वारा शिक्षार्थी की पठन अभिरुचि को उत्प्रेरित कर सकते है। उदाहरण के लिए कबीर के दोहे पढाते समय तुलसी और रहीम के दोहे पढ़ने के लिए प्रेरित किया जा सकता है। इसी प्रकार प्रेमचन्द की किसी एक कहानी को पढ़ाते समय

उनकी अन्य कहानियों को पढ़ाने के लिए शिक्षार्थियों को प्रोत्साहित किया जा सकता है। पुस्तकालय में प्राप्त उन पुस्तकों की ओर भी शिक्षार्थियों का ध्यान आकृष्ट किया जा सकता है जो उनकी रुचि के अनुकूल हों। निर्देशित पठन द्वारा दिए गए पाठ्य बिन्दुओं को ध्यान में रखकर पुस्तक पढ़ने से उनमें पठन के प्रति अभिरुचि का विकास होगा।

पठन अभिरुचि के समुचित विकास के लिए शिक्षार्थी को उयुक्त पाठ्य सामग्री उपलब्ध होनी चाहिए। हमारा कर्तव्य है कि विभिन्न आयुवर्ग वाले शिक्षार्थियों की पठन अभिरुचि को ध्यान में रखते हुए पुस्तकालय में पुस्तकों का संकलन कराएँ। प्रायः देखा जाता है कि शिक्षक अपनी रुचि के अनुकूल पुस्तकें पुस्तकालय में एकत्र कर लेते हैं। बच्चों के लिए यह पुस्तकें इतनी कठिन हो सकती है कि पठन के प्रति उनमें अरुचि उत्पन्न होने लगे। पुस्तकालय में उपलब्ध पुस्तकों का सही ढंग से वितरण न होने से पठन अभिरुचि विकसित नहीं हो पाती। हमें चाहिए कि पुस्तकालय की सुविधा सभी बच्चों को उचित ढंग से प्राप्त हो। यदि विद्यालय-पुस्तकालय के साथ ही कक्षा-पुस्तकालय की भी व्यवस्था हो तो पठन अभिरुचि के विकास के अधिक अवसर मिल सकेंगे। आप बच्चों तथा उनके माता-पिता को कक्षा पुस्तकालय के लिए ऐसी पुस्तकें तथा पत्रिकाएँ दान देने के लिए प्रेरित करें जो शिक्षार्थियों में पठन अभिरुचि का विकास करने में सक्षम हों। कक्षा-पुस्तकालय की देख-रेख तथा प्रबंध हम शिक्षार्थियों पर ही छोड़ सकते हैं। इससे उनमें स्वाध्याय तथा पठन अभिरुचि के साथ-साथ संगठन क्षमता का भी सम्यक् विकास होगा।

बोध प्रश्न :

9. निम्नलिखित में से कौन-सा कथन सही है ? उसके सामने सही (✓) का चिह्न लगाएँ :

   (क) बालकों की पठन अभिरुचि बालिकाओं की अपेक्षा अधिक विकसित होती है।

   (ख) पठन-प्रेम शिक्षक, शिक्षार्थी की पठन अभिरुचि के विकास में अधिक सहायक होता है।

   (ग) बच्चों की पठन रुचि का विकास उनके माता-पिता पर ही निर्भर है।

   (घ) सभी विद्यालयों के पुस्तकालय शिक्षार्थियों की पठन अभिरुचि के विकास के लिए उपयुक्त सुविधाएँ प्रदान करते हैं।

4.7 पठन अभ्यास

पठन अभ्यास अथवा पढ़ने की आदत में व्यक्तिगत भिन्नता पाई जाती है। अर्थग्रहण के लिए एक व्यक्ति मौन पठन का सहारा लेता है तो दूसरा कहीं भी और किसी भी प्रकार के वातावरण में पढ़ सकता है। आजकल ऐसे अनेक शिक्षार्थी मिलेंगे जो रेडियो या टी.वी. चलाकर पढ़ने के आदी होते हैं। कोई बैठकर पढ़ना पसंद करता है तो कोई लेटकर। पुस्तक पढ़ते समय कुछ शिक्षार्थी महत्त्वपूर्ण पंक्तियों को रेखांकित करते चलते हैं तो कुछ केवल महत्त्वपूर्ण पाठ्य बिन्दुओं को अनुच्छेद के सामने लिख लेते हैं। कुछ पाठक ऐसे भी होते हैं जो पुस्तक में कोई भी निशान लगाना पसंद नहीं करते। उन्हें पढ़ते समय जो महत्त्वपूर्ण बिन्दु मिलते हैं, उन्हें अलग से कापी में लिखते चलते हैं। कुछ शिक्षार्थी एक बार में ही पढ़कर अर्थग्रहण कर लेते है तो कुछ बार-बार पढ़कर अर्थग्रहण करते हैं और कुछ कई बार पढ़ कर भी ऐसा नहीं कर पाते। कोई पाठ को पढ़ने के बाद मन में उसकी पुनरावृत्ति करता है तो कोई उसका सारांश कापी पर लिखता है। कोई शिक्षार्थी केवल पढ़ता जाता है, न पुनरावृत्ति करता है और न सारांश लिखता है। कोई गूढ़ और विचार प्रधान। तात्पर्य यह है कि हर व्यक्ति के पढ़ने की अपनी अलग-अलग रूचि होती है। पढ़ने के वे सभी अभ्यास अच्छे माने जाएंगे जो अर्थग्रहण में सहायक तथा पठन के उद्देश्य प्राप्त करने में सहायक होते है।

पढ़ने की आदत जन्मजात नहीं होती। इसके निर्माण में अनुकरण, सुविधा, सुझाव तथा निर्देशन का संयोग होता है। प्रारम्भ में ही बच्चे दूसरों को जिस तरह पढ़ते हुए देखते हैं अथवा जिस प्रकार पढ़ने में उन्हें सुविधा होती है, उसी प्रकार वे अपनी एक विशिष्ट आदत बना लेते हैं। शिक्षार्थी के पठन अभ्यास को प्रभावित करने वाले चार प्रमुख निर्धारक है :

– भौतिक परिस्थितियाँ

— व्यक्तिगत कारक

— पाठ् विषय

— शिक्षक का प्रस्तुतीकरण

भौतिक परिस्थिति का संबंध पढ़ने के लिए निर्दिष्ट स्थान तथा वातावरण से है। अध्ययन में चिंतन और मनन की दृष्टि से शांत, एकांत तथा सुरुचिपूर्ण स्थान का बड़ा महत्त्व है। मेहमानों की भीड़, परिवार के सदस्यों में परस्पर बातचीत आदि हमारे एकाग्रचित्त होकर पढ़ने में बाधक होते हैं।

व्यक्तिगत कारक भी हमारी अध्ययन विधि को प्रभावित करते हैं। चिंतित और निराश व्यक्ति एकाग्रचित्त होकर नहीं पढ़ सकता। यदि वह किसी घटना अथवा विचार से अति प्रसन्न अथवा विक्षुब्ध है, तो भी पठन में उसका मन न लगना स्वाभाविक है।

पाठ्य विषय में निहित कथ्य तथा दत्तकार्य का स्वरुप भी शिक्षार्थी की पठन-प्रणाली को प्रभावित करता है। जो विषयवस्तु हमारी दृष्टि में जितनी सार्थक, सोद्देश्य तथा सुरुचिपूर्ण होगी, उसके पठन में हम उतने ही एकाग्रचित्त होंगे। उसी प्रकार पठन संबंधी दत्तकार्य यदि शिक्षार्थी की रुचि तथा योग्यता के अनुरूप हुआ तो उसे पूरा करने में वह अधिक सक्रियता एवं तत्परता दिखाएगा।

शिक्षक का व्यक्तिगत तथा विषय के प्रस्तुतीकरण में उसका उत्साह और तल्लीनता भी शिक्षार्थी में उस विषय के पठन में रुचि तथा सक्रियता की सृष्टि करने में सहायक होते हैं। अपने अधिक प्रिय शिक्षक द्वारा पढ़ाए गए विषय में शिक्षार्थी की रूचि बढ़ जाती है जिसके परिणामस्वरूप पठन एवं अर्थग्रहण में उसे सरलता प्रतीत होती है।

पठन विशेषज्ञों ने अध्ययन प्रधान पठन को सुचारु रुप से क्रियान्वित करने के लिए एक सूत्र की अनुशंसा की है जिसे sq3R (Survey, Question, Read, Review, Recite) कहते हैं। इसे हिन्दी में सप्रपसआ (सर्वेक्षण, प्रश्न, पठन, समीक्षा, आवृत्ति) कह सकते हैं। इस सूत्र के अनुसार किसी सामग्री को आत्मसात करने में पाँच सोपान होते हैं। सर्वेक्षण के द्वारा पाठ्य सामग्री पर एक विहंगम दृष्टि डालकर लेखक का मंतव्य, पठन का उद्देश्य तथा उपयुक्त पठन विधि का निर्धारण किया जाता है। पाठक पुस्तक की विषय सूची देखकर पाठ्य सामग्री का सामान्य सर्वेक्षण करता है। पुन: वह ऐसे प्रश्नों की सृष्टि करता है जिनका उत्तर इस पाठ्य सामग्री में मिलने की संभावना है। तात्पर्य यह कि हम किसी पुस्तक को आदि से अन्त तक न पढ़कर उसके उन्हीं अंशो को पढ़ने का निश्चय करते हैं जो हमारे किसी उद्देश्य की पूर्ति करते है। इसके उपरांत निर्दिष्ट उद्देश्य को ध्यान में रखकर तथा प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करने के लिए चुनी हुई पाठ्य सामग्री का पठन किया जाता है। पठन द्वारा ग्रहण किए गए अर्थ की समीक्षा या समालोचना करता हुआ शिक्षार्थी पठन के माध्यम से प्राप्त ज्ञान, कौशल, दक्षता अथवा योग्यता की पुनरावृत्ति इस दृष्टि से करता है कि उसका भविष्य में प्रयोग कर सके।

पठन अभ्यास अथवा पठन की आदत बहुत सीमा तक व्यक्तिगत होते हुए भी उसमें कुछ सामान्य बातों पर ध्यान देना अपेक्षित होता है, जैसे कि पढ़ते समय पुस्तक को आंख से लगभग एक फुट दूरी पर रखना; पढ़ते समय प्रकाश के स्त्रोत का यथासंभव बाई दिशा में पीठ की ओर से आने का ध्यान रखना; हल्के अथवा तेज प्रकाश में न पढ़ना, लेट कर न पढ़ना आदि। पठन क्रिया की सफलता के लिए मानसिक तत्परता तथा आन्तरिक प्रेरणा का होना आवश्यक है। शिक्षक अथवा माता-पिता के रूप में हमें ध्यान रखना चाहिए कि शिक्षार्थी दिखाने के लिए न पढ़े। सोद्देश्य पठन के लिए बच्चे में पठन रूचि तथा स्वाध्याय की आदत का विकास आवश्यक है। यदि हम पठन रूचि के लिए कोई भी अंश दें तो अंत में प्रश्नों द्वारा शिक्षार्थी की अर्थग्रहण क्षमता का मूल्यांकन अवश्य करें। ऐसा करने से वह भविष्य में समझकर ही पढ़ने का प्रयास करेगा।

बच्चों को पुस्तक पढ़ने का उचित अभ्यास प्रारम्भिक स्तर से ही कराना चाहिए जिससे उनमें पठन की अच्छी आदतों का निर्माण हो। माध्यमिक स्तर पर किसी भी विषय के किसी भी पाठ को पढ़ाते समय या किसी अन्य पाठ्य सामग्री का उपयोग करते समय ऊपर दिए गए सूत्र में बताए गए पांचों सोपानों के पालन का यथेष्ट प्रयास करना चाहिए। ऐसा तभी संभव होगा जब हम कक्षा में किसी पाठ को पढ़ाते समय विभिन्न सोपानों के प्रयोग की ओर शिक्षार्थियों का ध्यान आकर्षित करें। पठन का अभ्यास प्रतिदिन नियमित रूप से किया जाना चाहिए। पाठ्य पुस्तक के अतिरिक्त अन्य पुस्तकें भी समय-समय पर पढ़ी

जानी चाहिए। प्रायः शिक्षार्थी सत्र के प्रारम्भ में बिल्कुल नहीं पढ़ते और परीक्षा के पूर्व दिन-रात पढ़ने लगते है। यह प्रवृत्ति व्यक्तित्त्व के विकास में बाधक तथा पठन की दृष्टि से हानिकारक है। मात्रा (क्या और कितना पढ़ा) तथा गुण (कैसे तथा कितना समझा) दोनों की दृष्टियों से शिक्षार्थी में पठन अभ्यास का समुचित विकास करना हमारा आवश्यक कर्तव्य है। उचित पठन अभ्यास के विकास का दायित्व जितना हिन्दी शिक्षक पर है, उतना ही अन्य विषय के शिक्षकों पर भी हैं।

बोध प्रश्न :

10. शिक्षार्थी के पठन अभ्यास को प्रभावित करने वाले चार प्रमुख निर्धारकों का उल्लेख कीजिए।

....

....

....

....

....

....

11. पाठ्य सामग्री को भली-भांति समझने के लिए बताए गए पठन सूत्र के पाँच अंगों का उल्लेख कीजिए।

....

....

....

....

....

....

4.8 पठन संबंधी त्रुटियों का निराकरण

शिक्षार्थी के पढ़ने में अनेक प्रकार की त्रुटियाँ हो जाती हैं। आइए इनकी प्रकृति और निराकरण के उपायों पर विचार करें।

4.8.1 अशुद्ध उच्चारण

पिछली इकाई में मौखिक अभिव्यक्ति संबंधी त्रुटियों के अंतर्गत हमने अशुद्ध उच्चारण की प्रकृति तथा सुधार पर विचार किया है। सस्वर पठन में भी उसी प्रकार की अशुद्धियाँ देखी जा सकती हैं क्योंकि सस्वर पठन भी एक प्रकार से मौखिक अभिव्यक्ति ही है। उदाहरण के लिए स, श और ष के उच्चारण में प्रायः अशुद्धि हो जाती है। जैसे संकट को शंकट और शासन को शाशन पढ़ जाते हैं। इसी प्रकार ड-ड़ और ढ-ढ़ के उच्चारण कर देते हैं जैसे – क्षमा-छमा-शमा। उसी प्रकार उर्दू तथा पंजाबी भाषी शइक्षार्थी हिन्दी पढ़ते समय संयुक्ताक्षरों को असंयुक्त कर देते हैं जैसे – 'स्कूल' को 'इस्कूल' या 'सकूल', 'प्रश्न' को 'प्रशन', 'धर्म' को 'धरम' पढ़ जाते हैं। पढ़ने में उच्चारण की अशुद्धियों को शुद्ध रूप देकर उसे बोलने का अभ्यास कराएँ। अशुद्ध रूप को दोहराना ठीक नहीं। यदि उच्चरित शब्द अर्थ में परिवर्तन ला दे तो उसके दोनों रूपों को लिखकर उनके प्रयोग में अन्तर स्पष्ट किया जाना चाहिए जैसे – और-ओर, शौक-शोक आदि। कठिन शब्दों के उच्चारण का अभ्यास कक्षा के एक-दो शिक्षार्थियों से भी करा लेना चाहिए।

4.8.2 उपयुक्त बलाघात का अभाव

पढ़ते समय हम जिस शब्द या वाक्यांश के अर्थ को अधिक महत्त्व देना चाहते हैं उसके उच्चारण पर अधिक बल देते हैं, जैसे प्रश्नवाचक वाक्य में कौन, कब, कहाँ, कैसे आदि शब्दों पर। अतः पढ़ते समय हम शब्दों अथवा वाक्यांशो को उचित बलाघात के साथ बोलें तथा शिक्षार्थी को भी उसी प्रकार पढ़ने का अभ्यास कराएँ।

4.8.3 विराम चिह्न अनुसार न पढ़ना

पढ़ते समय कुछ लोग विराम चिह्न पर उचित ठहराव दिए बिना सपाट गति से पढ़ते चले जाते हैं। अल्प विराम (,), अर्ध विराम (;), पूर्ण विराम (।) पर आवश्यकतानुसार रूकना चाहिए । इसी प्रकार प्रश्नवाचक वाक्य या विस्मयसूचक चिह्न के पूर्व उचित बल दिया जाना आवश्यक है। एकाँकी के पाठ को पात्रानुसार पढ़ते समय विराम चिह्न को ध्यान में रखकर पढ़े बिना प्रभाव की सृष्टि नहीं हो पाती। ऐसे अवसरों पर हमें आदर्श पाठ देकर अनुकरण पाठ के बीच आवश्यकतानुसार त्रुटि का सुधार करना चाहिए।

4.8.4 पठन में आरोह-अवरोह का अभाव

भाव प्रधान रचनाओं, विशेष रूप से कविता का पाठ करते समय भावानुसार स्वर के उचित आरोह-अवरोह के साथ वाचन का विशेष महत्त्व हैं। यदि कविता की रसानुभूति करते हुए उसका पाठ किया जाए तो आरोहावरोह स्वाभाविक रूप से ही आ जाता है। हमें चाहिए कि शिक्षार्थी द्वारा कविता पाठ के समय जहाँ भी, भावानुरूप वाचन या आरोहावरोह का अभाव लगे, उसका सुधार करने के लिए हम स्वयं भावानुरूप पाठ करें। शिक्षार्थी हमारे पाठ के ढंग का अनुकरण कर अपने पाठ में अपेक्षित आरोहावरोह लाएंगे।

4.8.5 भाव तथा विचार-ग्रहण में कठिनाई

किसी कविता या गद्य पाठ को पढ़कर शिक्षार्थी उसमें निहित भाव की अनुभूति, विचार का विश्लेषण तथा भाषा शैली को समझने में कठिनाई अनुभव करते हैं। इसका कारण है भाव व्यंजना तथा सूक्ष्म विश्लेषण में शिक्षार्थी की समुचित पैठ न होना। ऐसे स्थलों की व्याख्या इस प्रकार से करें कि शिक्षार्थी पाठ में निहित भाव तथा विचार के साथ अपना तादात्म्य स्थापित कर सकें।

बोध प्रश्न :

12. अशुद्ध उच्चारण में सुधार के लिए हमें किन बातों पर ध्यान देना चाहिए ? उत्तर तीन पंक्तियों में लिखें।

....

....

....

....

....

....

4.9 सारांश

प्रस्तुत इकाई में हमने सीखा कि पठन का विकास जीवन में अनुभव-विस्तार तथा सामाजिक समायोजन के लिए आवश्यक है।

पठन एक सोद्देश्य तथा चिन्तन प्रधान क्रिया है। पठन-प्रक्रिया के सोपान हैं – प्रत्यभिज्ञान, अर्थग्रहण, मूल्यांकन एवं प्रतिक्रिया तथा अनुप्रयोग।

पठन की क्रिया दो प्रकार से संपन्न की जाती है – सस्वर पठन द्वारा तथा मौन पठन द्वारा। अध्यापन की दृष्टि से पठन के दो रूप होते हैं – गहन पठन तथा व्यापक पठन। पाठक के लिए इनमें से प्रत्येक का अपना विशिष्ट महत्त्व तथा उपयोग। इस दृष्टि से इनके उद्देश्य तथा विकास की विधियों का विस्तारपूर्वक विवेचन किया गया।

शिक्षार्थियों में पठन अभिरुचि के विकास का विवेचन करते हुए उन्हें सुरुचिपूर्ण सामग्री उपलब्ध कराने की आवश्यकता पर बल दिया गया है। शिक्षार्थी में पठन अभ्यास तथा पठन की अच्छी आदतों के विकास का वैज्ञानिक ढंग से विवेचन किया गया है।

इकाई के अंत में पठन संबंधी त्रुटियों के स्वरूप तथा उनके निवारण पर चर्चा की गई।

4.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. – पुस्तक, पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से ज्ञान–प्राप्ति मे सहायक।
   – नागरिक के कर्तव्य तथा अधिकार को समझने में सहायक।
   – व्यक्तिगत तथा सामाजिक समायोजन की दृष्टि से उपयोगी।
2. वाचन में उच्चारण की प्रधानता होती है जबकि पठन में अर्थग्रहण पर बल होता है।
3. (क) प्रत्यभिज्ञान
   (ख) अर्थग्रहण
   (ग) मूल्यांकन तथा प्रतिक्रिया
   (घ) अनुप्रयोग
4. सृजनात्मक पठन में पाठक अपने अनुभवों के आधार पर लेखकीय विचारों का विश्लेषण व मूल्यांकन कर नए दृष्टिकोण व निष्कर्षो की स्थापना करता है।
5. उचित गति, लय, स्वर का आरोहावरोह, प्रभाव, अंग संचालन।
6. प्रश्नोत्तर विधि से पाठ के विचार विश्लेषण द्वारा।
7. (ख)
8. (घ)
9. (ख)
10. भौतिक परिस्थितियाँ, व्यक्तिगत कारक, पाठ्य विषय, शिक्षक का प्रस्तुतीकरण।
11. 1. सर्वेक्षण
    2. प्रश्न
    3. पठन
    4. समीक्षा
    5. आवृत्ति
12. – शुद्ध रूप देकर बोलने का अभ्यास करवाना।
    – अशुद्ध व शुद्ध रूप देकर अंतर का स्पष्टीकरण करना।
    – उचित बलाघात के साथ बोलने का अभ्यास करवाना।

4.11 उपयोगी पुस्तकें

1. पांडेय, रामशकल : हिन्दी शिक्षण, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
2. सिंह, निरंजन कुमार : माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।
3. स्ट्रैंग तथा अन्य : दि इंप्रूवमेंट ऑफ रीडिंग, मैकग्रा हिल बुक कंपनी, नूययार्क।
4. श्रीवास्तव, आर. पी. : हिन्दी शिक्षण, बी–147, अमर कालोनी, लाजपत नगर, नई दिल्ली–24।

इकाई 5

लिखित अभिव्यक्ति कौशल का विकास

: रूपरेखा :

5.1 प्रस्तावना

5.2 उद्देश्य

5.3 लेखन का महत्त्व

5.4 लेखन की प्रक्रिया

5.5 लिखित रचना के प्रकार एवं उनका शिक्षण

5.5.1 वर्णन

5.5.2 पत्र

5.5.3 निबंध लेखन

5.5.4 सार लेखन

5.5.5 व्याख्या

5.5.6 समीक्षा लेखन

5.5.7 रिपोर्ताज लेखन

5.5.8 संवाद लेखन

5.5.9 भाव पल्लवन

5.5.10 जीवनी एवं आत्मकथा

5.5.11 कहानी लेखन

5.5.12 सृजनात्मक लेखन

5.6 लिखित कार्य का संशोधन

5.7 सारांश

5.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.9 उपयोगी पुस्तकें

4.10 पाठ योजना

5.1 प्रस्तावना

अभिव्यक्ति के दो रूप हैं — मौखिक तथा लिखित । मौखिक अभिव्यक्ति का विकास नैसर्गिक रूप से मातृभाषा के श्रवण, अनुकरण, आवृत्ति एवं अभ्यास द्वारा होता है । किन्तु लिखित भावाभिव्यक्ति के लिए शब्द चयन, वाक्य गठन, विचार-क्रम की सुसम्बद्धता, शुद्ध वर्तनी लेखन, विराम चिह्नों का यथोचित प्रयोग तथा उपयुक्त भाषा शैली का शिक्षण आवश्यक है ।

रचना शिक्षण के विभिन्न शैक्षिक स्तरों के अनुसार अनेक रूप हैं । माध्यमिक स्तर पर लिखित अभिव्यक्ति की क्षमता के विकास के लिए हम निर्देशित रचना, स्वतंत्र रचना, सृजनात्मक रचना का सहारा लेते हैं । इस इकाई में आप लिखित अभिव्यक्ति के विभिन्न रूपों — निबन्ध लेखन, पत्र लेखन, भाव पल्लवन, सार लेखन, कहानी लेखन आदि के सबंध में अध्ययन करेंगे ।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई पढ़ने के बाद आप **:**

- लेखन के महत्त्व एवं उसकी प्रक्रिया का उल्लेख कर सकेंगे ।
- अनुलेख, श्रुतलेख तथा स्वतंत्र लेख के अन्तर को स्पष्ट कर करेंगे ।
- लिखित रचना के प्रकार — निर्देशित तथा स्वतंत्र रचना का भेद बता सकेंगे ।
- पत्र लेखन, निबन्ध लेखन, कहानी लेखन, भाव पल्लव तथा सार लेखन के क्रम का निर्धारण कर सकेंगे ।
- सृजनात्मक लेखन का महत्व बता सकेंगे ।

5.3 लेखन का महत्त्व

किसी भी भाषा में दक्षता प्राप्त करने के लिए मौखिक अभिव्यक्ति तथा वाचन के साथ-साथ लेखन कौशल में दक्ष होना आवश्यक है । प्रभावशाली लिखित अभिव्यक्ति के माध्यम से हम दूरस्थ व्यक्ति के पास अपने विचार उसी रूप में संप्रेषित करने में सक्षम हो सकते हैं जिस रूप में हम सम्मुख उपस्थित व्यक्ति से मौखिक रूप से कह पाते । प्राय: देखा जाता है कि लिखित रचना मौखिक रचना की अपेक्षा अधिक सुगठित, सशक्त, सरल और प्रभावपूर्ण होती है । उच्चकोटि की लिखित रचना युग-युग तक मानव को उत्साह, संदेश और जीवनदायिनी ऊर्जा प्रदान करती रहती है । तुलसी, सूर, प्रेमचन्द, निराला अथवा आचार्य रामचन्द शुक्ल अपनी लिखित रचनाओं के कारण आज भी हमारे सम्मान के भाजन है ।

लिखित रचना का हमारे जीवन में अनेक दृष्टियों से महत्त्व है । हमारे साहित्यिक, सांस्कृतिक, व्यावहारिक, तथा अंतर्राष्ट्रीय क्रियाकलापों का निर्वाह लिखित भाषा के माध्यम से होता है । राष्ट्र के समस्त संसदीय, शासकीय, न्यायिक, सैनिक आदि कार्यों का संवहन लिखित आदेशों और संदेशों से होता है । किसी भी बात को लिखित रूप में ही प्रमाण माना जाता है । ज्ञान-विज्ञान के संचय एवं आदान-प्रदान का माध्यम लिखित रचना है । सृजनात्मक साहित्य का विकास भी मानव की भावात्मक अभिव्यक्ति या सिसृक्षा के परिणामस्वरूप ललित साहित्य के रूप में हुआ है । विद्यालयीय स्तर पर भी लिखित रचना का अत्यधिक महत्त्व है । किसी भी विषय पर सुसम्बद्ध एवं क्रमबद्ध रूप से विचार प्रकट करने के कौशल की प्राप्ति में लिखित रचना शिक्षण अत्यंत उपयोगी होता है । रचना का आशय ही है — सार्थक, सुसम्बद्ध, सोद्देश्य, कलात्मक अभिव्यक्ति । लिखित रचना की शिक्षा द्वारा बालकों की सृजनात्मक प्रतिभा को जागृत कर उन्हें स्वतंत्र भाव प्रकाशन के लिए प्रेरित किया जा सकता है ।

बोध प्रश्न :

1. अभिव्यक्ति के दो रूप कौन-कौन से हैं ?

....

....

....

....

....

....

2. लिखित अभिव्यक्ति की क्या उपयोगिता है ? उत्तर तीन पंक्तियों में दें।

....

....

....

....

....

....

5.4 लेखन की प्रक्रिया

लिखित रचना के शिक्षण से पूर्व छात्रों में लेखन तत्परता का विकास करना आवश्यक है। तत्परता और तैयारी के लिए हमें 'सरल से कठिन की ओर' शिक्षण सूत्र को अपनाना चाहिए। इस संबंध में जे. मैस्की एवं जे. मैनरो का कथन है कि जिन वस्तुओं पर लिखने की शिक्षा दी जाय उनका क्रम इस प्रकार रहे — जमीन पर अंगुली से, श्यामपट्ट पर खड़िया से, स्लेट पर बत्ती से, तख्ती पर कलम से और अन्त में कागज पर होल्डर व स्याही या पैन से। प्रारम्भिक स्तर पर शिक्षार्थी को तख्ती या स्लेट अथवा अपनी कापी पर वर्ण रचना का अभ्यास कराया जाता है। शनैः शनैः वह सुलेख और अनुलेख द्वारा सुन्दर, सुडौल और समाकृतिक शब्दों तथा वाक्यों का लेखन सीखता है। वाक्य रचना के अभ्यास के अनन्तर अनुच्छेद लेखन सीखता है और तदन्तर पत्र लेखन, निबन्ध लेखन आदि।

माध्यमिक स्तर पर लिखित अभिव्यक्ति के विकास के लिए सामान्यतः निर्देशित रचनाओं पर बल दिया जाता है, अर्थात् रचना की विषय सामग्री पर छात्रों के साथ चर्चा की जाती है कि वह रचना किस प्रकार लिखी जाय और इस दृष्टि से उसकी रूपरेखा दे दी जाती है। परिचित विषय सामग्री और निर्दिष्ट रूपरेखा पर आधारित इस प्रकार की रचना को निर्दिष्ट रचना कहते हैं। दूसरे प्रकार की लिखित रचना मुक्त या स्वतंत्र रचना कहलाती है। इसमें लेखक को भावभिव्यक्ति की दृष्टि से स्वेच्छानुसार शब्दों को चुनकर विषयवस्तु को संयोजित करने की स्वतंत्रता रहती है। पत्र-प्रपत्र लेखन के नियमों के प्रतिबंधों की भाँति वह नियमों से बंधा नहीं रहता। स्वतंत्र रचना के कुछ प्रकार हैं — यात्रा वर्णन, प्रकृति वर्णन, जीवनी लेखन आदि।

संक्षेप में रचना शिक्षण के लिए निम्नलिखित प्रक्रिया अपनाई जाती है :

- विषय तथा विद्या का चुनाव।
- विषय का मौखिक विवेचन — चित्र वर्णन, प्रश्नोत्तर के द्वारा।
- रूपरेखा प्रस्तुत करना।
- लेखन कार्य।
- संशोधन कार्य।

बोध प्रश्न :

3. प्रारम्भिक स्तर पर सुलेख के अभ्यास के लिए किन वस्तुओं का उपयोग करना चाहिए ? क्रमानुसार चार पंक्तियों में उल्लेख करें।

....

....

....

....

....

....

4. निर्दिष्ट रचना किसे कहते है ? तीन पंक्तियों में लिखें।

....

....
....
....
....
....

5.5 लिखित रचना के प्रकार एवं उनका शिक्षण

लिखित रचना का प्रारंभिक रूप अनुलेख है। लिखित सामग्री को देखकर उसकी नकल करने को अनुलेख कहते हैं। अनुकरण के द्वारा बालकों को सिखाने के लिए प्रारम्भ में अनुलेख का अभ्यास कराया जाता है। इसके द्वारा बालक सुलेख का भी अभ्यास करता है। श्रुत लेख के द्वारा शिक्षार्थी को लेखन में गति, भावग्रहण तथा स्मृति के आधार पर ध्वनियों के अभिज्ञान का अभ्यास कराया जाता है। इस प्रकार के अभ्यास के बाद माध्यमिक स्तर पर छात्रों को विविध प्रकार की रचनाओं का शिक्षण कराया जाता है। कक्षा–शिक्षण की दृष्टि से रचना के विविध रूप है **:**

1. वर्णन — चित्रों के आधार पर; इतिहास, भूगोल के तथ्यों के आधार पर; स्वानुभव पर आधारित जैसे रेलवे प्लेटफार्म, बाजार आदि के दृश्यों का वर्णन।
2. पत्र
3. लेख एवं लेखन
4. सार लेखन
5. व्याख्या
6. समीक्षा लेखन
7. रिपोर्ताज लेखन
8. संवाद लेखन
9. भाव पल्लवन
10. जीवनी एवं आत्मकथा
11. कहानी लेखन

लिखित रचना शिक्षण के लिए निम्नलिखित सामान्य विधियों का आश्रय लिया जा सकता है **:**

1. **चित्र वर्णन विधि —** शिक्षार्थियों को चित्र दिखाकर उसमें अंकित दृश्यों और घटनाओं पर प्रश्न पूछे जाते हैं। अपने उत्तरों के आधार पर शिक्षार्थियों को रचना लेखन के लिए प्रेरित किया जाता है। कक्षा 6 तक यह प्रणाली बहुत उपयोगी है।
2. **प्रश्नोत्तर विधि —** अध्यापक छात्रों के प्रश्नोत्तरों के आधार पर श्यामपट्ट निबंध के विचार–बिन्दु अंकित करता है। छात्र उन बिन्दुओं के आधार पर रचना करते हैं।
3. **उद्‌बोधन विधि —** छात्रों की स्मरण शक्ति को उद्‌बुद्ध करने के लिए छात्रों को चित्रों और प्रश्नों के माध्यम से उत्प्रेरित किया जाता है। जीवन–चरित्र, दृश्य, आत्मकथा लेखन में इस विधि का उपयोग अधिक होता हैं।
4. **रूपरेखा विधि —** अध्यापक कुछ संकेत–सूत्र देकर शिक्षार्थियों को रचना शिक्षण में प्रवृत्त करता है। इस विधि को सूत्र विधि अथवा प्रबोधन विधि भी कहते हैं।
5. **प्रवचन विधि —** यह विधि उद्‌बोधन विधि से विपरीत है। इसमें शिक्षक स्वयं विषय–सामग्री के संबंध में वर्णन करता है और छात्र उसको सुनकर पुनर्रचना करते हैं।
6. **स्वाध्याय या मंत्रणा विधि —** अध्यापक के परामर्थ से छात्र विभिन्न पुस्तकों और पत्र–पत्रिकाओं से विषय सामग्री संकलित कर अपने स्वाध्याय के आधार पर रचना करते हैं।
7. **विचार-विमर्श अथवा परिचर्चा विधि —** छात्र खण्डन–मण्डन के विविध तर्क देकर परस्पर वाद–विवाद के द्वारा अपने पक्ष का प्रतिपादन करते है। तदनन्तर प्राप्त सामग्री के आधार पर निबंध लिखते हैं।

8. **आदर्श अनुकरण विधि –** किसी विशेष शैली में लिखित रचना के आधार पर रचना करना अनुकरण विधि का प्रयोग करना है।

शिक्षार्थियों की मानसिक योग्यता, भाषिक स्तर रुचि तथा विषय के आधार पर रचना-शिक्षण की अनेक विधियाँ हो सकती है। प्रारंभिक स्तर पर प्रश्नोत्तर और चित्र वर्णन विधि अधिक उपयुक्त हो सकती है तो रूपरेखा विधि, उद्‌बोधन विधि, प्रवचन विधि, स्वाध्याय या मंत्रणा विधि, विचार विमर्श विधि उच्च कक्षाओं में उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं।

बोध प्रश्न :

5. तर्क और कल्पना को उद्‌बद्ध करने वाली दो विधियों के नाम लिखिए।

....

....

....

....

....

....

6. छात्र स्वयं किस विधि से रचना करने लगता है :

(अ) परिचर्चा विधि

(आ) प्रवचन विधि

(इ) स्वाध्याय विधि

(ई) चित्र विधि

5.5.1 वर्णन

भावाभिव्यक्ति के लिए मनोनुकूल शब्द चयन की योग्यता और सामर्थ्य प्रदान करना वर्णन लेखन शिक्षण का उद्देश्य है ताकि शिक्षार्थी सुने हुए अथवा बातचीत पर आधारित विषयों का संक्षिप्त वर्णन कर सकें। वर्णन के अन्तर्गत कुछ विषय इस प्रकार हो सकते हैं – घर, विद्यालय, पशु-पक्षी, खेल-कूद, उत्सव, प्रदर्शनी आदि।

5.5.2 पत्र

प्रारम्भिक स्तर पर घरेलू पत्र लेखन कराया जाता है जैसे माता-पिता, मित्र-भाई तो पत्र, प्रधानाध्यापक को प्रार्थना पत्र। माध्यमिक स्तर पर पत्रों के रूप एवं मात्रा में थोड़ा परिवर्तन आ जाता है। उच्चतर माध्यमिक स्तर पर सभी प्रकार के पत्रों के लेखन का अभ्यास कराया जाता है।

सामान्य रूप से हम पत्रों को दो श्रेणियों में विभक्त कर सकते है :

1. व्यक्तिगत पत्र या अनौपचारिक पत्र

2. कार्यालयीय पत्र या औपचारिक पत्र

व्यक्तिगत पत्र हैं – पारिवारिक पत्र, संपादक के नाम पत्र, निमंत्रण पत्र।

कार्यालयीय पत्र हैं – नौकरी के लिए प्रार्थना पत्र, शिकायत पत्र, आवेदन-पत्र, पदाधिकारियों को कार्यालयीय विषयों पर पत्र, व्यावसायिक पत्र।

व्यक्तिगत पत्र लेखन में पत्र की सरलता, सुबोध भाषा, छोटे वाक्य तथा प्रसंग गत बातों का उल्लेख महत्त्वपूर्ण होता है। इनका लेखन कुछ पत्रों के नमूनों के द्वारा सिखाया जाना चाहिए। पारिवारिक पत्रों में आत्मीयता की भावाभिव्यक्ति पर विशेष बल देना चाहिए। ऐसे पत्रों में यदि अनौपचारिकता का पुट हो तभी अच्छे पत्र लिखे जा सकते हैं।

अनौपचारिक या व्यक्तिगत पत्र – इस प्रकार के पत्र के आठ भाग होते हैं – लिखने का स्थान, दिनांक, संबोधन, अभिवादन, पत्र के विषय का आरंभ, पत्र का क्लेवर, उपसंहार या समाप्ति, पत्र प्राप्त करने वाले का पता। उक्त बिन्दुओं पर आधृत 'मित्र को पत्र' का एक नमूना यहाँ प्रस्तुत हैं :

41-ए. कमला नगर

दिल्ली-110007

दिनांक 20.8.97

प्रिय मित्र नरेश

सप्रेम नमस्कार,

तुम्हारा पत्र मिला। पढ़कर अति प्रसन्नता हुई। ....

पत्र का कलेवर .... ।

घर में माता जी एवं पिता जी को प्रणाम। सुनीता दीदी को नमस्ते तथा रवि को प्यार। अतिशीघ्र अपनी कुशलता का समाचार देना।

तुम्हारा अभिन्न मित्र

प्रेम कुमार

श्री नरेश कुमार

104, विवेकानन्द नगर

वाराणसी उत्तर प्रदेश-221002

औपचारिक पत्र

कार्यालयीय और व्यावसायिक पत्रों को औपचारिक पत्र कहते हैं। आवेदन पत्र और प्रार्थना पत्र भी औपचारिक पत्रों के अन्तर्गत आते हैं। औपचारिक पत्र के निम्नलिखित अंग होते हैं — पता और दिनांक संबोधन, कही जाने वाली बात और पत्र की समाप्ति पर हस्ताक्षर एवं पत्र प्राप्त करने वाले का पता।

अनौपचारिक पत्रों में संबोधन, पूज्य पिता जी, प्रिय भाई, आदि लिखा जाता हैं किन्तु औपचारिक पत्रों में 'महोदय' या 'श्रीमान' आदि संबोधन होता है। पत्र की सामग्री संबोधन के बाद ही प्रारंभ हो जाती है, अभिवादन का प्रयोग नहीं होता। अंत में 'धन्यवाद सहित' और भवदीय लिखकर अपने हस्ताक्षर किये जाते हैं। पत्र के लिफाफे पर पाने वाले का पता लिखा जाता है। पत्र भेजने वाले व्यक्ति या कार्यालय का पता लिफाफे पर दाई और नीचे कोने पर लिखा जाता है।

5.5.3 निबंध लेखन

निबंध लेखन रचना शिक्षण की महत्त्वपूर्ण विद्या है। निबंध ऐसी स्वतंत्र रचना को कहते है जिसमें सीमित समय में हम अपनें विचारों को सुसंबद्ध रीति से प्रभावशाली ढंग से व्यक्त करते हैं। यत्र-तत्र उद्धरणों, सूक्तियों, काव्य पंक्तियों आदि का प्रयोग करने से निबंध लेखन में लालित्य आ जाता हैं।

निबंध के तीन अंग होते हैं — आरंभ, मध्य भाग और अंत।

आरंभ को भूमिका या प्रस्तावना कहते हैं। आरंभ जितना प्रभावशाली और आकर्षक होगा, निबंध उतना ही अच्छा बना पड़ेगा। मध्य भाग में विषयवस्तु का अनेक अनुच्छेदों में प्रतिपादन किया जाता हैं। अंत को उपसंहार या निष्कर्ष कहते हैं। इसमें निबन्ध का समापन इस रूप में किया जाता है कि लिखक सारी वस्तु को समेट कर अपनी प्रस्तुति का पाठक पर गहरा प्रभाव छोड़ सके।

निबन्ध के प्रकार :

सामान्यतया निबंधो के चार प्रकार होते हैं — विवरणात्मक, वर्णनात्मक, विचारात्मक, भावात्मक। विवरणात्मक, निबंध में घटनाओं, यात्राओं, संस्मरणों आदि का विवरण होता है। दूसरी कोटि वर्णनात्मक निबन्धों की ही है। इसमें नगर, दृश्यों, ऋतुओं, पर्वों का वर्णन किया जाता है। विचारात्मक निबंधों में विचारों की प्रधानता रहती है। ऐसे निबंधो में विषय प्रतिपादन के लिए तर्क देना आवश्यक है। जैसे — विज्ञान से हानि-लाभ, चलचित्र का समाज पर प्रभाव विचारात्मक निबंध हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के 'क्रोध', करुणा आदि भी इसी कोटि के निबंध हैं। चौथे प्रकार के निबंध भावात्मक निबंध होते हैं। इन निबंधों में विचार और तर्क की अपेक्षा तीव्र अनुभूति या आत्माभिव्यक्ति और प्रतिक्रिया की प्रधानता होती

है। इनकी भाषा अदिकाधिक मर्मस्पर्शी, काव्यात्मक, लालित्यपूर्ण तथा प्रवाहमयी होती है। इन्हें ललित निबंध भी कहा जाता है।

निबन्ध रचना शिक्षण में हमें निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए।

विषय चयन के बाद शिक्षार्थियों को उस पर विचार करने के लिए कुछ समय देना चाहिए। शिक्षार्थियों के मन में जो विचार आते जाएँ, उनके संकेत लिखते जाएँ। रचना को सरस एवं भावाभिव्यंजक तथा मौलिक बनाना चाहिए। पहले रूपरेखा बनाकर उसे अनुच्छेदों में बाँट लेना चाहिए। शुद्ध एवं प्रांजल भाषा में तर्कपूर्ण ढंग से विषयवस्तु का प्रतिपादन करना चाहिए। शुद्ध, वर्तनी, विराम चिह्नों का उपयुक्त प्रयोग तथा व्याकरण के नियमों का ध्यान रखना चाहिए।

निबन्ध रचना शिक्षण की प्रक्रिया

निबन्ध रचना शिक्षण की प्रक्रिया का सर्वप्रथम सोपान है — विषय का चयन। विषय का चुनाव यथासंभव शिक्षार्थियों की सहायता से किया जाना चाहिए। निबंध का विषय शिक्षार्थियों की ज्ञान-सीमा, रुचि और उन के दैनिक जीवन के अनुभवों से संबंधित होना चाहिए। विषय के चयन के बाद शिक्षार्थियों को उस विषय पर विचार करने के लिए कुछ समय देना चाहिए। शिक्षार्थियों को कहें कि उनके मन में जो जो विचार आ रहे हों उन्हें संकेत रूप में कापी में लिखते जाएँ। कक्षा में निबन्ध के संबंध में परिचर्चा कराएँ। उसके बाद विषयवस्तु का विस्तार विकासात्मक प्रश्नों के माध्यम से किया जाए। कक्षा में मौखिक रूप से परिचर्चा कर लेने पर छात्र अभिव्यक्ति संबंधी उपयुक्त शब्दावली, विचारों की क्रमबद्धता तथा तर्कपूर्ण शैली से पूर्णतया अभिज्ञ हो जाते हैं। विचार बिन्दु का विस्तार एक एक अनुच्छेद में क्रमबद्ध रीति से करते हुए निबन्ध का क्लेवर विकसित करें। विषय का प्रतिपादन तकपूर्ण ढंग ले शुद्ध और प्रांजल भाषा में हो। निबन्ध को रोचक, सजीव और प्रमाणिक बनाने के लिए तथ्यों, उदाहरणों ओर विविध उद्धरणों का समावेश किया जाय।

शिक्षक शिक्षार्थियों की सहायता के लिए श्यामपट्ट पर विषयवस्तु को रूपरेखा के रूप में प्रस्तुत कर सकता हैं। रूपरेखा लेखन का मुख्य उद्देश्य विषय-सामग्री के विकास को क्रमबद्ध और सुसंबद्ध रूप से प्रस्तुत करने में शिक्षार्थियों की सहायता करना है। रूपरेखा निर्माण के पश्चात् विद्यार्थियों को निबन्ध लेखन का निर्देश देना चाहिए। संशोधन कार्य अध्यापक द्वारा, छात्रों द्वारा, परस्पर विनिमय द्वारा तथा सामान्य त्रुटियों को श्यामपट्ट पर लिख कर सामूहिक रीति से कराया जा सकता है।

बोध प्रश्न :

7. निबंध के प्रमुख अंग क्या है ? चार पंक्तियों में स्पष्ट करें।

....

....

....

....

....

....

8. निबंध के प्रकारों का उल्लेख करें।

....

....

....

....

....

....

5.5.4 सार लेखन

किसी लेख, आख्यान, कहानी, सूचना, घटना आदि के मुख्य भाव और विचार की रक्षा करते हुए उसे लगभग 1/3 आकार में लिखना सार लेखन, संक्षिप्तीकरण या संक्षेपण कहलाता है। पूरी रचना या पुस्तक पढ़ने के बाद हम सार लेखन के माध्यम से उस विषय की मुख्य-मुख्य बातें कम समय में जान लेते हैं। सार लेखन से हमारे लेख में सामासिकता अर्थात् बड़े वाक्यों को थोड़े से शब्दों में लिखने की क्षमता विकसित होती हैं। सार लेखन के नियमित अभ्यास से शिक्षार्थी में किसी पाठ, अनुच्छेद आलेख आदि के मूलभाव को ग्रहण करने की क्षमता का विकास होता है।

सार लेखन शिक्षण :

शिक्षार्थियों में सार लेखन की कुशलता विकसित करने के लिए शिक्षार्थियों को निम्नलिखित बिंदुओं को ध्यान में रखने का निर्देश दें **:**

- वे सार लेखन के लिए दिए गए गद्यांश/काव्यांश को दो-तीन बार ध्यान से पढ़ें।
- पढ़ने के साथ-साथ दिए गए अंश के उन शब्दों या कथनों को रेखांकित करते जाएँ जो लेखक के आशय को उजागर करते हों।
- सार में मूल की सारी मुख्य बातें आ जानी चाहिए। कोई महत्त्वपूर्ण बिंदु छूटना नहीं चाहिए।
- सार लेखन में मूल में दोहराई गई बातों, अलंकारो, उदाहरणों को छोड़ देना चाहिए। लेकिन वास्तविक तत्त्व नहीं छूटना चाहिए।
- सार दिए गए अंश का एक तिहाई होना चाहिए। सार लेखन के बाद शब्दों को गिन लिया जाए। यदि शब्दों की संख्या तिहाई या निर्धारित संख्या से अधिक हो तो अनावश्यक शब्दों को निकाल देना चाहिए।
- सार की भाषा यथासंभव अपनी तथा सरल होनी चाहिए।
- सार लेखन के पश्चात् सार का शीर्षक दिया जाना चाहिए। शीर्षक दिए गए अंश के मूल या केन्द्रीय भाव में निहित होता है। अत**:** उसे बार-बार पढ़कर यह देखना चाहिए कि लेखक ने किस बात पर अधिक बल दिया है। शीर्षक के निर्धारण में प्राय**:** मूल का आरंभिक अथवा अंतिम अंश विशेष रूप से सहायक होता है। किन्तु साथ में यह भी ध्यान रखना चाहिए कि शीर्षक का संबंध पूरे अंश से होता है, केवल प्रारंभिक या अंतिम अंश से ही नहीं।
- शीर्षक यथासंभव संक्षिप्त एवं आकर्षक होना चाहिए; जो एक शब्द एक से अधिक शब्द अथवा बहुत छोटा वाक्य हो सकता है।

बोध प्रश्न :

9. सार लेखन में मूल विषय-सामग्री का कितना आकार लिखा जाना चाहिए ?

   (क) 1/4 अंश (ख) 1/2 अंश

   (ग) 1/3 अंश (घ) 3./4 अंश

5.5.5 व्याख्या

साहित्य के किन्ही विशेष गद्यात्मक तथा पद्यात्मक स्थलों का विस्तारपूर्वक विवेचन व्याख्या कहलाता है। व्याख्या में सर्वप्रथम संदर्भ का उल्लेख किया जाता है जिसमें पुस्तक तथा लेखक का नाम दिया जाता है। इसके अनंतर उस स्थल के प्रसंग का उल्लेख लिखा जाता है। संदर्भ के अनन्तर व्याख्येय स्थल के सरलार्थ तथा निहित भावों का विस्तार से उल्लेख किया जाता है। विशेष निहितार्थ का भी विवेचन किया जाता है। पद्य अथवा गद्य की शैली तथा रस एवं अलंकार का निर्देश किया जाता है तथा पद्य में प्रयुक्त छंद का नाम बताया जाता है। व्याख्या में व्याख्येय स्थल के अनुसार ही विवेचन करना होता है। विशेष विचारणीय विषय पर व्याख्याता अपना मत भी प्रस्तुत कर सकता है।

व्याख्या शिक्षण विधि

व्याख्या शिक्षण के लिए शिक्षार्थियों की पाठ्य-पुस्तक में से विशेष स्थलों का चयन करना चाहिए तथा शिक्षार्थियों से चर्चा के अनन्तर व्याख्या की रूपरेखा तैयार कर उन्हें व्याख्येय स्थल की व्याख्या कक्षा में

ही करने का निर्देश देना चाहिए। मध्य में शिक्षक कक्षा में घूमते हुए शिक्षार्थियों द्वारा की जा रही प्रगति को देखे तथा आवश्यक होने पर इन्हें सुझाव भी दे । व्याख्या लिखने में कठिनाई अनुभव करने वाले शिक्षार्थियों की समस्या का समाधान करना चाहिए। व्याख्या के लिए निर्धारित समय की समाप्ति के अनन्तर एक दो छात्रों द्वारा की गई व्याख्या को पढ़ कर सुनवाना चाहिए तथा उसके सम्बन्ध में चर्चा करवानी चाहिए। गृहकार्य के रूप में व्याख्या-स्थलों की व्याख्या करने का कार्य देना चाहिए।

बोध प्रश्न :

10. व्याख्या शिक्षण की विधि चार पंक्तियों में लिखिए।

....

....

....

....

5.5.6 समीक्षा लेखन

किसी पुस्तक अथवा लेख का विवेचनात्मक मूल्यांकन समीक्षा कहलाता है उसे समालोचना भी कहा जाता है। समीक्षा में पुस्तक के बाह्य एवं आभ्यंतर रूपों का विवरण प्रस्तुत किया जाता है परन्तु मुख्य रूप से आभ्यंतर रूप पर ही समीक्षक का ध्यान केन्द्रित होता है। बाह्य रूप के संबंध में दो तीन पंक्तियाँ ही पर्याप्त मानी जाती है। आभ्यन्तर रूप के संबंध में पुस्तक के विषय उनकी क्रमबद्धता तथा उनके प्रतिपादन कौशल के संबंध में विवरण प्रस्तुत किया जाता है। तदनन्तर पुस्तक अथवा निबंध में चर्चित विचारों की प्रामाणिकता तथा उनके औचित्य का भी विवेचन किया जाता है। समीक्ष्य ग्रंथ अथवा निबंध में लेखक के व्यक्तित्व की क्यो छाप पड़ी है तथा लेखक ने प्रतिपाद्य विषय के साथ कितना न्याय किया है इसकी समालोचना की जाती है। पुस्तक की भाषा की शुद्धता, प्रांजलता तथा प्रवाह पर टिप्पणी की जाती है तथा समाज द्वारा उसकी ग्राह्यता पर अपना मंतव्य प्रस्तुत किया जाता है।

समीक्षा लेखन शिक्षण

समीक्षा लेखन उच्चतर माध्यमिक तथा उससे ऊपर की कक्षाओं में ही सिखाना उचित है। इससे छोटी कक्षाओं में न तो शिक्षार्थियों का मानसिक विकास ही इतना हो पाता है कि वे पुस्तक अथवा निबंध की समालोचना कर सकें और न ही उनका पर्याप्त बौद्धिक विकास हो पाता है। प्रारंभ में निबंध की समीक्षा से ही शिक्षण शुरू करना चाहिए। पहले शिक्षक को समीक्षा की जानकारी तथा समीक्षा के सिद्धांतो का परिचय कक्षा में परिचर्या के माध्यम से देना चाहिए। तदनन्तर उन्हें समीक्ष्य निबंध को दो-तीन बार पढ़ कर उनके मन में आने वाली विशेष बातों को अपनी पुस्तिका में संक्षिप्त टिप्पणी के रूप में लिख लेना चाहिए। शिक्षार्थियों से उनके द्वारा संग्रहीत की गई टिप्पणियों की जानकारी लेनी चाहिए। इन टिप्पणियों में निबंध की गुणवत्ता तथा दोषों की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। शिक्षार्थियों से चर्चा के अनन्तर उचित एवं आवश्यक बिन्दु श्यामपट्ट पर अंकित कर देने चाहिए तथा उनके आधार पर निबंध की समीक्षा घर से लिखकर लाने का निर्देश देना चाहिए। निबंध की समीक्षा का अभ्यास होने के अनन्तर शिक्षार्थियों को शीतावकाश के कार्य के रूप में अपनी पाठ्य-पुस्तक की समीक्षा लिखने का निर्देश देना चाहिए। शिक्षार्थियों द्वारा पुस्तकालय में पढ़ी गई पुस्तकों का समीक्षा कार्य भी दिया जा सकता है।

बोध प्रश्न :

11. किसी पुस्तक की समीक्षा लिखते समय किन पक्षों पर ध्यान दिया जाता है। उत्तर चार पंक्तियों में लिखें।

....

....

....

....

....

....

5.5.7 रिपोर्ताज लेखन

किसी घटना अथवा परिस्थिति का विवरण प्रस्तुत करना रिपोर्ताज कहलाता है। यह अंग्रेजी के 'रिपोर्ट' शब्द से विकसित हुआ है जिसका अर्थ है जैसा देखा वैसा बताना। रिपोर्ताज का सर्वाधिक प्रयोग पत्रकारिता में होता है परन्तु यह साहित्य की भी एक सशक्त विद्या है। किसी शहर में भड़के दंगे, किसी भवन में लगी आग, किसी धार्मिक, सामाजिक अथवा राजनैतिक समारोह का विवरण भी रिपोर्ताज की विषय होता है। राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय खेल प्रतियोगिताओं का विवरण तथा उनके संबंध में टिप्पणी भी रिपोर्जात कहलाती है।

रिपोर्ताज लेखन शिक्षण

कक्षा में शिक्षार्थियों से चर्चा करके उन के क्षेत्र में घटने वाली उल्लेखनीय घटनाओं की चर्चा करनी चाहिए। तथा छात्रों को उन का मौखिक विवरण देने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। किसी एक उल्लेखनीय घटना को ले कर शिक्षार्थियों द्वारा प्रस्तुत विभिन्न तथ्यों को श्यामपट्ट पर अंकित करते जाना चाहिए तथा अंत में शिक्षार्थियों से चर्चा कर उनका पूर्वापर क्रम निर्धारित करके उसके आधार पर रिपोर्ताज तैयार करने का निर्देश देना चाहिए। शिक्षार्थियों द्वारा रिपोर्ताज पूरी कर लेने के अनन्तर एक या दो छात्रों से उनके द्वारा लिखी गयी रिपोर्ताज कक्षा में सुनाने के लिए कहना चाहिए। पूरी रिपोर्ताज पढ़ लेने पर शिक्षार्थियों की उस पर प्रतिक्रिया मांगनी चाहिए और उस पर चर्चा करनी चाहिए। शिक्षार्थियों के अपने-अपने क्षेत्र में घटी विशेष घटनाओं पर गृहकार्य के रूप में रिपोर्ताज लिखने का निर्देश देना चाहिए।

बोध प्रश्न :

12. रिपोर्ताज का सबसे अधिक महत्त्व समाज के किस क्षेत्र में हैं ? चार पंक्तियों में स्पष्ट करें।

....

....

....

....

....

....

5.5.8 संवाद लेखन

माध्यमिक स्तर पर शिक्षार्थियों को संवाद लेखन के अभ्यास के अवसर भी देने चाहिए। सामाजिक जीवन में संवाद का विशेष महत्त्व है। संक्षिप्त, भावानुकूल अभिव्यक्ति, दूसरे पक्ष की बातों पर सार्थक प्रतिक्रिया अच्छे संवाद की विशेषताएँ मानी जाती है। संवाद लेखन के अभ्यास द्वारा शिक्षार्थियों में इन गुणों का विकास किया जा सकता है। इस प्रकार के अभ्यास के लिए कहानियाँ उपयुक्त माध्यम हो सकती है। प्रारम्भ में छोटी-छोटी कहानियाँ ली जा सकती है, बाद में लंबी कहानियाँ ली जा सकती हैं। नमूने के लिए 'कोयला-हीरा' संवाद जैसे पाठ का अध्ययन करा सकते हैं। मैथिलीशरण गुप्त की कविता 'मां कह एक कहानी' तथा बालकृष्ण राव की कविता 'फिर क्या होगा उसके बाद' का भी गद्य में संवादात्मक रूपांतरण कराया जा सकता है।

संवाद लेखन का अभ्यास कराते समय निम्नलिखित बातों पर विशेष ध्यान दें :

- संवाद की भाषा सरल और बोलचाल की हो,
- पात्रों की बातचीत में संक्षिप्तता हो,
- वार्तालाप के अंत में निश्चित परिणाम अवश्य निकले,
- विचारों में प्रवाह, स्वाभाविकता हो तथा परस्पर संबंद्धता हो,
- प्रचलित मुहावरों का यथास्थान प्रयोग हो,
- विराम चिह्नों की तथा अन्य व्याकरणिक अशुद्धियाँ न हों,

5.5.9 भाव पल्लवन

किसी उक्ति, विचार अथवा वाक्य के मूलभाव को विस्तार के साथ समझाकर लिखना भाव पल्लवन कहलाता है। कभी–कभी थोड़े शब्दों में बहुत कुछ कह दिया जाता है। इसी को गागर में सागर भरना कहते हैं। इसी प्रकार की संक्षिप्त सटीक अभिव्यक्ति को विस्तार से प्रस्तुत करना ही भाव पल्लवन है। मूलभाव को समझाने के लिए किसी उदाहरण, सहायक भाव, धारणा आदि का खण्डन या मण्डन करने के लिए भाव पल्लवन का उपयोग करते हैं। इसमें मूलभाव, मूलभाव की संदर्भगत संगति तथा निहितार्थ का विवेचन करने से भाव पल्लवन की रचना का शिक्षण होता है। अन्त में संपूर्ण विचार में स्थित निहितार्थ या प्रेरणा संदेश लिखा जाता है। भाव पल्लवन में भाषा, वाक्य गठन और शैली का विशेष महत्त्व है। 'होनहार बिरवान के होत चीकने पात' — जैसे गम्भीर अर्थ भरे कथनों का भाव पल्लवन करा कर शिक्षार्थियों को संक्षेप में कही गई किसी गंभीर उक्ति या विचार को परत दर परत खोलना सिखाना भाव पल्लवन शिक्षण कहलाता है। शिक्षार्थियों से चर्चा द्वारा उक्ति में निहित विचारों पर बातचीत की जाती है। तदनन्तर उन विचारों को लिखने के लिए निर्देश दिया जाता है।

बोध प्रश्न :

अपना उत्तर चार पंक्तियों में स्पष्ट करें।

13. भाव पल्लवन में किसका विस्तार किया जाता है ?

....

....

....

....

14. निहितार्थ या प्रेरणा संदेश भाव पल्लवन में किस स्थान में लिखा जाता है ?

....

....

....

....

5.5.10 जीवनी एवं आत्मकथा

जीवनी तथा आत्मकथाएँ किसी भी भाषा के साहित्य की एक महत्त्वपूर्ण विद्या होती है। जीवनी किसी महत्त्वपूर्ण व्यक्तित्व के संबंध में किसी लेखक द्वारा लिखी जाती है जबकि आत्मकथा स्वयं किसी व्यक्ति द्वारा अपने जीवन पर लिखा गया वृत्तांत होता है। जीवनी के लिए आधारभूत सामग्री होती है — लेखक द्वारा व्यक्ति विशेष से किए गए साक्षात्कार, उस द्वारा तथा अन्य लोगों द्वारा उसके संबंध में कही गई बातें तथा उस द्वारा लिखे गए अनेक पत्र आदि। आत्मकथा को व्यक्ति स्वयं लिखता है जिसमें वह अपने जीवन के दर्शन, संघर्षात्मक स्थितियाँ, जीवनी में सम्पर्क में आए विभिन्न लोगों के संबंध में अपने विचार, समसामयिक सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक तथा अध्यात्मिक परिस्थितियों के विषय में विवेचन करता है। आत्मकथा पूर्णतया प्रामाणिक होती है जबकि जीवनी में कई बार ऐसे तथ्य भी आ जाते हैं जिनकी प्रामाणिकता संदेहास्पद होती है। जीवनी तथा आत्मकथा भावी पीढ़ी के लिए उच्च आदर्शों को स्थापित करने तथा शिक्षार्थियों को विभिन्न परिस्थितियों का सामना करने की प्रेरणा देती हैं।

जीवनी तथा आत्मकथा लेखन शिक्षण

शिक्षार्थियों को आत्मकथा शिक्षण से प्रारंभ करना चाहिए। छात्रों से चर्चा करके इस की एक रूपरेखा बनानी चाहिए जिसमें जन्म, माता–पिता, परिवार, शिक्षा, वर्तमान जीवन के संबंध में प्रतिक्रिया तथा भावी इच्छाओं के संबंध में उल्लेख हो। आत्मकथा के अनन्तर छात्रों को अपने परिवार के बड़े लोगों दादा, पिता, ताऊ, चाचा आदि की जीवनी लिखने की प्रेरणा देनी चाहिए। इसके लिए उनके विचारों को जानने के लिए निश्चित प्रश्नों के साथ उनका साक्षात्कार लेने का निर्देश देना चाहिए।

बोध प्रश्न :

15. जीवनी तथा आत्मकथा में अन्तर चार पंक्तियों में स्पष्ट करें।

....

....

....

....

5.5.11 कहानी लेखन

कहानी लेखन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं :

- बालकों की कल्पना, निरीक्षण, स्मरण आदि शक्तियों का तथा सृजनात्मक शक्ति का विकास।
- मानव व्यवहार और चरित्र को समझकर उपयुक्त शब्दों के माध्यम से उनके चित्रण की क्षमता का विकास।
- लिखित अभिव्यक्ति कौशल का विकास।

कहानी लेखन की शिक्षण विधियाँ

छात्रों की आयु बौद्धिक स्तर के आधार पर कहानी लेखन शिक्षण की कई विघयाँ हो सकती है। यात्रा वृत्तांत, चित्र-कथा विधि, रूपरेखा विधि, सुनो और लिखो विधि, संकेतों के आधार पर कहानी लेखन तथा घटना का कहानी शैली में रूपांतर कर लिखना। मनोवैज्ञानिकों ने शिक्षार्थियों की रूचियों के आधार पर पता लगाया है कि 8 वर्ष से 11 वर्ष के शिक्षार्थी परियों की, वीरता भरी तथा साहसी कार्यो, यात्रा वर्णनों एवं पशु-पक्षियों की कहानियों में रुचि लेते हैं। 12 से 14 वर्ष के बच्चे महान व्यक्तियों की जीवन गाथाओं, जासूसी कहानियों और खोज की कहानियों में रुचि लेते हैं। 15 से 18 वर्ष के शिक्षार्थी आधुनिक जीवन की समस्याओं से भरी कहानियों, प्रेम आख्यानों तथा वैज्ञानिक खोज की कहानियों में रुचि लेते है। इसी मनोवैज्ञानिक विकास प्रक्रिया के अनुसार विषयों का चुनाव करके कहानी रचना का शिक्षण करना चाहिए।

बोध प्रश्न :

उत्तर चार पंक्तियों में लिखें।

16. कहानी लेखन शिक्षण के किन्हीं दो उद्देश्यों का उल्लेख कीजिए।

....

....

....

....

17. 12 से 14 वर्ष के बच्चों की रुचि किस प्रकार की कहानियों में होती है ?

....

....

....

....

5.5.12 सृजनात्मक लेखन

मुक्त रूप से स्वतंत्र कल्पना प्रसूत मौलिक अभिव्यक्ति का लेखन सृजनात्मक लेखन है। इसमें कलात्मकता, मौलिकता, लालित्य एवं अनुरंजकता विशेष रूप से अपेक्षित हैं। इस प्रकार की रचना में रचनाकार का व्यक्तित्व स्पष्ट झलकता है। इसमें उसकी चिंतन धाराएँ एवं प्रतिक्रियाएँ अभिव्यक्त होती हैं। वह अपनी कारयित्री प्रतिभा के बल से नूतन रचना करता हैं।

बैलार्ड के अनुसार – सृजनात्मक लेखन शिक्षण का उद्देश्य बालक के व्यक्तित्व का विकास एवं उसकी आत्म प्रकाशन तथा निर्णय शक्ति को उन्नत एवं प्रभावपूर्ण बनाना है।

सृजनात्मक अभिव्यक्ति की दृष्टि से माध्यमिक स्तर पर निम्न प्रकार की रचनाओं का अभ्यास कराया जा सकते हैं :

निबन्ध लेखन, कल्पनापूर्ण वर्णन, विचारात्मक निबंध जैसे — साक्षरता, शांति आदि, भावात्मक निबंध, कहानी लेखन, संवाद लेखन, एकाँकी, गद्य गीत, पैरोडी, कविताएँ आदि ।

सृजनात्मक लेखन प्रक्रिया

1. उपयुक्त प्रकरणों का चयन-ज्ञात विषयों से किया जाय । उनकी प्रकृति ऐतिहासिक, वैज्ञानिक, साहित्यक, समीक्षात्मक, धर्म संस्कृति नीति आदि पक्षों से संबंधित हो सकती है ।
2. शब्द-भण्डार की वृद्धि के लिए पहले प्रस्तुत विषय से सबद्ध शब्द निर्माण कराये जाने चाहिए यथा क्रम से पराक्रम, अनुक्रम आदि । फिर नवीन शब्दों का प्रयोग करते हुए वाक्य रचना, अनुच्छेद रचना तथा निबन्ध लेखन कराना चाहिए ।
3. प्रस्तुत विषय से संबद्ध मुहावरे, लोकोक्तियां, पर्याय, विलोम शब्दों का कोश तैयार कराएँ । उनका प्रयोग शिक्षार्थी सृजनात्मक लेख में करें ।

बोध प्रश्न :

18. सृजनात्मक लेखन में कौन से तीन गुण विशेष रूप से अपेक्षित है ?

....

....

....

19. सृजनात्मक लेखन किस स्तर पर प्रारंभ किया जा सकता है ? चार पंक्तियों में उत्तर लिखें ।

....

....

....

....

....

....

5.6 लिखित कार्य का संशोधन

शिक्षार्थियों की लिखित रचना में वर्तनी, वाक्य रचना, विराम चिह्न, अनुच्छेद-क्रम एवं विषय प्रतिपादन संबंधी त्रुटियों का होना संभव है । ये त्रुटियाँ कथा लेखन कार्य और गृहकार्य दोनों में हो सकती हैं । त्रुटियों की संभावना कम करने के लिए भाषा संबंधी कार्य का अभ्यास अधिकाधिक कराना चाहिए । वर्तनी, शब्द प्रयोग, वाक्य रचना, मुहावरों का प्रयोग, विराम चिह्न, अनुच्छेद रचना आदि का जितना अच्छा ज्ञान शिक्षार्थियों को होगा उतनी ही उनकी रचना संबंधी अशुद्धियाँ कम होंगी ।

लिखित रचना संबंधी त्रुटियों में संयुक्ताक्षरों के लेखन, श, ष, स आदि वर्णों के प्रयोग में अशुद्धियाँ होती हैं । उनका संशोधन अशुद्धियों के संकेत चिह्नों से करना चाहिए । जैसे — 'परीच्छा' में 'च्छा' को गोलाकार कर उसके ऊपर 'क्षा' लिख देना चाहिए । इसी प्रकार विराम चिह्नों की अशुद्धियों का संशोधन संकेत चिह्नों की सहायता से करें । यथा प्रश्नवाचक चिन्ह के लिए '?' संकेत चिह्न लिखें । विषय-सामग्री संबधी अशुद्धियों में प्राय: विचारों की क्रमबद्धता एवं सुसंबद्धता का अभाव आता है । आप सामूहिक रूप से समस्त कक्षा का इन दोषों की ओर ध्यान आकर्षित करें जिससे छात्र तदनुसार स्वयं संशोधन कर सकें । शैली संबंधी त्रुटियों के संशोधन का भी अभ्यास आवश्यक है । उसके अभाव में छात्र विचार एवं भाव की अभिव्यक्ति के अनुरूप ललित और ओजस्वी शैली का प्रयोग नहीं सीख पायेंगे । उपयुक्त शब्द-चयन करके तथा सरस एवं सजीव वर्णन के कुछ उदाहरण प्रस्तुत करके शैली-दोषों का संशोधन कराया जा सकता है ।

संशोधन प्रक्रिया

शिक्षक शिक्षार्थियों के लिखित कार्य का संशोधन यथासंभव उनकी सहायता से ही करे। शिक्षार्थी स्वयं कक्षा के अन्य साथियों के साथ अपनी उत्तर पुस्तिकाएँ परिवर्तित कर संशोधन कर सकते हैं। कभी-कभी अध्यापक कक्षा की सामान्य अशुद्धियों का सामूहिक संशोधन कर चुके तो व्यक्तिशः उनका निरीक्षण कर स्वयं संशोधन की वास्तविकता की जाँच कर सकता है।

बोध प्रश्न :

20. लिखित रचना में प्रायः किस प्रकार की अशुद्धियाँ होती हैं ? चार पंक्तियों में लिखें।

....

....

....

....

5.7 सारांश

इस इकाई में आपने सीखा कि भावों और विचारों की सुसंबद्ध रूप से जब लिखित रूप में अभिव्यक्ति होती है तो उसे हम लिखित अभिव्यक्ति या लिखित रचना कहते है। इसमें शब्द रचना, वाक्य रचना, श्रुतलेखन, अनुच्छेद लेखन, पत्र लेखन, निबंध लेखन, सार लेखन, भाव पल्लवन, कहानी लेखन, कविता लेखन आदि रचनाओं को लिखने की दक्षता का शिक्षण आवश्यक है। लिखित रचना में भाषा की शुद्धता, स्वाभाविकता, व्यावहारिकता, भावों एवं विचारों की अभिव्यक्ति में क्रमबद्धता, तर्कसंगत एवं सुसंबद्ध रूप से विषय का प्रतिपादन, भावों तथा विचारों की मौलिकता, प्रभावोत्पादक शैली का प्रयोग, उचित अनुच्छेदों में विषय सामग्री का विभाजन आदि आवश्यक गुणों की अपेक्षा होती है।

लिखित रचना शिक्षण के लिए मौखिक रचना का अभ्यास आवश्यक है। लिखित रचना का जीवन में बहुत महत्त्व है। लिखित रचना ज्ञान-विज्ञान के सतत विकास एवं संचय का आधार है। सामाजिक क्रियाकलापों, सहयोग एवं संगठन का आधार भी लिखित रचना है। सृजनात्मक एवं ललित साहित्य का विकास लिखित रचना के द्वारा ही सम्भव है।

लिखित रचना के अंग है — सुलेख, अनुलेख, श्रुतलेख, भाषा संबंधी अभ्यास, वाक्य रचना, अनुच्छेद लेखन, उचित विराम चिन्हों का प्रयोग आदि। लिखित रचना दो प्रकार की होती है — निर्देशित तथा स्वतंत्र। रचना के विविध रूप है — वर्णन, संवाद, जीवनी, आत्मकथा, व्याख्या, सार लेखन, भाव पल्लवन, निबंध लेखन, पुस्तक समीक्षा, सृजनात्मक अभिव्यक्ति आदि।

लिखित रचना शिक्षण की प्रक्रिया में उपयुक्त प्रकरणों का चयन, विषय-सामग्री का ज्ञान, लिखित रचना के प्रारूप का ज्ञान, विविध साहित्यिक शैलियों का ज्ञान, कल्पनाशीलता आदि योग्यताओं का विकास करना आता है। रचना शिक्षण की प्रमुख विधियाँ हैं — प्रश्नोत्तर विधि, चित्र वर्णन विधि, उद्‌बोधन विधि, प्रवचन विधि, रूपरेखा विधि, स्वाध्याय या मंत्रणा विधि, तर्क अथवा परिचर्चा विधि, आदर्श अनुकरण विधि आदि। निबंध लिखने की प्रक्रिया में प्रस्तावना, विषय विस्तार, रूपरेखा, रचना कार्य और संशोधन कार्य सम्मिलित हैं। संशोधन कार्य करते समय वर्तनी संबंधी अशुद्धियों के लिए अलग-अलग संकेत चिह्न बना देने चाहिए। रचना संबंधी अशुद्धियों का संशोधन शिक्षक द्वारा या सामूहिक परिमार्जन द्वारा किया जा सकता है।

5.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. लिखित 2. मौखिक

2. लिखित अभिव्यक्ति से शिक्षार्थियों की भाषा परिमार्जित होती, उनके विचारों में स्पष्टता आती है तथा शिक्षार्थियों में सृजनशीलता का विकास होता है एवं ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में वृद्धि होती हैं।

3. जमीन पर अंगुली से, श्यामपट्ट पर खड़िया से, स्लेट पर बत्ती से, तख्ती पर, कलम से अंत में कागज पर पैन से।

4. विषयवस्तु एवं रूपरेखा का निर्देश प्राप्त कर लिखी रचना।

5. 1. परिचर्चा विधि 2. उद्बोधन विधि

6. (इ)

7. आरम्भ या भूमिका, विषयवस्तु का विस्तार, उपसंहार संदेश या निष्कर्ष।

8. वर्णनात्मक, विवरणात्मक, विचारात्मक, भावात्मक।

9. (ग)

10. शिक्षार्थी से व्याख्येय-स्थल के संदर्भ तथा उसके विशेष भाव, निहितार्थ एवं रस तथा अलंकार के संबंध में चर्चा करनी चाहिए। तदनन्तर शिक्षार्थियों को कक्षा में व्याख्या लिखने का निर्देश देना चाहिए। अध्यापक कक्षा में घूम कर छात्रों की कठिनाइयों को दूर करें। इसके बाद एक या दो छात्रों से व्याख्या सुननी चाहिए। अन्त में छात्रों को व्याख्या लिख कर लाने का निर्देश देना चाहिए।

11. (1) बाह्य एवं आभ्यंतर, (2) आभ्यंतर में पुस्तक का कलेवर, भाषा की शुद्धता, प्रांजलता एवं प्रवाह का मूल्यांकन करना चाहिए।

12. पत्रकारिता

13. मूलभाव या विचार का।

14. अन्त में

15. जीवनी अन्य व्यक्ति लिखता है, आत्मकथा व्यक्ति स्वयं लिखता है।

16. शिक्षार्थियों की कल्पना एवं निरीक्षण शक्ति का विकास।

17. जासूसी, खोजपूर्ण तथा साहस की कहानियों में।

18. कलात्मकता, मौलिकता, स्वतंत्र कल्पना।

19. माध्यमिक स्तर पर।

20. वर्तनी संबंधी, वाक्य रचना संबंधी, व्याकरण नियम संबंधी।

5.9 उपयोगी पुस्तकें

प्रयोजन मूलक हिन्दी भाग-1 एवं 2 : प्रकाशन विभाग, आगरा विश्वविद्यालय, आगरा।

पांडेय डॉ. रामशकल : शिक्षा और भाषा, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।

चतुर्वेदी, आचार्य सीताराम : भाषा की शिक्षा, हिन्दी साहित्य कुटीर, वाराणसी।

यादव, श्री राम प्रसाद : हिन्दी शिक्षण, श्रीराम मेहरा प्रकाशन, आगरा।

सिंह, डॉ. निरंजन कुमार : माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।

श्रीवास्तव, डॉ. आर.पी. : भाषा शिक्षण, बी-147, अमर कालोनी, लाजपत नगर, नई दिल्ली-24।

सफाया डॉ. रघुनाथ : हिन्दी शिक्षण विधि, पंजाब किताबघर, जालंधर।

शास्त्री प्रो. भूदेव : मातृभाषा का अध्यापन, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।

4.10 पाठ योजना

कक्षा : सातवीं **विषय :** हिन्दी

अवधि : चालीस मिनट **पाठ :** राष्ट्रध्वज का सम्मान (निबंध)

उद्देश्य :

इस निबंध के लेखन से शिक्षार्थी **:**

1. राष्ट्रध्वज के संबंध में अपने विचार लिखित रूप से अभिव्यक्ति कर सकेंगे।
2. वे राष्ट्रध्वज के विषय में अपनी जानकारी का उपयोग कर सकेंगे।

3. राष्ट्रध्वज के संबंध में नई जानकारी एकत्रित कर सकेंगे।

4. निबंध लेखन की कला से परिचित होंगे।

5. स्वतंत्रता का प्रतीक, प्राणों की आहुति, उत्साह बढ़ाना, शान से फहराना जैसे प्रयोग कर सकेंगे।

6. देश के सम्मान में राष्ट्रध्वज के महत्त्व को समझ सकेंगे।

सहायक सामग्री : राष्ट्रध्वज का चार्ट एवं अन्य सामान्य शिक्षण कक्षा-उपकरण।

पूर्वज्ञान : शिक्षार्थी अपने विद्यालय में 15 अगस्त एवं 26 जनवरी के राष्ट्रीय पर्वों को मनाते हैं तथा वे जानते हैं कि इन अवसरों पर राष्ट्रध्वज फहराया जाता है।

प्रस्तावना

प्रश्न	**संभावित उत्तर**
1. भारत में कौन-कौन से राष्ट्रीय पर्व मनाए जाते हैं ?	15, अगस्त, 26, जनवरी, 2 अक्तूबर
2. आप के विद्यालय में 15 अगस्त एवं 26 जनवरी को क्या कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं ?	राष्ट्रध्वज फहराया जाता है।
3. राष्ट्रध्वज के प्रति हमारे क्या कर्तव्य है ?	समस्या प्रश्न

उद्देश्य कथन : शिक्षक शिक्षार्थियों के विभिन्न उत्तरों को सुनकर उनका संयोजन करते हुए कहेगा कि आज हम 'राष्ट्रध्वज का सम्मान' इस विषय पर निबंध लिखेंगे।

निबंध लेखन प्रक्रिया :

शिक्षक क्रिया	**शिक्षार्थी क्रिया**
शिक्षक **:** निबंध के अंगों के नाम बताइए ?	भूमिका, मध्यभाग, उपसंहार।
शिक्षक **:** भूमिका में क्या-क्या लिखा जाएगा ?	शिक्षार्थी विभिन्न विचार प्रस्तुत करेंगे।
शिक्षक शिक्षार्थियों के संगत विचारों को श्यामपट्ट पर लिखता जाएगा जो अपेक्षित अंश शिक्षार्थियों के विचारों में नहीं आ पाएंगे उन्हें शिक्षक स्वयं प्रश्नों द्वारा प्राप्त करेगा।	
1. भारत के राष्ट्रीय प्रतीकों के नाम बताइए ?	1. राष्ट्र मुद्रा 2. राष्ट्र गान 3. राष्ट्रीय पशु 4. राष्ट्रीय पक्षी
2. किसी राष्ट्र के लिए राष्ट्रध्वज का क्या महत्त्व होता है ?	राष्ट्रध्वज राष्ट्र का गौरव होता है।
3. 15 अगस्त से पूर्व भारत का ध्वज कैसा था।	यूनियन जैक भारत का ध्वज था।
4. तिरंगा ध्वज किस का प्रतीक है ?	हमारी स्वतंत्रता का प्रतीक है।

मध्यभाग/कलेवर :

शिक्षक शिक्षार्थियों को ध्वज के स्वरूप उसके महत्त्व, उसकी विशषताओं तथा उसके संबंध में हमारे कर्तव्य के प्रति अपने विचार प्रकट करने के लिए कहेगा। जो विचार-बिन्दु छात्रों से अछूते रह जाएंगे। उन्हें शिक्षक प्रश्नों के माध्यम से प्राप्त करेगा।

ध्वज का स्वरूप :

1. हमारे राष्ट्रध्वज का अन्य नाम क्या है ?

2. इस के तीनों रंग किस-किस गुण के प्रतीक है ?

3. इस के मध्य का चक्र किस विशेषता का द्योतक है ?

हमारे ध्वज का दूसरा नाम तिरंगा है। इस के तीन रंग आध्यात्मिक उन्नति, शांति एवं समृद्धि के द्योतक हैं। ध्वज के मध्य में विद्यमान चक्र प्रवर्तन तथा गतिशीलता का प्रतीक हैं।

ध्वज का महत्त्व :

1. विश्व के राष्ट्रों में ध्वज का क्या महत्त्व हैं ?
2. भारत को वर्तमान ध्वज प्राप्त करने में किन-किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा ?
3. भारत का वर्तमान राष्ट्रध्वज कब सर्वप्रथम सरकारी तौर पर फहराया गया ?
4. राष्ट्रध्वज कहाँ-कहाँ फहराया जाता हैं ?

विश्व के सभी राष्ट्रों का अपना अपना ध्वज होता है। ध्वज अपने राष्ट्र के सम्मान का प्रतीक होता है। जहां राष्ट्र किसी सम्मेलन, क्रीडा प्रतियोगिता में भाग लेता है वहां उस राष्ट्र कर ध्वज फहराता है। राष्ट्र ध्वज हमारी स्वतंत्रता का प्रतीक है। हमारे राष्ट्रभक्तों ने इसकी रक्षा के लिए प्राणों की भी आहुति दी। विदेशी ब्रिटिश शासन के ध्वज के स्थान पर अपना राष्ट्रध्वज फहराने के प्रयास में अनेक देशभक्त शहीद हो गए। 15 अगस्त 1947 को प्रातः भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहर लाल नेहरु ने इसे लालकिले पर फहराया। तब से जहां भी भारत का प्रतिनिधित्व होता है वहाँ भारत का राष्ट्रध्वज तिरंगा फहराया जाता है। भारत में सभी सरकारी भवनों एवं कार्यालयों पर राष्ट्रध्वज फहराया है। राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, उच्चतम तथा उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों, मुख्यमंत्रियों तथा केन्द्र एवं राज्य मंत्रियों के वाहनों पर राष्ट्रध्वज लगाया जाता है।

राष्ट्रध्वज की विशेषताएं

1. राष्ट्रध्वज का आकार क्या होना चाहिए ?
2. राष्ट्रध्वज हमें क्या प्रेरणा देता है ?
3. हमें राष्ट्रध्वज का सम्मान कैसे करना चाहिए ?

राष्ट्रध्वज की चौड़ाई लम्बाई से आधी होनी चाहिए। इसे वाहन के आगे तथा सरकारी भवन अथवा कार्यालय में ऐसे स्थान पर लगाना चाहिए जो ऊंचा हो और साफ दिखाई देता हो। राष्ट्रध्वज हमें सम्मानपूर्वक जीने की प्रेरणा देता है। यह हमें राष्ट्र को उन्नति के मार्ग पर ले जाने तथा सदा विकास पथ पर अग्रसर होने की प्रेरणा देता है। जब राष्ट्रध्वज फहराया जा रहा हो तो हमें उस समय सावधान खड़े हो जाना चाहिए तथा इधर-उधर हिलना-डुलना या घूमना-फिरना नहीं चाहिए। हमें राष्ट्रध्वज में श्रद्धा व्यक्त करनी चाहिए, उसे भूमि पर बिछाना, उसके वस्त्र सिलवाकर पहनना आदि अनुचित है तथा कानूनी अपराध है।

उपसंहार :

शिक्षक निबंध के उपसंहार के लिए शिक्षार्थियों से प्रश्न पूछेगा तथा उनके उत्तरों को सुव्यवस्थित कर श्यामपट्ट पर विशेष विचार बिन्दुओं को लिखेगा।

1. युद्ध अथवा संघर्ष की स्थिति में राष्ट्रध्वज हमें क्या प्रेरणा देता है ?
2. एक भारतीय के नाते राष्ट्रध्वज के प्रति हमारे क्या कर्तव्य है ?
3. राष्ट्रध्वज की रक्षा हमें कैसे करनी चाहिए ?

युद्ध अथवा संघर्ष की स्थिति में राष्ट्रध्वज हमें आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है, वह हमारा उत्साह बढ़ाता है। हमारे राष्ट्रध्वज के प्रति हमारा कर्तव्य है कि हम सदा इसका मान बढ़ाए। जहां भी राष्ट्रीय अथवा अंतर्राष्ट्रीय राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा अन्य विषयों पर सम्मेलन हों वहां हम श्रेष्ठ योगदान दें। क्रीड़ा प्रतियोगिताओं में भाग लेते समय विजय प्राप्त कर राष्ट्रध्वज को शान से फहराने का अवसर दें। हमें अपने प्राणों की बाजी लगा कर भी राष्ट्रध्वज को झुकने नहीं देना चाहिए।

निबंध की रूपरेखा

शिक्षक शिक्षार्थियों की सहायता से प्रस्तुत निबंध की रूपरेखा तैयार करेगा।

राष्ट्रीय ध्वज का सम्मान

भूमिका : हमारे राष्ट्रीय पर्व - 15 अगस्त, 26 जनवरी, एवं 2 अक्टूबर

– राष्ट्रीय पर्वों पर ध्वज फहराया जाता है।

— राष्ट्रध्वज के विभिन्न नाम

— राष्ट्रध्वज स्वतंत्रता का प्रतीक

कलेवर/मध्यभाग राष्ट्रध्वज का ऐतिहासिक विकास

— राष्ट्रध्वज का स्वरूप

— राष्ट्रध्वज के रंगों एवं चक्र की व्याख्या

— विश्व में राष्ट्रध्वजों का महत्त्व

— भारत में वर्तमान ध्वज की सुरक्षा के लिए राष्ट्रभक्तों द्वारा सहे गए कष्ट

— पं. जवाहरलाल नेहरु द्वारा इसे 15 अगस्त को लालकिले पर फहराया गया

— राष्ट्रध्वज हमें सम्मान पूर्वक जीने की प्रेरणा देता है तथा राष्ट्र को अग्रसर करने का संदेश देता है

— राष्ट्रध्वज का सम्मान किस प्रकार करना चाहिए।

उपसंहार :

— राष्ट्रध्वज हमें संघर्ष एवं युद्ध में आगे बढ़ने की प्रेरणा देता है।

— हमें अपने राष्ट्र भारत तथा राष्ट्रध्वज के सम्मान को ध्यान में रख कर कड़ी मेहनत एवं बुद्धिमता से काम लेना चाहिए।

— हमें अपने प्राणों की आहुति देकर भी राष्ट्रध्वज की रक्षा करनी चाहिए।

निबंध में प्रयोग की जाने वाली शब्दावली :

राष्ट्रीय पर्व, राष्ट्र मुद्रा, गौरव, यूनियन जैक, स्वतंत्रता, प्रतीक, द्योतक, आध्यात्मिक उन्नति, समृद्धि, धर्म प्रवर्तन, सम्मेलन, क्रीड़ा, प्रतियोगिता, प्राणों की आहुति, राष्ट्रपति, न्यायालय, वाहन, अग्रसर, सामाजिक, आर्थिक।

कक्षा में निबंध लेखन एवं शिक्षक द्वारा निरीक्षण :

शिक्षक शिक्षार्थियों को रूपरेखा एवं आधारभूत शब्दावली का प्रयोग करते हुए संक्षिप्त रूप से निबंध लिखने के लिए कहेगा तथा यह स्पष्ट करेगा कि शिक्षार्थी निबंध लिखते समय भूमिका, कलेवर तथा उपसंहार भागों का नामोल्लेख नहीं करेंगे। विषय प्रस्तुति विभिन्न संदर्भों में करेंगे।

शिक्षार्थी निबंध लिखेंगे। शिक्षक कक्षा में घूमकर उनका निरीक्षण करेगा। दो-तीन शिक्षार्थियों की कापी देखकर आवश्यकता होने पर अशुद्धि संशोधन बताएगा।

पाँच मिनट का समय बीतने पर किन्हीं एक या दो छात्रों को अपना लिखा निबंघ पढ़कर सुनाने के लिए कहेगा तथा शिक्षार्थियों से उन पर चर्चा करेगा एवं आवश्यक सुझाव देगा।

गृहकार्य : शिक्षक निर्देश देगा

कक्षा में की गई चर्चा तथा अपनी जानकारी का उपयोग करते हुए दी गई रूपरेखा एवं शब्दावली को ध्यान में रखते हुए 'राष्ट्रध्वज का सम्मान' विषय पर 300 शब्दों का एक निबंध लिखें।

NOTES

डॉ. बाबासाहब आंबेडकर
ओपन युनिवर्सिटी

SECM-04
हिन्दी

खंड

3

भाषा शिक्षण की पद्धतियाँ, प्रयुक्तियाँ एवं सहायक सामग्री

इकाई-1

भाषा शिक्षण की पद्धतियाँ

इकाई-2

भाषा शिक्षण में प्रयुक्त होनेवाली प्रयुक्तियाँ

इकाई-3

भाषा शिक्षण में सहायक प्रवृत्तियाँ

इकाई-4

भाषा शिक्षण के लिए सहायक सामग्री

लेखक

डॉ. रवीन्द्र अंधारिया — श्री गुलाबराय संघवी शिक्षण महाविद्यालय, भावनगर

परामर्शक और पुनः परामर्शक (विषय)

डॉ. सोनल पटेल — गूजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद.

डॉ. आर. एन. ठाकुर (निवृत्त) — आर. बी. सागर कॉलेज ऑफ एज्युकेशन, अहमदाबाद.

परामर्शक (भाषा)

डॉ. जयश्री गुर्जर — डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद.

संपादन और संयोजन

प्रो. (डॉ.) अजीतसिंह राणा — निर्देशक (शिक्षणशास्त्र)

प्रोफेसर, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद.

संयोजन सहाय

डॉ. मीना आई. राजपूत — डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद.

प्रकाशक : कुलसचिव, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद-382481

आवृत्ति : प्रथम आवृत्ति - 2020, **नकल :** 600

द्वितीय आवृत्ति - 2021, **नकल :** 600

ISBN :

Copyright © Registrar, Dr. Babasaheb Ambedkar Open University, Ahmedabad.
December 2020

While all efforts have been made by editors to check accuracy of the content, the representation of facts, principles, descriptions and methods are that of the respective module writers. Views expressed in the publication are that of the authors, and do not necessarily reflect the views of Dr. Babasaheb Ambedkar Open University. All products and services mentioned are owned by their respective copyrights holders, and mere presentation in the publication does not mean endorsement by Dr. Babasaheb Ambedkar Open University. Every effort has been made to acknowledge and attribute all sources of information used in preparation of this Self Learning Material. Readers are requested to kindly notify missing attribution, if any.

ES-115 : भाषा शिक्षण की पद्धतियाँ, प्रयुक्तियाँ एवं सहायक सामग्री

खंड-1 हिन्दी शिक्षण : सैद्धान्तिक पक्ष

इकाई-1 भाषा की प्रकृति एवं प्रकार्य

इकाई-2 भाषा अधिगम प्रक्रिया

इकाई-3 विद्यालयीय स्तर पर भाषा

इकाई-4 हिन्दी शिक्षण की व्यवस्था एवं सामग्री

खंड-2 भाषिक योग्यताओं का विकास

इकाई-1 हिन्दी के भाषिक तत्त्व-1

इकाई-2 हिन्दी के भाषिक तत्त्व-2

इकाई-3 श्रवण एवं मौखिक अभिव्यक्ति के कौशल का विकास

इकाई-4 पठन योग्यता

इकाई-5 लिखित अभिव्यक्ति कौशल का विकास

खंड-3 साहित्यिक विद्याओं का शिक्षण एवं व्याकरण शिक्षण

इकाई-1 भाषा शिक्षण के पद्धतियाँ

इकाई-2 भाषा शिक्षण में प्रयुक्त होनेवाली प्रयुक्तियाँ

इकाई-3 भाषा शिक्षण में सहायक प्रवृत्तियाँ

इकाई-4 भाषा शिक्षण के लिए सहायक सामग्री

खंड-4 मूल्यांकन, क्रियात्मक शोध तथा समुन्नयन कार्य

इकाई-1 भाषा संप्राप्ति मूल्यांकन

इकाई-2 निदानात्मक एवं उपचारात्मक कार्य

इकाई-3 क्रियात्मक शोध

इकाई-4 समुन्नयन कार्य

इकाई 1

भाषा शिक्षण की पद्धतियाँ

: रूपरेखा :

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 हिन्दी भाषा शिक्षण की पद्धतियाँ

1.3.1 भाषा शिक्षण की प्रत्यक्ष पद्धति (Direct Method)

1.3.2 भाषा शिक्षण की परोक्ष पद्धति (Indirect Method)

1.3.3 भाषा शिक्षण की गठन पद्धति (Structure Method)

1.3.4 व्याकरण और अनुवाद पद्धति (Grammar Translation Method)

1.3.5 संघटना परक पद्धति (Army Method)

1.3.6 आगमन निगमन पद्धति (Inductive-Deductive Method)

1.4 सारांश

1.5 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.6 उपयोगी पुसकें

1.1 प्रस्तावना

भाषा शिक्षण एक कला है। शिक्षक इस हेतु अपनी सृजनात्मकता का भरपुर प्रयोग कर सकता है। भाषा शिक्षण का अर्थ यहाँ मात्र भाषा तत्त्व, संरचना आदि भाषावैज्ञानिक पक्ष का शिक्षण नहीं है। अपितु भाषा में अभिव्यक्त विचार, साहित्य तथा चिन्तन भी है। तात्पर्यार्थ भाषा शिक्षण का व्यापक अर्थ अभिप्रेत है। इस परिप्रेक्ष्य में भाषा शिक्षण न केवल कला है, विज्ञान भी है, अतएव उसकी खास पद्धतियाँ होती हैं, प्रयुक्तियाँ होती हैं तथा सहायक प्रवृत्तियाँ भी होती हैं। प्रस्तुत खण्ड में हिन्दी भाषा शिक्षण की प्रमुख पद्धतियाँ, प्रमुख प्रवृत्तियाँ तथा प्रमुख सहायक प्रवृत्तियों का परिचय दिया गया है। कक्षाध्यापन में इनका प्रयोग कर शिक्षक हिन्दी भाषा शिक्षण के वांछित लक्ष्यांको के सिद्ध कर सकता है। इनके अतिरिक्त इस खण्ड में पाठ नियोजन के विषय में भी चर्चा की गयी है। पाठ नियोजन कक्षाध्यापन में शिक्षक-शिक्षार्थी के व्यवहारों का पूर्वयोजन है। इसी तरह की पूर्व तैयारी करके शिक्षक कक्षा मे शिक्षण कार्य करेगा तो शिक्षण प्रभावी होगा। आशा है कि यह सारी चर्चा शिक्षक की व्यावसायिक सज्जता अभिवृद्धि करने में सहायक होगी।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़कर आप ....

- हिन्दी भाषा शिक्षण की पद्धतियों का महत्त्व बता सकेंगे।
- हिन्दी भाषा शिक्षण की पद्धतियाँ समझा सकेंगे।
- हिन्दी भाषा शिक्षण में उपयोगी प्रवृत्ति को समझेंगे।
- हिन्दी भाषा शिक्षण के लिए पाठ नियोजन कर सकेंगे।

1.3 हिन्दी भाषा शिक्षण की पद्धतियाँ

पद्धति उसे कहते हैं जो तर्कबद्ध, व्यवस्थित तथा लक्ष्यगामी क्रिया प्रक्रिया है। यह एक विशाल अवधारणा है। संसार में अन्य भाषा शिक्षण या द्वितीय भाषा शिक्षण के लिए मुख्य तीन पद्धतियाँ प्रयोग में लाई जाती है। ये पद्धतियाँ इस प्रकार है :

1.3.1 भाषा शिक्षण की प्रत्यक्ष पद्धति (Direct Method)

1.3.2 भाषा शिक्षण की परोक्ष पद्धति (Indirect Method)

1.3.3 भाषा शिक्षण की गठन पद्धति (Structure Method)

अब प्रत्येक का विस्तार से परिचय करेंगे .....

1.3.1 भाषा शिक्षण की प्रत्यक्ष पद्धति (Direct Method)

इस पद्धति को सम्भाषण पद्धति या वार्तालाप पद्धति भी कहते हैं। वैसे तो नाम से ही इसका अर्थ स्पष्ट हो जाता है। इस पद्धति का मुख्य आशय बालक को द्वितीय भाषा उसी रीति से सिखाना है, जिस रीति से वह मातृभाषा सीखता है। इस अर्थ में द्वितीय भाषा सिखानेवाली यह पद्धति नैसर्गिक पद्धति है। इसको अधिगम मनोविज्ञान का भी समर्थन है। बालक अपने आसपास के भाषिक वातावरण से अपने आप भाषा सीख लेता है। वही सिद्धांत इस पद्धति के पीछे है। जिस अन्य भाषा की शिक्षा बालक को सिखाती है उस भाषा का वातावरण पैदा किया जाए। वातावरण से बालक भाषा सीख लेता है। औपचारिक रुप से भाषा सीख लेता है। हिन्दीत्तर प्रान्तों में-गुजरात, महाराष्ट्र, पंजाब, आदि — इस पद्धति से हिन्दी सिखायी जा सकती है।

बालक घर, परिवार तथा सगा संबंधियों के वार्तालापों को सुनकर मातृभाषा के संस्कार प्राप्त करता है, धीरे धीरे अनुकरण करते हुए वह स्वयं बोलना सीखता है, मातृभाषा के व्याकरण का उसे ज्ञान नहीं होता है फिर भी बालक शुद्ध भाषा का प्रयोग करता है। अपने विचारों की अभिव्यक्ति करने में वह तनिक भी हिचकिचाहट महसूस नहीं करता है। अन्य भाषा के रुप में हिन्दी भाषा शिक्षा भी इसी नैसर्गिक पद्धति से अर्पित करे यह वांछनिय है। इसके लिए शिक्षक को क्या क्या करना होगा ? इसकी चर्चा अब प्रस्तुत है।

(अ) मौखिक अभिव्यक्ति पर विशेष ध्यान देना : भाषा की मूल प्रकृति वार्तालाप है। किसी भी भाषा को बोलकर सीखना सब से सरल तरीका है। प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री किटसन ने कहा है, 'लर्निंग टु स्पीक अ लेग्वैंज इझ ओलवेझ बाय फोर ध शोर्टेस्ट रोड टु लर्निंग टु रीड एन्ड राइट इट'। इस पद्धति में वार्तालाप से ही भाषा शिक्षण का प्रारम्भ किया जाता है। वाचन कराते समय भी शिक्षार्थी के शुद्ध उच्चारण, योग्य स्वरभार तथा सही लहजे पर जोर दिया जाता है। शब्द और वर्ण बाद में सिखाये जाते है। बोलते समय शिक्षार्थी पूर्णँ वाक्यों में अपने विचार प्रगट करने का प्रयत्न करता है।

(ब) मातृभाषा का प्रयोग न करें : नैसर्गिक रुप से द्वितीय भाषा सीखने के लिए भाषिक वातावरण की आवश्यकता रहती है। इस हेतु शिक्षणकार्य करते समय शिक्षक को कक्षा में हिन्दी भाषा का ही प्रयोग करना चाहिए। तथा उत्तर लेते समय भी शिक्षार्थी मातृभाषा का प्रयोग न करके हिन्दी का ही प्रयोग करे ऐसा आग्रह रखना चाहिए। शिक्षक कदापि मातृभाषा में अनुवाद करके हिन्दी सिखाने का प्रयत्न नहीं करेगा। हिन्दी के अन्तर (तास) में कक्षा का वातावरण हिन्दीमय हो जाना चाहिए ताकि शिक्षार्थियों को हिन्दी सुनने के तथा बोलने के अधिकतम अवसर मिल सकें। जब भी शिक्षार्थी की समझ में विध्न हो तब शिक्षक प्रत्यक्ष रुप से वस्तु दिखाकर, चित्र दिखाकर, अभिनय करके या अन्य किसी भी प्रयुक्ति से विध्न दूर करने की चेष्टा करेगा। पर मातृभाषा का प्रयोग हरगीज नहीं करेगा। न तो शिक्षार्थी को मातृभाषा प्रयोग की अनुमति देगा।

(क) व्याकरण को कम प्रधानता : हमारा अनुभव है कि मातृभाषा के व्याकरण के ज्ञान के प्रभाव में भी भाषक (बोलनेवाला) शुद्ध भाषा का प्रयोग करता है। प्रत्यक्ष पद्धति में भी इसी कारण व्याकरण शिक्षा पर जोड़ नहीं दिया जाता है। व्याकरण के नियमों को हटाने कि दिन गये। भाषा के व्यवहार पर तथा अभ्यास पर बल किया जाता है, निः सन्देह भाषा प्रयोग से साथ साथ व्यावहारिक व्याकरण का परिचय दिया जा सकता है।

(ड) वाचन तथा लेखन की शिक्षा : प्रत्यक्ष पद्धति में भाषा शिक्षा का आरम्भ सम्भाषण से, मौखिक अभिव्यक्ति से होता है। और बाद में वाचन की शिक्षा तथा अन्त में लेखन की शिक्षा दी जाती है। इसके पीछे मनोवैज्ञानिकता यही है कि सम्भाषण—वार्तालाप आदि प्रवृत्ति से शिक्षार्थी की शब्दावली निश्चित हो जाती है तथा भाषा की मुख्य इकाई 'वाक्य' में अपने विचार व्यक्त करने लगता है। वाचन व लेखन दोनों करते समय शिक्षार्थी का यह पूर्वज्ञान बहुत ही सहायक होता है। फलस्वरुप शिक्षार्थी की वाचन तथा लेखन में स्वाभाविक अभिरुचि जागृत होती है।

1.3.2 भाषा शिक्षण की परोक्ष पद्धति (Indirect Method)

इस पद्धति को व्याकर अनुवाद पद्धति भी कहते है। इस पद्धति में मातृभाषा में अनुवाद पर जोर दिया जाता है। शिक्षक भी हिन्दी की शिक्षा अनुवाद के द्वारा मातृभाषा में करता है। तथा व्याकरण के नियम आदि को हटाकर हिन्दी भाषा के वाचन-लेखन की शिक्षा दी डाती है। 19 शताब्दी से अंत तक संसार भर में अन्य भाषा की शिक्षा इस पद्धति से दी जाती थी। परोक्ष पद्धति नामकरण से ही स्पष्ट हो जाता है कि शिक्षार्थी को अन्य भाषा की शिक्षा प्रत्यक्षरुप से न लेकर मातृभाषा का सहारा लेकर परोक्ष रुप से दी जाती है। नयी भाषा सिखाने के प्रयत्नों में शिक्षार्थी के मातृभाषा ज्ञान की भाषाकीय कुशलताओं की तथा भाषिक आदतों की सहायता ली जाती है इस तथ्य की नींव पर इस परोक्ष पद्धति का प्रचलन शुरु हुआ था। किन्तु जैसे जैसे अधिगम मनोविज्ञान का विकास हुआ, शिक्षाशास्त्र (पेड़ागोज़ी) का विकास हुआ वैसे वैसे परोक्ष पद्धति की मर्यादाएँ उजागर होने लगीं। अन्य भाषा की शिक्षा में मातृभाषा के प्रयोग उपयोगी सिद्ध नहीं होते है बल्कि अन्य भाषा शिक्षा में व्याघात पहुँचाते है। इसी कारण अन्य भाषा शिक्षा की प्रत्यक्ष पद्धति ईजाद की गई। परोक्ष पद्धति से पढ़ानेवाला शिक्षक क्या करता है ?....

(क) व्याकरण शिक्षा पर जोर : परोक्ष पद्धति से पढ़ानेवाला शिक्षक व्याकरण शिक्षा पर जोर देता है। उसका विश्वास है कि व्याकरण के नियमों को जाने समझे बिना शुद्ध प्रयोग सम्भव ही नहीं है। इसी के फलस्वरुप वह शिक्षार्थियों को व्याकरण के नियम सिखवायेगा। व्याकरण के नियमों की व्याख्या करते समय मातृभाषा के उदाहरण रखेगा। व्याकरण के नियम कण्ठस्थ करवाने पर जोर दिया जाएगा। व्याकरण ही भाषा का आधार है। किन्तु भाषा विज्ञान का निष्कर्ष है कि बिना व्याकरण जाने भाषा प्रयोगकर्ता हुआ जा सकता है क्यों कि भाषा है तो व्याकरण है। भाषा का जन्म पहेले होता है व्याकरण का जन्म इसके बाद।

(ख) अनुवाद प्रवृत्ति की प्रधानता :

परोक्ष पद्धति में व्याकरण के नियमों को रहने के बाद दूसरे सोपान पर मातृभाषा से हिन्दी भाषा में अनुवाद तथा हिन्दी से मातृभाषा में अनुवाद प्रक्रिया होती है। शिक्षार्थियों को व्याकरण के नियमों पर आधारित अनुवाद के लिए अभ्यास पाठ दिये जाते है। हिन्दी भाषा के सभी अपरिचित शब्दों को मातृभाषा में अनुवाद के द्वारा सिखाया जाता है। मुहावरों तथा कहावतों और विशिष्ट भाषा प्रयोगों को भी अनुवाद के आधार पर समझाया जाता है।

(ग) मातृभाषा तथा हिन्दी भाषा की तुलना : अनुवाद करने के भिन्न भिन्न तरीके तथा मातृभाषा तथा हिन्दी भाषा की वाक्य रचना दोनों का भेद पाठ्यक्रम के आधार पर स्पष्ट किया जाता है। यह मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि शिक्षार्थी अपनी मातृभाषा में ही सोचता है। अत**:** मातृभाषा की वाक्य रचना को आधार मानकर हिन्दी भाषा में वाक्य रचना का परिवर्तन करने का सिद्धान्त तुलनात्मक पद्धति से स्पष्ट किया जा सकता है। दोनों भाषाओं की विशेषताओं को तथा कमियों को शिक्षार्थियों के सामने स्पष्ट किया जाता है।

(घ) वाचन तथा लेखन पर जोर : प्रत्यक्ष पद्धति में बोलचाल की शिक्षा पर जोर दिया जाता है, परन्तु इस पद्धति में मौखिक अभिव्यक्ति का कोई महत्त्व नहीं है। शिक्षार्थी पहले ही दिन से मातृभाषा के सहारे नवीन भाषा पढ़ना तथा लिखना सीखता है। इस पद्धति के द्वारा सीखे हुए शिक्षार्थियों की परीक्षा भी अधिकतर लेखन द्वारा की जाती है। अक्सर ऐसा अनुभव है कि इस पद्धति द्वारा हिन्दी भाषा सीखने पर शिक्षार्थी लिखकर जो अपने विचार व्यक्त कर सकता है, बड़ी बड़ी किताबों को पढ़ भी लेता है परंतु बोलते समय हिचकता है और बारबार मातृभाषा का बलाघात, लिहजा तथा शब्दों का प्रयोग करता रहता है।

1.3.3 भाषा शिक्षण की गठन पद्धति (Structure Method)

यह पद्धति भाषा के गठन या ढाँचा को भाषा शिक्षा का आधार मानकर चलती है। अत**:** इसे संरचनात्मक पद्धति भी कहते है। भाषा के व्याकरण से बुनियादी ढाँचे गठन व्याकरण के आधार पर तैयार किये जाते है। शिक्षार्थी को उन ढांचों-गठन का अभ्यास अनेको बार करवाया जातौ है। शिक्षार्थी के मस्तिष्क में ये ढाँचे जब दृढ हो जाते है तब उनके आधार पर नये वाक्य बनाने का अभ्यास करवाया जाता है। इस तरह शिक्षार्थी को भाषा की प्रारम्भिक कुशलताओं का ज्ञान दिया जाता है। इस पद्धति से कम से कम समय में भाषा के बुनियादी ढाँचो का सिखाने का प्रयत्न किया जाता है। इस पद्धति से कम से कम समय में भाषा के बुनियादी ढाँचों को सिखाने का प्रयत्न किया जाता है। वैज्ञानिक दृष्टि से यह पद्धति योग्य सिद्ध हुई है।

द्वितीय भाषा शिक्षण की दृष्टि से गठन पद्धति उपयुक्त है। लन्दन विश्वविद्यालय में ब्रिटिश कौंसिल के भाषा विशेषज्ञों के द्वारा भाषा शिक्षण सम्बन्धी अनेक शोध, प्रयोग एवं अनुभव के द्वारा तैयार की गयी है यह पद्धति।

यह पद्धति इस मान्यता पर आधारित है कि द्वितीय भाषा सीखने में शब्द ज्ञान की अपेक्षा संरचना-ढाँचों का ज्ञान और उस पर अधिकार प्राप्त करना अधिक महत्त्वपूर्ण है। अत**:** भाषा के संरचनात्मक रुपों का अधिकाधिक अभ्यास करना इस पद्धति की विशेषता है। भाषा की संरचना के अन्तर्गत ध्वनि, शब्द, वाक्यांश तथा वाक्यगठन के सभी रुप शामिल है और उनके वर्गीकृत एवं आयोजित पाठ्यक्रम के आधार पर ही उनकी शिक्षा प्रदान की जाती है।

इस पद्धति में मौखिक अभ्यास पर बल दिया जाता है। कक्षा में द्वितीय भाषा हिन्दी का यथा सम्भव अधिक प्रयोग किया जाता है। उच्चारण, शब्द भण्डार, व्याकरण सम्बन्धी आदि ध्यानपूर्वक वर्गीकृत कर एवं क्रमानुसार कक्षा में प्रस्तुत किया जाता है। भाषा शिक्षण में तथ्यों या सूचनाओं के स्थान पर कौशल अर्जित करने पर विशेष ध्यान दिया जाता है। शब्दो के अर्थ एवं संचरनाओं का ज्ञान और अभ्यास उपयुक्त परिस्थिति और सम्दर्भ में ही कराया जाता है। प्रयुक्त की जानेवाली परिस्थितियाँ जितनी ही वास्तविक एवं शिक्षार्थियों के ज्ञान एवं अनुभव पर आधारित होंगी, नवीन शब्दावली तथा संरचनाओं का शिक्षण उतना ही सार्थक और सफल होगा। नवीन शब्दावली के प्रयोग के उदाहरण कथा, स्कूल, खेल का मैदान, घर, बाजार आदि जीवन से सम्बन्धित परिस्थितियों में प्रस्तुत किए जाते है, जिनसे शिक्षार्थी भलीभाँति परिचित होते है। इससे वे नयी शब्दावली को आसानी से ग्रहण कर लेते है। इसके बाद शिक्षार्थियों के

उनके प्रयोग के अवसर प्रदान किये जाते है । इस में शिक्षक तथा शिक्षार्थी दोनों पक्षों का कार्य एक सुनियोजित और संयुक्त प्रयास के रुप में सम्पन्न होता है । इस पद्धति में यह विशेष ध्यान रखने की बात है कि एक संरचना का अच्छी तरह दृढीकरण हो जाने के पश्चात दूसरी नयी संरचना की शिक्षा आरम्भ करना चाहिए । इस प्रकार भाषा शीखने की उपयुक्त स्थिति का निर्माण इस पद्धति की प्रमुख विशेषता है ।

बोध प्रश्न :

1. प्रत्यक्ष पद्धति द्वितीय भाषा शिक्षण के लिए सर्वाधिक अनुकूल क्यों है ?

....

....

....

....

....

....

2. परोक्ष पद्धति की तीन विशेषताएँ लिखिए ।

....

....

....

....

....

....

3. गठन पद्धति में ध्यान देने योग्य दो बातें लिखो ।

....

....

....

....

....

....

1.3.4 व्याकरण और अनुवाद पद्धति (Grammar Translation Method)

द्वितीय भाषा शिक्षण कीय यह सर्वाधिक प्रचलित एवं प्राचीनतम पद्धति है । प्राचीन भाषाओं संस्कृत, अरबी, फारसी, ग्रीक आदि का शिक्षण इसी पद्धति से होता आया है । द्वितीय भाषा की 'स्वयं शिक्षण पुस्तिकाएँ' इसी पद्धति पर आधारित होती है । इस पद्धति में द्वितीय भाषा का व्याकरण पहले पढ़ाया जाता था । संस्कृत पढने से पहले शिक्षार्थी को 'अष्टाध्यायी' या 'सिद्धान्त कौमुदी' कण्ठस्थ करनी पड़ती थी । आज भी अंग्रेजी भाषा सिखाते समय उसके व्याकरण तथा उसके नियम बताकर भाषा की शिक्षा प्रदान की जाती है ।

इस पद्धति में बोलने की अपेक्षा लिखने और पढ़ने पर तथा भाषा साहित्य की अपेक्षा भाषा के तत्त्वों की शिक्षा पर अधिक बल दिया-जाता है । यही इस पद्धति का सब से बड़ा दोष भी है । भाषा शिक्षण का अधिकांश समय व्याकरण ज्ञान पाने में समाप्त हो जाता है । वस्तुत: उस समय का उपयोग भाषा शिक्षण के लिए करना चाहिए । भाषा सीखना उद्देश्य है, भाषा शास्त्र सीखना नही । भाषा कौशलों को अर्जित करना उद्देश्य होना चाहिए न कि भाषा के नियमों का ज्ञान । शिक्षार्थी को द्वितीय भाषा के साँचे का प्रयोग करना आना चाहिए न कि इन साँचो के नियमों को । व्याकरण पद्धति का दोष यह है कि भाषा शिक्षण की जगह भाषा शास्त्र का शिक्षण साध्य बन जाता है । इससे भाषा का सैद्धान्तिक ज्ञान भले ही प्राप्त हो पर

व्यावहारिक ज्ञान एवं भाषा कौशल प्राप्त नहीं होते है। इस पद्धति में मौखिक अभिव्यक्ति अभ्यास की तो नितान्त उपेक्षा होती है।

अनुवाद इस पद्धति का अनिवार्य अंग है। मातृभाषा से द्वितीय भाषा में अनुवाद कराया जाता है और इसके अभ्यास द्वारा द्वितीय भाषा के शब्दों एवं वाक्य रचनाओं का ज्ञान प्रदान किया जाता है। अनुवाद को इतना ज्यादा महत्त्व देना और द्वितीय भाषा सीखने के लिए उसे आधार बनाना ही इस पद्धति की मर्यादा बन जाती है। अनुवाद करना एक जटील कार्य है। अनुवाद करते समय शिक्षार्थी मातृभाषा के शब्दों के आधार पर द्वितीय भाषा के शब्दों को रखने का प्रयत्न करता है। पर सत्य यह है कि किन्हीं दो भाषाओं के दो शब्द पूर्ण रुप से पर्यायवाची नहीं होते। प्रत्येक भाषा की अपनी सांस्कृतिक परंपरा होती है। इसी कारण उस भाषा के शब्दों का अपना विशिष्ट अर्थ होता है। अत: शब्दानुवाद से भावों का सही रुप में उदघाटन नहीं होता है।

अनुवाद में योग्य शब्द ढूँढ़ने की समस्या है वाक्य साँचो की। दो भाषाओं के वाक्य साँचे एक से नहीं होते है। अत: एक भाषा के साँचे को दूसरी भाषा के साँचे में परिवर्तन करना भी कठिन कार्य है। द्वितीय भाषा सीखने वाले शिक्षार्थी के लिए यह सब दुष्कर कार्य हो जाते है। दरअसल व्याकरण एवं अनुवाद पद्धति द्वितीय भाषा शिक्षण की वैज्ञानिक पद्धति नहीं है। इसी वजह से द्वितीय भाषा शिक्षण के लिए वैज्ञानिक पद्धति की खोज आरम्भ हुई। अठारहवीं शताब्दी में ज्होन बेसडोने व्याकरण अनुवाद पद्धति का विरोध किया तथा भाषा शिक्षण में प्रथम बोलने और पढ़ने पर बल देने का आग्रह किया। आगे चल कर इसी दिशा में प्रयत्न कर प्रत्यक्ष पद्धति का आविष्कार किया गया। यस्पर्सन तथा पामर जैसे आधुनिक भाषा विज्ञानियों ने भी इस पद्धति का समर्थन किया।

1.3.5 संघटना परक पद्धति (Army Method)

प्रत्यक्ष पद्धति के आविष्कार से भी द्वितीय भाषा शिक्षण पद्धति दोष रहित नहीं हो सकी। प्रत्यक्ष पद्धति के विकल्प में संघटना परक हिन्दी शिक्षण विधि का निर्माण हुआ इस में शब्दावली पर बल न देकर भाषा संघटना पर बल दिया जाने लगा। स्वाभाविक संवादों तथा मौखिक कथनों के द्वारा अभ्यास पर ध्यान केन्द्रित किया गया। वास्तव में दूसरें महायुद्ध में अमेरिकन सैनिकों को द्वितीय भाषा सीखाने की समस्या को लेकर इस पद्धति का गठन हुआ था। कम से कम समय में द्वितीय भाषा में बोल-चाल सिखाने के उद्देश्य से इसका प्रयोग किया गया। अत: इसे सेनाविधि (आर्मी मेथड) कहा जाता था। मौखिक अभ्यास पर बल देने से इसे अन्य भाषा विधि (आंडो लिम्युअल मेथड़ या आंडो ओरल मेथड) कहते थे। इसके पीछे भाषाविज्ञान ने तर्को का समर्थन होने के कारण इसे भाषा वैज्ञानिक पद्धति भी कहते है।

इस पद्धति के अनुसार आरम्भ में शिक्षक या आदर्श वक्ता पूरी पाठ्य इकाई अध्येताओं को सुनाता है। तब शिक्षार्थी उच्चारण एवं अनुतान का पूरा-पूरा अनुकरण करते हुए उसे कण्ठस्थ कर लेता है। इस कारण से अनुकर पुन: स्मरण पद्धति भी कहते है।

अलबत्त यह पद्धति प्रयोगात्मक स्तर पर है, इतना सच है कि इस पद्धति में शिक्षार्थियों को भाषा के सैद्धांतिक ज्ञान न देकर उसके व्यावहारिक तथा उपयोजनमूलक पक्ष का ज्ञान विशेष दिया जाता है। भाषिक कौशलों का अभ्यास विशेष कराया जाता है। इन अभ्यासों का उद्देश्य शिक्षार्थीओं को वास्तविक परिस्थिति में भाषा प्रयोग करने के योग्य बनाना है।

1.3.6 आगमन निगमन पद्धति (Inductive-Deductive Method)

शिक्षार्थियों को नवीन ज्ञान प्रदान करने की विभिन्न पद्धतियाँ है। इन में आगमन व निगमन पद्धति भी है। दोनों पद्धतियाँ शिक्षार्थियों के शिक्षण के लिए उपयोगी है। विद्यालयों में शिक्षण कार्य करते समय शिक्षक इन दोनों पद्धतियों का प्रयोग करता है। इसका महत्त्व स्पष्ट करते हुए जोसेफ लेन्डन लिखते है, 'टु मेथड्स ओन एनालीसीस एन्ड सिन्थेसिस कोरसपोन्ड क्लोझली टु धोझ ओन इन्डक्शन एन्ड डीडक्शन' वास्तव में आगमन व निगमन दोंनो सोचने की तरह है। अब यहाँ दोनों पद्धतियों के विषय में विस्तृत जानकारी प्रस्तुत है।

(अ) आगमन पद्धति :

लेंडन के शब्दों में आगमन का अर्थ इस प्रकार होता है, "जब कभी हम शिक्षार्थियों के समक्ष बहुत से तथ्य, उदाहरण, वस्तुएँ प्रस्तुत करते हैं, और फिर उनसे अपने स्वयं के निष्कर्ष निकलवाने का प्रयास करते हैं, तब हम शिक्षण की आगमन पद्धति का विनियोग करते है।" इस कथन पर से हम निम्नांकित बातें छाँट सकते है :

1. शिक्षार्थियों के सम्मुख एकाधिक तथ्य, उदाहरण, लक्षण आदि को रखना।

2. इन तथ्यों, उदाहरणों या लक्षणों पर विचार करके सामान्यीकरण करना।

3. सामान्यीकरण के आधार पर नियम या सिद्धांत निर्माण करना।

उदाहरण के तौर पर शिक्षक विविध वस्तु के नाम शिक्षार्थियों के सम्मुख रखता है। शिक्षार्थी इन्हें पढ़ते है। इस में साम्य वैषम्य के विषय में सोचते है। निष्कर्ष स्वरुप कहते है ये वस्तु के बोध कराते है। संज्ञा है।

आगमन पद्धति से शिक्षणकार्य करते समय नियमों, सिद्धातों, परिभाषाओं आदि की जानकारी आगे से नहीं दी जाती है। किन्तु शिक्षार्थी अनेक तथ्यों, उदाहरणों, वस्तुओं आदि का पठन, निरीक्षण करेगा, फिर इन में तुलना करेगा, सामान्य लक्षणों को छाँटेगा, वर्गीकरण करेगा और अन्त में स्वयं नियम या सिद्धांत निर्माण करेगा। इस पद्धति में शिक्षण के तीन सूत्रों का विनियोग होता है : (1) ज्ञात से अज्ञात की ओर (2) विशिष्ट से सामान्य की ओर तथा (3) स्थूल से सूक्ष्म की ओर।

आगमन पद्धति के सोपान :

आगमन पद्धति से अध्यापन करते समय अघोलिखित चार सोपानों का अनुसरण करना पड़ता है :

1. **उदाहरण प्रस्तुति :** जिस इकाई का अध्यापन इस पद्धति से करना होता है, उस इकाई से सम्बन्धित उदाहरण एकम करने होंगे। एकत्रित उदाहरणों में से सर्वथा उपर्युक्त उदाहरणों का शिक्षक चयन करेगा। उदाहरण चयन के समय शिक्षक को विशेष सावधान रहना होगा। पसन्द किये गये उदाहरणों को योग्य क्रम में शिक्षार्थियों के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है।

2. **निरीक्षण :** जब शिक्षार्थियों के सम्मुख अकाधिक उदाहरण प्रस्तुत किये जाते है तब ही शिक्षक सूचना देगा। प्रत्येक शिक्षार्थी उदाहरणों को गौर से पढ़ेगा। दो तीन बार पढ़ेगा। तथा उन पर विचार करेगा। इन में रही समानता तथा विषमता ढूँढेंगा। अतएव इस सोपान पर शिक्षार्थी उदाहरणों को पढेंगा फिर उन पर विचार करेगा। तथा उन में रही समानताएँ ढूँढेंगा।

3. **नियमीकरण :** दर असल आगमन पद्धति में यह सोपान महत्त्वपूर्ण है। यहाँ शिक्षक का दायित्व बढ़ जाता है। इस सोपान पर उसे शिक्षार्थियों से ऐसे प्रश्न करने चाहिए ताकि शिक्षार्थी नियम निर्माण करने के लिए शक्तिमान हो सके। इस सोपान पर शिक्षक निम्नांकित जैसे प्रश्न कर सकता है।

   1. प्रथम उदाहरण में 'लड़का' शब्द क्या सूचित करता है ? अथवा इससे क्या बोध होता है।
   2. दूसरे उदाहरण में 'रमेश' शब्द से क्या बोध होता है ?
   3. तीसरे उदाहरण में 'खिलाडी' शब्द क्या सूचित करता है ?
   4. चौथे उदाहरण में 'सचीन' शब्द में क्या बोध होता है ?
   5. 'लड़का' और 'रमेश' शब्द से जो बोध होता है इसमें क्या अन्तर है।

   इस प्रकार के प्रश्नोत्तर करके शिक्षार्थियों के नियमीकरण की और खींच ले जाना है तथा इनके द्वारा ही उदाहरणों के आधार पर नियम तैयार करवाना है। नियमीकरण को साधारणीकरण भी कहा जाता है। उदाहरणों के द्वारा साधारणीकरण हो सकता है। उदाहरण विशिष्ट है उन पर से उस में निहित साधारण तत्त्व को ढूँढ निकालना ही साधारणीकरण है।

4. **परीक्षण :** शिक्षक द्वारा प्रस्तुत किये गये उदाहरण तथा तत्संबंधी प्रश्नोतर शिक्षार्थियों को मिले अधिगम अनुभव है। ये अनुभव कितने ज्ञान प्राप्ति के रुप में रुपान्तरित हुए है इसका निर्णय करने के लिए परीक्षण आवश्यक है। परीक्षण के हेतु शिक्षक इसी इकाई सम्बन्धी अन्य उदाहरण रखेगा। फिर वही प्रश्नोत्तर करेगा जो उसने नियमीकरण के समय किया था। प्रश्नोत्तर के द्वारा परीक्षण हो जाएगा।

   आगमन शिक्षण पद्धति एक चक्रीय प्रक्रिया है। चक्र पूर्ण होने से ही आगमन पद्धति शिक्षण प्रक्रिया भी पूर्ण होती है।

   आगमन पद्धति के गुण : आगमन पद्धति के गुण से हमारा तात्पर्य आगमन पद्धति की लाक्षणिकताओं से है।

1. इस पद्धति से शिक्षार्थी को बिलकुल सहज-स्वाभाविक ढ़ंग से नूतन ज्ञान प्रदान किया जाता है। इसी कारण यह मनोवैज्ञानिक पद्धति है।
2. यह पद्धति प्रत्यक्ष तत्त्वों या तथ्यों पर आधारित होने के कारण पूर्णत: वैज्ञानिक पद्धति है। विज्ञानी भी प्रथम तथ्यों को एकत्र करता है, फिर उनका गौर से निरीक्षण करता है तथा साथ ही साथ उनके लक्षणों के विषय में सोचता है। फिर उन पर से साधारणीकरण करके सिद्धान्त निर्माण करता है। अपने द्वारा निर्मित सिद्धान्त का वह परीक्षण करता है। यह एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है। आगमन पद्धति भी इस प्रक्रिया का अनुगमन करती है। अत: वह भी वैज्ञानिक प्रक्रिया है।
3. यह पद्धति स्थूल से सूक्ष्म की ओर गति करती है। इसी कारण यह सरल और रोचक है।
4. इस पद्धति में अधिगम-अध्यापन प्रक्रिया में शिक्षक व शिक्षार्थी दोनों सहभागी होते है। सक्रियता की दृष्टि से यह पद्धति विशिष्ट है।
5. यह पद्धति शिक्षार्थी को भावी जीवन में खोज और अन्वेषण करने के लिए प्रोत्साहित करती है।
6. यह पद्धति प्रभावशाली है क्यों कि एसमें शिक्षार्थी अधिगम प्रक्रिया में प्रत्यक्ष साँझेदारी करता है।
7. यह पद्धति शिक्षार्थी को अभ्यास एवं स्वयं प्रयास करने के अवसर प्रदान करती है। इस से शिक्षार्थी का मानसिक विकास होता है।
8. यह पद्धति शिक्षार्थी को अपने सम्बन्ध में विचार करने के लिए प्रशिक्षित करती है।
9. इस पद्धति में अधिगम-अनूदेश प्रणाली में शिक्षक की भूमिका गौण रहती है जब कि शिक्षार्थी की भूमिका प्रमुख होती है। इसका मुख्य कारण यह है कि इस में शिक्षक को नियम या सिद्धान्त बनाना नहीं पड़ता है क्योंकि इस में शिक्षार्थी अपने प्रयास से स्वयं नियम गढ़ता है या सिद्धांन्त रचता है।
10. इस पद्धति से अर्जित किया गया ज्ञान शिक्षार्थी के मन-मस्तिष्क में दृढ़ हो जाता है।
11. इस पद्धति से ज्ञान प्राप्त करने के फलस्वरुप शिक्षार्थी में आत्मविश्वास और आत्मनिर्भारता की भावनाओं का विकास होता है।

आगमन पद्धति कि मर्यादाएँ : इस पद्धति की मर्यादाएँ इस प्रकार है :

1. इस में अधिगम प्रक्रिया की गति मंद रहती है, क्यों कि आरम्भ से लेकर अन्त तक सभी सोपानों पर शिक्षार्थी पर निर्भर रहना पड़ता है।
2. यह पद्धति सभी विषयों के अध्यापन के लिए उपर्युक्त नहीं है।
3. यह पद्धति साधारण तथा उच्च्व मानसिक क्षमता रखनेवाले शिक्षार्थी के लिए उपयुक्त है मगर साधारण से निम्न मानसिक क्षमता रखनेवाले शिक्षार्थी के लिए मुश्किल है।
4. यह पद्धति अपने आप में पूर्ण नहीं है क्यों किय नियम निर्धारित करने के पश्चात् शिक्षार्थी को क्या करना है इस विषय में यह कोई प्रकाश नहीं डालती है। ऐसा करने के लिए निगमन पद्धति का सहारा लेना पड़ता है।
5. इस पद्धति में शिक्षार्थी कभी कभी गलत निष्कर्ष पर भी पहुँच सकता है या उससे गलत साघारीकरण भी हो सकता है। परिणाम स्वरुप उसके मस्तिष्क पर गलत छवि अंकित हो जाती है।
6. परीक्षा के दृष्टिकोण से उत्तम परिणाम प्राप्त करने के लिए अनुकूल नहीं है।

   अन्त में आगमन पद्धति के लक्षण व मर्यादाएँ प्रस्तुत करने पर यह निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि इसकी मर्यादाओं से अधिक उसकी लाक्षणिकताएँ है। अतएव यह एक प्रभावी अध्यापन पद्धति है। अत: शिक्षक को इसका प्रयोग करना ही चाहिए। लेंडन का अभिप्राय है कि कक्षाध्यापन की अधिकांश स्थितियों में प्राथमिक शिक्षण के लिए यह पद्धति निगमन पद्धति से अधिक उपयुक्त पद्धति है।

निगमन पद्धति :

निगमन पद्धति आगमन पद्धति से बिलकुल उल्टी पद्धति है। जहाँ आगमन में पहले दृष्टांत, उदाहरण दिये जाते है। वहाँ निगमन में पहले नियम या सिद्धान्त रखा जाता है। आगमन में नियम सब से अन्त में शिक्षार्थियों के द्वारा तैयार करवा कर प्रस्तुत किया जाता है। निगमन पद्धति में प्रथम शिक्षक द्वारा नियम या सिद्धांत प्रस्तुत किया जाता है और उसके बाद शिक्षार्थियों के द्वारा उसके उदाहरणों की खोज करवायी जाती है। लेंडन के अनुसार, 'निगमन पद्धति के द्वारा शिक्षक पहले परिभाषा या नियम सिखाता है, फिर उसके अर्थ की सावधानी से व्याख्या की जाती है और अन्त में तथ्यों का प्रयोग करके उसे पूर्ण रुप से स्पष्ट किया जाता है।'

इस कथन का अर्थघटन इस प्रकार दिया जाता है **:** निगमन पद्धति द्वारा अध्यापन कार्य करते समय शिक्षक प्रथम पाठ्य इकाई से सम्बन्धित सिद्धांत को शिक्षार्थी के सम्मुख श्यामपट पर लिखकर प्रस्तुत करता है और फिर इस सम्बन्ध में प्रयोग, अवलोकन तथा प्रमाणो के आधार पर सत्य सिद्ध करता है। उसके पश्चात् शिक्षार्थियों को सिद्धांत या नियम को समर्थन देनेवाले उदाहरण ढूँढने को कहा जाता है। इस का अर्थ यह हुआ कि यह पद्धति सामान्य से विशिष्ट की ओर तथा सूक्ष्म से स्थूल की ओर शिक्षण सूत्रों का आधार लेकर कार्य करती है। यह पद्धति उच्चत्तर कक्षाओं के लिए अधिक सफल हो सकती है। तथा प्राथमिक कक्षाओं में आगमन पद्धति का चक्र समाप्त करने के पश्चात दृढिकरण के लिए निगमन पद्धति का प्रयोग किया जा सकता है।

आगमन पद्धति के सोपान : कक्षाध्यापन में निगमन पद्धति के विनियोग निम्नांकित सोपानों द्वारा किया जा सकता है।

सोपान : 1 नियम या परिभाषा : शिक्षक पाठ्य इकाई के आधार पर सर्वप्रथम किसी सिद्धान्त, नियम या परिभाषा को श्यामपट पर लिखेगा। दो चार शिक्षार्थियों के पास इसका पठन करवाएगा। बाकी शिक्षार्थी ध्यान से श्रवण व पठन करेंगे। 'अ' के योग में 'आ' आने पर अ का 'आ' होता है।

सोपान : 2 उदाहरणों की प्रस्तुति : प्रस्तुत नियम, सिद्धान्त या परिभाषा से सम्बन्धित शिक्षक ही उदाहरण प्रस्तुत करेगा। जैसे कि नियम रखा गया था अ + आ = आ ('अ' के योग में 'आ' आने पर अ का आ होगा)

उदाहरण **:** मैं पुस्तकालय में जाता हूँ।

पुस्तकालय = पुस्तक + आलय (क = क् + अ)

बर्फाच्छादित = बर्फ (फ् + अ) + आच्छादित

मुख्यालय = मुख्य (य् + अ = य) + आलय

उदाहरणों से नियम को स्पष्ट करने कि लिए प्रश्नोत्तर करेगा। जैसे कि

1. पुस्तकालय में कितने पद है ? (दो)
2. कौन कौन से पद है ? (पुस्तक + आलक)
3. पूर्वपद का अन्तिम स्वर कौन सा है ? पुस्तक (क् + अ = क)
4. उत्तर पद का प्रथम स्वर कौन सा है ? आलय (अ + अ = आ)
5. अ के योग में आ आने पर नियमानुसार सन्धि क्या होगी ? (आ)

सोपान : 3 निष्कर्ष : एक से अधिक उदाहणों तथा तत्संबंधी प्रश्नोत्तर के आधार नियम, सिद्धान्त या परिभाषा की कसौटी की जाती है। तथा इसके पश्चात् निष्कर्म पर पहुँचते है।

सोपान : 4 परीक्षण : उदाहरणों के आधार पर प्रश्नोत्तर और प्रश्नोत्तर के आधार निष्कर्ष होता है। अब उक्त निष्कर्ष के आधार पर नियम, सिद्धांत या परिभाषा की परीक्षा की जाती है। इस हेतु फिर से उदाहरण ढूँढे जाते हैं तथा इनकी चर्चा करके परीक्षण किया जाता है। इस सोपान पर कोई बुद्धिमान शरारती शिक्षार्थी अपवाद रुप उदाहरण प्रस्तुत कर नियम को चुनौती दे सकता है। तब शिक्षक को कुनेह से काम लेना होगा।

निगमन पद्धतिनी लाक्षणिकताएँ :

1. इस पद्धति से तीव्र गति से ज्ञान प्रदान किया जा सकता है। इसके पीछे तर्क यही है कि शिक्षार्थी नियम जानने के बाद थोडे से उदाहरणों से उसकी सत्यता जाँच सकता है।
2. बेशक यह पद्धति उच्च तथा उच्चतर कक्षा के शिक्षार्थियों के शिक्षणकार्य के लिए बहुत उपयोगी है। क्योंकि उसमें अमूर्त विचारों को समझने की क्षमता होती है।
3. सही है यह पद्धति शिक्षक का श्रम कम करती है क्योंकि उसे अपने कथन का प्रमाण नहीं देना पड़ता है।
4. यह पद्धति सामान्य सिद्धान्त या नियम की सत्यता की जाँच करने के लिए बहुत ही लाभप्रद है।
5. इस पद्धति से शिक्षण कार्य करने से शिक्षार्थी के अधिगम समय में काफी बचत होती है।

निगमन पद्धति की मर्यादाएँ : इस पद्धति की मर्यादाएँ इस प्रकार है **:**

1. इस पद्धति से शिक्षणकार्य करने से शिक्षार्थियों को विचार या तर्क करने के अवसर कम प्राप्त होते हैं क्योंकि इसमें बिना मानसिक व्यायाम के नियम व सिद्धांत हस्तगत हो जाते है।
2. इस पद्धति से शिक्षणकार्य करने से शिक्षार्थियों की स्मृति का ही उपयोग होता है जिसके परिणाम स्वरुप उनमें रहने की आदत बढ़ जाती है।
3. शिक्षार्थी सिद्धान्त व नियम को कण्ठस्थ करने पर जोर देता है। सिद्धान्त व नियम समझने का यत्न नहीं करता है।
4. इस पद्धति से शिक्षार्थी को प्राप्त ज्ञान अधूरा, अपूर्ण और अस्पष्ट होता है क्योंकि इसको पाने में उनसे किसी भी प्रकार की साँझेदारी नहीं की होती है।
5. यह पद्धति शिक्षार्थी की अभिरुचि और जिज्ञासा की अवहेलना करती है क्योंकि इस में शिक्षार्थी से नये तथ्य या सामान्य नियम खोजने की आशा ही नही की जाती।
6. यह पद्धति सूक्ष्म से स्थूल की ओर जानेवाली प्रक्रिया का अनुसरण करती है। यह मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया नहीं है।
7. यह पद्धति किसी नियम या सिद्धान्त की खोज करने में सहायता नहीं देती है।

संक्षेप में निगमन पद्धति में शिक्षार्थी की स्वाभाविक क्रियाशीलता के प्रति ध्यान नहीं दिया जाता है। कम उम्र के शिक्षार्थी में क्रियाशीलता अधिक होती है। इसी कारण प्राथमिक कक्षाओं के लिए यह पद्धति अनुपयुक्त है। लेंडनने ठीक ही कहा है — कम आयु के शिक्षार्थियों के लिए निगमन पद्धति का इतनी सफलता से प्रयोग नहीं किया जा सकता है, जितना कि आगमन पद्धति द्वारा सरल शिक्षण का।

आगमन व निगमन की अगत्य :

यह सच है कि आगमन पद्धति तथा निगमन पद्धति दोनों में जमीन आँसमान का अन्तर हैं। एक उदाहरण पर से सामान्य की ओर ले जाती है। तो दूसरी सामान्य से विशिष्ट (उदाहरण) की ओर ले जाती है। एक में शिक्षार्थी को नियम की खोज करने के अवसर उपलब्ध होते हैं तो दूसरी में नियम रेडीमइड मिल जाता है। फलत**:** उसे खोजने के परिश्रम की कोई आवश्यकता ही नही रह जाती है। एक में शिक्षार्थी की तर्क क्षमता तथा विचार क्षमता का विकास हो सकता है तो दूसरी में तर्क या विचार करने की गुंजाइश ही नहीं है। एक में शिक्षार्थी की रुचि तथा जिज्ञासा को उत्तेजित किया जाता है तो दूसरी में जिज्ञासा तथा रुचि की नितान्त अवहेलना की जाती है। ऐसे तो अनेक विरोधाभास हैं इन दोंनो में ष फिर दोंनो की हिन्दी शिक्षा में बहुत ही अगत्य है। ये दोनों विरोधी दीखती है किन्तु ये दोनों परस्पर सहायक भी हैं। ये दोनों परस्पराधिन भी है तथा दोनों एक-दूसरे की पूरक है। जैसे कि

आगमन पद्धति से जिस नियम की खोज की जाती है, उसकी सत्यता की परीक्षा निगमन पद्धति से की जा सकती है। इस प्रकार दोनों पद्धतियों का एक दूसरें में समावेश रहता है। अत : उनका प्रयोग अलग अलग न किया जाना चाहिए अपितु एक साथ किया जाना चाहिए । इसी कारण दोनों परस्पर सम्बन्धित है। एक का काम दूसरे के बिना नहीं चल सकता। इसी कारण दोनों पद्धतियों को अलग अलग न मानकर 'अगमन-निगमन पद्धति' के संयुक्त नाम से ही जाना जाता है। इस पद्धति का हर्बट की पंचपदी शिक्षण प्रणाली में सुन्दर समन्वय मिलता है, जिस में पहले तीन सोपान आगमन पद्धति के और अन्तिम दो सोपान निगमन पद्धति के लिए उपयुक्त है।

रायबर्न दोनों पद्धतियों के सम्मिलित प्रयोगो को शिक्षण के लिये आवश्यक बताते हुए लिखा है – आगमन पद्धति के बाद निगमन पद्धति का प्रयोग आवश्यक है। उदाहरण देकर शिक्षार्थियों से सामान्य निष्कर्ष निकलवा लेना ही पर्याप्त नहीं होता है, वरन् यह आवश्यक है कि शिक्षार्थी इस से आगे बढ़कर अपने ज्ञान को अभिवृद्ध करने के लिये नियमों की परीक्षा करने के लिए निगमन पद्धति का भी प्रयोग करना चाहिए।

1.4 सारांश

इस इकाई में हिन्दी भाषा शिक्षण की छ पद्धतियों के विषय में चर्चा की गयी है। सब से पहले हिन्दी भाषा शिक्षण की प्रत्यक्ष पद्धति की जानकारी प्रस्तुत की गयी है। यह एक मनोवैज्ञानिक पद्धति है क्योंकि शिशु जिस सहज और प्राकृतिक ढंग से भाषा सीखता है वही प्रक्रिया इस पद्धति में स्वीकार की गई है। भाषा सीखने सहज प्राकृतिक पद्धति है श्रवण–कथन–पठन और लेखन। प्रत्यक्ष पद्धति में भी लक्ष्य भाषा (हिन्दी) के श्रवण के पर्याप्त मात्रा में अवसर दिये जाते है फिर बोलने के अवसर दिये जाते है। कक्षा में शिक्षण कार्य करते समय मातृभाषा के प्रयोग का निषेध होता है।

दूसरी पद्धति है परोक्ष पद्धति। वह प्रत्यक्ष पद्धति से बिलकुल विपरीत। इस में मातृभाषा के द्वारा लक्ष्यभाषा (हिन्दी) सिखायी जाती है। इस में अनुवाद पर जोर दिया जाता है। लेकिन तब यह तथ्य विस्मृत किया जाता है कि जब नयी भाषा सिखाई जा रही होती है तब मातृभाषा का प्रयोग करने से नयी भाषा के शिक्षण में व्याघात पहुँचता है। अतएव यह अवैज्ञानिक पद्धति है। इसी वजह से नयी नयी शिक्षण पद्धतियाँ आविष्कृत हुई है।

तीसरी पद्धति है गठन पद्धति, इसे साँचा शिक्षण पद्धति भी कहते है। कई विद्वान इसे संरचनात्मक पद्धति भी कहते हैं। इसमें भाषा के बुनियादी साँचो (स्ट्रक्चर) की शिक्षा दी जाती है। यह अभ्यास पर अभ्यास पर जोर देती है। जब साँचो की शिक्षा दृढ हो जाती है तब बाद में शब्द शिक्षा दी जाती है। साँचे का अर्थ है वाक्य संरचना। इसे अधिगम मनोविज्ञान तथा भाषा विज्ञान का समर्थन है।

चौथी पद्धति है व्याकरण अनुवाद पद्धति थी। यह परोक्ष पद्धति से मिलती जुलती पद्धति है। इस में भी व्याकरण पर जोर दिया जाता है तथा मातृभाषा के द्वारा लभ्यभाषा की शिक्षा दी जाती हो। फिर भी प्रत्यक्ष पद्धति के साथ कभीकभार इस पद्धति से भी शिक्षा होती है। इस दृष्टि से यह सहायक गौण पद्धति है।

पाँचवी पद्धति है संघटना परक शिक्षण पद्धति। प्रत्यक्ष पद्धति की मर्यादाओं को दूर करने के लिए संघटना परक पद्धति का आविष्कार किया गया था। इसमें स्वाभाविक संवाद तथा मौखिक व्यवहारों के द्वारा लक्ष्य भाषा की शिक्षा की योजना की जाती है। इसे भाषा विज्ञान का भी समर्थन है।

छठवीं पद्धति है आगमन निगमन पद्धति। इस में ज्ञात से अज्ञात की ओर और विशिष्ट से सामान्य की ओर जाना होता है। आगमन में उदाहरणों के द्वारा नियम निर्धारत करना होता है। जब कि निगमन में नियम के आधार पर उदाहरणों की खोज करनी होती है। वैसे दोनों पद्धतियाँ बिलकुल एक दूसरे से विरोधी हैं फिर भी दोनों का साथ साथ प्रयोग लाभकर्ता सिद्ध हुआ है।

लक्ष्य भाषा – हिन्दी भाषा शिक्षण की भिन्न भिन्न पद्धतियों की जानकारी यहाँ प्रस्तुत की गयी है। शिक्षक को यह तथ्य समझ लेना है कि किसी एक पद्धति से शिक्षण कार्य का निर्णय न करे, आवश्यकतानुसार सहायक पद्धति का भी प्रयोग करें। किन्तु एक बात सदैव याद रहे कि लक्ष्य भाषा की शिक्षा के समय मातृभाषा का प्रयोग न करे अथवा लघुतम प्रयोग करें।

बोध प्रश्न :

1. शिक्षक हिन्दी भाषा शिक्षण के लिये प्रत्यक्ष पद्धति का प्रयोग क्यों करेगा ? तीन कारण दीजिये।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

2. गठन पद्धति में ध्यान देने योग्य दो बातें लिखें।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

3. आगमन व निगमन पद्धति के तीन भेद लिखें।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

4. सिद्ध कीजिए आगमन-निगमन पद्धति परस्पर पूरक है।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

1.5 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. शिक्षक हिन्दी भाषा शिक्षण के लिए प्रत्यक्ष पद्धति का प्रयोग निम्नांकित कारणों से करेगा ...
   1. भाषा सीखने की प्राकृतिक पद्धति है। जैसे बालक अपनी मातृभाषा सुनकर सीखता है, इस पद्धति में प्रथम श्रवणानुभव दिये जाते हैं। फिर बोलना सिखाया जाता है तथा बाद में पढ़ना तथा लिखना सिखाया जाता है।
   2. इस पद्धति को मनोविज्ञान का भी समर्थन है।
   3. इस पद्धति से सीखने में मातृभाषा का व्याघात पहुँचता नहीं है।
2. परोक्ष पद्धति की तीन विशेषताएँ इस प्रकार है **:**
   1. यह अनुवाद को विशेष महत्त्व देती है। मातृभाषा के द्वारा हिन्दी भाषा की शिक्षा में विश्वास करती है।

2. व्याकरण शिक्षा पर विशेष ध्यान देती है। व्याकरण के ज्ञान के अभाव में भाषा सीखी नहीं जाती ऐसी मान्यता के साथ चलती है।

3. गठन प्रवृत्ति मुख्य है। शब्दों का अर्थ, व्याकरण के नियम हटाने से ही सीखे जा सकते हैं ऐसा इस में आग्रह रहता है।

3. गठन पद्धति में ध्यान देने योग्य दो बातें इस प्रकार है :

1. भाषा की संरचना सिखाने की उत्तम पद्धति है इसीलिए शिक्षार्थी की आयु, मानसिक स्तर तथा अनुभव को लक्ष में रखकर संरचनाएँ (साँचे) पसन्द करने चाहिए।

2. इस में शब्द शिक्षा पर जोर न देकर वाक्य शिक्षा से ही आरम्भ करना चाहिए।

4. आगमन-निगमन परस्पर पूरक है क्योंकि –

1. आगमन पद्धति से जो सिद्धान्त, नियम तैयार किया गया है उसकी सत्यता की परीक्षा निगमन पद्धति से की जा सकती है।

2. आगमन पद्धति से दिया गया ज्ञान शिक्षार्थियों ने कहाँ तक ग्रहण किया है उसका मूल्यांकन निगमन पद्धति से किया जा सकता है।

3. आगमन पद्धति से शिक्षार्थियों के पास से सिद्धान्त या नियम तैयार करना ही पर्याप्त नहीं है, अपितु यह भी आवश्यक है कि वहाँ से आगे बढ़े तथा अपने ज्ञान में वृद्धि करे, इस हेतु निगमन पद्धति का प्रयोग हो सकता है।

1.6 उपयोगी पुसकें

1. श्रीवास्तव, रवीन्द्रनाथ : हिन्दी शिक्षा।
2. सिंहा, सावित्री : हिन्दी शिक्षण।
3. दवे तथा अंधारिया : हिन्दी अध्यापन विमर्श, बी.एस.शाह प्रकाशन, अहमदाबाद तथा अन्य।
4. चौहान, महोबतसिंह : भाषा का अध्यापन, केन्द्रिय हिन्दी संस्थान, आगरा।
5. सिंह निरंजनकुमार : माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, तिलक नगर, जयपुर।

इकाई 2

भाषा शिक्षण की प्रयुक्तियाँ

: रूपरेखा :

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 भाषा शिक्षण की प्रयुक्तियाँ

2.3.1 व्याख्या प्रयुक्ति

2.3.2 स्पष्टीकरण प्रयुक्ति

2.3.3 वर्णन प्रयुक्ति

3.3.4 विवरण प्रयुक्ति

2.3.5 तुलना प्रयुक्ति

2.3.6 कथा कथन प्रयुक्ति

2.3.7 व्याख्यान प्रयुक्ति

2.3.8 पुस्तक पठन प्रयुक्ति

2.3.9 प्रश्न प्रयुक्ति

2.4 सारांश

2.5 बोध प्रश्न के उत्तर

2.6 उपयोगी पुस्तकें

2.1 प्रस्तावना

शिक्षक अपने हिन्दी भाषा (लक्ष्य भाषा) शिक्षण को असरकारक करने कि लिए जैसे योग्य शिक्षण पद्धति का चुनाव करता है। वैसे ही चुनी हुई शिक्षण पद्धति से शिक्षण को प्रभावी करने के लिए योग्य शिक्षण प्रयुक्तियों का भी प्रयोग करता है। शिक्षण प्रयुक्ति के बिना शिक्षण पद्धति परिपूर्ण हो ही नहीं सकती है। पद्धति तो एक प्रकार की अवधारणा है जब कि प्रयुक्ति इसके क्रियान्वयन की ऊर्जा है। पद्धति व्यापक अवधारणा है तो प्रयुक्ति इसकी सहायक उपधारणा है। इसी कारण किसी भी प्रशिक्षार्थी को प्रयुक्ति के विषय में जानना जरुरी है। मात्र ज्ञानात्मक सम्प्राप्ति से शिक्षक का काम नहीं चलेगा। उसे तो ये प्रयुक्तियों के प्रयोग में समर्थ होना है। पद्धति विचार है तो प्रयुक्ति व्यवहार है। व्यवहार ही भाषा शिक्षा के उद्देश्यों को सफल करनेवाली शक्ति है। अतएव व्यवहारों पर प्रभुत्व पाना बेहद आवश्यक है।

प्रसिद्ध शिक्षा तकनिकी ए. एच. गार्लिक ने शिक्षण प्रयुक्तियों पर प्रकाश डालते हुए लिखा है, शिक्षक को सबसे पहले यह निर्णय करना पड़ता है वह क्या पढ़ाएगा। उसके बाद वह विषय सामग्री को व्यवस्थित करना है। फिर वह यह सोचना है कि पसन्द की गयी विषय सामग्री अपने शिक्षार्थियों के प्रमुख किस प्रकार प्रस्तुत करेगा। इस समय वह विभिन्न प्रयुक्तियों के विनियोग पर विचार करता है। स्पष्ट है कि शिक्षण प्रक्रिया में प्रयुक्तियों का महत्त्व विशेष है।

2.2 उद्देश्य

- प्रशिक्षार्थी शिक्षण प्रयुक्तियों के महत्त्व को समझ सकेंगे।
- प्रशिक्षार्थी विविध प्रयुक्तियों को जानेंगे।
- प्रशिक्षार्थी कक्षाध्यापन में शिक्षण प्रयुक्तियों का प्रयोग कर सकेंगे।
- प्रशिक्षार्थी हिन्दी भाषा शिक्षण को प्रभावी कर सकेंगे।

2.3 भाषा शिक्षण की प्रयुक्तियाँ

हिन्दी भाषा (लक्ष्य भाषा) शिक्षण की वैसे तो कई प्रयुक्तियाँ है। इन में से हम कतिपय प्रयुक्तियों की जानकारी पायेंगे। यहाँ हम निम्नांकित प्रयुक्तियों का परिचय करेंगे।

2.3.1 व्याख्या प्रयुक्ति

2.3.2 स्पष्टीकरण प्रयुक्ति

2.3.3 वर्णन प्रयुक्ति

3.3.4 विवरण प्रयुक्ति

2.3.5 तुलना प्रयुक्ति

2.3.6 कथा कथन प्रयुक्ति

2.3.7 व्याख्यान प्रयुक्ति

2.3.8 पुस्तक पठन प्रयुक्ति

2.3.9 प्रश्न प्रयुक्ति

अब प्रत्येक शिक्षण प्रयुक्ति का विस्तृत परिचय प्रस्तुत किया जा रहै है।

2.3.1 व्याख्या प्रयुक्ति :

व्याख्या का अर्थ व उद्देश्य स्पष्ट करते हुए ए.एच.गार्लिक ने लिखा है : व्याख्या का अर्थ है जिसके द्वारा किसी शब्द समूह या कथन के अर्थ सम्बन्धी सभी जटिलताएँ दूर हो जाती है।

इस प्रयुक्ति का प्रयोग काव्यशिक्षण, गद्यशिक्षण तथा व्याकरण शिक्षण में किया जा सकता है। लेखक या कवि शब्द के जादूगर होते है। वे शिक्षार्थी के लिए अपरिचित शब्दों का भी प्रयोग कर लेते है। तब भाषा शिक्षक को इन शब्दों को समझाने के लिए व्याख्या प्रयुक्ति का प्रयोग करने की आवश्यकता रहती है। इसी प्रकार कहानीकार कहानी लिखते समय कोई सन्देश देना चाहता है। तब वह विचार प्रधान शब्दावली युक्त वाक्य लिख देते है। ऐसे वाक्यों का अर्थघटन करने के लिए भी व्याख्या प्रयुक्ति का विनियोग करना पड़ता है। शिक्षक को व्याख्या सरल भाषा में करनी चाहिए ता कि शिक्षार्थी समझ सकें। व्याख्या का

उद्देश्य भी यही है कि किसी भाव या विचार को सरल भाषा में स्पष्ट करना, जिससे शिक्षार्थी उस भाव या विचार को भलीभाँति समझ सकें।

व्याख्या करने की विधियाँ : शिक्षक अपनी आवश्यकतानुसार निम्नांकित में से व्याख्या करने कि लिए किसी भी विधि का प्रयोग कर सकता है : पारिभाषिक शब्दों के लिए सरल पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग कर व्याख्या करना, मातृभाषा में भाषान्तर करना, शब्दांतर करना, अभिनय कर व्याख्या करना, तुलना करना, विग्रह या सन्धि करना, शाब्दिक उदाहरण देना, चित्र या नमूने दिखाना।

व्याख्या करते समय ध्यान देने योग्य बातें : शिक्षक जब भी किसी शब्द, पारिभाषिक शब्द, अवधारणा, कहावत या शब्द समूह के लिए व्याख्या करें तब निम्नांकित बातों पर ध्यान दें :

1. व्याख्या शुद्ध, सरल और स्पष्ट होनी चाहिए।
2. व्याख्या शिक्षार्थियों की आयु, अनुभव और मानसिक स्तर के अनुरुप होनी चाहिए। तभी ये उस को अच्छी तरह समझ पाएँगे।
3. व्याख्या आवश्यकता से अधिक लम्बी नहीं होनी चाहिए। ऐसी दशा में शिक्षार्थी ऊब जाते हैं फिर उनकी उस में रुचि नहीं रह जाती।
4. व्याख्या आवश्यकता से अधिक छोटी भी नहीं होनी चाहिए ऐसी व्याख्या से कथन/शब्द या शब्दसमूह का अर्थ पूर्ण रुप से स्पष्ट नहीं होता है।
5. व्याख्या संकुल या मिश्र वाक्य में नहीं करनी चाहिए। अन्यथा शिक्षार्थियों की उलझनें बढ़ जाएँगी।
6. व्याख्या को स्पष्ट करने के लिए उससे सम्बन्धित विचारों को क्रमबद्ध करना चाहिए अन्यथा शिक्षार्थी भ्रम में उलझ जाएँगे।
7. व्याख्या सदैव उचित स्थलों पर की जानी चाहिए। यदि व्याख्या आवश्यक क्षण के पहले या बाद में की जाती है तो उसका महत्त्व नष्ट हो जाता है।
8. व्याख्या करने से पूर्व शिक्षक को पाठ्य विषय से सम्बन्धित सभी तथ्यों की पूर्ण जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए।
9. यदि सम्भव हो तो शिक्षार्थियों को वह वस्तु, चित्र या मोडल दिखा देना चाहिए, जिसकी व्याख्या की जाती है।
10. व्याख्या को उदाहरण या दृष्टांत देकर सजीव और रोजक बनाना चाहिए।
11. साहित्य से सम्बन्धित किसी पद या गद्यांश की व्याख्या करते समय समानता या असमानता आदि युक्तियों का प्रयोग करना चाहिए।
12. कठिन शब्दों को समान या विलोम अर्थ बतानेवाले सरल शब्दों का प्रयोग करके स्पष्ट करना चाहिए।
13. व्याख्या करते समय शिक्षार्थियों की रुची बनाये रखने के लिए उनसे प्रश्न भी पूछने चाहिए तथा उनको प्रश्न पूछने के अवसर देने चाहिए।
14. बिना आवश्यकता के व्याख्या नहीं करती चाहिए। इससे समय और शक्ति का ह्रास होता है।
15. व्याख्या उपदेश के रुप में नहीं होनी चाहिए क्यों कि शिक्षार्थियों को उपदेश पसन्द नहीं होता है।

2.3.2 स्पष्टीकरण प्रयुक्ति

स्पष्टीकरण एक प्रकार का वर्णन है। स्पष्टीकरण के द्वारा भाव या आर्थ स्पष्ट किया जाता है। इसको विचारों को स्पष्ट रुप से व्यक्त करने की कला कहा जाता है। स्पष्टीकरण का उद्देश्य शिक्षार्थी के समक्ष नवीन ज्ञान को इतने स्पष्ट और बोधनीय ढंग से प्रस्तुत करना कि वे उसे हृदयंगम कर लें। शिक्षक इस प्रयुक्ति का प्रयोग उस समय करता है, जब उसे यह मालूम होता है कि उसके शिक्षार्थी उस विषय के बारे में बहुत कम जानते हैं, जिसे वह पढ़ाने जा रहा है।

अच्छे स्पष्टीकरण के लक्षण :

1. स्पष्टीकरण सरल, स्पष्ट, सुबोध और सुनिश्चित होना चाहिए।
2. शिक्षक की भाषा सुबोध, स्वाभाविक तथा शिक्षार्थी के स्तर की होनी चाहिए।
3. शिक्षक और शिक्षार्थी को पाठ का उद्देश्य और अभिप्राय ज्ञात होना चाहिए।
4. शिक्षक को पाठ्यसामग्री पर अधिक से अधिक चिन्तन-मनन करना चाहिए।
5. शिक्षक को सम्पूर्ण पाठ को स्पष्ट-स्वाभाविक तथा तार्किक क्रम में बाँट लेना चाहिए।
6. शिक्षक की प्रस्तावना संक्षिप्त होनी चाहिए उसे स्पष्टीकरण के सोपान पर आने में विलम्ब नहीं करना चाहिए।
7. शिक्षक को विषयवस्तु की मुख्य बातें श्यामपट (ब्लेक बोर्ड) पर लिख लेना चाहिए तथा उन पर ही ध्यान केन्द्रित कर स्पष्टीकरण करना चाहिए।
8. रायबर्न और फोर्ज महोदय के अनुसार शिक्षक को स्पष्टीकरण के अन्तर्गत शिक्षार्थी के अनुभव, पूर्वज्ञान आदि से सम्बन्धित पर्याप्त मात्रा में उदाहरण प्रस्तुत करने चाहिए। तथा तुलनात्मक उपागम का प्रयोग करना चाहिए।
9. स्पष्टीकरण करते समय तथा अध्यापन की समाप्ति पर प्रश्न पूछने चाहिए।
10. स्पष्टीकरण के दौरान तथा पश्चात् शिक्षार्थी को प्रश्न पूछने के पर्याप्त अवसर देने चाहिए।

2.3.3 वर्णन प्रयुक्ति

यह बहुत ही आवश्यक प्रयुक्ति है। शिक्षण कार्य के समय शिक्षक को एकाधिक बार वर्णन करना पड़ता है। वर्णन का अर्थ ही है शब्दों या संकेतो या दोनों द्वारा किसी वस्तु का चित्र प्रस्तुत करने का कार्य। वास्तव में यह शाब्दिक चित्र बनाने की प्रक्रिया है। यह किसी वस्तु का ब्यौरा देने का प्रयत्न है जिससे शिक्षार्थी उसके विषय में उचित धारणा बना सकता है।

वर्णन एक अर्थ में स्पष्टीकरण का एक रुप है। भाषा शिक्षक कहावत, मुहावरें, सूक्तियाँ, आदि पढ़ाते समय वर्णन प्रयुक्ति का प्रयोग कर शिक्षार्थी के समय योग्य मनोचित्र प्रस्तुत कर सकता है। लक्षणार्थ व व्यंजनार्थ की चर्चा करते समय भी वर्णन प्रयुक्ति अधिक उपयोगी सिद्ध होती है।

वर्णन करते समय रखने योग्य सावधानियाँ :

1. जिसका भी वर्णन करना है, उस विषय में वर्णनकर्ता को सम्पूर्ण ज्ञान या जानकारी होनी चाहिए।
2. शिक्षार्थी के लिए सुबोध हो सके ऐसी भाषा में वर्णन करना चाहिए।
3. वर्णन को रोचक व सजीव बनाने कि लिए आंगिक अभिनय का सहारा लेना चाहिए।
4. वर्णन तर्क तथा तथ्यों पर आधारित होना चाहिए। किसी भी स्थिति में उसमें कल्पना या असत्यता का पुट नहीं होना चाहिए।
5. वर्णन करते समय आवश्यक तथा योग्य सहायक सामग्री का प्रयोग करना चाहिए।
6. वर्णन अधिक लम्बा या अधिक संक्षिप्त नहीं होना चाहिए।
7. वर्णन क्रमबद्ध तथा व्यवस्थित होना चाहिए ता कि वर्ण्य वस्तुका सम्पूर्ण चित्र शिक्षार्थी के मानस पटल पर उभर सकें।
8. पाठ नियोजन करते समय ही शिक्षक को यह तय कर लेना चाहिए कि वर्णन किन किन स्थलों पर करना है।
9. वर्णन की प्रस्तुति में ज्ञात से अज्ञात की ओर जाना जाहिए।
10. वर्णन की विषयवस्तु शिक्षार्थी की आयु, मानसिक स्तर तथा अनुभव क्षेत्र को मद्देनज़र रख पसंद करनी चाहिए।

3.3.4 विवरण प्रयुक्ति

वैसे तो वर्णन और विवरण एक सिक्के के ही दो पहलू हैं। शिक्षक किसी स्थान या व्यक्ति का वर्णन करता है किन्तु किसी घटना, प्रसंग का विविरण देता है। वास्तव में विवरण कहानी कथन का एक रुप है। ग्रीन व बरचेना का कथन है — विवरण का अर्थ है – क्रमबद्ध घटनाओं का वर्णन।

विवरण प्रयुक्ति का उद्देश्य शिक्षार्थी के मस्तिष्क पर किसी घटना का स्पष्ट चित्र अंकित करना है। यद्यपि इस प्रयुक्तिका विशेष उपयोग इतिहास शिक्षण में होता है तथापि हिन्दी भाषा शिक्षण के समय ऐतिहासिक कहानियाँ, निबन्ध, जीवनी तथा कथाकाव्यों की चर्चा में भी हो सकता है।

वर्णन प्रयुक्ति के प्रयोग के समय जो जो बातें ध्यान में रखनी होती हा वही बातें विवरण करते समय भी ध्यान में रखनी चाहिए। मात्र विशेष बात यह है कि जिस घटना का शिक्षक विवरण देना चाहता है, उसके विषय में तमाम तथ्यों से अवगत होना चाहिए। विवरण एक पत्रकार की शैली में प्रस्तुत होना चाहिए। विवरण एक प्रकार का रिपोतार्ज हो सकता है। विवरण को नाट्यत्मक शैली में अथवा नाटक के रुप में भी प्रस्तुत किया जा सकता है।

2.3.5 तुलना प्रयुक्ति

किसी भी सिद्धान्त, तथ्य, अवधारणा, आदि को तुलनात्मक शैली में प्रस्तुत करने से वह अधिक सुबोध व सुग्राह्य होती है। तुलना शिक्षण की एक सहायक प्रयुक्ति है। इसका प्रयोग अन्य प्रयुक्ति के साथ किया जा सकता है, जैसे की स्पष्टीकरण करते समय तुलना प्रयुक्ति का प्रयोग किया जा सकता है। तुलनात्मक उपागम से शिक्षण कार्य अधिक अभिरुचिकर तथा प्रभावोत्पादक हो सकता है। तुलना शब्द के अर्थ पर प्रकाश डालते हुए लेंडन ने लिखा है, तुलना का अर्थ है एक तथ्य को दूसरे उस से मिलते जुलते तथ्य के साथ रखना और दोनों के निकट सम्बन्ध का अध्ययन करना। साम्य तथा तफावत को अलग करना। तुलना प्रयुक्ति का प्रयोग भाषेत्तर विषयों में तो हो सकता है, भाषा शिक्षण में भी सफलतापूर्वक हो सकता है। उदाहरण के तौर पर काव्यशिक्षण, पाठ्यकाव्य प्रकृति काव्य है तथा उसकी विषयवस्तु वर्षाऋतु है। तो शिक्षक इसी विषयवस्तु आ अन्य कविका दूसरा काव्य लेकर दोनों की तुलना करके पढ़ा सकता है। इसी प्रकार व्याकरण की तमाम कोटियों में मातृभाषा तथा हिन्दी भाषा के तत्त्वों की तुलना की जा सकती है। इस में दोनो के मध्य साम्य तथा वैषम्य ढूँढने के अवसर शिक्षार्थी को प्रदान करने चाहिए। तुलना के पश्चात् शिक्षार्थी कोई निश्चित निष्कर्ष पर पहुँच कर अपना अभिप्राय निर्माण कर सकता है। इस प्रयुक्ति से शिक्षार्थी की निरीक्षण क्षमता, परीक्षण क्षमता, चिन्तन क्षमता आदि का विकास होता है।

2.3.6 कथा कथन प्रयुक्ति

कथा श्रवण आबालवृद्ध सब की मनपसंद प्रवृत्ति है। इसका लाभ शिक्षण कार्य में भी लिया जा सकता है। कहानी कहना अति प्राचीन कला है। इसके द्वारा किसी विषय या घटना को मनोरंजक बनाकर शिक्षार्थियों को उसका ज्ञान सरलता से और सरपूर्ण रुप से दिया जा सकता है। इसका उद्देश्य शिक्षार्थियों की पाठ्यवस्तु के प्रति तथा पाठ्यवस्तु में रुचि व उत्साह जाग्रत करना है। इसी कारण कहानी कथन को औपचारिक शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण साधन माना गया है और प्रत्येक शिक्षक को कहानी कथन कला अर्जित करने का परामर्शन दिया जाता है। ग्रीन और वरचेना महादय का अभिप्राय है कि किसी कहानी को अच्छी तरह सुनाने की योग्यता शिक्षक की सफलता की गारन्टी हो सकती है।

यह सच है कि इस प्रयुक्ति का बिलकुल यह अर्थ नहीं है कि शिक्षक कहानी का मुख पठन करें। कहानी का मुख पठन शिक्षार्थी के लिए अरुचिकर हो जाता है। कहानी प्रत्यक्ष सुनना तथा कहानी के पठन को सुनना अलग प्रकार का अनुभव है। शिक्षार्थी कहानी के पठन का श्रवण करने को कदापि तत्पर नहीं होते। कहानी अभिनय के साथ कहने से अधिक रुचिकर हो जाती है। शिक्षार्थी की आयु तथा मानसिक स्तर को लक्ष्य कर कहानी को लम्बी या छोटी कर लेनी चाहिए। कहानी कहते समय हास्य के अवसर भी प्रदान किये जाने चाहिए। यदि कहानी कथन के साथ साथ विचारोत्तेजक प्रश्न भी पूछने चाहिए। प्राथमिक कक्षाओं में पशु–पक्षी, परीकथाएँ तथा उनके अनुभव जगत सम्बन्धी कल्पना कथाएँ कही जा सकती है। फिर उम्र के बढ़ने के साथ शनैः शनैः ऐतिहासिक, सामाजिक आदि कहानियाँ कही जा सकती है। कहानी कथन प्रयुक्ति शिक्षणकार्य को प्रभावपूर्ण बनाने में बहुत ही उपयोगी है।

2.3.7 व्याख्यान प्रयुक्ति

व्याख्यान का सरल अर्थ होता है प्रवचन। लेकिन शिक्षण प्रयुक्ति के रुप में इसका विशिष्ट अर्थ होता है। यहाँ व्याख्यान का अर्थ होता है शिक्षक उन तथ्यों, सिद्धान्तों या सम्बन्धो के स्पष्टीकरण के लिए निरन्तर इस प्रकार कथन करना ताकि सुननेवाले शिक्षार्थी उनको अच्छी तरह समझ सकें। व्याख्यान का अर्थ निरन्तर बोलना नहीं है अपितु उद्देश्यलक्षी, उदाहरण व स्पष्टीकरण के साथ रसमय शैली में निरन्तर बोलना होता है। इस अर्थ को सार्थक करने के लिए व्याख्यान की पूर्व तैयारी विशेष रुप से करनी होगी। अध्ययन, चिन्तन-मनन, वाक्पटुता तथा भाषा पर प्रभुत्व व्याख्यान को प्रभावी बनानेवाले कारक हैं जिन्हे शिक्षक को पदापि भूलना नहीं चाहिए। व्याख्यान प्रयुक्ति को हम जितनी सरल और सहज समझते हैं, वास्तव में वह उतनी सरल नहीं है। अक्सर शिक्षार्थियों की शिकायत होती है कलाँ शिक्षक के व्याख्यान से हन ऊब गये, यह तो बकवास है, आदि आदि। शिक्षार्थियों की ऐसी कमेन्टों से बचने कि लिए शिक्षक को इतना करना चाहिए :

1. शिक्षार्थियों की आयु, मानसिक स्तर एवं विकास को लक्ष्य में रख व्याख्यान करना चाहिए।
2. निम्न स्तर की कक्षाओं में लगातार व्याख्यान देते नहीं रहना चाहिए।
3. व्याख्यान के साथ बीच बीच में प्रश्न करते रहना चाहिए।
4. उच्च स्तरीय कक्षाओं में व्याख्यान प्रयुक्ति का प्रयोग किया जा सकता है। किन्तु इस प्रयुक्ति के साथ साथ अन्य प्रयुक्तियों का प्रयोग करना बैहतर होगा।
5. शिक्षक को व्याख्यान करने से पहले उसके उद्देश्यों के विषय में सोच लेना चाहिए तथा उसके अनुसार विषयवस्तु विषयक प्रस्तुति की गहराई तय कर लेनी चाहिए।
6. व्याख्यान करते समय उसके प्रमुख मुद्दों को श्यामपट्ट पर लिखते रहना चाहिए।
7. व्याख्यान करते समय आंगिक अभिनय तथा कथन में आरोह अवरोह अत्यावश्यक है।

2.3.8 पुस्तक पठन प्रयुक्ति

पुस्तक पठन कर ज्ञान प्राप्त करने की प्रयुक्ति को पुस्तक पठन प्रयुक्ति कहते है। पुस्तक पठन की दो विधियाँ हैं – (1) कक्षा में शिक्षक स्वयं पुस्तक का पठन कर सिक्षण कार्य करता है (2) कक्षा में शिक्षार्थियों को पुस्तक पठन के अवसर देता है। शिक्षार्थी बारी बारी से पुस्तक का मुखपाठ करता है तथा अध्यापक पठित अंश की व्याख्या करता चलता है। दोनों विधियों में शिक्षक का व्याख्या करना, प्रश्न पूछना आदि आवश्यक रहता है। इस प्रयुक्ति का प्रमुख उद्देश्य शिक्षार्थी के ज्ञान में वृद्धि करना है।

फिर भी इस प्रयुक्ति के प्रयोग से कक्षा का वातावरण नीरस हो जाता है। तथा अधिगम–अध्यापन– अरुचिकर होने लगता है। इसका प्रमुख कारण यह है कि शिक्षार्थी पढ़े जा रहे पाठ्यांश का श्रवण करने में ध्यान नहीं देते हैं। अनुशासन भंग होने लगता है। इतना होने के बावजूद शिक्षक चाहे तो इस प्रयुक्ति को रुचिकर बना सकता है। वैसे भी इसके पीछे मनोवैज्ञानिक इस प्रकार का समर्थन है : बालक पहले पढना सीखता है और सीखने के लिये पढ़ता है।

2.3.9 प्रश्न प्रयुक्ति

कई विद्वान प्रश्नोत्तर विधि भी कहते है। किन्तु यहाँ प्रश्न प्रयुक्ति की दृष्टि से चर्चा की जाएगी। प्रश्न पूछकर शंकाओं का समाधान करने की परंपरा बहुत पुरानी है – भारत में नचिकेता का उदाहरण मौजूद है। पाश्चात्य जगत में सुकरात का नाम इस दृष्टि से अमर है।

शिक्षण कार्य में प्रश्न एक अनिवार्य साधन है। इसकी आवश्यकता स्पष्ट करते हुए रेमोन्ट लिखते है – "प्रश्न पूछने की अच्छी शैली की प्राप्ति तरुण शिक्षक की आवश्यक महत्त्वाकांक्षाओं में से निश्चित रुप से एक है।"

रिस्क महोदय लिखते है : अनेक शिक्षण-पद्धतियों की प्रभावशीलता शिक्षक की प्रश्नों के प्रभावपूर्ण प्रयोग की योग्यता पर बहुत अधिक निर्भर करती है।

इन दो कथनों से स्पष्ट है कि शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में प्रश्नों का स्थान ध्रुवतारक समान है। प्रश्न विविध उद्देश्यों की पूर्ति के लिए पूछे जाते है जैसे कि ......

1. पाठ्यवस्तु के प्रति शिक्षार्थियों को आकृष्ट करने के लिए तथा उनकी जिज्ञासा वृत्ति बढ़ाने ले लिए।
2. अधिगम में शिथिलता को दूर करने के लिए।
3. अधिगम में शिक्षार्थियों की सक्रियता तथा सहभागिता बढ़ाने के लिए।
4. शिक्षार्थियों को सोचने के अवसर प्रदान करने के लिए।
5. शिक्षार्थियों को सोचने के अवसर प्रदान करने के लिए।
6. शिक्षार्थियों को अपने ज्ञान, समझ का प्रयोग तथा प्रदर्शन करने का अवसर देने के लिए।
7. अधिगम का मूल्यांकन करने के लिए।
8. शिक्षार्थी को कक्षा में सतर्क व सजाग रखने के लिए।

कक्षाध्यापन के दौरान शिक्षक नाना प्रकार के प्रश्न पूछता है। प्रश्न का स्वरुप तथा प्रकार पाठ्य सामग्री के अध्यापन के उद्देश्य पर निर्भर करता है। प्रश्न के प्रकार इस प्रकार हैं **:**

1. प्रस्तावनात्मक प्रश्न
2. विकासात्मक प्रश्न
3. विचारात्मक प्रश्न
4. समस्या प्रश्न
5. बोध प्रश्न
6. तुलनात्मक प्रश्न
7. पुनरावृत्ति प्रश्न

इन प्रश्न प्रकारों को विस्तार से उदाहरण के साथ समझेंगे .....

1. प्रस्तावनात्मक प्रश्न : शिक्षक कक्षा में प्रवेशकर पाठ आरम्भ करने से पूर्व इस प्रकार के प्रश्न पूछता है। इसके पीछे तीन उद्देश्य होते हैं **:**

(अ) शिक्षार्थी के पूर्वज्ञान का पता लगाना।

(ब) पूर्व ज्ञान का नये ज्ञान के साथ सम्बन्ध स्थापित करना।

(क) पाठ्य विषय में शिक्षार्थियों की रुचि और जिज्ञासा जाग्रत करना।

इन हेतु के लिए पूछे गये प्रश्न शृंखलाबद्ध होने चाहिए। लेकिन तीन चार से अधिक प्रश्न नहीं होने चाहिए। अन्तिम प्रश्न शिक्षार्थियों के पूर्व ज्ञान को नये ज्ञान से जोड़नेवाला होना चाहिए। अन्तिम प्रश्न शिक्षार्थियों के पूर्व ज्ञान को नये ज्ञान से जोड़नेवाला होना चाहिए। उदाहरण के तौर पर 'कपास की पैदावार' पाठ निम्नलिखित प्रश्नों से प्रारम्भ किया जा सकता है ....

1. हम अपने शरीर को किस वस्तु से ढ़कते हैं ?

2. ये कपड़े किस से बनते है ?

3. यह वस्तु किस पौधे से मिलती है ?

2. विकासात्मक प्रश्न : इन प्रश्नों का प्रयोग पाठ के विकास के लिए किया जाता है। वस्तुत**:** इन प्रश्नों की सहाय से शिक्षार्थियों को नया ज्ञान प्रदान किया जाता है। इसी कारण इन प्रश्नों को 'शिक्षण प्रश्न' भी कहा जाता है। पाठ की विषयवस्तु को केन्द्र में रखकर शिक्षक ऐसे प्रश्नों की रचना करता है। समय समय पर ऐसे प्रश्न पूछकर पाठ को आगे बढाता है। ये प्रश्न शिक्षार्थियों की कतिपय मानसिक क्रियाओं को उत्तेजित करते हैं। इन प्रश्नों के उत्तर देने के लिए शिक्षार्थी अपनी बुद्धि, तर्क, कल्पना, विचार, स्मृति आदि मानसिक क्षमताओं का प्रयोग करता है।

विकासात्मक प्रश्नों के द्वारा शिक्षक पाठ्यवस्तु में प्रस्तुत विचार, चिन्तन व उद्देश्य को स्पष्ट करता है। इनके द्वारा वह शिक्षार्थियों के एक पाठ्यबिन्दू से दूसरे पाठ्यबिन्दू की ओर खींच ले जाता है। इन प्रश्नों के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए रेमान्ट ने लिखा है, 'प्रारम्भ या अन्त में प्रश्न पूछना इतना महत्त्वपूर्ण नहीं है, जितना पाठ के विकास में'।

3. **विचारात्मक प्रश्न :** कोई भी सफल शिक्षक शिक्षण कार्य के दौरान दो चार विचारात्मक प्रश्न अवश्य करता है । संवेदना की शिक्षा, मूल्य शिक्षा आदि के लिए विचारात्मक प्रश्न ही सार्थक उपकरण है । लेखक-कवि के मन्तव्य तक पहुँचने के लिए विचारात्मक प्रश्न ही राजपथ है । विचारात्मक प्रश्न पाठ्यवस्तु की अभिधा से हटकर लक्षणा या व्यंजना तक के अर्थगांभीर्य को सम्प्राप्त कराने के लिए किया जाते है । ये प्रश्न शिक्षार्थी के मस्तिष्क को जाग्रत, विचारशील तथा क्रियाशील करने के हेतु पूछे जाते हैं । कक्षा में जब अधिकांश शिक्षार्थियों का ध्यान वस्तु चर्चा से हटकर अन्यत्र भटक गया होता है तब इस प्रकार के प्रश्न पूछे जाने चाहिए । इन प्रश्नों का प्रमुख उद्देश्य शिक्षार्थियों का ध्यान पाठ्यवस्तु पर केन्द्रित कराने के लिए तथा उनके मस्तिष्क को क्रियाशील करने के लिए किया जाता है । इन प्रश्नों की रचना में 'क्यों', 'कैसे' और 'क्या परिणाम हुआ' आदि शब्दों का प्रयोग होता है । इन प्रश्नों के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए ऑस्टिन ने लिखा है, 'वे स्फूर्ति और उत्साह प्रदान करते है । वे विचार और कार्य की दिशाओं का सुझाव देते हैं ।'

   'पुष्प की चाह' काव्य पढ़ाते समय इस प्रकार के प्रश्न पूछे जा सकते है :

   1. पुष्प को देवों के सिर पर चढ़कर इठलाने की चाह क्यों नहीं है ?
   2. मातृभूमि पर शिश चढ़ाने वालों को हम क्या कहते हैं ?
   3. पुष्प मातृभूमि पर शिश चढ़ाने जानेवाले सरफरोशों के पथ पर गिरना क्यों चाहता हैं ?

4. **समस्या प्रश्न :** समस्या प्रश्नों का प्रयोग स्थिति के अनुसार पाठ के प्रारम्भ या मध्य या दोनों सोपानों पर किया जा सकता है, इन प्रश्नों के द्वारा शिक्षक शिक्षार्थियों के सम्मुख कोई समस्या खड़ी कर देता है, जिसके उत्तर के लिए शिक्षार्थियों को गम्भीर विचार, चिन्तन और मनन करना पड़ता है । कभीकभार कल्पनाशीलता का भी प्रयोग करना पड़ता है । ये प्रश्न शिक्षार्थियों के मन-मस्तिष्क को सक्रिय करते है । उदाहरण के तौर पर यदि हम 'मेघ' प्रकृति काव्य पढ़ाते हैं तब शिक्षक इस प्रकार का प्रश्न करता है, 'यदि बरसात ही न होती तो ?'

5. **बोध प्रश्न :** बोध प्रश्न वस्तु की गहराई में झाँक ने के लिए किये जाते हैं । इसीलिए इस प्रकार के प्रश्न प्राय: सम्पूर्ण पाठ अध्यापन के बाद या बीच बीच में जहाँ मूल्यात्मक चर्चा है वहाँ पूछे जाते है । यदि पाठ भिन्न भिन्न सोपानों में बँटा हुआ है तो प्रत्येक सोपान के अन्त में इस प्रकार के प्रश्न पूछे जाते हैं । इन प्रश्नों के द्वारा शिक्षक को यह ज्ञात होता है कि शिक्षार्थी पाठ्यवस्तु किस हद तक समझ पाये हैं । पाठ पुनरावर्तन के सम्बन्ध में शिक्षक निर्णय कर सकता है । वास्तव में इस प्रकार के प्रश्न शिक्षक व शिक्षार्थी के परीक्षण के लिए उपयोगी होते हैं । इसी कारण इसे 'परीक्षण प्रश्न' भी कहा जाता है । इसका महत्त्व स्पष्ट करते हुए ऑस्टिन महोदय लिखते हैं, 'ये शिक्षक के शिक्षण का और शिक्षार्थियों की अधिगम का परिक्षण करते हैं । उन से शिक्षकों को शिक्षार्थियों की अधिगम लब्धि ज्ञात होती है ।' ऐसे प्रश्न खास करके क्यों, कैसे, आदि प्रश्नवाचक सर्वनामों के द्वारा रचे जाते हैं ।

6. **तुलनात्मक प्रश्न :** इस प्रकार के प्रश्नों का उद्देश्य दो तथ्यों, या घटनाओं या विचारों में रहा साम्य या वैषम्य को स्पष्ट करता है । इन प्रश्नों का महत्त्व इतिहास, भूगोल और विज्ञान के शिक्षण में अधिक है । भाषा शिक्षण में भी यदाकदा इसका प्रयोग हो सकता है । ये प्रश्न अक्सर पाठ नियोजन के विस्तृत चर्चा सोपान में किया जाता है । पाठ के विकास को रोचक बनाने के लिए ये उपयोगी है । एक ही वर्ण्य वस्तु वाले दो काव्यों की, भिन्न भिन्न भाषा के एक ही अर्थ देनेवाली कहावतें, मुहावरें आदि की तुलना करवायी जा सकती है ।

7. **पुनरावृत्ति प्रश्न :** पाठ के अन्त में समापन/संकलन सोपान पर ऐसे प्रश्नों का शिक्षक उपयोग करता है । जिस पाठ्यवस्तु की चर्चा हो चुकी है उसके सन्दर्भ में ये प्रश्न बनते है । उद्देश्य यही है कि इन प्रश्नों के द्वारा पाठ्यवस्तु का पुन: स्मरण तथा संकलन करना होता है ।

प्रश्न कैसे होने चाहिए ?

शिक्षक के लिए प्रश्न एक ऐसा साधन है जिससे वह शिक्षार्थियों को अधिगम में सक्रिय कर सकता है, उसकी अधिगम उपलब्धि का परीक्षण पर सकता है, विषयवस्तु के प्रति जिज्ञासा बढ़ा सकता है, पाठ का विकास कर सकता है, आदि । प्रश्न इतना उपयोगी होने के कारण सही प्रश्न कैसा होना चाहिए ? इस प्रश्न के उत्तर से भी नवशिक्षकों को अवगत होना चाहिए। अच्छे सही प्रश्नों के लक्षण इस प्रकार हैं :

(1) प्रश्न में केवल एक ही विचार हो (2) प्रश्न का उद्देश्य निश्चित हो (3) प्रश्न स्पष्ट, सीधा तथा संक्षिप्त हो । (4) प्रश्न क्रमबद्ध हो (5) विचार को उत्तेजित करनेवाले हो (6) कठिनता की मात्रा शिक्षार्थियों को लक्ष्य में रखकर तय की जाए (7) विविध प्रकार के प्रश्न हो (8) एक शब्द में उत्तर मिले (हा या ना) ऐसे प्रश्न न करें (9) उत्तर संक्षिप्त हो ऐसे प्रश्न करें ।

प्रश्न पूछने की विधि : प्रश्न किसी एक शिक्षार्थी को लक्ष्य कर न पूछे । बल्कि सम्पूर्ण कक्षा को लक्ष्य कर पूछना चाहिए । प्रश्न प्रत्येक शिक्षार्थी सुन सके ऐसी ऊँची आवाज़ में पूछा जाय । प्रश्न सहानुभूतिपूर्ण लहजे में पूछा जाए, जमादार शैली में नहीं । प्रश्न का स्वरुप बारबार न बदलें, बल्कि उत्तर के लिए प्रतीक्षा करें । प्रश्न का सन्तोषजनक उत्तर मिल जाने के बाद भी दो तीन शिक्षार्थियों से यही प्रश्न पूछना चाहिए । प्रश्न पूछने के पश्चात् उत्तर सोचने के लिए शिक्षार्थी को समय देना चाहिए ।

अन्त में शिक्षण तथा अधिगम को सक्रिय करनेवाली ऊर्जा है प्रश्न, पर केवल निश्चित सीमा तक। शिक्षक को ग्रीन और बरचेना का यह निष्कर्ष सदैव याद रखना होगा, 'क्वेश्चन इझ अ गुड सर्वन्ट, बट बेड मास्टर' ।

2.4 सारांश

इकाई-2 शिक्षण प्रयुक्तियों के विषय में है । प्रथम इकाई में हमने शिक्षण पद्धतियों की चर्चा की थी । पद्धतियाँ प्रयुक्तियों के बिना अधूरी है । उदाहरण के तौर पर प्रत्यक्ष पद्धति लीजिए । कोई शिक्षक हिन्दी की शिक्षा प्रत्यक्ष पद्धति से सिखाना चाहता है । तो उसे प्रश्नोत्तर करने की आवश्यकता होगी । प्रश्नोत्तर को सफल बनाने के लिए शिक्षक को प्रश्न प्रयुक्ति का प्रभावपूर्ण उपयोग करना पडेगा । स्पष्ट है कि शिक्षक को शिक्षण प्रयुक्तियाँ जाननी होगी । इस इकाई में 9 प्रकार की शिक्षण प्रयुक्तियों की चर्चा की गयी है ।

प्रथम व्याख्या प्रयुक्ति लीजिए । हिन्दी भाषा शिक्षक को चाहे कहानी, चाहे कविता आदि की शिक्षा करनी हो तो उसमें बार बार व्याख्या प्रयुक्ति का प्रयोग करना पड़ेगा । व्याख्या के अर्थ से लेकर उसके प्रयोग में सिक्षक को रखने योग्य सावधानियों की बातें प्रस्तुत की गयी हैं ।

दूसरी प्रयुक्ति है स्पष्टीकरण । स्पष्टीकरण वास्तव में एक प्रकार का वर्णन है । इस के द्वारा भाव या अर्थ स्पष्ट किया जाता है । जिस विषय के सम्बन्ध में शिक्षार्थी बहुत कम जानते होते हैं तब इस प्रयुक्ति का प्रयोग करना चाहिए ।

तीसरी प्रयुक्ति वर्णन प्रयुक्ति है । वर्णन भी स्पष्टीकरण का एक स्वरुप है । शिक्षक इसके द्वारा शब्दचित्र खड़ा करता है । किसी प्रसंग का वृतान्त भी वर्णन ही है । वर्णन प्रयुक्ति का प्रयोग कम या अधिक मात्रा में सभीं विषयों के शिक्षण कार्य में होता है ।

चौथी प्रयुक्ति है विवरण प्रयुक्ति । यद्यपि विवरण वर्णन नहीं है तथापि दोनों एक सिक्के के दो पहलू हैं । किसी स्थान या व्यक्ति के विषय में किया गया वर्णन विवरण है । विवरण में विवरणकर्ता की अनुभूतियों को प्रवेश नहीं है, यह कोरा रिपार्ताज है, वृतान्त लेखन/कथन है ।

तुलना पाँचवीं प्रयुक्ति है । यह शिक्षण की सहायक प्रयुक्ति है । हिन्दी भाषा शिक्षण में मातृभाषा तथा लक्ष्यभाषा की तुलना की जाती है । उस शिक्षण पद्धति को व्यतिरेकी शिक्षण पद्धति कहते हैं । तुलना का अर्थ है एक तथ्य को दूसरे तथ्य के साथ रख कर दोनों में साम्य-तफावत ढूँढ निकालना ।

छठुवीं प्रयुक्ति के रुप में कथा प्रयुक्ति की चर्चा की गयी है । इस में शिक्षक कहानी सुनाता है । यह औपचारिक शिक्षा का महत्त्वपूर्ण साधन है । यहाँ तक कहा जाता है कि किसी कहानी को अच्छी तरह कहने की योग्यता को शिक्षक का आवश्यक गुण माना जाता है । कहानी को पढ़ना कथा प्रयुक्ति नहीं है ।

सातवीं प्रयुक्ति के रुप में व्याख्यान प्रयक्ति की जानकारी दी गयी है । शिक्षार्थी जो नहीं जानके हैं उन बातों को प्रस्तुत करने के लिए शिक्षक निरन्तर बोलता रहता है । बीच में कोई प्रश्न नहीं किया जाता । शिक्षार्थी केवल श्रोता बनकर बैठे रहते है । वास्तव में व्याख्यान उन तथ्यों, सिद्धांतो या अन्य विषयों का स्पष्टीकरण है जिनको शिक्षक चाहता है कि उसके सुननेवाले समझें ।

आठवीं पुस्तक-पठन प्रयुक्ति है किन्तु इसका उपयोग न करना ही बेहतर है । किर भी सूचना प्रदान करनेवाले विषयों में यदाकदा इसका प्रयोग किया जा सकता है । यह सच है कि पठन कौशल के विकास

के लिए पुस्तक-पठन करवाया जा सकता है किन्तु इस प्रयुक्ति के द्वारा सम्पूर्ण विषय का शिक्षण नहीं करना चाहिए। सब से बड़ी मर्यादा यह है कि कक्षा में पुस्तक पढ़नेवाला एक ही सक्रिय है शेष सभी शिक्षार्थी जुम्हाईयाँ लेते रहेंगे। परिणाम स्वरुप अनुशासन भंग किस्से बढ़ते है :

नवीं प्रयुक्ति है प्रश्न प्रयुक्ति, ऐसा कहना अनुचित नहीं होगा कि यही प्रयुक्ति शिक्षण प्रक्रिया की रीढ़ है। कक्षा में शिक्षक द्वारा विभिन्न उद्देश्यों के लिए सात प्रकार के प्रश्न पूछे जा सकते है। अध्याय के प्रति रुचि व जिज्ञासा बढ़ाने के लिए प्रास्ताविक प्रश्न पूछे जा सकते है। पाठ्यवस्तु के विकास या विस्तृत चर्चा के लिए विकासात्मक प्रश्न शिक्षक पूछता चलता है। बीच बीच में विचारात्मक प्रश्न करके शिक्षार्थी को सोचने के लिए विवश किया जाता है। समस्या-समाधान के लिए समस्यात्मक प्रश्न का शिक्षक प्रयोग कर सकता है। पाठ्य सामग्री का मुख्य सन्देश पाने के लिए बोध प्रश्न का भी उपयोग किया जा सकता है। शिक्षार्थियों की ज्ञानक्षितिजों के विस्तरण के लिए तुलनात्मक प्रश्न तथा पठित सामग्री के दृढिकरण के लिए पुनरावृत्ति प्रश्नों का शिक्षक प्रयोग कर लेता है।

याद रहे, शिक्षक कक्षा में एक ही अन्तर में एक से अधिक प्रयुक्तियों का प्रयोग कर सकता है, प्रयोग करना चाहिए।

बोध प्रश्न :

1. व्याख्यान को नीरस बनाने से रोकने के लिए शिक्षक क्या करेगा ?

....
....
....
....
....
....

2. बोध प्रश्नों की आवश्यकता क्या है ?

....
....
....
....
....
....

3. अच्छे / सही प्रश्न के लक्षण गिनाइए।

....
....
....
....
....
....

2.5 बोध प्रश्न के उत्तर

1. व्याख्यान को स-रस व रोचक बनाने के लिए शिक्षक निम्नांकित कार्य करेगा .....

   – व्याख्यान देते समय स-रस उदाहरण तथा आदि सुनायेंगे।

   – व्याख्यान देते समय बीच बीच में प्रश्नोत्तर करेगा।

- व्याख्यान की वस्तु तथा भाषा शैली शिक्षार्थियों की आयु, मानसिक स्तर तथा भाषा ज्ञान को लक्ष्य में रखेगा ।
- व्याख्यान सदैव पाठ्यसामग्री से संबंधित ही करेगा ।
- व्याख्यान देते समय महत्त्वपूर्ण मुद्दों को श्यामपट्ट पर लिखते रहना चाहिए ।

2. बोध प्रश्न बहुत ही आवश्यक है । अतः प्रत्येक पाठ्यश के अन्त में शिक्षक द्वारा बोध प्रश्न पूछे जाने चाहिए । बोध प्रश्न ज्ञान क्षेत्र से ऊपर उठकर बोधन के क्षेत्र में प्रवेश कराते हैं । शिक्षण का उद्देश कक्षाध्यापन के दौरान मात्र ज्ञान (जानकारी) देना ही नहीं होता है अपितु शिक्षार्थियों की समझ (अन्डरस्टेन्डिग) के विकास का भी होता है । इसी हेतु वह नाना प्रकार की प्रयुक्तियाँ, सहायक सामग्री तथा प्रवृत्तियाँ कराता है । शिक्षार्थियों की समझ कितनी विकसित हुई है ? इसकी जानकारी के लिए बोध प्रश्न उपयोगी है ।

   बोध प्रश्न से ही शिक्षार्थी लेखक-कवि की व्यंजना समझ सके है या नहि इसका ज्ञान प्राप्त होता है ।

   शिक्षार्थियों के समझ का स्तर जानने के लिए भी बोध प्रश्न उपयोगी है ।

3. अच्छे व सही प्रश्न के लक्षण इस प्रकार हैं :
   1. प्रश्न सही भाषा में होना चाहिए ।
   2. प्रश्न छोटा तथा स्पष्ट होना चाहिए ।
   3. प्रश्न हा या ना में उत्तर देनेवाला नहीं होना चाहिए ।
   4. प्रश्न पाठ्यसामग्री से सम्बन्धित होना चाहिए ।
   5. प्रश्न केवल एक ही विचार की पृच्छा करनेवाला होना चाहिए ।
   6. प्रश्न का उद्देश्य स्पष्ट व निर्धारित होना चाहिए ।

2.6 उपयोगी पुस्तकें

1. पाण्डेय, रामशकल : हिन्दी शिक्षण, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा ।
2. तिवारी, पुरुषोत्तम : हिन्दी शिक्षण, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, तिलक नगर, जयपुर ।
3. अंधारिया रवीन्द्र : हिन्दी का अध्यापन, वारिषेण प्रकाशन, अहमदाबाद ।

इकाई 3

भाषा शिक्षण मे सहायक प्रवृत्तियाँ

: रूपरेखा :

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 हिन्दी भाषा शिक्षण की प्रवृत्तियाँ

3.3.1 प्रश्नमंच

3.3.2 संगोष्ठी

3.3.3 हस्तलिखित अंक

3.3.4 नाटक

3.3.5 कहानी-कविता पठन/गान स्पर्धा

3.3.6 कहानी लेखन स्पर्धा

3.3.7 प्रदर्शनी

3.3.8 वक्तृत्व स्पर्धा

3.3.9 प्रवास-पर्यटन

3.3.10 हिन्दी भाषा क्लब

3.4 सारांश

3.5 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.6 उपयोगी पुस्तकें

3.1 प्रस्तावना

बालक आखिर विद्यालय क्यों आता है ? विद्यालय में आकर बालक शिक्षार्थी बन जाता है। वह शिक्षार्थी क्यों बनता है ? किसी भी शिक्षक के लिये ये सोचने की बातें है। यदि वह किसी न किसी इरादे से अधिगम करता है, शिक्षण ग्रहण करता है तो शिक्षक का यह दायित्व हो जाता है कि उसे अध्ययन अनुभूति करवाएँ। उसे यह एहसास दिलाया जाय कि उसने जो कुछ सीखा है उसका वह अपने जीवन को बेहतर बनाने में उपयोग कर सकता है। केवल परीक्षा के लिए किये गये अधिगम में यह गुंजाइश नहीं है। यदि उसे अध्ययन अनुभूति करवाई जाएगी तो वह शिक्षा का प्रयोग अपने जीवन को बहेतर बनाने के लिए करेगा। अध्ययन-अनुभूति कक्षा की चार दीवारों में नहीं करवाई जा सकती। उसके लिए कक्षा कक्ष को विस्तृत करना होगा ... और यह भाषा शिक्षा की विविध प्रवृत्तियों के आयोजन से होगा। इन प्रवृत्तियों में शिक्षार्थी को अपनी सोच, अपनी मौलिकता तथा अपनी कला-कौवत के प्रदर्शन के अवसर मिलेंगे। इन्हीं प्रवृत्तियों के कारण शइक्षार्थी को अन्य शिक्षार्थियों के साथ अपनी तुलना करने के अवसर प्राप्त होंगे। इन्हीं प्रवृत्तियों के कारण शिक्षार्थी को आत्मावलोकन, आत्म विश्लेषण तथा आत्म परीक्षण करने के अवसर प्राप्त होंगे। इन्हीं कारणों से शिक्षक को भाषा शिक्षण की विविध प्रवृत्तियों का आयोजन करना होगा। इस विषय में मार्गदर्शन देने के हेतु यहाँ भाषा शिक्षण की विविध प्रवृत्तियों के विषय में प्रस्तुति की गयी है।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :

- भाषा शिक्षण की प्रवृत्तियों का महत्त्व बता सकेंगे।
- भाषा शिक्षण की विविध प्रवृत्तियों का स्वरुप समझा सकेंगे।
- भाषा शिक्षण की प्रवृत्ति के आयोजन कर सकेंगे।

3.3 हिन्दी भाषा शिक्षण की प्रवृत्तियाँ

शिक्षण के प्रमुख दो उपागम (अभिगम) है : औपचारिक शिक्षा उपागम तथा दूसरा अनौपचारिक शिक्षा उपागम। भाषा शिक्षा के लिए दोनों उपागमों का प्रयोग आवश्यक है। भाषा का अर्थ समझते समय हमने पढ़ा था कि भाषा विचार विनिमय का माध्यम है। भाषा सामाजिक सम्पदा है। शिक्षार्थी को भाषा का प्रयोग विद्यालय के अतिरिक्त अन्यत्र भी करना होता है। विद्यालय में औपचारिक तौर पर भाषा शिक्षा होती है। जब कि शिक्षा प्रवृत्तियों में अनौपचारिक भाषा शिक्षा होती है। क्योंकि शिक्षा प्रवृत्तियाँ केवल मात्र कक्षाध्यापन के माहौल में नहीं होती हैं। फलतः शिक्षार्थी को भाषा के वैविध्य से सहजता से परिचय हो जाता है। वैसे भी आजकल औपचारिक शिक्षा तो परीक्षालक्षी हो गई है लिहाजा इसके द्वारा भाषा की सर्वाधिक लाक्षणिकताओं का पर्याप्त परिचय भी नहीं होता है। इस कमी को दूर करने के लिए भी शिक्षार्थी को समाज में ले आना आवश्यक होता है। ये प्रवृत्तियाँ यह उद्देश्य सिद्ध कर सकती हैं।

दूसरी बात यह भी है कि ये प्रवृत्तियाँ भाषा शिक्षा के लिए एक नया परिवेश प्रदान करती हैं। कक्षा की एकसुरी प्रवृत्तियों (मानोटोनस) के कारण वातावरण बोझिल हो जाता है। प्रवृत्तियों में ऐसी एकसुरिता सम्भव नहीं है। इसके परिणाम स्वरुप शिक्षार्थियों को भाषा सीखने में आनन्द आता है। तो आइए, अब प्रत्येक प्रवृत्ति के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी प्राप्त करें ...

3.3.1 प्रश्नमंच

आजकल प्रश्नमंच प्रवृत्ति का बहुलता से प्रयोग हो रहा है। दूरदर्शन पर, रेडियो पर, पत्र पत्रिकाओं भी प्रश्नमंच होते हैं। भाषा शिक्षक भी प्रश्नमंच का आयोजन कर सकता है। प्रश्न मंच में एक प्राश्निक (प्रश्न पूछनेवाला) तथा शेष उत्तर देनेवाले होते हैं। प्रश्न मंच से पूछे गये प्रश्न के सही उत्तर देनेवाले को एक क्रडिट गुण मिलता है। लगातार तीन से अधिक सही उत्तर देनेवालों को बोनस पाइन्ट भी दिया जा सकता है।

प्रश्न मंच दो तरीके से आयोजित किया जा सकता है : (1) प्रश्नमंच के समय से पूर्व ही प्रतिभागियों को प्रश्न दे दिये जायें (2) प्रश्नो के विषय विस्तार निश्चित किन्तु प्रश्न आगे से नहीं दिये जाते। तत्काल प्रश्न तथा तत्काल उत्तर।

प्रश्न मंच का आयोजन कक्षा में भी हो सकता है, कक्षा खण्ड में भी हो सकता है तथा आन्तरस्फूण स्तर पर भी हो सकता है।

प्रश्न मंच स्पर्धात्मक हो सकता है, प्रश्न मंच स्पर्धात्मक नहीं भी हो सकता है। केवल खेल के उद्देश्य से भी प्रश्नमंच का आयोजन हो सकता है। यह तो खेल खेल में शिक्षा के सूत्र को चरितार्थ करता है।

प्रश्न मंच में कैसे प्रश्न पूछे जाएँ ?

शिक्षक को प्रश्नमंच का आयोजन करने से पहले पूर्वतैयारी करनी होगी। पूर्व तैयारी में खास करके प्रश्न मंजूषा तैयार करनी होगी। प्रश्न मंजूषा तैयार करते समय शिक्षक को कुछ सावधानियाँ रखनी होंगी। प्रश्न तैयार करने में निम्नांकित बातों को न भूलें ......

1. प्रश्न निर्धारित विषय वस्तु सम्बन्धित ही होने चाहिए।
2. प्रश्न शिक्षार्थी के मानसिक स्तर को लक्ष में रखकर तैयार करें।
3. प्रश्न विविध स्वरुप के होने चाहिए।
4. संक्षिप्त उत्तर हो ऐसे ही प्रश्न संरचना करें।
5. प्रश्न शिक्षार्थियों के ज्ञान, समझ आदि की जाँच करने में सक्षम होने चाहिए।
6. क्या, क्यों, कहाँ, कब, कौन आदि प्रश्नवाचक सर्वनामों का प्रयोग कर प्रश्नों की संरचना करनी चाहिए।

प्रश्न मंच से लाभ :

1. शिक्षार्थी को तत्काल उत्तर देने की आदत पड़ती है।
2. पाठ्य सामग्री का पुनरावर्तन हो जाता है।
3. शिक्षार्थी को अपने प्रश्नों का समाधान मिल जाता है।
4. शिक्षार्थी का सभाक्षोभ दूर हो जाता है।
5. शिक्षार्थी का आत्मविश्वास बढ़ता है।

3.3.2 संगोष्ठी

किसी भी प्रकार के ज्ञान की अभिवृद्धि के लिए संगोष्ठी बहुत ही कारगर प्रवृत्ति है। इसमें विद्वान वक्ता एक विषय पर भरपूर पूर्व तैयारी करके वक्तव्य देता है। रोष सभी श्रोता बनकर श्रवण करते हैं। वक्तव्य के बाद प्रश्नोत्तर होता है। वक्ता के वक्तव्य से जो संशय पैदा हुए हैं उनके निर्वहण ले लिए श्रोतागण प्रश्न पूछते है। वक्ता इन प्रश्नों के उत्तर देकर श्रोताओं के संशयों का समाधान करता है। भाषा शिक्षक किसी लेखक, कवि, निबन्धकार या भाषा विज्ञानी तथा भाषाविद् को निमन्त्रित करके संगोष्ठी का आयोजन कर सकता है। वह किसी अन्य विद्यालय के प्रभावी शिक्षक को निमंत्रित कर उसके भी व्याख्यान का भी आयोजन कर सकता है।

संगोष्ठी को परिसंवाद या पेनल चर्चा में भी बदला जा सकता है। परिसंवाद में एक ही विषय के भिन्न भिन्न आयामों–पक्षों पर अलग अलग विद्वानों के वक्तव्यों का आयोजन हो सकता है। 'राष्ट्रभाषा हिन्दी क्यों' विषय पर पेनल चर्चा भी की जा सकती है। भाषा शिक्षक 'वर्तनी की समस्या', 'मातृभाषा एवं राष्ट्रभाषा की तुलना', 'हिन्दी के राष्ट्रभावना के काव्य', 'प्रेमचन्द : उपन्यास सम्राट', 'अमर शहीद भगतसिंह', 'जल बचाओं जीवन बचाओं' जैसे विषयो को लेकर संगोष्ठी आयोजित की जा सकती है।

संगोष्ठी के आयोजन पर ध्यान देने योग्य सुझाव :

संगोष्ठी के आयोजन करते समय शिक्षक को निम्नांकित बातें ध्यान में रखनी चाहिए।

1. संगोष्ठी की समयावधि एक घण्टे से अधिक नहीं होनी चाहिए। इस में भी 40 मिनट का वक्तव्य तथा शेष 20 मिनट प्रश्नोत्तर।
2. संगोष्ठी के लिए विषय पसन्दगी बहुत ही सोच समझकर करनी चाहिए। उदाहरण के तौर पर पाठ्यक्रम में 'सरदार भगतसिंह' की जीवनी पाठ है तो संगोष्ठी का विषय 'स्वातंत्र्य संग्राम के अमरशहीद' चुना जा सकता है। यदि हास्यरस की कोई कविता है तो 'काका हाथरसी के काव्य' संक्षेप में संगोष्ठी के विषय पाठ्यक्रम से सम्बन्धि होने चाहिए। कभीकभार दिन विशेष को लेकर भी संगोष्ठी की जा सकती है।

3. संगोष्ठी के विषय शिक्षार्थियों की आयु, अनुभव तथा आवश्यकता को मदेनज़र रखकर चुनना चाहिए।
4. विषय पसन्दी के उपरान्त वक्ता की पसन्दगी भी सावधानी पूर्वक करनी चाहिए।
5. वक्ता विषय का तजज्ञ तथा उसकी वक्तव्य शैली प्रभावी होनी चाहिए।
6. संगोष्ठी का स्थल पर्याप्त हवा-प्रकाशवाला होना चाहिए।
7. सम्भव हो तो माइक्रोफोन की सुविधा खड़ी करनी चाहिए।
8. संगोष्ठी कदापि छुट्टी के दिन आयोजित न करें न तो दिनके अन्तिम अन्तरों में करें।

संगोष्ठी से होनेवाले लाभ : संगोष्ठी से शिक्षार्थियों को कई लाभ हो सकते हैं **:**

1. विषय की विशद जानकारी कम समय में मिल जाती है। जो अक्सर कक्षा में अन्तर के दौरान नहीं मिल सकती।
2. श्रवण क्षमता का विकास होता है।
3. वक्तव्य शैली का परिचय होता है।
4. शब्द सम्पदा बढ़ती है।
5. जिज्ञासा सन्तुष्ट होती है।
6. ताजगी एवं स्फूर्ति का अनुभव होता है।
7. प्रश्न पूछने के अवसर प्राप्त होते हैं।
8. शिक्षार्थियों को प्राप्त ज्ञान को प्रस्तुत करने के अवसर प्राप्त होते हैं।
9. यहाँ परीक्षा का झंझट नहीं होता है अतएव शिक्षार्थियों को मुक्तमन से किये गये अधिगम की आनन्दानुभूति होती है।
10. सहपाठी ने किये गये अध्ययन का लाभ शेष शिक्षार्थियों को भी मिल सकता है।

3.3.3 हस्तलिखित अंक

भाषा शिक्षा की यह एक श्रेष्ठ प्रवृत्ति है। यह कक्षागत रुप से भी किया जा सकता है तथा विद्यालय स्तर पर भी किया जा सकता है। हस्तलिखित अंक विषय विशेष-जैसे 'भारत के राष्ट्रीय त्यौहार' को लेकर भी तैयार किया जा सकता है अथवा लोकप्रिय पत्रिका के स्वरुप जिस में कहानी, काव्य, चित्र, पहेलियाँ, चुटकुले, निबन्ध, प्रवास वर्णन आदि – का भी हो सकता है।

हस्तलिखित अंक का अर्थ है शिक्षार्थियों की रचनाएँ शिक्षार्थियों के हस्ताक्षर में रंगीन कागजों पर प्रस्तुत करना। पूरे अंक का रोचक शीर्षक देना। बाइन्डींग करा के प्रधानाचार्य के वरद हस्तों से विमोचन कराना।

हस्तलिखित अंक तैयार करते समय की सावधानियाँ :

1. हस्तलिखित अंक तैयार करने के लिए पूर्व आयोजन बहुत ही आवश्यक है।
   - शिक्षार्थियों के सामने शिक्षक हस्तलिखित अंक का प्रस्ताव रखेगा।
   - सम्पादक मण्डल की रचना करें। इस में ऐसे ही शिक्षार्थी को चुने जिसे इस प्रकार की प्रवृत्ति में अभिरुचि हो।
   - अंक के लिए विषय पसन्द करें।
   - पसन्द किये गये विषय सम्बन्धी मुद्दे निर्धारित करें ताकि उन मुद्दो पर भिन्न भिन्न शिक्षार्थियों के पास लेखन कार्य करवाया जाए। उदाहरण के तौर पर 'भारत की नदियाँ' विषय को लेकर अंक तैयार करना है तो गंगा मैया, कालिन्दी यमुना, नटखट अलकनंदा, ब्रह्मपुत्रा, कृष्णा, कावेरी आदि नदियों पर लेखन किया जा सकता है। किसी के पास 'लोकमाता नदी', 'गंगावतरण की कहानी', 'जल ही जीवन' आदि विषय तो किसी के पास गंगा के मूल से मुख तक के प्रवास का मानचित्र तैयार किया जा सकता है, किसी के पास नदी तट के तीर्थस्थानों के चित्रों का संग्रह करवाया जा सकता है, नदी विशेष के लिए स्वनाम धन्य कवि की कविताएँ तथा लेखकों के निबन्धों को भी रखा जा सकता है।

– तैयार करने के लिए समयावधि तय करे तथा प्रकाशन तिथि की घोषणा करें।

– कागज तथा कद विषय निर्णय करें।

– खर्च का आयोजन तथा प्रधानाचार्य की अनुमति प्राप्त करें।

2. हस्तलिखित अंक के लिए विषय की पसन्दगी शिक्षार्थियों की आयु अनुभव तथा क्षमता को लक्ष में रखकर तय करें।

3. योग्य तथा क्षमतावान शिक्षार्थियों को ढूँढ़कर दायित्वों का बँटवारा करें।

हस्तलिखित अंक से होनेवाले लाभ :

1. अधिकांश शिक्षार्थियों को क्रियाशील किया जा सकता है।
2. कलात्मकता, सृजनात्मकता का विकास होता है।
3. शिक्षार्थियों को आत्माभिव्यक्ति का सुख मिलता है।
4. विद्यालय के लिए इसका दस्तावेजिक मूल्य है।
5. शिक्षार्थियों के ज्ञान में वृद्धि होती है।
6. शिक्षार्थियों की नियोजन क्षमता, विचार तथा कल्पना शक्ति का विकास होता है।
7. शिक्षार्थियों में समूह भावना प्रगाढ़ होती है।
8. नेतृत्वशक्ति विकसित होती है।

3.3.4 नाटक व मॉक पार्लामेन्ट

भाषा शिक्षण के लिए नाटक, संवाद, मॉक पार्लामेन्ट, आदि बहुत ही प्रभावी प्रवृत्तियाँ हैं। इससे भाषा के बुनियादी तत्त्वों तथा भाषण कौशल का विकास सरलता से हो सकता है।

शिक्षक पाठ्यपुस्तक में संपादित नाटक का कक्षा में अभिनय करवा सकता है। अथवा विद्यालय के मंच पर भी ऐसे नाटकों का मंच न करवा सकता है। नाटक दो प्रकार के होते हैं। पाठ्य नाटक और दूसरा अभिनय नाटक। दोंनो प्रकारों का लाभ भाषा शिक्षा के लिए उठाया जा सकता है। पाठ्य नाटक से शिक्षार्थी का वाचन कौशल विकसित होगा तथा अभिनय नाटक से अभिनय कला का भी विकास होगा।

इसी प्रकार मोक सांसद, मोक पंचायत, मोक चुनाव आदि का आयोजन किया जा सकता है। इस से भाषण कौशल तो विकसित होगा ही साथ ही साथ शिक्षार्थियों में नेतृत्व शक्ति भी विकसित होगी तथा आत्मविश्वास बढ़ेगा। इस प्रवृत्ति के लिए पूर्व तैयारी स्वरुप शिक्षक को संवाद लिखने पड़ेगे। बाद में योग्य पात्रों को पसन्द करना पड़ेगा तथा संवादों की प्रस्तुति के लिए तालीम देनी होगी।

3.3.5 कहानी-कविता पठन/गान स्पर्धा

वाचन कौशल के विकास लिए उपयोगी सफल प्रवृत्ति है। कविता पढ़ना-गाना एक कला है। कहानी पठन भी तो कला है। कक्षा के अन्तर्गत इस प्रकार की स्पर्धा का आयोजन किया जा सकता है तो आन्तरकक्षाओं के बीच में भी इस प्रकार की स्पर्धा का आयोजन किया जा सकता है। शिक्षक राष्ट्रीय चेतना के काव्य, प्रकृति काव्य, मानव सम्बन्धी संबंधी काव्य, शौर्य काव्य, कथा काव्य आदि में से किसी एक काव्य प्रकार को पसन्द कर काव्यस्पर्धा का आयोजन कर सकता है। इसी प्रकार ऐतिहासिक कहानियाँ, सामाजिक कहानियाँ आदि में से कोई कहानी प्रकार चुन कर कहानी पठन स्पर्धा की जा सकती है। मात्र ध्यान देने योग्य बात यही है कि सभी स्पर्धकों के लिए प्राय: समान लम्बाई (पंक्तियों की संख्या) वाली कविता कहानी पसन्द की जाए। कभी एक ही कहानी या काव्य को तमाम स्पर्धकों के द्वारा पठन करवाया जा सकता है। जो पाठ्य सामग्री पसंद की जाए उसका भाषा स्तर शिक्षार्थियों की भाषालब्धि कक्षा के अनुकूल होनी चाहिए। कविता या कहानी पठन की समयावधि भी निश्चित होनी चाहिए।

3.3.6 कहानी लेखन स्पर्धा

भाषा शिक्षा के साथ साथ शिक्षार्थियों की सर्जनात्मकता का भी विकास हो सकता है। उच्चत्तर कक्षाओं के लिए यह प्रवृत्ति विशेष लाभकर है। यह लिखित अभिव्यक्ति कौशल्य विकास की प्रवृत्ति है। कहानी लेखन से शिक्षार्थियों की कल्पनाशक्ति, तर्क शक्ति तथा भाषा शक्ति का विकास होता है। इससे आत्माभिव्यक्ति का सन्तोष सुख मिलता है। 'मैं भी कुछ कर सकता हूँ' – का आत्मविश्वास अभिवृद्ध होता है।

3.3.7 प्रदर्शनी

भाषा साहित्य के ज्ञान तथा अन्य प्रदर्शनी कौशल के विकास के लिए उपयोगी प्रवृत्ति । अधिकांश शिक्षार्थियों को इस में सम्मिलित किया जा सकता है । यदि हिन्दी साहित्यकार विषय को लेकर प्रदर्शनी का आयोजन है तो अमुक शिक्षार्थियों को साहित्यकारों के चित्र इकठ्ठे करने का दायित्व, अमुक को उनकी जीवनी का संक्षेप करने का दायित्व, अमुक को कार्ड पेपर पर चित्र चिपकाने का तथा जीवनी लिखने का दायित्व दिया जा सकता है । साहित्येत्तर विषय को लेकर भी हिन्दी प्रदर्शनी की जा सकती है । उदाहरण के तौर पर बहादुरी का राष्ट्रीय पुरष्कार प्राप्त 'वीर बालक' को लेकर प्रदर्शनी का आयोजन हो सकता है । ऐसी प्रदर्शनी विद्यालय स्तर पर भी हो सकती है । कक्षा स्तर पर भी हो सकती है । शिक्षक को इसका आयोजन ठीक ढंग से करना होगा ।

3.3.8 वक्तृत्व स्पर्धा

भाषा के भाषण कौशल विकास की यह एक उत्तम प्रवृत्ति है । वक्तृत्व स्पर्धा दो प्रकार की होती है : (1) शीघ्र वक्तृत्व स्पर्धा (2) सामान्य वक्तृत्व स्पर्धा ।

शीघ्रवक्तृत्व स्पर्धा में वक्तव्य के विषयों की चिठ्ठिया बनाकर पहले से ही एक बक्सें में रख दी जाती है । प्रतिभागियों को विषय का ज्ञान पहले से नहीं होता । जब शिक्षार्थी स्पर्धा में वक्तव्य देने के लिए खड़ा होता है तब उसे सर्व प्रथम बक्से में से चिठ्ठी उठानी पड़ती है । चिठ्ठी को पढ़कर उसमें लिखे गये विषय की घोषणा करनी पड़ती है । फिर उसी विषय पर वक्तव्य देना होता है । इसे शीघ्र वक्तव्य कहा जाता है । इस में शिक्षक को वक्तव्य के विषय पसन्द करते समय विशेष ध्यान देना पड़ता है । शिक्षार्थियों की आयु, ज्ञान, स्तर, अनुभव तथा भाषा क्षमता को लक्ष में रखकर विषय पसन्द करने चाहिए । उदाहरण के तौर पर निम्न प्राथमिक स्तर के शिक्षार्थियों के लिए — मेरा विद्यालय, गाय, मेरा मित्र मेरा गाँव, नदी आदि । माध्यमिक स्तर के शिक्षार्थियों के लिए राष्ट्रपिता महात्मा गांधी, यदि में शिक्षक होता, मेरा प्रिय खेल, वृक्ष मेरा दोस्त, नदी की आत्मकथा, आदि । उच्चतर माध्यमिक विद्यालयी स्तर के लिए — जल ही जीवन है, अगर न नभ में बादल होते, यदि में प्रधानमंत्री होता, मोबाइल: दोस्त या दुश्मन, एक आतंकवादी से मुलाकात आदि ।

सामान्य वक्तृत्व स्पर्धा के लिए प्रतिभागियों को पहले से ही विषय दे दिये जाते है । प्रतिभागी पूर्व तैयारी करके आता है । समय आने पर तैयार किया गया वक्तव्य दे देता है । यद्यपि उसके मूल्यांकन के लिए मापदंड अलग प्रकार का होता है । जब कि शीघ्र वक्तृत्व स्पर्धा के मापदंड भी अलग से होते हैं । सामान्य वक्तृत्व स्पर्धा के लिए विषय विचार प्रधान, समीक्षात्मक तथा समस्यामूलक हो सकते हैं । इसका कारण यह है कि पूर्व तैयारी में प्रतिभागी दूसरों की मदद भी ले सकता है । ग्रंथो का पठन कर सकता है आदि ।

वक्तृत्व स्पर्धा की तरह निबन्ध लेखन स्पर्धा भी की जा सकती है । इससे शिक्षार्थियों का लेखन कौशल विकसित हो सकता है । निबन्ध लेखन स्पर्धा भी दो प्रकार की हो सकती है (1) शीघ्र निबन्ध लेखन स्पर्धा (2) सामान्य निबन्ध लेखन स्पर्धा । वक्तृत्व स्पर्धा जैसा ही इनका स्वरुप होता है, फर्क मात्र एक ही है यहाँ प्रतिभागियों को निर्धारित समय में लेखन करना होता है ।

3.3.9 प्रवास-पर्यटन

भाषा शिक्षण की यह एक अच्छी प्रवृत्ति है । हिन्दी भाषी प्रान्त के दर्शनीय स्थलों का प्रवास किया जा सकता है । शिक्षार्थी आठ-दस दिन इसी प्रान्त में रहेंगे तो उन्हें अनेकविध भाषिक अनुभव मिलेंगे । जिनसे इनकी भाषिक अभिव्यक्ति निखार लाएगी । भाषा शिक्षा की प्रत्यक्ष पद्धति में भाषा शिक्षा के लिए हिन्दी परिवेश निर्माण करना पड़ता है जब कि प्रवास में तो आरम्भ से ही सहज स्वाभाविक हिन्दी परिवेश मिल जाता है । इस से शिक्षार्थियों को बहुत कुछ सीखने को मिलता है ।

3.3.10 हिन्दी भाषा क्लब

विद्यालयों में जैसे विज्ञान क्लब होती है वैसे हिन्दी क्लब भी तैयार की जा सकती है । इस क्लब में कई प्रकार की प्रवृत्तियाँ की जा सकती है । उदाहरण के तौर पर : भींतपत्र का प्रकाशन, वार्तालाप, पादपूर्ति स्पर्धा, अंताक्षरी, भाषिक खेल, कम्प्यूटर शिक्षा, नाटक, प्रश्नमंच, पत्र मैत्री, कहानी - काव्य आदि लेखन, वाद विवाद, क्वीझ, मेल, प्रदर्शनी, आदि । इसका फायदा यही है कि जिसकी अभिरुचि हैं वही

क्लब की सदस्यता ग्रहण करते है। इसके परिणाम स्वरुप क्लब द्वारा जो जो भी प्रवृत्तियाँ होती है उनमें वे उत्साह से सहभागी होते है। वास्तव में प्रत्येक विद्यालय में भाषा क्लब होनी चाहिए। क्लब की पाक्षिकी बैठक होनी चाहिए।

3.4 सारांश

इस इकाई को भाषा शिक्षण में सहायक प्रवृत्तियों का परिचय दिया गया है। इसका अर्थ यह नहीं है कि भाषा शिक्षा की इस से अधिक सहायक प्रवृत्तियाँ नहीं होती। ये तो नमूना रुप है।

इस इकाई में 10 सहायक प्रवृत्तियों का परिचय दिया गया है। परिचय के साथ प्रवृत्ति का आयोजन कैसे किया जाए, संचालन कैसे किया जाए आदि विषयों का मार्गदर्शन भी दिया गया है। अब आपको अपने विद्यालय में इन में से कोई न कोई प्रवृत्ति आरम्भ करनी चाहिए तथा शिक्षार्थियों की भाषा लब्धि बढ़ाने में योगदान देना चाहिए।

प्रश्नमंच, संगोष्ठी, वक्तृत्व स्पर्धा आदि साल भर में एक से अधिक बार आयोजित की जा सकती है। किन्तु हस्तलिखित अंक, प्रवास, नाटक, काव्य पठन, कहानी पठन, कहानी लेखन-निबन्ध लेखन आदि स्पर्धाएँ समयानुसार साल भर में एक या दो बार ही की जा सकती है। आजकल की परीक्षालक्षी शिक्षा में सहायक प्रवृत्तियों के आयोजन की गुंजाइश कम रह गयी है। फिर भी यह न भूले कि इन प्रवृत्तियों की वजह से शिक्षार्थियों का भाषा संप्राप्ति (लब्धि) उच्चतर निश्चय ही हो सकेगी। शिक्षण सहायक प्रवृत्तियाँ करना अन्ततोगत्वा शिक्षक पर निर्भर करता है।

बोध प्रश्न :

1. हिन्दी भाषा शिक्षण सहायक प्रवृत्ति के रुप में संगोष्ठी का क्या महत्त्व है ?

   ....
   ....
   ....
   ....
   ....
   ....

2. वक्तृत्व स्पर्धा के स्वरुप को स्पष्ट कीजिए।

   ....
   ....
   ....
   ....
   ....
   ....

3.5 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. भाषा शिक्षण की प्रवृत्ति के रुप में संगोष्ठी का बहुत ही महत्त्व है। प्रथम तो संगोष्ठी के कारण कम समय में शिक्षार्थियों को किसी विषय का विशद ज्ञान प्राप्त हो सकता है।

   दूसरा महत्त्व यह है कि इस से शिक्षार्थियों का श्रवण कौशल विकसित होता है।

   तीसरी बात शिक्षार्थी के समक्ष वक्ता की वाक्शैली, विषय प्रस्तुतिकरण कौशल आदि के आदर्श प्रस्तुत होते हैं।

   चौथी बात शिक्षार्थियों की भाषा लब्धि बढ़ती है, शब्द सम्पदा बढ़ती है।

   पाँचवीं बात शिक्षार्थियों को प्रश्न पूछने के अवसर प्राप्त होते हैं। इससे उनकी जिज्ञासा सन्तुष्ट होती है।

2. वक्तृत्व स्पर्धा भाषा शिक्षण की एक अच्छी प्रवृत्ति है। इस से शिक्षार्थियों का भाषण कौशल तो विकसित होता ही है साथ साथ ज्ञान में भी बढ़ोत्तरी होती है। वक्तृत्व स्पर्धा के स्वरुप के बारे विचार करें तो वक्तृत्व स्पर्धा दो तरह की हो सकती है :

1. तत्काल वक्तृत्व स्पर्धा 2. सामान्य वक्तृत्व स्पर्धा

तत्काल वक्तृत्व स्पर्धा का स्वरुप इस प्रकार होता है : निर्धारित दिनांक व समय पर इसका आरम्भ होता है। एक वाक्य में वक्तव्य के विषय लिखी हुई चिठ्ठियाँ होती है। प्रतिभागी एक चिठ्ठी उठाता है। उस में जो विषय लिखा होता है उस विषय पर उसे निर्धारित समयावधि तक बोलना पड़ता है। निर्णायक मूल्यांकन करते है।

सामान्य वक्तृत्व स्पर्धा का स्वरुप इस प्रकार होता है कि वक्तृत्व स्पर्धा की तिथि व समय की घोषणा के साथ साथ वक्तव्य के तीन चार विषयों की भी घोषणा कर दी जाती है। प्रतिभागी इन में से किसी एक विषय की पूर्व तैयारी कर के स्पर्धा में दाखिल होता है। समय आने पर तैयार कर के स्पर्धा में दाखिल होता है। समय आने पर तैयार किया हुआ वक्तव्य वह प्रस्तुत करता है। निर्णायक मूल्यांकन करते है।

3.6 उपयोगी पुस्तकें

1. सफाया, रघुनाथ : हिन्दी शिक्षण विधि, पंजाब किताब घर, जालंघर।
2. पाण्डेय रामशकल : हिन्दी शिक्षण, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।
3. दवे और अंधारिया : हिन्दी अध्यापन विमर्श, बी.एस.शाह प्रकाशन, अहमदाबाद।

इकाई 4

भाषा शिक्षण के लिए सहायक सामग्री

: रूपरेखा :

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 शिक्षण सहायक सामग्री का अर्थ तथा महत्त्व

4.4 भाषा शिक्षण में सहायक सामग्री

4.4.1 परम्परागत सहायक सामग्री

(क) श्यामपट्ट

(ख) पुस्तकें

(ग) पत्र पत्रिकाएँ

4.4.2 दृश्य सहायक सामग्री

(त) वास्तविक पदार्थ

(थ) चित्र-रेखाचित्र

(द) चार्ट

(ध) प्रतिमान (मॉडेल)

(प) बुलेटिन बोर्ड

(फ) फ्लैनल बोर्ड

4.4.3 यांत्रिक सामग्री

(च) श्राव्य सामग्री

– रेडियो

– टेप रिकार्डर

(छ) दृश्य सामग्री

– प्रोजेक्टर

– फिल्म स्ट्रीप्स

– अध्यापनयंत्र

– एपिडायस्कोप

(ज) दृश्य-श्राव्य सामग्री

– टेलिविझन-वीडियो केसेट

– कम्प्यूटर-एल.सी.डी., ईलर्निंग

– मोबाइल

4.5 सारांश

4.6 बोध प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

शिक्षण एक सामाजिक कार्य है। अभिभावकों तथा समाज की शिक्षण से अनेक अपेक्षाएँ होती है। शिक्षण ही सामाजिक विकास सशक्त माध्यम है। इस प्रकार शिक्षण एक दायित्वपूर्ण कार्य है। तब शिक्षण को परिणामलक्षी एवं प्रभावपूर्ण बनाना बहुत आवश्यक हो जाता है। इस हेतु संसार भर में अनेको विध प्रयत्न होते है। उन प्रयत्नों का एक परिणाम है शिक्षण सहायक सामग्री के आविष्कार। जैसे जैसे विज्ञान तथा तकनिकी का विकास होता गया वैसे वैसे शिक्षण सहायक सामग्री में भी परिवर्तन आता गया। शिक्षण सहायक सामग्री की विकास यात्रा सोटी-छड़ी से शुरु हुई थी तो आज स्मार्ट क्लास तक आकर रुकी है। इस इकाई में भाषा शिक्षण के लिए उपयोगी शिक्षण सहायक सामग्री का परिचय दिया गया है।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़कर आप :

- भाषा शिक्षण सहायक सामग्री की अवधारणा स्पष्ट कर सकेंगे।
- भाषा शिक्षण सहायक सामग्री का प्रकारगत परिचय दे सकेंगे।
- भाषा शिक्षण सहायक सामग्री का शिक्षण कार्य में प्रयोग कर सकेंगे।

4.3 शिक्षण सहायक सामग्री का अर्थ तथा महत्त्व

शिक्षण कार्य को प्रभावपूर्ण बनाने कि लिए केवल पद्धतियों तथा प्रयुक्तियों का प्रयोग ही पर्याप्त नहीं है, वरन् इसके लिए उपयुक्त शिक्षण सहायक सामग्री के प्रयोग की भी आवश्यकता है। उपर्युक्त रोचक, आकर्षक तथा सुबोध सहायक सामग्री की सहाय से शिक्षार्थी जटिल से जटिल ज्ञानको भी सहजता से ग्रहण कर सकता है। वस्तुत: शिक्षार्थियों की विभिन्न इन्द्रियों को प्रशिक्षित करके सहायक सामग्री उनके विकास में सहायक सामग्री अनुभव प्रदान करती है। यह शिक्षार्थियों के अधिगम समय की बचत करती है। जटिल प्रदत्तों को सरलत्तम ढाँचे में प्रस्तुत करती है, कल्पना को उत्तेजित करती है, शिक्षार्थियों की अवलोकन क्षमता बढ़ाती है तथा शिक्षार्थियों का सौन्दर्यबोध विकसित करती है।

प्राचीन चीनी कहावत है, 'एक बार देखना सौ बार बताने से अच्छा है।' आधुनिक शिक्षा प्रयोगों ने तो इसे सत्य सिद्ध कर दिया है।

जॉसेफ जे. बेबर के अनुसार विभिन्न वस्तुओं के बारे में हमारी 40 प्रतिशत अवधारणाएँ दृश्य अनुभवों पर, 25 प्रतिशत श्राव्य अनुभवों पर, 17 प्रतिशत स्पर्श अनुभवों पर, 15 प्रतिशत अन्य विभिन्न शारीरिक अनुभवों पर तथा 3 प्रतिशत स्वाद व सुगन्ध सम्बन्धी अनुभवों पर आधारित होती है। स्पष्ट है कि यदि हम प्रभावपूर्ण भाषा शिक्षण करना चाहें तो हमें विभिन्न प्रकार की ऐसी सामग्री का प्रयोग करना होगा, जिसे शिक्षार्थी देख, सुन, छू, चख सकें और फिर उस पर सोच विचार कर सकें। इसका अर्थ यह हुआ कि यदि शिक्षक शिक्षार्थियों के सम्मुख दृश्य, श्राव्य, दृश्य-श्राव्य तमाम प्रकार की सहायक सामग्री रखेगा तो शिक्षण कार्य असरकारक होगा। सहायक सामग्री से शिक्षक प्रत्यक्ष ज्ञान दे सकता है। शिक्षार्थी उत्साहपूर्वक सीखता है। शिक्षण-अधिगम के समय की बचत होती है। अधिगम की तीव्र हो सकती है। शिक्षार्थी सीखी हुई बातें देर तक याद रख सकता है।

4.4 भाषा शिक्षण में सहायक सामग्री

भाषा शिक्षण के लिए कई प्रकार की सहायक सामग्री का प्रयोग हो सकता है। इन में प्रमुख है परंपरागत सहायक सामग्री, दृश्य सहायक सामग्री, यांत्रिक सहायक सामग्री आदि। अब हम प्रत्येक का परिचय प्राप्त करेंगे .....

4.4.1 परम्परागत सहायक सामग्री

(क) **श्यामपट्ट :** इसे शिक्षक का अभिन्न मित्र तथा शिक्षार्थियों का राहबर कहा जा सकता है। यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण सहायक सामग्री है। श्यामपट्ट के महत्त्व को पिछानकर शिक्षा आयोगने यह सिफारिश की थी – प्रत्येक विद्यालय को तुरन्त एक अच्छा श्यामपट्ट दिया जाये।

यद्यपि श्यामपट्ट कोई आकर्षक वस्तु नहीं है तथापि स्वच्छता, शुद्धता एवं तीव्रता के

मानक स्थापित करने में इसका अत्यधिक महत्त्व है। यह ऐसी सामग्री है जो कक्षा कक्ष में सदैव उपलब्ध रहता है। इसके उपयोग के लिए न किसी तकनिकी ज्ञान की ही आवश्यकता है और न किसी उच्चकोटि के कलात्मक कौशल की।

श्यामपट्ट का उपयोग : नियम व परिभाषा लिखने हेतु, चार्ट, रेखाकृति तथा उदाहरण प्रस्तुत करने हेतु, सारांश अथवा प्रमुख मुद्दे लिखने हेतु, शब्दार्थ तथा रिक्त स्थानों की पूर्ति हेतु, योजना की रुपरेखा लिखने हेतु, मुख्य निर्देश देने हेतु, आदि बातें लिखने के लिए उपयोग होता है।

श्यामपट्ट उपयोग सम्बन्धी ध्यान देने योग्य निर्देश : श्यामपट्ट पर बड़े, आकर्षक, सुडौल रुप में स्पष्ट अक्षर लिखे जाने चाहिए ताकि अन्तिम बैंच पर बैठे हुए शिक्षार्थी भी आसानी से पढ़ सकें।

श्यामपट्ट पर सीधी पंक्तियों में ही लिखा जाना चाहिए। श्यामपट्ट को कदापि हाथ से या अंगुलियों से साफ न करें, डस्टर या कपड़े से पोंछे। श्यामपट्ट पर आवश्यक और महत्त्वपूर्ण बातें ही लिखें। ये बातें क्रमबद्ध व व्यवस्थित लिखें। श्यामपट्ट पर हांसिया बनाएँ। श्यामपट्ट पर क्या क्या लिखना है, कहाँ तथा कैसे लिखना है इसका नियोजन कक्षा में दाखिल होने से पहले करें। सम्भव हो तो रंगीन खडिये का भी प्रयोग करे। श्यामपट्ट लेखन करते समय शिक्षक को कभी कभी शिक्षार्थियों पर भी नज़र डालते रहना चाहिए। श्यामपट्ट पर लिख लेने के पश्चात् पुनः उसे मन में पढ़ लेना चाहिए तथा त्रुटि दीखे तो सुधार लेना चाहिए। फिर श्यामपट्ट की एक ओर खड़े रह जाना चाहिए। श्यामपट्ट पर लिखी हुई सामग्री की आवश्यकता समाप्त होने पर तुरन्त इसे मिटा देना चाहिए। कभी कभी अभ्यास हेतु तथा परीक्षण हेतु शिक्षार्थियों से भी श्यामपट्ट पर लिखवाना चाहिए।

श्यामपट्ट के महत्त्व के विषय में मेककल्स के ये विचार पूर्णतः सही है, "श्यामपट्ट महत्त्वपूर्ण दृश्य उपकरण है। विद्यालय में पढ़ाये जानेवाले प्रायः प्रत्येक विषय को मानस पट पर अंकित करने में सहायता दे सकता है। यह केवल साधन है, साध्य नहीं। इसका मुख्य उद्देश्य शुद्ध मानसिक विचारों को विकसित करना है।"

(ख) **पुस्तकें :** पुस्तकों को ज्ञान के द्वार कहे जाते हैं। जहाँ शिक्षण होगा वहाँ पुस्तकें अवश्य होगी। विद्यालय में पुस्तकें दो प्रकार की होती हैं : (1) पाठ्यपुस्तकें (2) सहायक पुस्तकें (सप्लीमेन्टरी रिडिंग बुक)। शिक्षण प्रक्रिया में पाठ्य पुस्तकें अनिवार्य है। भाषा शिक्षण के लिए सहायक पुस्तकें उपयोगी है। अतः पुस्तक शिक्षण प्रक्रिया का एक महत्त्वपूर्ण साधन है।

पुस्तकों की उपयोगिता निम्नांकित रुप में है :

1. शिक्षार्थियों को अधिगम की दिशा में प्रेरित करती है।
2. शिक्षको एवं शिक्षार्थियों को लभ्य की दिशा में बढ़ने में सहायता करती है।
3. शिक्षार्थी को एक ही स्थान पर विषय का क्रमबद्ध ज्ञान उपलब्ध हो जाता है।
4. शिक्षार्थी को भाषा के विभिन्न पक्षों में निपुणता प्रदान करती है।
5. पुस्तकें ज्ञान के प्रति रुचि उत्पन्न करती है।
6. पाठ्यपुस्तकें विविध विद्याओं, शैलियों के नमूने प्रस्तुत करती हैं।

(ग) **पत्र पत्रिकाएँ :** पत्र-पत्रिकाओं के द्वारा भाषा शिक्षण का प्रयास किया जा सकता है। पत्र-पत्रिकाओं की भाषा समाज में प्रस्तुत भाषा की प्रतिनिधि रुप होती है। अतः शिक्षार्थी को जीवन उपयोगी भाषा की शिक्षा मिल जाती है। पत्र-पत्रिकाओं के पठन से प्रासंगिक ज्ञान की भी वृद्धि होती है। विविध विषयों का ज्ञान प्राप्त होता है।

4.4.2 दृश्य सहायक सामग्री

इस मुद्दे के अन्तर्गत वास्तविक पदार्थ, चित्र, रेखा चित्र, मान चित्र, चार्ट, आदि का परिचय दिया गया है।

(त) **वास्तविक पदार्थ :** शिक्षार्थी के समक्ष आवश्यकतानुसार वास्तविक पदार्थ रखकर ज्ञान दिया जाता है, वास्तविक पदार्थ को देखने से व्यर्थ भ्रम दूर हो जाता है। इस से ज्ञान में स्थायित्व एवं दृढ़ता आती है। वास्तविक वस्तुओं के प्रदर्शन से शिक्षण में रोचकता आ जाती है तथा शिक्षार्थी भी ज्ञान को शीघ्रता से ग्रहण कर लेता है।

(थ) **चित्र-रेखाचित्र :** शिक्षण सहायक सामग्री में चित्रों का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनकी सहायता से विषय-वस्तु को रोचक बनाकर शिक्षार्थियों का ध्यान उसकी ओर आकर्षित किया जा सकता है। चित्रों से उनकी कल्पनाशक्ति का भी विकास होता है। वास्तविकता से अधिक निकट होने के कारण इनके माध्यम से प्राप्त ज्ञान अधिक स्थायी होता है।

भाषा शिक्षक चित्र-रेखाचित्र का प्रयोग निम्नांकित बातों के लिए कर सकता है **:**

1. नवीन पाठ की प्रस्तावना तैयार करने हेतु
2. विस्तृत चर्चा के समय तथ्य को स्पष्ट करने हेतु
3. किसी कठिन शब्द का अर्थ निकलवाने के हेतु
4. शिक्षार्थियों की उपलब्धि का मूल्यांकन करने हेतु

भाषा शिक्षक को चित्र का प्रयोग करते समय निम्नांकित बातों पर ध्यान देना चाहिए ....

1. कक्षा के सभी शिक्षार्थी देख सके इतने कद का चित्र होना चाहिए।
2. कक्षा में चित्र ऐसी जगह लगाएँ ताकि सभी शिक्षार्थी आसानी से देख सके।
3. चित्र सुन्दर तथा सम्पूर्ण होना चाहिए।
4. चित्र पाठ्य सामग्री से सबन्धित ही होना चाहिए।
5. चित्र दिखाने के बाद इसके सम्बन्ध में प्रश्न अवश्य पूछने चाहिए।
6. चित्र अर्थपूर्ण तथा प्रमाणयुक्त होना चाहिए।
7. चित्र विषयक चर्चा खत्म होते ही चित्र हटा लेना चाहिए।

चित्र रखने से लाभ : चित्र प्रस्तुत करने से कई प्रकार के लाभ होते है, जैसे कि,

1. शिक्षार्थियों की कल्पनाशक्ति तथा विश्लेषण क्षमता का विकास होगा।
2. पाठ्य सामग्री सुबोध तथा सुग्राह्य हो सकेगी।
3. शिक्षार्थियों की कलात्मक शक्ति का विकास होगा।
4. चित्र के उपयोग से शिक्षण कार्य रसमय हो सकेगा।
5. चित्र के उपयोग से शिक्षार्थियों की अधिगम में रुचि बढ़ेगी।

(द) **चार्ट :** चार्ट उस प्रदर्शनात्मक साधन को कहते है, जिसमें तथ्यों व चित्रों का समन्वय होता है जिससे शिक्षार्थियों के अधिगम में सुगमता बढ़ती है। चार्ट में क्रमबद्ध व तार्किक रुप में चित्रात्मक तथ्यों को प्रस्तुत किया जाता है। चार्ट में तालिकाएँ भी रखकर सूचनाएँ प्रस्तुत की जा सकती है।

चार्टों का उपयोग कैसे करें ?

- एक चार्ट केवल एक ही उद्देश्य के लिए होना चाहिए। मतलब कि एक चार्ट में विभिन्न विषयों की सूचनाएँ इकठ्ठी नहीं करनी चाहिए।
- चार्ट का उपयोग योग्य समय पर ही करना चाहिए।

– सभी शिक्षार्थी देख–पढ़ सके इस कद का चार्ट होना चाहिए।

– चार्टों में दृश्य सामग्री की श्रेष्ठता व प्रभावपूर्णता के लिए आग्रह होना चाहिए।

– चार्ट की प्रस्तुति के साथ साथ इसके सम्बन्ध में प्रश्न पूछने चाहिए।

(ध) प्रतिमान (मॉडेल) : पोस्टर्स एवं चार्ट दोनों में चित्र एवं शाब्दिक जानकारी होती है। किन्तु दोनों में तफावत इतना है कि जहाँ चार्ट में चित्र वास्तविक व पूर्ण होते है, शाब्दिक अभिव्यक्ति भी पूर्ण होती है। जब कि पोस्टर्स के चित्रों की शैली अलग प्रकार की, शाब्दिक अभिव्यक्ति पूर्ण न होकर सांकेतिक होती है। पोस्टर के द्वारा किसी एक ही विचार को केन्द्र बिन्दु बनाकर इतनी सशक्त संवगात्मक अपील की जाती है कि उसका प्रभाव शिक्षार्थियों पर जबरदस्त होता है। पोस्टर्स अपनी विशिष्ट शैली की वजह से शिक्षार्थियों के मन में प्रेरणा का जन्म दे सकते है, व्यक्ति के व्यवहार में वांछित परिवर्तन करवाया जा सकता है। अतएव पोस्टर्स विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए है। पोस्टर्स में शाब्दिक या चित्रात्मक अभिव्यक्ति सुस्पष्ट होनी चाहिए, शिक्षार्थियों के चित्त में आलोडन विलोडन पैदा करने में समर्थ होनी चाहिए।

(प) बुलेटिन बोर्ड (भींतपत्र) : भाषा शिक्षण का सार्थक माध्यम बुलेटिन बोर्ड है। इसका संचालन शिक्षार्थियों के द्वारा ही होना चाहिए। उसमें समाचार, सुविचार, सूचनाएँ, चित्र, काव्य–कहानी आदि प्रस्तुत किया जा सकता है। ध्यान इतना ही रखना है कि इस पर प्रस्तुत सभी सामग्री शिक्षार्थियों की आयु, मानसिक क्षमता के अनुकूल हो। यह बोर्ड विद्यालय में ऐसी जगह रखना चाहिए ता कि सभी शिक्षार्थी अपने समय पर देख–पढ़ सकें। बुलेटिन बोर्ड के कारण शिक्षार्थियों का जनरल नोलेज (जीके) तो बढ़ेगा ही साथ साथ सर्जनात्मक क्षमता भी विकसित होगी। इससे शिक्षार्थियों का पठन कौशल तथा लेखन कौशल का विकास होगा। बुलेटिन बोर्ड पर प्रस्तुत सामग्री पर विचार विमर्श के लिए भी शिक्षार्थियों को अवसर देने चाहिए।

(फ) फ्लैनल बोर्ड : इस बोर्ड को रंगीन फ्लैनल कपड़े से तैयार किया जाता है। इसके द्वारा भाषा की पाठ्यसामग्री को विभिन्न अंशों में विभाजित करके पढाई जाती है। विभिन्न अंशो में विभाजित सामग्री को क्रमबद्ध रुप से फ्लैनल बोर्ड पर चिपकाई जाती है तथा तत्विषयक चर्चा की जाती है। चर्चा समाप्त होते ही सामग्री को हटाकर नयी सामग्री चिपकाई जाती है। व्याकरण शिक्षा तथा मूल्यांकन के हेतु सह सहायक सामग्री बहुत ही उपयोगी होती है।

4.4.3 यांत्रिक सामग्री

(च) श्राव्य सामग्री : यांत्रिक श्राव्य सामग्री के अन्तर्गत रेडियो, टेप रिकार्डर का समावेश होता है। अब प्रत्येक का परिचय व उपयोगिता प्रस्तुत है।

– रेडियो : दूरदर्शन आने के बाद वैसे भी रेडियों की उपयोगिता कम रह गयी है। किन्तु रेडियोने शिक्षण तथा अधिगम की प्रक्रिया में महत्त्वपूर्ण सहायता प्रदान की है। वस्तुतः रेडियो शिक्षा प्रदान करके व्यापक तौर भाषा शिक्षण दिया जाता है। विद्वान व्यक्तियों के वार्तालाप, कहानी–काव्य पठन आदि की प्रस्तुति से भाषा एवं ज्ञान दोनों की शिक्षा होती है। रेडियो द्वारा शिक्षा के कारण शिक्षार्थियों का श्रवण कौशल विकसित होता है। साथ ही साथ भाषण कौशल के, पठन कौशल के श्रेष्ठ नमूने प्राप्त होते है। इस से इनका भाषण कौशल तथा पठन कौशल भी विकसित होते है। रेडियो प्रसारण में सुने गये पाठों, वार्तालापो, नाटक, कहानी–कविता आदि पर शिक्षार्थियों से प्रश्नोत्तर किया जा सकता है। रेडियो की एक ही मर्यादा है कि जब प्रसारण होता है तब यदि सुन न पाये तो दुबारा सुनना सम्भव नहीं होता है। इसी कारण समय के पाबन्द रहना पड़ता है।

– टेप रिकार्डर : टेपरिकार्डर की सहायता से रेडियो की सीमाओं को दूर किया जा सकता है। जो रेडियो कार्यक्रम विद्यालय के समय के पश्चात् प्रसारित होते हैं उनका

रिकार्डिंग करके शिक्षार्थियों को सुनााया जा सकता है, इसी प्रकार विद्यालय के बाहर हो रहे भाषाकीय कार्यक्रमों (कवि मुशायरा, गोष्ठी, परिसंवाद, वार्तालाप) का रिकोर्डिंग करके विद्यालय में शिक्षार्थियों को सुनाया जा सकता है। इस माध्यम से शिक्षार्थियों के श्रवण कौशल तो विकसित होता ही है मगर भाषण कौशल व पठन कौशल के विकास में भी मदद मिलती है।

(छ) **दृश्य सामग्री :** यांत्रिक दृश्य सहायक सामग्री के अन्तर्गत प्रोजेक्टर, एपिडायस्कोप, फिल्मस्ट्रीप्स, का समावेश होता है।

– प्रोजेक्टर : यहाँ खास करके स्लाइड प्रोजेक्टर की बात मुख्य है। इस से स्लाइड की आकृति को बड़ा बनाकर प्रदर्शित किया जाता है। यहाँ यह तथ्य स्मरणीय है कि शिक्षक जिस प्रकरण से सम्बन्धित स्लाइड्स कक्षा में प्रदर्शित करे, उसी समय वह उसके विषय में शिक्षार्थियों के साथ चर्चा भी कर सकता है। प्रारंभिक कक्षाओं में इसका उपयोग विशेष रुप से लाभप्रद होता है। यह साधन अपेक्षाकृत छोटा होता है। इसीलिए कक्षा में इसका उपयोग सरलता से हो सकता है। इस प्रोजेक्टर के लिए स्लाइड शिक्षक स्वयं अपनी आवश्यकतानुसार तैयार कर सकता है अथवा तौ बाज़ार में भी उपलब्ध होती है।

– फिल्म स्ट्रीप्स : फिल्मस्ट्रीप अर्थात् फिल्म पट्टियों, फिल्म की लम्ब पट्टी पर एक विषय के कई चित्र अपने निश्चित क्रम में रखे होते है, फिर प्रोजेक्टर के द्वारा इन चित्रों का लगातार प्रदर्शन हो सकता है। इसका एक फायदा यह है कि स्लाइड प्रदर्शित करते समय बीच बीच में स्लाइड बदलने के लिए रुकना पडता है। फिल्म स्ट्रीप प्रस्तुत करते समय इस प्रकार की कोई रुकावट नहीं आती।

– एपिडायस्कोप : इस सामग्री के लिए स्लाइड्स बनाने की आवश्यकता नहीं है। यह चित्र विस्तारक यंत्र है। इसके द्वारा छोटे चित्र को बड़ा बनाकर पर्दे पर प्रस्तुत किया जा सकता है। शिक्षक या शिक्षार्थी द्वारा तैयार किया गया चित्र अथवा अन्य किसी अपारदर्शक वस्तु को सीधे पर्दे पर लाया जा सकता है। इस साधन के द्वारा शिक्षक भाषा के पाठों में वर्णित घटना या पात्रों के चित्रों को शिक्षार्थियों के सम्मुख पेश कर सकता है। किसी शिक्षार्थीने पाठ सम्बन्धित कोई चित्र बनाया है तो एपिडायस्कोप के द्वारा इसे बड़ा बनाकर कक्षा में प्रदर्शित किया जा सकता है। इसे देखकर अन्य शिक्षार्थी भी चित्र बनाने के लिए प्रेरित हो सकते है।

(ज) **दृश्य-श्राव्य सामग्री :** 21वीं शति विज्ञान और टेक्नोलोजी की शति है। तरह तरह के उपकरण ईजाद किये जाते हैं, जिनका उपयोग जीवन में जितना उपयोगी होते हैं उतने ही शिक्षणकार्य में भी उपयोगी सिद्ध हुए हैं। उदाहरण के तौर पर दूरदर्शन–मनोरंजन का उपकरण है उतना ही शिक्षण के लिए भी उपयोगी उपकरण है, मोबाइल प्रत्यायन का उपकरण है उतना ही अधिगम का भी उपकरण है, कम्प्यूटर से ईलर्निंग सम्भव हो चुका है। ऐसे उपकरणों की वजब से दूरवर्ती शिक्षण सहज हो गया है।

इस प्राकर की शिक्षण सहायक सामग्री का महत्त्व प्रस्तुत करते हुए फ्रांसिस डब्ल्यू. नोयल लिखते है, "अच्छा अनुदेशन (शिक्षणकार्य) किसी भी शैक्षिक कार्यक्रम की आधारशिला है जिस में श्राव्य–दृश्य सामग्री उस आधारशिला का एक फलपुर्जा है।" तो आईए, इन सामग्रियों का परिचय प्राप्त करें।

– दूरदर्शन : लोग चाहे इसे 'इडियट बोक्स' कहे किन्तु यह एक उत्तम शिक्षा सहायक सामग्री है। इसका महत्त्व पहचान कर थट तथा गेरबेस्वि लिखते है, यह सब से अधिक आशापूर्ण श्राव्य–दृश्य शिक्षा सहायक उपकरण है क्योंकि सन्देशवाहन के इस यंत्र में रेडियो तथा चलचित्र के गुणों का सम्मिश्रण है। स्पष्ट है कि दूरदर्शन में शिक्षार्थी अपनी श्रवणेन्द्रिय तथा दर्शेन्द्रिय दोनों का उपयोग करके किसी भी जटिल तथ्य को भी सरलतापूर्वक सीखा सकता है। आजकल भारतीय सेटेलाईट्स की सहायता से शिक्षा सम्बन्धी राष्ट्रीय कार्यक्रम तथा ज्ञान चैनल से प्रसारित हो रहे शिक्षा कार्यक्रमों

को कक्षा में अथवा घर पर भी देखा जा सकता है। वास्तव में शिक्षा क्षेत्र में दूरदर्शन का उपकरण के रुप में प्रयोग करने से हमें चलचित्र से होनेवाले लाभ जितने ही लाभ हो सकता है। यू.जी.सी. तथा गिरनार चैनल से प्रसारित हो रहे शैक्षिक कार्यक्रमों के लाभ से सब परिचित है।

– वीडियो टेप : यह एक ऐसी शिक्षण सहायक सामग्री है जिसका प्रयोग जब चाहे तब जितनी बार चाहे तब किया जा सकता है। इतना ही नहीं किसी पाठ, भाषण या वृतान्त की वीडियो टेप को बीच बीच में आवश्यकता पड़ने पर रोक कर चलाया जा सकता है। तथा इसकी पुनरावृति भी की जा सकती है। ये वीडियो टेप दूरदर्शन पर देखा जा सकता है। इस सामग्री का महत्त्व पिछान कर शिक्षण के विभिन्न विषयों पर राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद् (NCERT), केन्द्रिय प्रौद्योगिक शिक्षण संस्थान (सेन्ट्रल इन्स्टिट्यूट ऑफ एज्युकेशनल टेकनोलोजी) तथा इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय खूला विश्वविद्यालय तथा गुजरात प्रौद्योगिक शिक्षण संस्थान भी वीडियो टेप तैयार करती है तथा इनका समूल्य वितरण करती है।

उपयोगिता : इस से होनेवाले लाभ इस प्रकार है **:**

1. इनसे छात्रों की कल्पनाशक्ति एवं निरीक्षण शक्ति का विकास होता है।
2. इनके द्वारा उपलब्ध ज्ञान अधिक स्थायी होता है।
3. इनके द्वारा भाषायी कौशल, भाषा ज्ञान आदि की प्राप्ति होती है।
4. विशेषकर मंद बुद्धि शिक्षार्थियों के लिए उपयोगी है।

– कम्प्यूटर : कम्प्यूटर ने तो मानो शिक्षाजगत में आमूल क्रान्ति कर दी है। यह ज्ञान का महासागर है। फिर भी इन में से जो ज्ञान जब चाहे तब चुटकी बजाते ही आपकी सेवा में प्रस्तुत कर देनेवाला अलाउद्दीन का जीन भी है। इतना ही नही वेब तकनिकी की वजह से दुनिया पूरी कक्षा कक्ष बन गया है। ई लर्निंग सम्भव हो सका है। विकसित देशों में तथा प्रगतिशील देशों में तो प्रत्येक शिक्षार्थी के पास कक्षा में ही कम्प्यूटर होता है। इस से वह स्वयं सीखता है, समस्या समाधान प्रयुक्ति से वह सीख कर प्रगति करता है। आज कम्प्यूटर के लिए CD तथा DVD का उत्पादन बढ़ गया है। जो सीखना है उस विषय के लिए CD आदि उपलब्ध होते है। हाँ, कम्प्यूटर संचालन के लिए सामान्य तकनिकी ज्ञान आवश्यक है। गुजरात में प्राथमिक कक्षाओं से लेकर ही कम्प्यूटर शिक्षा प्रारम्भ हो चुकी है। स्वअध्ययन के लिए यह श्रेष्ठ उपकरण है।

– मोबाइल : मोबाइल भी प्रत्यायन का उपकरण है, शिक्षाकार्य भी एक प्रकार का प्रत्यायन है। इसी कारण एम-लर्निग का विकास हुआ। शिक्षक तथा शिक्षार्थी एस.एम.एस. के द्वारा अपनी समस्याएँ सुलझा लेते है। इससे कक्षा का ही विस्तार हुआ है।

स्मार्ट टेक्नोलॉजि का विकास होते ही स्मार्ट क्लासरुप की परिकल्पना साकार होने लगी है। रोबो शिक्षक अब दूर नहीं है।

4.5 सारांश

इस इकाई में भाषा शिक्षण के लिए सहायक सामग्री की चर्चा की गई है। भाषा शिक्षा के लिए चाहे श्रेष्ठ पद्धति का प्रयोग करे, प्रयुक्तियों का प्रयोग करे किन्तु इन सब को जब तक सहायक सामग्री का साथ नहीं मिलता तब तक ये पर्याप्त प्रभाव नहीं उत्पन्न कर सकती। इसीलिए तो कहा गया है कि किसी भी शिक्षण कार्यक्रम की आधारशिला है अच्छी अनुदेश प्रक्रिया जिसमें दृश्य-श्राव्य शिक्षण सहायक सामग्री उस आधारशिला का एक महत्त्वपूर्ण फलपुर्जा है।

भाषा शिक्षण सहायक सामग्री कई प्रकार की होती है। इनको प्रमुख तीन वर्गो में वर्गीकृत किया जा सकता है। (1) परंपरागत सहायक सामग्री **:** इसके अन्तर्गत श्यामपट्ट, पुस्तकें तथा पत्र पत्रिकाओं का समावेश

होता है। (2) दृश्य सहायक सामग्री**:** इस के अन्तर्गत वास्तविक पदार्थ, चार्ट, चित्र, प्रतिमान, फ्लैनल बोर्ड तथा बुलेटिन बोर्ड का समावेश होता है। ये सभी दृश्य है, श्राव्य नहीं। इसको दिखाते समय शिक्षक को कथन-प्रश्नोत्तर करते रहेना पड़ता है। चित्र और चार्ट विशेष उपयोगी होते है। फ्लैनल बोर्ड विविधलक्षी हेतुओं के लिए उपयोगी होता है। बुलेटिन बोर्ड़ शिक्षार्थी की सृजनात्मकता के विकास के अवसर प्रदान करता है। (3) यांत्रिक सामग्री **:** इसके अन्तर्गत श्राव्य सहायक सामग्री, दृश्य सहायक सामग्री तथा दृश्य-श्राव्य सामग्री इस प्रकार तीन वर्ग हो सकते हैं। श्राव्य यांत्रिक सामग्री के अन्तर्गत रेडियो, टेपरिकार्डर जैसे उपकरणों का समावेश होता है। रेडियो पर से भाषा शिक्षण के पाठों का प्रसारण होता है तो टेपरिकार्डर पर काव्य गान, कहानी कथन, नाटक का पठन आदि सुनाया जा सकता है। टेपरिकोर्डर से काव्यगान, काव्य पठन, कहानी कथन, किसी विद्वान के वार्तालाप आदि सुनाया जा सकता है। श्रवण कौशल कि विकास के साथ साथ भाषा ज्ञान, अनुतान, बलाघात आदि की शिक्षा भी हो सकती है।

दृश्य सहायक सामग्री में फिल्म स्ट्रीप्स, स्लाइड प्रोजेक्टर, एपिडायोस्कोप आदि का समावेश होता है। फिल्मस्ट्रीप के द्वारा पाठ्यअंश का पूरा दृश्यांकन दिखाया जा सकता है। जहाँ स्लाईड के प्रस्तुतीकरण में बीच बीच में रुकना पड़ता है वहाँ फिल्मस्ट्रीप में लगातार प्रस्तुति हो सकती है। एपिडायोस्कोप किसी भी अपारदर्शी पदार्थ, कागज पर रहे चित्र-आकृति-आरेख-मानचित्र आदि के विस्तृत करके पर्दे पर प्रस्तुत कर सकता है।

दृश्य-श्राव्य भाषा सहायक सामग्री के अन्तर्गत दूरदर्शन, वीडियो टेप, कम्प्यूटर, मोबाइल आदि का समावेश होता है। ये सर्वाधिक प्रभावोत्पादक भाषा शिक्षण सहायक सामग्री है। वर्तमान समय में कक्षाकक्ष में प्रत्येक शिक्षार्थी के पास कम्प्यूटर होता है। अत**:** स्वयं शिक्षा का महत्त्व बढ़ रहा है, आज स्मार्ट क्लास भी धडाधड खुले जा रहे हैं।

संक्षेप भाषा शिक्षण सहायक सामग्री महत्त्वपूर्ण इसीलिए है कि वह अनुभव प्रदान करती है तथा शब्द एवं वस्तु में सम्बन्ध स्थापित करती है। अधिगम को सरल बनाती है तथा समय की बचत करती है। कल्पना को उत्तेजित करती है तथा शिक्षार्थी की अवलोकन क्षमता बढ़ाती है।

बोध प्रश्न :

1. श्यामपट्ट का महत्त्व अपने शब्दों में लिखिए।

....
....
....
....
....
....

2. चित्र का प्रयोग करते समय शिक्षक क्या क्या सावधानियाँ रखेगा ?

....
....
....
....
....
....

3. कम्प्यूटर भाषा शिक्षा में किस तरह उपयोगी हो सकता है ?

....
....

....

....

....

....

4.6 बोध प्रश्न के उत्तर

1. शिक्षण सहायक सामग्री के रुप में श्यामपट्ट का बहुत महत्त्व है क्योंकि यह एक सरत सामग्री है। वह शिक्षार्थियों के सामने शुद्ध व सुपाठ्य लेखन का नमूना प्रस्तुत करता है। श्यामपट्ट पर जो कुछ भी लिखा या बनाया जाता है। वह कक्षा में सभी शिक्षार्थी देख सकते है अर्थात् श्यामपट्ट कोई दल विशेष के लिए नहीं होता है। यही एक ऐसा साधन है जो हरपल उपलब्ध रहता है।

2. चित्र बहुत ही उपयोगी सामग्री है। किन्तु जब वह पाठ्यसामग्री से सम्बन्धित हो। अत: शिक्षक वही चित्र प्रस्तुत करेगा जो पाठ्य सामग्री के अधिगम के लिए उपयोगी होगा। चित्र पर्याप्त मात्रा में बड़ा हो ताकि सभी शिक्षार्थी देख सके। शिक्षक यह भी सावधानी रखेगा कि चित्र को ऐसी जगह लगायेगा ताकि तमाम शिक्षार्थी उसे आसानी से देख सकें। चित्र के विषय में शिक्षक प्रश्नोत्तर करना नहीं भूलेगा।

3. वैसे भी कम्प्यूटर के तो विविध उपयोग से तो सब परिचित है। भाषा शिक्षा कार्य में ही कम्प्यूटर विशेष उपयोगी है, जैसे प्राथमिक कक्षाओं में वर्ण, शब्द विराम चिह्नो की शिक्षा में, उच्च कक्षाओं में शब्दों के अर्थ, पर्यायवाची शब्द आदि जानने समझने के लिए, भाषाकीय पझल्स, खेल, खानापूर्ति आदि भाषिक खेल के लिए अपने भाषा ज्ञान के मूल्यांकन के लिए, इस प्रसार भाषा शिक्षा में कम्प्यूटर (संगणन) बहुत उपयोगी है।

डॉ. बाबासाहब आंबेडकर
ओपन युनिवर्सिटी

SECM-04
हिन्दी

खंड

4

मूल्यांकन, क्रियात्मक शोध तथा समुन्नयन कार्य

इकाई-1

भाषा संप्राप्ति मूल्यांकन

इकाई-2

निदानात्मक एवं उप ाारात्मक कार्य

इकाई-3

क्रियात्मक शोध

इकाई-4

समुन्नयन कार्य

पाठ्यक्रम विशेषज्ञ समिति

प्रो. आर. एन. मेहरोत्रा
पूर्व प्रोफेसर
शिक्षा-विभाग (सी.आई.ई.)
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

प्रो. पी.आर.नायर
पूर्व प्रोफेसर
मैसूर विश्वविद्यालय, मैसूर

प्रो. लोकेश कौल
हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय,
शिमला

प्रो.बी.के. पासी
इन्दौर विश्वविद्यालय, इन्दौर

प्रो. एम. एस. यादव
सी. ए. एस. ई. एम. एस.
विश्वविद्याल, बडौदा

प्रो. मल्ला रेड्डी
उपकुलपति
उस्मानिया विश्वविद्यालय
हैदराबाद

प्रो. एम. एस. पदमा
एन.ई.एच.यू. शिलोंग

प्रो. ए. एन. जोशी
वाई सी.एम.ओ.यू.नासिक

डॉ. के. अरयुक्कन्तु
निर्देशक, पत्राचार पाठ्यक्रम
अन्नामलाई विश्वविद्यालय
अन्नामलाई

प्रो. ए. के शर्मा
निर्देशक, एन.सी.ई.आर.टी
नई दिल्ली

प्रो. वी. के. सभरवाल
शिक्षा विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

प्रो. एम. मियाँ
जामिया मिलिया इस्लामिया
नई दिल्ली

प्रो. सी. एल. आनन्द
पूर्व पी. वी. सी.
इ. गां. रा. मु. विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

प्रो. एम. बी. मेनन
इ. गां. रा. मु. विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

प्रो. एल. सी. सिंह
इ. गां. रा. मु. विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

डॉ. एम. सी. शर्मा
कार्यक्रम समन्वयकर्ता
सैद्धान्तिक
इ. गां. रा. मु. विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

डॉ. सोहनवीर एस. चौधरी
कार्यक्रम समन्वयकर्ता
प्रायोगिक
इ. गां. रा. मु. विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

पाठ्यक्रम निर्माण समिति

पाठ्यक्रम योगदान
श्रीमति शशिप्रभा गोयल
पूर्व प्रिन्सिपल,
डी.आई.ई.टी., दिल्ली.

डॉ. (श्रीमती) वशिनी शर्मा,
केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा

डॉ. जे. सी. सिन्हा
डीन, शिक्षा संकाय
दलायबाग शिक्षा संस्थान
दलायबाग, आगरा

डॉ. राज भारद्वाज
नवयुग स्कूल
नई दिल्ली

विषयवस्तु एवं भाषा संपादन
प्रो. आर. पी. श्रीवास्तव
जामिया मिलिया इस्लामिया
नई दिल्ली

विषयवस्तु एवं भाषा सहसंपादन
डॉ. एम. एल. कौल
इ. गां. रा. मु. विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

इकाई अभिकल्प सम्पादन एवं समन्वय
डो. एम.एल.कौल
इ. गां. रा. मु. विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

परामर्शदाता
प्रो. श्रीधर वसिष्ठ
पूर्व प्रोफेसर, शिक्षा-शास्तर विभाग
श्री लाल बहादुर शास्त्री
संस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली

डॉ. (सुश्री) नीरा नारंग
एम. वी. कालेज ऑफ एज्यु.
दिल्ली विश्वविद्यालय.

सामग्री निर्माण

प्रो. एस. बी. मेनन
निर्देशक, शिक्षा विद्यापीठ
इ. गां. रा. मु. विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

श्री के. जी. शशि कुमार
अनुभाग अधिकार (प्रकाशन)
शिक्षा विद्यापीठ, इ. गां. रा. मु. विश्वविद्यालय

प्रकाशक : कुलसचिव, डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ओपन यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद-382481
आवृत्ति : प्रथम आवृत्ति - 2020, **नकल :** 600
द्वितीय आवृत्ति - 2021, **नकल :** 600

ES-115 : हिन्दी शिक्षण प्रविधि

खंड-1 हिन्दी शिक्षण : सैद्धान्तिक पक्ष

इकाई-1 भाषा की प्रकृति एवं प्रकार्य

इकाई-2 भाषा अधिगम प्रक्रिया

इकाई-3 विद्यालयीय स्तर पर भाषा

इकाई-4 हिन्दी शिक्षण की व्यवस्था एवं सामग्री

खंड-2 भाषिक योग्यताओं का विकास

इकाई-1 हिन्दी के भाषिक तत्त्व-1

इकाई-2 हिन्दी के भाषिक तत्त्व-2

इकाई-3 श्रवण एवं मौखिक अभिव्यक्ति के कौशल का विकास

इकाई-4 पठन योग्यता

इकाई-5 लिखित अभिव्यक्ति कौशल का विकास

खंड-3 साहित्यिक विद्याओं का शिक्षण एवं व्याकरण शिक्षण

इकाई-1 कविता-शिक्षण

इकाई-2 निबन्ध शिक्षण

इकाई-3 गद्य की अन्य विद्याओं का शिक्षण

इकाई-4 व्याकरण-शिक्षण

खंड-4 मूल्यांकन, क्रियात्मक शोध तथा समुन्नयन कार्य

इकाई-1 भाषा संप्राप्ति मूल्यांकन

इकाई-2 निदानात्मक एवं उपचारात्मक कार्य

इकाई-3 क्रियात्मक शोध

इकाई-4 समुन्नयन कार्य

ISBN :

Copyright © Registrar, Dr. Babasaheb Ambedkar Open University, Ahmedabad. December 2020

While all efforts have been made by editors to check accuracy of the content, the representation of facts, principles, descriptions and methods are that of the respective module writers. Views expressed in the publication are that of the authors, and do not necessarily reflect the views of Dr. Babasaheb Ambedkar Open University. All products and services mentioned are owned by their respective copyrights holders, and mere presentation in the publication does not mean endorsement by Dr. Babasaheb Ambedkar Open University. Every effort has been made to acknowledge and attribute all sources of information used in preparation of this Self Learning Material. Readers are requested to kindly notify missing attribution, if any.

इकाई 1

भाषा संप्राप्ति मूल्यांकन

: रूपरेखा :

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 मूल्यांकन का अर्थ

1.3.1 परीक्षा और मूल्यांकन में अन्तर

1.4 मूल्यांकन की आवश्यकता एवं महत्त्व

1.4.1 मूल्यांकन की आवश्यकता

1.4.2 मूल्यांकन का महत्त्व

1.5 उद्देश्य आधारित परिक्षण युक्तियाँ

1.5.1 मौखिक, लिखित एवं निदानात्मक परीक्षण

1.5.2 प्रश्नपत्र की विशेषताएँ

1.5.3 मानदण्ड आधारित परीक्षण

1.6 परीक्षणेतर मूल्यांकन युक्तियाँ

1.6.1 प्रेक्षण, जांच सूची, निर्धारण मापनी, उपाख्यानक आलेख

1.6.2 जांच-पड़ताल युक्ति, प्रश्नावली एवं साक्षात्कार

1.7 प्रश्नों के प्रकार

1.7.1 विषयवस्तु के आधार पर

1.7.2 योग्यता मापन के आधार पर

1.7.3 उत्तर सीमा के आधार पर

1.8 प्रश्नपत्र की रचना

1.8.1 प्रश्नपत्र का संतुलन

1.8.2 प्रश्नपत्र निर्माण के लिए महत्त्वपूर्ण बिन्दु

1.8.3 अंकन योजना

1.8.4 प्रश्न-विश्लेषण पत्रक

1.9 प्राप्तांको का विश्लेषण

1.10 सारांश

1.11 बोध प्रश्न के उत्तर

1.12 उपयोगी पुस्तकें

1.1 प्रस्तावना

इस इकाई में हम हिन्दी भाषा शिक्षण में मूल्यांकन प्रक्रिया के महत्त्व, मूल्यांकन युक्तियों और प्रश्न निर्माण कला का परिचय प्राप्त करेंगे। मूल्यांकन वस्तुत: शिक्षण प्रक्रिया का अभिन्न अंग है। मूल्यांकन से ही हमें यह ज्ञात होता है कि हिन्दी भाषा शिक्षण के लिए जिन उद्देश्यों को हमने निर्धारित किया था उनकी पूर्ति में कितनी सफलता मिली। आज प्राय: बारहवीं कक्षा पास कर लेने के बाद भी विद्यार्थियों का भाषा पर अधिकार नहीं होता। इसका प्रमुख कारण है लिखित परीक्षा का प्राधान्य। भाषा के विभिन्न कौशल – सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना है परंतु लिखित परीक्षा में इन कौशलों के मूल्यांकन का कोई स्थान नहीं है। लिखित परीक्षा भी सर्वथा दोष मुक्त नहीं है और मात्र स्मरण शक्ति की ही परीक्षा तक सीमित रह जाती है। ऐसी अवस्था में शिक्षण प्रणाली भी दूषित होती चली जाती है। भाषा शिक्षण में सुनने, बोलने और पढ़ने की दक्षताओं के मूल्यांकन के लिए कोई प्रयास नहीं किया जाता। यदि कहीं प्रयास किया भा जाए को प्रश्नों के उत्तर की जांच में व्यक्तिनिष्ठता के कारण विश्वसनीयता का अभाव पाया जाता है। आज तो उद्देश्यों के स्थान पर वार्षिक परीक्षा ही साध्य बन गई है और किसी भी प्रकार रटे रटाये उत्तर लिखने और पास होने तक ही शिक्षा का उद्देश्य सीमित हो गया है। आवश्यकता है विद्यार्थी के संपूर्ण व्यक्तित्व के मूल्यांकन की जिससे उसकी प्रतिभा का भाषिक और साहित्यिक दृष्टि से उचित हो सके। मूल्यांकन की विशेष युक्तियों को अपनाकर ही हम हिंदी भाषा शिक्षण के अपेक्षित उद्देश्यों की पूर्ति कर सकते हैं। अत: आइए इस इकाई में यह समझने का प्रयत्न करें कि मूल्यांकन क्या है, इसकी क्या आवश्यकता है और मूल्यांकन की विभिन्न युक्तियों द्वारा हम भाषा–शिक्षण को कैसे प्रभावी बना सकते हैं।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :

- मूल्यांकन का अर्थ, आवश्यकता एवं महत्त्व बता सकेंगे।
- उद्देश्य आधारित विभिन्न परीक्षण युक्तियों का परिचय दे सकेंगे।
- उद्देश्य आधारित प्रश्नों का निर्माण कर सकेंगे।
- संतुलित, विश्वसनीय एवं वैद्य प्रश्नपत्रों का निर्माण एवं मूल्यांकन कर सकेंगे।
- मूल्यांकन द्वारा विद्यार्थी के प्राप्तांको का विश्लेषण कर सकेंगे।

1.3 मूल्यांकन का अर्थ

मूल्यांकन दो शब्दों से मिलकर बनता है मूल्य + अंकन अर्थात् मूल्य आंकना। जब हम किसी वस्तु का मूल्य आंकते हैं तो हमारे सामने एक उद्देश्य होता है मूल्य का आंकना इस पर निर्भर है कि किसका मूल्य आंकना है, क्यों आंकना है, कैसे आंकना है और मूल्यांकन के पश्चात् क्या निर्णय लेना है। यदि कोई वस्तु खरीदनी है तो सबसे पहले हम सोचते हैं कि मुझे इस वस्तु का उपयोग किस लिए करना है। इसी प्रकार जब हम कोई विषयवस्तु पढ़ाते हैं तो हमारे शिक्षण के कुछ उद्देश्य होते हैं। कहानी और कविता को एक समान नहीं पढ़ाया जा सकता। दोनों के उद्देश्यों में अंतर है। वस्तुत: शिक्षण में सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य है – उद्देश्य निर्धारण। मूल्यांकन द्वारा ही यह पता लगाया जाता है कि शिक्षार्थी ने कहाँ तक इन उद्देश्यों की प्राप्ति में सफलता प्राप्त की है। ज्ञान, कौशल, अभिरुचि और अभिवृत्ति की दृष्टि से उसमें क्या प्रगति हुई है ? मूल्यांकन द्वारा ही बालकों की कठिनाइयों का पता लगता है कि वे किस दक्षता में कितने पिछड़े हुए हैं और उनके पिछड़ेपन के क्या कारण हैं। यह सब जानकर उनके सुधार के लिए हम सुधारात्मक शिक्षण का भी आयोजन कर सकते हैं। अत: शैक्षिक मूल्यांकन का अर्थ है – 'पाठ्यचर्चा के उद्देश्यों और मूल्यों की ओर छात्रों की प्रवृत्ति और प्रगति का आंकलन।'

1.3.1 परीक्षा और मूल्यांकन में अंतर

मूल्यांकन वस्तुत: केवल ज्ञानार्जन का मापन नहीं बल्कि यह तो एक प्रक्रिया है जिससे शिक्षा के उद्देश्य, शिक्षा का पाठ्यक्रम, शिक्षण पद्धति और शिक्षण प्रभाव का मापन करके यह पता लगाया जाता है कि वे सार्थक और व्यवहारिक है या नहीं। इन्हें प्राप्त करने में कितनी सफलता मिली, पूर्ण सफलता कितनी दूर है और पूर्ण सफलता पाने के लिए शिक्षण उद्देश्य, पाठ्यक्रम और पद्धतियों में क्या और कैसे सुधार किया जा सकता है ? इन सब सूचनाओं को जानकर आवश्यक निर्णय लेना ही मूल्यांकन हैं। इसीलिए मूल्यांकन को परीक्षा या मापन का पर्याय नहीं कह सकते। परीक्षा पाठ्यक्रम में निर्धारित पाठ्यवस्तु से

संबंधित अर्जित ज्ञान और योग्यता की जांच को कहते है। मूल्यांकन में पाठ्यक्रम से संबंधित समस्त शैक्षिक क्रियाओं तथा उपलब्धियों की जांच की जाती है।

कोठारी आयोग (1966) ने मूल्यांकन की इस संकल्पना को स्पष्ट करते हुए लिखा है – 'अब यह माना जाने लगा है कि मूल्यांकन एक अनवरत या सतत प्रक्रिया है। यह शिक्षा प्रणाली का एक अभिन्न अंग है और शिक्षण लक्ष्यों से घनिष्ठ रूप से संबंधित है।'

1.4 मूल्यांकन की आवश्यकता एवं महत्त्व

मूल्यांकन शिक्षण के उद्देश्यों से लेकर उसके परिणाम तक को प्रभावित करने वाली प्रक्रिया है। इससे शिक्षण को दिशाहीन होने से बचाया जा सकता है तथा शिक्षण विधियों को आवश्यकतानुसार परिमार्जित तथा परिवर्तित किया जा सकता है। मूल्यांकन से शिक्षक को शिक्षार्थियों के स्तर, उनकी ग्रहणशीलता का पता चलता है जिससे वह अपने शिक्षण रे विषयवस्तु, शिक्षण विधि तथा परीक्षण प्रकार में सुधार कर सकता है। मूल्यांकन की आवश्यकता न केवल शिक्षक अथवा प्रधानचार्य को ही है अपितु शिक्षार्थी, अभिभावक तथा शैक्षिक आयोजकों के लिए भी यह उतना ही महत्त्वपूर्ण है।

1.4.1 मूल्यांकन की आवश्यकता

- मूल्यांकन के बिना हिंदी भाषा के विभिन्न उद्देश्यों की संप्राप्ति के स्तर की जांच नहीं की जा सकती।
- पाठ्यक्रम की उपयुक्तता और उसमें अपेक्षित परिवर्तन के आधारों का अनुमान भी मूल्यांकन द्वारा ही लगाया जा सकता है।
- मूल्यांकन शिक्षण विघि भी है। विषयवस्तु को पढ़ाते समय मूल्यांकन द्वारा अधिगम की जांच करके ही अगले शिक्षण बिन्दु की ओर ध्यान दिया जा सकता है।
- शिक्षार्थियों के अधिगम में जो कमियां रह जाती हैं, उनका पता भी मूल्यांकन द्वारा ही चलता है।
- मूल्यांकन द्वारा ही छात्रों के व्यक्तित्व, अभिरुचि, अभिवृत्तियों आदि के निर्देशन के लिए निश्चित आधार प्राप्त होता है।

1.4.2 मूल्यांकन का महत्त्व

(क) मूल्यांकन का कार्यक्षेत्र बहुत विस्तृत है। यह केवल बालक के व्यक्तित्व विकास के संबंध में ही आवश्यक सूचनाएं उपलब्ध नहीं कराता बल्कि शिक्षा के उद्देश्यों, शिक्षण विधियों, परीक्षण, पाठ्यक्रम और पाठ्य पुस्तकों में भी आवश्यक परिवर्तन और सुधार के उपायों का संकेत देता है।

(ख) प्रत्येक शिक्षार्थी के सीखने की गति अलग-अलग होती है। मूल्यांकन उस गति का अध्ययन कर उसे अपनी गति के अनुसार सीखने की सुविधा प्रदान करता है। इसलिए मूल्यांकन एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है।

(ग) मूल्यांकन बालक के उपलब्धि स्तर में सुधार लाने की दिशा को निर्धारित करने में सहयोग करता है।

(घ) मूल्यांकन के द्वारा भाषा के सभी कौशलों में निपुणता का मापन किया जाता है। इसके साथ-साथ पाठ्य पुस्तक की विषयवस्तु के अध्यापन में स्मरण के अतिरिक्त चिंतन, तर्कशक्ति और सृजनात्मकता को भी प्रोत्साहित किया जाता है।

(च) मूल्यांकन शिक्षार्थी के संपूर्ण व्यक्तित्व के विकास को परीक्षण का आधार बनाता है अत: पाठ्य पुस्तक के साथ-साथ पाठ्य सहगामी क्रियाओं तथा अन्य परिस्थितियों की गुणवत्ता की भी जानकारी प्राप्त होती है।

(छ) मूल्यांकन संकल्पना के अंतर्गत यह विश्वास किया जाता है कि प्रत्येक छात्र अपने उपलब्धि स्तर में निरंतर वृद्धि कर सकता है। इसलिए निदानात्मक परीक्षणों द्वारा कमियों को ढूंढ कर उन्हें दूर करने के लिए उपचारात्मक शिक्षण की व्यवस्था की जाती है।

(ज) मूल्यांकन के प्राप्तांकों से छात्र, अभिभावक, प्रबंधक तथा अन्य सम्बन्ध व्यक्तियों को सार्थक और स्पष्ट संकेत मिलता है। विभिन्न श्रेणियों में विभाजित करने, प्रमाण-पत्र देने अथवा प्रवेश के लिए चयन करते समय इन प्राप्तांकों का विशेष महत्त्व है।

बोध प्रश्न :

1. निम्नलिखित कथनों को पढ़कर उन पर 'हाँ' या 'नहीं' का चिन्ह लगाएँ।

   (क) मूल्यांकन में पाठ्यक्रम की सार्थकता की जांच नहीं की जाती। हां/नहीं

   (ख) मूल्यांकन में पाठ्य सहगामी क्रियाओं की सार्थकता की जांच भी की जाती है। हां/नहीं

   (ग) मूल्यांकन में बच्चे द्वारा प्राप्त अंकों का अनेक प्रकार से उपयोग किया जाता है। हां/नहीं

2. परीक्षण और मूल्यांकन का अंतर स्पष्ट कीजिए। उत्तर चार पंक्तियों में लिखें।

   ....

   ....

   ....

   ....

3. 'मूल्यांकन एक सतत प्रक्रिया है'। चार पंक्तियों में स्पष्ट कीजिए।

   ....

   ....

   ....

   ....

1.5 उद्देश्य आधारित परीक्षण युक्तियाँ

उद्देश्य आधारित परीक्षण युक्तियों के विषय में विचार करने से पूर्व हमें यह प्रत्यास्मरण करना होगा कि हिंदी भाषा शिक्षण के उद्देश्य क्या है क्योंकि मूल्यांकन सदैव उद्देश्य के आधार पर किया जाता है।

भाषा शिक्षण के माध्यम से हम विद्यार्थी में जिन व्यवहारगत परिवर्तनों की अपेक्षा करते हैं उन्हें सांकेतिक रूप से नीचे दे रहे हैं :

प्रमुख व्यवहार परिवर्तन

- भाषाई कौशलों (सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना) में निपुणता।
- भाषा की शुद्ध प्रयोग।
- साहित्य शिक्षण से विकसित होने वाली योग्यताएं जैसे ज्ञान, बोध, मौखिक एवं लिखित प्रयोग, अभिव्यक्ति, विश्लेषण, सृजनात्मकता, सारलेखन, समीक्षा, व्याख्या आदि।
- सद्वृत्तियों का विकास।

1.5.1 मौखिक, लिखित एवं निदानात्मक परीक्षण

निर्धारित विषयस्तु संप्राप्ति की जांच के लिए परीक्षा का आयोजन किया जाता है। भाषा की परीक्षा दो प्रकार की होती है : लिखित और मौखिक।

(क) मौखिक परीक्षा

मौखिक परीक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य हैं :

- भाषाई कुशलताओं जैसे सुनना, बोलना और पढ़ना (सस्वर) की जाँच।
- किसी पाठ अथवा इकाई के अधिगम की गहराई से जांच।
- बच्चों द्वारा पूर्व पठित विषयवस्तु की थोड़े समय में पुनरावृत्ति।
- बच्चों की तार्किक तथा चिंतन शक्ति के विकास का ज्ञान।

मौखिक परीक्षा के अंतर्गत बहुत प्रकार के उद्देश्य आधारित प्रश्नों को पहले से बनाकर रख लेना चाहिए। ऐसा करने से मौखिक परीक्षा में प्रश्नों की आवृत्ति से बचा जा सकता है।

यदि सुविधा हो तो बच्चों के उत्तरों को टेपरेकार्ड करना अच्छा रहता है जिससे उन उत्तरों को पुनः छात्रों को

सुनवा कर भाषागत त्रुटियों का निराकरण किया जा सके। वैसे भी अपने उत्तरों को पुनः सुनकर बहुत उत्साहित और प्रेरित होते हैं, विशेष रूप से कहानी सुनाने अथवा कविता वाचन में मौखिक परीक्षा शिक्षण–प्रक्रिया का भी एक अंग बन जाती है।

मौखिक परीक्षा के प्रयोग में अनेक कठिनाइयां भी हैं। एक तो इस प्रकार के मूल्यांकन में व्यक्तिनिष्ठता की संभावना अधिक रहती है। दूसरे मौखिक परक्षा व्यक्तिगत ढंग से ली जाने के कारण इसमें समय अधिक लगता है। अतः सार्वजनिक परीक्षा में इसका उपयोग कठिन होता है। किन्तु विद्यालय में शिक्षक द्वारा ली जाने वाली परीक्षाओं में मौखिक परीक्षा को अवश्य स्थान मिलना चाहिए।

(ख) लिखित परीक्षा

लिखित परीक्षा द्वारा भाषा के तत्त्व, विषयवस्तु तथा साहित्य के विविध रूपों के ज्ञान की जांच की जा सकती है। पढ़कर अर्थग्रहण तथा लिखकर अभिव्यक्ति करने की योग्यता के मूल्यांकन के लिए भी यह विधि सर्वोत्तम है। लिखित परीक्षा के लोकप्रिय होने का प्रमुख कारण है; इसके द्वारा लाखों शिक्षार्थी एक ही समय में प्रश्न पत्र का उत्तर लिख सकते हैं तथा परीक्षक गण बाद में सुविधानुसार उनकी जांच कर सकते हैं।

(ग) निदानात्मक परिक्षण

निदानात्मक परीक्षण द्वारा बच्चे के अध्ययन में आने वाली कठिनाईयों की जांच की जाती है। मान लीजिए बच्चा वाक्य रचना में कर्म का प्रयोग करने में अशुद्धि करता है तो निदानात्मक प्रश्नों द्वारा यह जांच की जाती है कि वह किस प्रकार के वाक्यों में कर्म का अशुद्ध प्रयोग करता है। इसी प्रकार भाषा तथा साहित्य के अधिगम से संबंधित अन्य प्रकार की कमियों का पता निदानात्मक परीक्षण से लगाया जा सकता है। इसी आधार पर उपचारात्मक शिक्षण की योजना की जाती है।

(घ) शिक्षक निर्मित परीक्षण

शिक्षक निर्मित परीक्षण वे परीक्षण होते हैं जिनके प्रश्न पत्रों का निर्माण शिक्षकों द्वारा किया जाता है। इनका उपयोग किसी विशिष्ट पाठ, इकाई या प्रकरण के अधिगम की जांच हेतु शिक्षक समय–समय पर करता रहता है।

1.5.2 प्रश्नपत्र की विशेषताएं

एक अच्छी परीक्षा में निम्नलिखित गुण होते है :

(क) वैधता : जब किसी परीक्षा द्वारा उसी दक्षता की जांच होती है जिसके लिए उसे आयोजित किया गया है तो उस परीक्षा को वैध कहा जाता है। उदाहरण के लिए यदि हम किसी भाषा कौशल की जांच करना चाहते हैं तो प्रश्न ऐसे हों जो उसी भाषा कौशल की जांच करें न कि ज्ञान या अभिरुचि की। वैधता का आधार स्पष्ट एवं सुनिश्चित उद्देश्य पर आधारित प्रश्न हैं। रिक्त स्थान पूर्ति के प्रश्नों से बालक की लिखित अभिव्यक्ति की जांच नहीं हो सकती। उदाहरण के लिए 'रामचरित मानस के लेखक का नाम लिखिए।' यह प्रश्न बच्चे की चिंतन शक्ति की जांच न करके स्मरण शक्ति की जांच करने के लिए ही प्रामाणिक माना जा सकता है।

(ख) विश्वसनीयता : विश्वसवनीयता से अभिप्राय है कि यदि एक जांच पत्र कई बार उत्तर के लिए दिया जाए तो भी उसके परिणामों में एकरूपता बनी रहे। जिस परीक्षा में जिस हद तक मापन संबंधी एकरूपता बनी रहती है, वह परीक्षा उसी हद तक विश्वसनीय मानी जाती हैं।

(ग) वस्तुनिष्ठता : प्रश्नों की रचना ऐसी हो जिसके मूल्यांकन में विभिन्न परीक्षकों द्वारा देखे जाने पर भी एक ही परिणाम प्राप्त हो और व्यक्ति का निजी दृष्टिकोण उत्तर की जांच को प्रभावित न करने पाए। निबंधात्मक प्रश्न प्रायः इसी दोष से युक्त होते है। अतः ऐसे प्रश्न होने चाहिए कि सभी विद्यार्थी उनसे एक ही अर्थ समझें और एक ही प्रकार के उत्तर लिखें।

(घ) विभेदीकरण : प्रश्नपत्र ऐसा होना चाहिए कि छात्रों को तेज, सामान्य और कमजोर रूप में वर्गीकृत कर सके। इसलिए परीक्षा या प्रश्नपत्र में सरल, सामान्य और कठिन प्रश्नों का समावेश होना चाहिए।

(च) व्यापकता : परीक्षा या प्रश्नपत्र में निम्नलिखित दृष्टिकोणों से व्यापकता होनी चाहिए :

(i) विषयवस्तु

प्रत्येक प्रश्नपत्र विषय संबंधित पाठ सामग्री पर आधारित करके बनाया जाता है । यह विषयवस्तु विभिन्न पाठों, व्याकरण तथा भाषा कौशल आदि के रूप में हो सकती है । प्रत्येक विषयवस्तु के अंतर्गत तथ्य, घटनाएं और समस्याएं होती हैं, सिद्धांत या नियम तथा अवधारणाएं होती हैं । प्रश्नपत्र में विषयवस्तु के प्रत्येक पक्ष पर प्रश्नों का समावेश करने का प्रयत्न करना चाहिए ।

(ii) योग्यता मापक उद्देश्य

- कुछ प्रश्न केवल स्मरण की परीक्षा करते है जैसे सूरदास ने किस ग्रन्थ की रचना की ?
- कुछ प्रश्नों द्वारा हम यह देखना चाहते हैं कि छात्र ने विषय को समझा है या नहीं । जैसे निम्नलिखित वाक्य में विशेषण और क्रिया विशेषण को रेखांकित कीजिए :

  'वह काला घोड़ा बहुत तेज दौड़ता है ।'
- कई बार हम यह परखना चाहते हैं कि छात्र सीखे हुए ज्ञान को अपरिचित परिस्थितियों में भी प्रयोग कर सकता है या नहीं । पढ़े हुए अनुच्छेद का विभिन्न आधारों पर विश्लेषण कर सकता है या नहीं अथवा दिए गए अनुच्छेद का सारांश कर पाता है या नहीं । दो अवधारणाओं में समानताएं अथवा विषमताएं खोजने की शक्ति छात्रों में है या नहीं । अत: प्रश्नपत्र में इन समानताएं अथवा विषमताएं खोजने की शक्ति छात्रों में है या नहीं । अत: प्रश्नपत्र में इन सभी योग्यताओं की जांच करने की क्षमता होनी चाहिए ।
- प्रश्न का उत्तर कितना लम्बा होगा इस आधार पर निबंधात्मक, लघूत्तर तथा अतिलघूत्तर प्रकार के प्रश्न बनाए जाते हैं किससे पूरे पाठ्यक्रम के महत्त्वपूर्ण अंगों के अधिगम की जांच की जा सके ।

(छ) व्यावहारिकता : प्रश्नपत्र इस प्रकार बनाए जाने चाहिए कि विद्यालय के सीमित समय और सुविधाओं में सरलता से उपयोग में लाए जा सकें। समय, शक्ति, श्रम, व्यय और व्यवस्था की दृष्टि से सरलतापूर्वक परीक्षा की जा सके । प्रश्नों की भाषा सरल और स्पष्ट होनी चाहिए जिससे छात्र प्रश्नकर्ता के उद्देश्य को समझ सकें ।

1.5.3 मानदण्ड आधारित परीक्षण

लिखित परीक्षा का एक रूप मानदण्ड आधारित परीक्षा भी है जिसमें एक निर्धारित मानदण्ड के आधार पर बच्चों की क्षमता को मापा जा सकता है । इस परीक्षा में यह परखा जाता है कि एक निर्धारित दक्षता में छात्रों ने किस सीमा तक निपुणता प्राप्त की है । उदाहरण के लिए 'समास' की अवधारणा की जांच को ही लें । इसके लिए ऐसा निदानात्मक परीक्षण आयोजित किया जाता है जिससे इस अवधारणा के समस्त अंगों और उपांगों के ज्ञान, समझ और प्रयोग में कहाँ तक निपुणता प्राप्त की है और यदि कमी है तो वह किस अंश की समझ और प्रयोग से संबंधित है, आदि की जांच की जा सके ।

बोध प्रश्न :

4. निम्नलिखित कथनों को पढ़कर 'हाँ' या 'नहीं' में उत्तर दें ।

(क) वस्तुनिष्ठ परीक्षणों की विश्वसनीयता निबंधात्मक परीक्षणों की अपेक्षा अधिक होती है । हां/नहीं

(ख) अभिव्यक्ति क्षमता का मूल्यांकन वस्तुनिष्ठ परीक्षणों द्वारा किया जा सकता । हां/नहीं

(ग) वैध प्रश्न वह है जो उसी गुण की जांच करता है जिसके लिए उसे बनाया गया है । हां/नहीं

(घ) सभी वस्तुनिष्ठ प्रश्न उद्देश्य आधारित नहीं होते । हां/नहीं

1.6 परीक्षणेतर मूल्यांकन युक्तियाँ

शिक्षार्थी के विषयगत के अतिरिक्त कुछ व्यवहार ऐसे होते हैं जिनको हम मौखिक अथवा लिखित परीक्षा द्वारा नहीं जांच सकते । ये व्यवहार हैं — सद्वृत्तियों का विकास, घाराप्रवाह भाषण, सस्वर पाठ, अभिनय, वादविवाद, नैतिक मूल्य आदि । इन उद्देश्यों की पूर्ति की जांच ले लिए निम्न युक्तियों का प्रयोग किया जाता है ।

1.6.1 प्रेक्षण, जाँच सूची, निर्धारण मापनी, उपाख्यानक आलेख

(क) प्रेक्षण

प्रेक्षण के अंतर्गत जो कुछ देखा जाता है उसकी भली प्रकार योजना बनाकर मानदण्ड निर्धारित किए जाते है। यह भी प्रयत्न किया जाता है कि प्रेक्षण यथासंभव निष्पक्ष रूप से किया जाए। प्रेक्षण में भी विश्वसनीयता, वैधता आदि गुण होने चाहिए। विविध नैतिक गुणों के प्रेक्षण के लिए यह भी आवश्यक है कि छात्रों को ऐसी परिस्थितियों प्रदान की जाएं जिनमें उन गुणों की भली प्रकार निष्पक्ष जांच हो सके। विभिन्न कौशल जैसे पढ़ना, सुनना, बोलना, अभिनय, आदि इसी तकनीक द्वारा मापे जा सकते हैं।

प्रेक्षण को विश्वसनीय बनाने के लिए आवश्यक है कि :

– नियमित अंतराल के बाद बार-बार प्रेक्षण किया जाए।

– एक से अधिक परीक्षकों द्वारा प्रेक्षण किया जाए और उनके परिणामों का योग करके औसत अंक निकाले जाएं।

– प्रेक्षण बिल्कुल सामान्य और तनावमुक्त स्वाभाविक परिस्थितियों में किया जाना चाहिए।

प्रेक्षण के अन्तर्गत सूचनाएं एकत्रित करने के लिए जांच सूची, निर्धारण मापनी तथा उपाख्यानक आलेख का उपयोग किया जा सकता है।

(ख) जांच सूची

मान लीजिए आप अपने विद्यालय के भाषा शिक्षण कार्यक्रम का मूल्यांकन करना चाहते हैं। इस कार्यक्रम के विविध उपांग हो सकते हैं जैसे पाठ्यक्रम, शिक्षण विधियां, विभिन्न पाठ्य-सहगामी क्रियाएं जैसे सदन व्यवस्था, प्रार्थना सभा, भाषा शिक्षण विषयक उपकरण तथा अन्य सुविधाएं, विद्यालय की सजावट, भित्ति पत्रिका, छात्र निर्मित समाचार पत्र, विद्यालय का सांस्कृतिक वातावरण आदि। इन सब बिन्दुओं पर आप जांच सूची में अलग-अलग प्रश्न बनाकर कार्यक्रम की जांच कर सकते हैं। उदाहरण के लिए निम्नलिखित प्रश्नों को देखिए :

– क्या प्रार्थना सभा समय पर प्रारंभ होती है ? हां/नहीं

– क्या प्रार्थना सभा में छात्रों द्वारा भाषण दिए जाते है ? हां/नहीं

– क्या प्रार्थना सभा में प्रतिदिन एक ही प्रार्थना की जाती है ? हां/नहीं

छात्रों की स्वाध्याय वृत्ति को जांचने के लिए भी जांच सूची बनाई जा सकी है। जैसे

– क्या मैं मौन वाचन करते समय होठों को हिलाता / हिलाती हूँ ? हां/नहीं

– क्या मुझे मौन वाचन के बाद अर्थ समझ में आ जाता है ? हां/नहीं

(ग) निर्धारण मापनी

निर्धारण मापनी में कुछ विशेषताओं की सूची होती है जिनमें प्रत्येक के सामने कुछ विवरण अथवा अंक अथवा विशेषण दिए होते हैं। निर्धारक को अपने ज्ञान के आधार पर अपेक्षित व्यक्ति के विषय में उल्लिखित निर्धारण अनुक्रियाओं में से एक पर निशान लगाना होता है। निर्धारण मापनी 3 बिन्दु / 5 बिन्दु / 7 बिन्दु तक व्यवहारिकता के आधार पर निश्चित की जा सकती है। उदाहरण के लिए निबंधात्मक प्रश्नों के उत्तरों को 7 बिन्दु मापनी के आधार पर अत्युत्तम, उत्तम, अच्छा, साधारण, सन्तोषजनक, असंतोषजनक, निकृष्ट की सात श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है। प्राय: शिक्षक पांच बिन्दु मापनी को ही प्रयोग में लाते हैं।

(घ) संचयी आलेख

यह प्रेक्षण तकनीक द्वारा प्राप्त सूचनाओं के आलेख रखने का एक और साधन है। इन आलेखों के द्वारा बालक के जीवन में घटित महत्त्वपूर्ण घटनाओं का वर्णन लिखित रूप से तैयार किया जाता है और इसी के आधार पर बालक के व्यक्तित्त्व के विषय में जानकारी प्राप्त की जाती है। अत: संचयी आलेख बालक के व्यवहार से संबंधित किसी घटना अथवा उसके आचरण के किसी महत्त्वपूर्ण पक्ष को उजागर करने वाले किसी घटना अथवा विवरण के आलेख को कहते

है जैसे गणतन्त्र दिवस पर राष्ट्रपति द्वारा विशेष वीरता एवं साहस के कार्यों का प्रदर्शन करने वाले बालकों को सम्मानित करते समय विस्तृत उपाख्यानपरक आलेख पढ़कर सुनाए जाते हैं। घटनाओं के क्रमिक वृत्तान्त को संचयी आलेख में निबद्ध कर बालक के व्यक्तित्व का मूल्यांकन किया जाता है।

1.6.2 जांच-पड़ताल युक्ति, प्रश्नावली एवं साक्षात्कार

(क) जांच पड़ताल युक्ति

इसके माध्यम से शिक्षक बालक के व्यक्तित्व के विषय में स्वयं उसी बालक के द्वारा अथवा अन्य साथी बालकों के द्वारा पूछताछ करके अधिक वस्तुनिष्ठता और व्यवस्थित रूप से जानकारी प्राप्त करता है।

(ख) प्रश्नावली

प्रश्नावली एक प्रकार की स्वनिर्धारण मापनी ही है। व्यक्ति विभिन्न प्रश्नों के माध्यम से यह निर्धारित करता है कि जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में वह किस प्रकार का व्यवहार करेगा। इसका उपयोग पाठ्य पुस्तक की उपयोगिता, अथवा पाठ्यक्रम की समीक्षा आदि के लिए भी सरलता से किया जा सकता है। प्रश्नावली के आधार पर शिक्षण विधियों की उपयोगिता / प्रभाविता की जांच की जा सकती है।

(ग) साक्षात्कार

साक्षात्कार प्रश्नकर्ता एवं प्रश्नों के उत्तर देने वाले के बीच ऐसा संवाद है जिसमें प्रश्नकर्ता उत्तर देने वाले के व्यक्तित्त्व के किसी पक्ष का प्रश्नों के माध्यम से मूल्यांकन करने की चेष्टा करता है। एक अच्छे साक्षात्कार के लिए इन तीन बातों का ध्यान रखना आवश्यक है :

— समुचित समय निर्धारण

— स्वाभाविक वातावरण

— प्रश्नों की पर्याप्त समायोजना

'साक्षात्कार' का उपयोग ऐसे बच्चों के व्यवहार को मापने के लिए भी उपयोगी है जो पढ़ना-लिखना नहीं जानते अथवा जिन बच्चों का व्यक्तिगत अथवा सामाजिक समायोजन नहीं हो पाता। असामान्य बच्चों की अध्ययन विषयक कठिनाइयों को जानकर इस युक्ति से उन्हे अभिप्रेरित किया जा सकता है।

बोध प्रश्न :

5. बालक के जीवन में घटित महत्त्वपूर्ण घटनाओं के विवरण को क्या कहते हैं ?

....

....

....

6. 'प्रेक्षण' युक्ति के अंतर्गत सूचनाएं प्राप्त करने के लिए किन साधनों का प्रयोग किया जाता है ?

....

....

....

7. एक अच्छे परीक्षण में कौन-कौन से गुण होने चाहिए ? तीन पंक्तियों में लिखें।

....

....

....

1.7 प्रश्नों के प्रकार

प्रश्न के बिना परीक्षा नहीं ली जा सकती। प्रश्न के बिना कक्षा में पढ़ाते समय अंत:क्रिया भी संभव नहीं है। प्रश्न का प्रकार उसके संदर्भ और उसकी रचना पर निर्भर है। जिस प्रकार एक जीवित मनुष्य में शरीर और आत्मा दोनों का महत्त्व है, उसी प्रकार प्रश्न की विषयवस्तु और उसकी भाषा दोनों ही महत्त्वपूर्ण हैं।

1.7.1 विषयवस्तु के आधार पर

प्रश्न किसी न किसी विषयवस्तु पर आधारित होते हैं। विषयवस्तु को हम मुख्य रूप से निम्नलिखित श्रेणियों में विभाजित कर सकते हैं –

(क) तथ्य एवं घटनाएं

(ख) सिद्धांत एवं अवधारणाएं

(ग) सृजनात्मकता एवं अभिव्यक्ति

अब आप इन तीनों श्रेणियों के स्वरूप को समझने के लिए निम्नलिखित गतिविधि सम्पन्न करें :

गतिविधि–1

निम्नलिखित प्रश्नों के सामने विषयवस्तु के आधार पर उनकी श्रेणी संख्या लिखिए –

जैसे – सूर्य किस देशा से निकलता है ? (ख)

1. भारत कब स्वतंत्र हुआ ? ( )
2. सिद्ध कीजिए के त्रिकोण के सभी कोणों का योग 180 होता है ? ( )
3. संधि और समास में अंतर स्पष्ट कीजिए ? ( )
4. अपने मोहल्ले के हलवाई के चरित्र की विशेषताओं का वर्णन कीजिए। ( )
5. नदी की आत्मकथा लिखिए। ( )

1.7.2 योग्यता मापन के आधार पर

प्रश्नों के द्वारा छात्र की स्मरण शक्ति, समझ, प्रयोग करने की शक्ति, विश्लेषण, संश्लेषण और तुलना, समीक्षा आदि की योग्यताओं की भी जांच की जा सकती है। मौटे तौर पर इन योग्यताओं के आधार पर हम प्रश्नों को तीन वर्गों में विभाजित कर सकते हैं। ये वर्ग इस प्रकार हैं :

(क) ज्ञान (1) प्रत्यास्मरण अर्थात् कंठस्थ या पूर्वज्ञात सामग्री प्रस्तुत करना।
(2) प्रत्यभिज्ञान अर्थात् सही उत्तर को पहचानना।

(ख) बोध विभिन्न सिद्धांतों, अवधारणाओं, तथ्यों और घटनाओं की प्रकृति, क्रम, सामाजिक वातावरण आदि की समझ।

(ग) प्रयोग प्राप्त ज्ञान का नवीन परिस्थितियों में प्रयोग, सृजनात्मकता, मौलिक लेखन, दिए गए कथनों का विश्लेषण, संक्षेपण, शीर्षक देना, तुलनात्मक अध्ययन आदि।

प्रश्नों के इन तीन वर्गों के विभाजन को हम निम्नलिखित गतिविधि से समझ सकते हैं –

गतिविधि–2

निम्नलिखित प्रश्नों को उपर्युक्त श्रेणियों में विभाजित कीजिए और कोष्टक में प्रश्न की प्रकृति के अनुसार ज्ञान, बोध या प्रयोग लिखिए।

(क) संज्ञा की परिभाषा लिखिए। ( )

(ख) ऐसा शब्द लिखिए जो सर्वनाम तथा सार्वनामिक विशेषण दोनों रूपों में प्रयोग किया जाता हो। ( )

(ग) 'एक बार हमने दूर से देखा कि सामने पहाड़ो पर जंगल में आग लगी हुई है।' इससे प्रभावित वातावरण का वर्णन 100 शब्दों में लिखिए। ( )

1.7.3 उत्तर सीमा के आधार पर

प्रश्नों को निम्नलिखित तीन श्रेणियों में विभाजित किया जाता है।

प्रश्न	उत्तर सीमा	
	निबंधात्मक	60 शब्दों से अधिक
	लघूत्तर	एक वाक्य से 60 शब्दों तक
	अतिलघूत्तर	एक शब्द से एक वाक्य तक

निबंधात्मक प्रश्न

परीक्षा के लिए बनाए गए अधिकतर प्रश्नपत्रों में निबंधात्मक प्रश्न ही होते हैं। ये प्रश्न प्राय: बहुत से दोषों से ग्रस्त होते हैं। उदाहरण के लिए निम्नलिखित प्रश्नों को देखिए :

(क) तुलसी की भाषा शैली की विशेषताएं लिखिए।

(ख) 'साहित्य की महत्ता' पाठ के आधार पर मानव जीवन में साहित्य के महत्त्व की व्याख्या कीजिए।

(ग) संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए —

भक्ति काव्य, वीर गाथा काल, भारतेंदु हरिश्चन्द्र

इन प्रश्नों के उत्तर का क्षेत्र अत्यंत विस्तृत होने के कारण छात्र यह नहीं समझ पाता कि उसे कितना और क्या लिखना है ? प्रत्येक छात्र अपने-अपने दृष्टिकोण और ज्ञान के आधार पर उत्तर लिखने के लिए स्वतंत्र है। इसी प्रकार जांचने वाला परीक्षक भी लिखे हुए उत्तर को अपने ज्ञान की कसौटी पर परखने के लिए स्वतंत्र है। अत: ऐसे प्रश्नों के उत्तरों की जांच में व्यक्तिनिष्ठता तो आयेगी ही, इन प्रश्नों में विश्वसनीयता, वैधता तथा विभेदीकरण आदि सभी गुणों का अभाव देखा जा सकता है।

निबंधात्मक प्रश्नों के इन दोषों के रहते हुए भी हम भाषा की परीक्षा में इनकी अवहेलना नहीं कर सकते क्योंकि जहाँ एक ओर प्रश्नों में दोष होते हैं वहाँ कुछ गुण भी हैं। अत: दोषों को सुधार कर हम इन प्रश्नों की गुणवत्ता में वृद्धि कर सकते हैं।

निबंधात्मक प्रश्नों के लाभ

(क) विशिष्ट सूचनाओं का प्रत्यास्मरण

(ख) तुलनात्मक अध्ययन की योग्यता

(ग) सम्बन्ध स्थापित करने की योग्यता

(घ) समस्या समाधान एवं सृजनशीलता

(च) लेखन कौशल

(छ) व्याख्या समीक्षा आदि की योग्यता

उपर्युक्त योग्यताओं की जांच के लिए निबंधात्मक प्रश्नों का उपयोग आवश्यक है। अत: हमें यह जानना चाहिए कि एक अच्छे निबंधात्मक प्रश्न की रचना में कौन कौन सी सावधानियां बरतनी आवश्यक है।

सावधानियाँ

— निबंधात्मक प्रश्न की रचना में आप क्या जानते हैं ? आपका क्या अभिप्राय है ? संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए आदि बहु-आयामी वाक्यों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

— प्रश्न के उत्तर की सीमा निश्चित करनी चाहिए जैसे 100 शब्द, 150 शब्द, 200 शब्द आदि।

— प्रश्न के छोटे-छोटे दो या तीन खण्डों में विभाजित करना चाहिए जैसे :

साहित्य की परिभाषा देकर उदाहरण सहित लगभग 200 शब्दों में स्पष्ट कीजिए कि साहित्य सामाजिक कुरीतियों और विकृत धार्मिक प्रथाओं के विरुद्ध विद्रोह का भाव जगाने में बहुत सहायक रहा है।

10 अंक

इस प्रश्न में प्रमुख बिन्दुओं के आधार पर अंक निर्धारित किए जा सकते हैं जैसे :

बिन्दु	अंक
— साहित्य की परिभाषा	2
— साहित्य का सामाजिक कुरीतियों को दूर करने में योगदान	1
— उदाहरण	3
— साहित्य का विकृत धार्मिक प्रथाओं के विरुद्ध विद्रोह	1
— उदाहरण	3

लघूत्तर प्रश्न

लघूत्तर प्रश्न वे प्रश्न होते हैं जिनके उत्तर की सीमा एक वाक्य (अधिकतम 10 शब्द) से लेकर पांच-छः वाक्य (50-60 शब्द) तक सीमित होती है। इस प्रकार यह प्रश्न ऐसे होते हैं जिनके उत्तर लिखने में 5 मिनट से अधिक समय न लगे। इन प्रश्नों का समावेश करके हम पाठ्यवस्तु के अधिक से अधिक अंश की जांच कर सकते हैं। इन प्रश्नों के निम्नलिखित लाभ हैं :

- छात्रों में असंगत उत्तर लिखने की आदत को कम किया जा सकता है।
- इन प्रश्नों में काफी हद तक वस्तुनिष्ठता पाई जाती है।
- इनके उत्तर प्रायः निश्चित होते हैं और इनके अंकन में विश्वसनीयता रहती हैं।
- विद्यार्थियों का सरलता से विभेदीकरण किया जा सकता है।
- अधिगम की जांच अधिक गहराई से की जा सकती है।
- अधिगम के अंतराल को आसानी से पहचाना जा सकता है।
- निदानात्मक परीक्षण के लिए बहुत उपयोगी है।

उदाहरण :

अधिकतम 50 शब्दों में उत्तर दें —

(क) उदात्त भावनाओं के निर्माण के आधार पर साहित्य की समाज को देन का एक उदाहरण दीजिए।

(ख) निम्नलिखित तीन शब्दों को एक सरल वाक्य में प्रयोग कीजिए —

तीर्थयात्रा, विश्वास, महत्त्व

अतिलघूत्तर तथा वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्रश्नपत्र की व्यापकता को बढ़ाने के लिए तथा अंकन में शत-प्रतिशत विश्वसनीयता लाने के लिए इन प्रश्नों का निर्माण किया जाता है। देखने में ये प्रश्न जितने सरल दिखाई देते हैं, इनके निर्माण में उतने ही अधिक परिश्रम और सावधानी की आवश्यता होती है जिससे ये प्रश्न तर्क, चिंतन, तुलना, कार्यकारण संबंध आदि मानसिक योग्यताओं का द्योतन कर सकें। इन प्रश्नों की विषयवस्तु, तथ्य, घटना, अवधारणा आदि किसी भी प्रकार की हो सकती है। इमकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इनमें एक ही अंकनीय बिन्दु होता है। वस्तुनिष्ठ अथवा अतिलघूत्तर प्रश्नों की संख्या अधिक रखी जाती है क्योंकि इनका उत्तर समय एक मिनट से अधिक नहीं होता।

अतिलघूत्तर और वस्तुनिष्ठ प्रश्नों में अंतर

अतिलघूत्तर प्रश्नों के उत्तर की सीमा एक शब्द से एक वाक्य तक हो सकती है जबकि वस्तुनिष्ठ प्रश्नों की उत्तर सीमा एक चिह्न से एक शब्द तक सीमित है। वस्तुनिष्ठ प्रश्न अभाषिक भी होते हैं जबकि अतिलघूत्तर प्रश्नों में अभाषिक प्रश्नों का समावेश नहीं किया जाता।

अतिलघूत्तर तथा वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के उदाहरण

(क) रिक्त स्थान पूर्ति

(i) अतिलघूत्तर : भारत के प्रथम राष्ट्रपति का नाम लिखिए ? ....

(ii) वस्तुनिष्ठ : जय जवान जय किसान का नारा .... ने दिया था।

(i) डॉ. राजेन्द्र प्रसाद (ii) लाल बहादुर शास्त्री

(iii) निम्नलिखित अनुच्छेद को दिए गए शब्दों की सहायता से पूरा कीजिए :

पांडे चारपाई पर घायल .... की तरह तड़पते हुए बुदबुदाये। उनकी छाती से सरक कर रामायण का गुटका .... पर गिरा पड़ा। कुलदीप .... की तरह जंगल में भटकता फिरा। (जमीन, सर्प, पागल)

(ख) शुद्ध-अशुद्ध कथन की पहचान

इस प्रकार के प्रश्नों में शुद्ध/अशुद्ध, हां/नहीं, सत्य/असत्य आदि दो-दो विकल्प प्रत्येक कथन के सामने दिए जाते हैं जिनको पढ़कर परीक्षार्थी अपना निर्णय करके निशान लगाता है।

ध्यान रहे कि कथन समूह में प्रायः 50 प्रतिशत कथन शुद्ध और शेष अशुद्ध होने चाहिए। ऐसे प्रश्नों की संख्या 10 प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए। यदि त्रुटिपूर्ण उत्तरों को ऋणात्मक अंक दिए जाएँ तो परीक्षार्थी मात्र अनुमान के आधार पर अंक प्राप्त नहीं कर सकता।

उदाहरण :

- मेरे से यह कार्य नहीं होता। (वाक्य विन्यास) शुद्ध/अशुद्ध
- उसका भविष्य उज्जवल है। (वर्तनी) शुद्ध/अशुद्ध

(ग) मिलान पद

'क' खण्ड के विशेषणों का 'ख' खण्ड के विशेष्यों से मिलान कीजिए और कोष्टक में विशेष्य की क्रम संख्या लिखिए। संख्या 1 का उत्तर उदाहरण के रूप में लिख दिया गया है।

	क	ख	कोष्टक
1.	घमासान	पंडित	(3)
2.	घनघोर	लपटें	( )
3.	सूचीभेद्य	युद्ध	( )
4.	तीक्ष्ण	घटा	( )
5.	प्रकाण्ड	धार	( )
6.	प्रचण्ड	अंधकार	( )

(घ) विभेदीकरण

भिन्न शब्द को रेखांकित करना जैसे, निम्नलिखित प्रश्नों में दिए गए अनेक शब्दों में से भिन्न शब्द को रेखांकित कीजिए :

i) ने, को, से, तुम, पर

ii) पतंगा, बुलबुल, कौआ, तोता, मैना

iii) आम, केला, संतरा, पालक, अनार

(च) बहुविकल्पी

इन प्रश्नों के निर्माण में बहुत सूझबूझ का परिचय अपेक्षित होता है क्योंकि प्रश्न के चार-पांच विकल्पों में एक ही शुद्ध उत्तर होता है। शेष तीन या चार विकल्प यद्यपि शुद्ध नहीं होते परन्तु पूर्ण रूप से अशुद्ध भी न होकर भ्रागक होते हैं और आंशिक रूप से शुद्ध होते हैं। ये प्रश्न रूप में भी होते हैं और अपूर्ण कथन के रूप में भी पूछे जा सकते हैं जैसे :

निर्देश : कविता को पढ़कर पूछे गए प्रश्नों के सही उत्तर को रेखांकित करें –

कलकल स्वर में गाती रहती, गिर गिर कर उठकर फिर चलती, प्रतिदिन, प्रतिपल, जीवन पथ में, बढ़ती रहती है जलधारा।

इस कविता का वर्ण्य विषय है :-

(क) जलधारा (ख) मानव जीवन

(ग) नायिका (घ) प्रकृति वर्णन

इस कविता में अलंकार है :-

(क) उपमा (ख) श्लेष

(ग) यमक (घ) रूपक

बोध प्रश्न :

8. निम्नलिखित कथनों को पढ़कर उन पर 'हां' या 'नहीं' का चिह्न लगाएँ।

(क) लिखित अभिव्यक्ति की जांच निबंधात्मक प्रश्नों से की जाती है। हां/नहीं

(ख) वस्तुनिष्ठ प्रश्नों में विश्वसनीयता नहीं होती। हां/नहीं

9. एक अच्छे प्रश्न की पाँच विशेषताएं लिखें।

....

....

....

....

....

....

10. वस्तुनिष्ठ प्रश्नों की उत्तर सीमा कितनी होती है ? दो पंक्तियों में लिखें।

....

....

....

11. लघूत्तर प्रश्न के उत्तर की क्या सीमा होनी चाहिए ? दो पंक्तियों में लिखें।

....

....

....

1.8 प्रश्नपत्र की रचना

प्रश्नपत्र प्रश्नों का समूह मात्र नहीं है। प्रश्नपत्र में समुचित संतुलन होना आवश्यक है प्रश्नपत्र में समुचित संतुलन लाने के लिए निम्नलिखित बातों पर ध्यान दीजिए :

1.8.1 प्रश्नपत्र का संतुलन

(क) विषयवस्तु के आधार पर संतुलन

प्रत्येक प्रश्न विषयवस्तु के किसी न किसी पक्ष की जांच करने के लिए बनाया जाता है। प्रश्नपत्र में विषयवस्तु के विभिन्न पक्षों को समुचित अनुपात में मापना चाहिए। उदाहरण के लिए :

— तथ्य तथा घटनाएं	30%	(विषयवस्तु)
— सिद्धांत तथा अवधारणाएं	30%	(भाषा, व्याकरण)
— सार लेखन, विश्लेषण	20%	(समीक्षा, विवेचना)
— सृजनात्मक लेखन	20%	(मौलिकता)

यह अनुपात विभिन्न परीक्षा समितियों द्वारा पाठ्यक्रम बनाते समय निर्धारित किया जाता है। प्रश्नपत्र बनाते समय इन्हें ध्यान में रखना चाहिए।

(ख) उद्देश्यों पर आधारित विभिन्न योग्यताओं का अनुपात

हमने प्रश्नों के प्रकार पर विचार करते हुए सीखा है कि प्रश्नों को ज्ञान (स्मरण), बोध (समझ) तथा प्रयोग, (विश्लेषण, संश्लेषण, सार लेखन, समीक्षा, सृजनात्मक लेखन) की तीन श्रेणियों में विभाजित किया जाता है। कभी-कभी 'कौशल' को भी प्रश्नपत्र में चौथे अंग के रूप में स्वीकार कर लिया जाता है। इन योग्यताओं का अनुपात विभिन्न स्तरों पर एक समान नहीं होता। माध्यमिक कक्षाओं में स्वतंत्र अभिव्यक्ति एवं समीक्षा पर अधिक बल दिया जाता है परंतु प्राथमिक स्तर पर भाषिक कौशलों को अधिक महत्त्व दिया जाता है। अत: योग्यताओं का अनुपात आयु स्तर और कक्षा स्तर को ध्यान में रखकर ही निर्धारित करना उचित होगा। प्रश्नपत्र में सामान्य रूप से स्मरणात्मक प्रश्नों को 15-20%, बोधगम्य प्रश्नों को 60-70% तथा प्रयोग और सृजनात्मक लेखन को 15-20% प्रतिभार दिया जाता है।

इसी प्रकार निबंधात्मक, लघूत्तर और अतिलघूत्तर तथा वस्तुनिष्ठ प्रकार के प्रश्नों के आधार पर तथा सरल, सामान्य तथा कठिन स्तर के आधार पर भी अनुपात निर्धारित किए जा सकते हैं। वस्तुत: पाठ्यचर्चा के अधिकाधिक अंशों पर प्रश्न पूछने का प्रयास करना चाहिए।

(ग) अन्य ध्यान देने योग्य बातें

- प्रश्नपत्र के प्रारंभ में सामान्य निर्देश दिए गए हों।
- प्रश्नों की भाषा शुद्ध, सरल और स्पष्ट हो।
- अंकों का विभाजन अंकनीय बिन्दुओं के आधार पर हो।
- व्यवहारिकता की दृष्टि से वस्तुनिष्ठि प्रश्नों को अलग खंड में रखें और उस खंड को निर्धारित समय के पश्चात् तुरंत वापस ले लें। उदाहरण के लिए यदि आपने 20 वस्तुनिष्ठ प्रश्न बनाए हैं तो उन्हें 'क' खण्ड में रखिए। यह निर्देश दीजिए कि छात्रों को इन प्रश्नों के उत्तर प्रश्नपत्र में ही लिखने हैं। बीस मिनट बाद इस खंड को वापस ले लिया जाएगा।
- भाषा शिक्षण में लिखित परीक्षा के साथ-साथ मौखिक परीक्षा का भी आयोजन आवश्यक है।

1.8.2 प्रश्नपत्र निर्माण के लिए महत्त्वपूर्ण बिन्दु

- एक प्रश्न में यथासंभव एक ही शिक्षण उदेश्य की जांच करने का प्रयत्न कीजिए।
- प्रश्नों की संख्या पर्याप्त हो परंतु प्रश्नों में विविधता और नवीनता होनी आवश्यक है।
- केवल स्मरणपरक प्रश्नों की संख्या कम रखिए जिससे छात्रों में रटने की प्रवृत्ति न बढ़े।
- प्रश्न में ऐसे संकेत, चिह्न आदि न दिए जाएँ जिन्हें बच्चे समझ न सकें।
- वस्तुनिष्ठ, सत्य/असत्य, शुद्ध/अशुद्ध, बहुविकल्पी आदि प्रश्नों का खण्ड अलग बनाना अच्छा होगा।
- प्रश्नपत्र में ऐसे प्रश्न न रखें जो दूसरे प्रश्नों के लिए संकेत का कार्य करें।
- प्रश्नपत्र में ऐसे प्रश्न न हों जिन्हें बिना पाठ्यपुस्तक पढ़े ही अनुमान से उत्तर दे दिया जाए जैसे 'बालकाण्ड के आधार पर राम का चरित्र चित्रण कीजिए।' इस प्रश्न में छात्र बिना बालकाण्ड पढ़े भी प्रश्न का अनुमान से उत्तर दे सकता है।
- सरल प्रश्नों को यथासंभव पहले स्थान देना चाहिए।

प्रश्नपत्र का अभिलेख

विभिन्न मानदण्डों और अनुपातों का निर्धारण करके आप प्रश्नपत्र से पहले उसका अभिलेख तैयार कीजिए। नीचे एक प्रश्नपत्र का अभिलेख दिया जा रहा है।

इकाई की दृष्टि से अंक प्रभार		**पूर्णांक 100**
	प्रश्न संख्या	**अंक**
तथ्य, घटनाएं	20	50
सिद्धांत, अवधारणाएं	12	20
सृजनात्मक लेखन, प्रयोग	4	30
	36	100

योग्यता की दृष्टि से अंक प्रभार	**अंक**
ज्ञान	25%
बोध	40%
प्रयोग	35%

प्रश्नों के प्रकारी दृष्टि से अंक प्रभार		
	प्रश्न संख्या	**अंक**
निबंधात्मक	4	30
लघूत्तर	22	60
अतिलघूत्तर	10	10
	36	100

इस अभिलेख के आधार पर आप प्रश्नपत्र का नकशा बना सकते हैं। नकशे को ब्लू प्रिन्ट कहते हैं। इस नकशे में पाठ्यवस्तु, प्रति प्रश्न अंक संख्या, प्रश्नों के प्रकार और प्रश्नों के उद्देश्य के आयाम स्पष्ट रूप से अंकित कर लिए जाते है।

बोध प्रश्न :

12. निबंधात्मक प्रश्नों की विश्वसनीयता को बढ़ाने के लिए क्या करना चाहिए ? उत्तर दो पंक्तियों में दें।

....

....

....

13. प्रश्नपत्र निर्माण में ध्यान देने योग्य किन्हीं चार बातों का उल्लेख कराए।

....

....

....

....

....

1.8.3 अंकन योजना

प्रश्नपत्र का नकशा बनाने के बाद आप प्रश्नपत्र का निर्माण करते हैं। प्रश्नपत्र के निर्माण के साथ-साथ उसकी अंकन योजना और अंकन तालिका का बनाना भी आवश्यक है। यदि आपने प्रश्नपत्र के दो खंड बनाए हैं और पहले खंड में केवल बहुवैकल्पिक प्रश्न ही दिए हैं तो उसकी अंकन तालिका बना लेनी चाहिए। वस्तुनिष्ठ प्रश्नपत्र में यदि प्रश्नों की संख्या अधिक हो तो अपारदर्शक प्लास्टिक शीट में सुराख करके भी अंकन तालिका बना ली जाती है जिससे अंक गणना में सुविधा हो जाती है। उदाहरण के लिए मान लीजिए 5 बहुवैकल्पिक प्रश्नों के उत्तर इस प्रकार गोले भरवाकर लिखवाये गए हैं —

	क	ख	ग	घ
1.	0	●	0	0
2.	0	0	0	●
3.	●	0	0	0
4.	0	0	●	0
5.	0	●	0	0

अंकन तालिका के आधार पर प्लास्टिक शीट में शुद्ध उत्तर वाले गोले के स्थान पर सुराख पर लिए जाते हैं। भरे हुए शुद्ध गोले उन छेदों में से नजर आ जाते हैं। उन भरे हुए शुद्ध गोलों की गिन कर पूरे प्रश्नपत्र के अंकों की गणना की जाती है। इस प्रकार के उत्तरों का अंकन कम्प्यूटर की सहायता से बड़ी सुविधा से किया जा सकता है।

अंक योजना प्रश्नपत्र में निहित प्रति प्रश्न के अंकनीय बिन्दुओं के आधार पर बनाई जाती है। इसका प्रारूप इस प्रकार होता है :-

प्रश्न सं.	**अंकनीय बिन्दु**	**प्रति बिन्दु अंक**

यह अंकन तालिका प्रश्नपत्र की जांच में वस्तुनिष्ठता बाले में सहायक होती है।

एक से अधिक परीक्षकों के होने पर ऐसी अंकन योजना सभी परीक्षकों के अंकों में समानता लाने के लिए बना कर वितरित की जाती है। इस अंकन योजना में अपेक्षित उत्तर संक्षेप में दे दिए जाते हैं। कई बार एक प्रश्न के उत्तर में कई विकल्पात्मक उत्तर भी मिलने की संभावना होती है। ऐसी अवस्था में कौन से उत्तर सही माने जाएंगे, यही निर्देश भी अंक योजना में दे दिया जाता है।

लिखाई, वर्तनी आदि के यदि अंक निर्धारित किए गए हैं तो उनका उल्लेख योजना मे होना चाहिए। अंकन योजना बनाने से उत्तर की संभावित लम्बाई का भी ज्ञान हो जाता है और उसके आधार पर समय सीमा का भी अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। अंकन योजना बनाते समय यदि लगे कि किसी प्रश्न में परिवर्तन करने की आवश्यकता है तो आप वह भी करके प्रश्नपत्र में सुधार कर सकते हैं।

1.8.4 प्रश्न-विश्लेषण पत्रक

प्रश्नपत्र के अभिलेख, नक्शा (ब्ल्यू प्रिन्ट), प्रश्नपत्र, अंक योजना बनाने के पश्चात् प्रति प्रश्न एक विश्लेषण पत्रक बनाया जाता है। इसके बनाने से प्रश्नपत्र को अधिक वैज्ञानिक और संतुलित बनाने में सहायता मिलती है। इस पत्रक में विविध सूचनाएं अंकित करने के निम्नलिखित लाभ हैं :

- यह विश्लेषण सूचित करता है कि प्रश्नपत्र किस व्यवहारगत उद्देश्यों की जांच कर रहा है।
- पाठ्यक्रम के कितने पाठों से प्रश्न पूछे गए हैं ?
- प्रश्नों का स्तर कैसा है ?
- प्रश्नपत्र के विभिन्न अनुपातों में संतुलन है या नहीं ?
- प्रश्नपत्र बनाने का उद्देश्य पूरा हुआ या नहीं ?

विश्लेषणपत्र का प्रारूप

प्रश्न क्रम सं.	**उद्देश्य**	**विशिष्ट उद्देश्य**	**उप-विषय**	**प्रश्न का प्रकार**	**अंक**	**समय**	**काठिन्य स्तर**
1.	ज्ञान	पहचान	सूर के पद	लघूत्तर	5	5 मि.	सामान्य

1.9 प्राप्तांकों का विश्लेषण

उत्तर पुस्तिकाओं की जांच कर लेने के बाद यह देखना भी आवश्यक है कि बच्चे ने जो अंक प्राप्त किए हैं उनसे हमें बच्चें के अधिगम के विषय में क्या ज्ञान प्राप्त होता है। मान लीजिए एक बच्चे ने दूसरी इकाई परीक्षा में हिन्दी में 50% अंक प्राप्त किए। इन अंकों को सामान्य दृष्टि से हम बहुत अच्छा निष्पादन नहीं कह सकते। यदि इसी उपलब्धि को छात्र की पिछली परीक्षा से तुलना करके देखें तो हमें ज्ञात होता है कि पिछली परीक्षा में उसके कुल 33% अंक ही थे। इस दृष्टि से छात्र ने पर्याप्त प्रगति की है और उसे

और अधिक प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है। अब इन्हीं 50% अंकों को कक्षा की औसत उपलब्धि की तुलना में देखें। मान लीजिए कक्षा में न्यूनतम अंक 20% हैं और अधिकतम 50%, इसका अर्थ यह हुआ कि पूरी कक्षा का उपलब्धि स्तर ही नीचे है और संभवत: शिक्षण विधियों में सुधार लाने की आवश्यकता है। अंको का विश्लेषण कक्षा में छात्र के स्थान और उसके स्थान के नीचे रहने वाले छात्रों की संख्या के आधार पर भी किया जाता है। मान लीजिए 30 बच्चों की कक्षा में इस बच्चे का तीसरा स्थान है तो 50% अंक बहुत ही अच्छे माने जायेंगे। यह अंक विश्लेषण इस बात की ओर भी संकेत करता है कि प्रश्नपत्र कहीं कठिन तो नहीं था अथवा पाठ्यक्रम को ठीक से पढ़ाया गया या नहीं। इसके आधार पर हम भावी कार्यक्रम की योजना बनाने में भी समर्थ होते हैं। इन्हीं विश्लेषणों के आधार पर हम सुधारात्मक कार्यक्रम की योजना बना सकते हैं। अभिभावकों को सही विश्लेषण से परिचित करवा कर हम विद्यालय की विभिन्न योजनाओं में उनका सहयोग प्राप्त कर सकते हैं। मूल्यांकन का उद्देश्य तभी पूरा होगा जब हम सही दिशा में सही समय पर सही निर्णय लेने में समर्थ हो सकें।

बोध प्रश्न:

तीन पंक्तियों में उत्तर लिखें।

14. अधिगम प्रक्रिया संबंधी निर्णय लेने में मूल्यांकन का क्या महत्त्व है ?

....

....

....

15. विद्यार्थी द्वारा प्राप्त अंकों का विश्लेषण किन-किन आधारों पर किया जाता है ?

....

....

....

1.10 सारांश

मूल्यांकन एक सतत और व्यापक प्रक्रिया है, जो शिक्षा, शिक्षार्थी और शिक्षण-अधिगम-प्रक्रिया का मूल्यांकन करके उचित मार्गदर्शन प्रदान करती है। भाषा शिक्षण के मूल्यांकन के अंतर्गत न केवल शिक्षार्थी के अधिगम और व्यक्तित्व की जांच होती है बल्कि हिन्दी भाषा के सम्पूर्ण कर्यक्रम, पाठ्यक्रम, पाठ्यचर्चा, पाठ्य पुस्तक, उद्देश्य, शिक्षण विधियों, शैक्षिक और सह-शैक्षिक क्रियाओं का मूल्यांकन, परिणामों का आलेखन और आलेख विश्लेषण भी किया जाता है। हिंदी भाषा शिक्षण के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए विभिन्न मूल्यांकन युक्तियों को अपनाया जाना चाहिए। ये युक्तियां हैं — परीक्षण, प्रेक्षण, जांच-पड़ताल और विश्लेषण। भाषिक कौशलों के मूल्यांकन के लिए मौखिक परीक्षा बहुत महत्त्वपूर्ण है। लिखित परीक्षा के साधन हैं प्रश्न। प्रश्नपत्र विश्वसनीय, वैध, वस्तुनिष्ठ, विभेदीकरण में सक्षम तथा व्यावहारिक एवं व्यापक होना चाहिए। प्रश्नपत्र में संकलित प्रश्नों का उद्देश्य आधारित होना आवश्यक है। प्रेक्षण युक्ति के साधन है जांचे सूची, निर्धारण, मापनी, उपाख्यानक आलेख, प्रश्नावली, साक्षात्कार आदि। इनके आधार पर छात्र के व्यवहार परिवर्तन की जांच की जाती है।

सबसे अधिक प्रचलित मूल्यांकन युक्ति है परीक्षण। इसका साधन प्रश्नपत्र है जो विभिन्न उद्देश्य आधारित प्रश्नों का संतुलित एवं व्यवस्थित संकलन होता है। प्रश्न को विषयवस्तु के आधार पर तथ्य तथा घटनाएं, सिद्धांत और अवधारणाएं, प्रयोग और सृजनात्मकता इन तीन श्रेणियों में विभाजित किया जाता है। योग्यता के आधार पर प्रश्न ज्ञान, बोध और प्रयोग की श्रेणियों में विभाजित किए जाते हैं। उत्तर सीमा के आधार पर प्रश्न निबंधात्मक, लघूत्तर तथा अतिलघूत्तर एवं वस्तुनिष्ठ, इन तीन प्रकार के होते हैं। काठिन्य स्तर के अनुसार प्रश्न सरल, सामान्य और कठिन होते हैं। प्रश्नों का सही अनुपात प्रश्नपत्र के संतुलन के लिए आवश्यक है। प्रश्नपत्र बनाने से पहले उसका अभिलेख और रूपरेखा तैयार की जाती है। प्रश्नपत्र बनाने के बाद उसकी अंकन योजना और अंकन तालिका तैयार कर लेनी चाहिए जिससे प्रश्नपत्र के विविध अनुपातों का सही विश्लेषण किया जा सके। इसी के साथ प्रश्नों का विश्लेषण पत्रक भी तैयार किया जाता हैं जिसमें प्रत्येक प्रश्न के विशिष्ट उद्देश्य, प्रकरण, उप-विषय, प्रश्न का प्रकार, अंक, समय

तथा काठिन्य स्तर आदि सभी का एक चित्र सामने आ जाता है। मूल्यांकन प्रक्रिया का अंतिम सोपान हैं विद्यार्थी के प्राप्त अंकों का विश्लेषण। यह विश्लेषण तीन संदर्भों में किया जाता है — छात्र की पिछली उपलब्धि, कक्षा की न्यूनतम एवं अधिकतम उपलब्धि, औसत उपलब्धि, छात्र का कक्षा में स्थान। इस विश्लेषण को अभिभावकों तक प्रगतिपत्र में अंकित करके पहुंचाया जाता है। परीक्षा यदि अच्छे स्तर की होगी तो मूल्यांकन भी सही होगा और यह भावी कार्यक्रम की योजना बनाने के लिए सही आधार प्रदान कर सकेगा।

1.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. (क) (नहीं) (ख) (हाँ) (ग) (हाँ)
2. मूल्यांकन परीक्षा की अपेक्षा बहुत व्यापक है। वह छात्र के सम्पूर्ण व्यक्तित्व तथा शिक्षा के समस्त उद्देश्यों की पूर्ति की जांच करता है। परीक्षा विषय की पाठ्यवस्तु संबंधी योग्यता की जांच करती है। मूल्यांकन शिक्षक द्वारा परीक्षा एवं अवलोकन के माध्यम से निरन्तर किया जाता है।
3. मूल्यांकन निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। उपलब्धि का मापन, कठिनाइयों का निदान और उपचार, सुधारात्मक उपाय तथा प्राप्त परिणामों का विश्लेषण लगातार चलता रहता है।
4. (क) हां

   (ख) नहीं

   (ग) हां

   (घ) नहीं
5. संचयी आलेख
6. जांच सूची, निर्धारण मापनी, संचयी आलेख
7. विश्वसनीयता, वैधता, वस्तुनिष्ठता, विभेदीकरण, व्यापकता, व्यावहारिकता, आंतरिक विकल्प।
8. (क) हां (ख) नहीं
9. स्पष्ट उद्देश्य, निश्चित प्रकार, योग्यता मापन, सरल असंदिग्ध भाषा अंकों और समय का सही अनुपात, उचित काठिन्य स्तर।
10. एक चिह्न से एक शब्द तक।
11. एक वाक्य से 60 शब्दों तक।
12. निश्चित उद्देश्य, प्रश्न का छोटे-छोटे खण्डों में विभाजन, शब्द सीमा, स्पष्ट भाषा, अंकनीय बिन्दुओं के आधार पर अंक विभाजन।
13. (i) प्रश्नपत्र के प्रारम्भ में सामान्य निर्देश दिए हों।

    (ii) वस्तुनिष्ठ प्रश्नों का खण्ड अलग हों।

    (iii) प्रश्नों की भाषा शुद्ध, सरल एवं स्पष्ट हों।

    (iv) अंकों का विभाजन अंकनीय बिंदुओं के आधार पर हों।
14. मूल्यांकन का महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है निर्णय लेने की क्षमता प्रदान करना। शिक्षण के प्रारंभ से लेकर अंत तक प्रत्येक चरण में निर्णय लेने की आवश्यकता होती है। इसीलिए मूल्यांकन को निर्णय लेने की क्षमता प्रदान करने वाला साधन कहा जाता है।
15. छात्र द्वारा प्राप्त अंकों का विश्लेषण छात्रों की पिछली उपलब्धि, कक्षा की न्यूनतम एवं अधिकतम उपलब्धि, औसत उपलब्धि तथा छात्र के कक्षा में स्थान को ध्यान में रखकर किया जाता है।

1.11.1 गतिविधि के अंतर्गत दिए गए प्रश्नों के उत्तर

गतिविधि–1 (i) (क), (ii) (ख), (iii) (ग), (v) (ग)

गतिविधि–2 (क) ज्ञान, (ख) बोध, (ग) प्रयोग

1.12 उपयोगी पुस्तकें

सिंह, निरंजन कुमार	:	माध्यमिक विद्यालयों में हिंदी शिक्षण, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, तिलक नगर, जयपुर
पुरोहित, जगदीश नारायण	:	भावी शिक्षकों के लिए आधारभूत कार्यक्रम
शर्मा, लक्ष्मीनारायण	:	भाषा 1, 2 की शिक्षण विधियां और पाठ नियोजन
श्रीवास्तव, राजेन्द्र प्रसार	:	हिन्दी शिक्षण–147 बी, अमर कालोनी, लाजपत नगर, नई दिल्ली–24

इकाई 2

निदानात्मक एवं उपचारात्मक कार्य

: रूपरेखा :

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 निदानात्मक परीक्षण

2.3.1 शैक्षणिक निदान की प्रक्रिया

2.4 उपचारात्मक शिक्षण

2.4.1 उपचारात्मक शिक्षण के उद्देश्य

2.4.2 उपचारात्मक शिक्षण – कुछ आधारभूत सिद्धांत

2.5 नैदानिक तथा उपचारात्मक कार्य

2.5.1 प्रक्रिया

2.5.2 अभ्यास-माध्यम

2.5.3 भाषा कौशलों का उपचारात्मक कार्य

2.6 सारांश

2.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.8 उपयोगी पुस्तकें

2.9 उपचारात्मक पाठ योजना

2.1 प्रस्तावना

शिक्षार्थियों की भाषा-सम्प्राप्ति में प्राय: वाचन, पठन, लेखन संबंधी अनेक प्रकार की त्रुटियाँ पाई जाती हैं। इन त्रुटियों के अनेक कारण होते हैं। प्रभावी भाषा-शिक्षण के लिए आवश्यक है कि शिक्षक अपने शिक्षार्थियों के भाषागत दोषों या कमियों को जाने और उन्हें दूर करने के लिए उपयुक्त उपाय करे। निदानात्मक परीक्षण एक ऐसा साधन हैं, जिसके माध्यम से शिक्षार्थियों की संप्राप्ति में पाये जाने वाले दोषों या कमियों का सम्यक् ज्ञान हो सकता है। इन त्रुटियों को दूर करने और शुद्ध तथा व्याकरण सम्मत भाषा सिखाने के लिए हम अनेक प्रकार के उपचारात्मक कार्यो/अभ्यासों का उपयोग कर सकते हैं।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप :

- उपलब्धि परीक्षण के आधार पर शिक्षार्थियों की भाषा संप्राप्ति एवं उसमें कमियों या दोषों को जान सकेंगे,
- निदानात्मक परीक्षणों द्वारा छात्रों की भाषाई त्रुटियों का पता लगा सकेंगें,
- विविध उपचारात्मक कार्यो/अभ्यासों के माध्यम से छात्रों की भाषा-सम्प्राप्ति को सुधार सकेंगे।

2.3 निदानात्मक परीक्षण

'निदान' शब्द मूलत: चिकित्सा-शास्त्र से आया है। अच्छा चिकित्सक किसी रोगी का उपचार करने से पूर्व अनेक परीक्षणों, उपकरणों और प्रश्नों के द्वारा रोगी की बीमारी के बारे में जानकारी एकत्र करता है। फिर प्राप्त जानकारी के विश्लेषण और अध्ययन के बाद रोग का निदान करता है और तदनुकुल उपचार करता है। शिक्षा के क्षेत्र में भी जब शिक्षार्थी के शैक्षिक स्वास्थ्य को लेकर यह प्रक्रिया अपनाई जाती है तो उसे शैक्षणिक निदान और शैक्षणिक उपचार कहते हैं। शैक्षणिक निदान, शैक्षणिक उपचार अथवा उपचारी शिक्षण की आधारभूमि है। दूसरे शब्दों में शैक्षणिक निदान और शैक्षणिक उपचार एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।

कक्षा में सभी शिक्षार्थियों की शैक्षिक प्रगति एक-सी नहीं होती है। प्रत्येक अच्छा शिक्षक यह जानना चाहता है कि उसकी कक्षा के अलग-अलग शिक्षार्थियों का शैक्षिक स्तर क्या है, उनकी शैक्षिक प्रगति के मार्ग में क्या कठिनाइयाँ हैं। शिक्षार्थी की कठिनाइयों का पता लगाने की प्रक्रिया ही शैक्षणिक निदान है।

इसी प्रकार शिक्षार्थी के उपलब्धि में निहित दोष या कमियों को ज्ञात करने के लिए किया गया प्रयास भी शैक्षणिक निदान के अन्तर्गत आता है।

भाषा-शिक्षण में विभिन्न भाषाई कौशलों - सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना, के क्षेत्र में शिक्षार्थी अनेक प्रकार की गलतियां करते हैं। अलग-अलग कौशलों की त्रुटियाँ अलग-अलग प्रकार की होती हैं जिसकी समुचित पहचान किए बिना शिक्षक उनमें अपेक्षित सुधार नहीं ला सकता। इस दृष्टि से भी शैक्षणिक निदान का विशिष्ट महत्त्व है।

निदानात्मक शिक्षण तथा परीक्षण की संकल्पना शिक्षा जगत में पर्याप्त पुरानी है। बूनर और मेलवी के अनुसार 'नैदानिक परीक्षणों का प्रमुख उद्देश्य किसी विषयवस्तु में बालक की विशुद्ध कमजोरी को प्रकाश में लाना हैं, ताकि कमजोरियों के कारणों की छानबीन कर सुधार हेतु उपचारात्मक कदम उठाये जा सकें।' किंतु यह वस्तुत: एक संकुचित दृष्टिकोण है। भाषा-शिक्षण के क्षेत्र में शिक्षार्थियों की कमजोरियों का ज्ञान, उनके कारणों की छानबीन और उनके आधार पर सुधारात्मक कार्य तो निदानात्मक शिक्षण का उद्देश्य है ही, इसके अतिरिक्त निदानात्मक शिक्षण का एक व्यापक उद्देश्य भी है और वह है सार्थक शिक्षण द्वारा शिक्षार्थियों की भाषा-क्षमता में उत्तरोत्तर वृद्धि।

2.3.1 शैक्षणिक निदान की प्रक्रिया

भाष-शिक्षण के क्षेत्र में निदान की संकल्पना मानक भाषा की संकल्पना से जुड़ी हुई है। किसी भी भाषा ती अपनी विशिष्ट संरचना होती है, उसका अपना व्याकरण तथा व्याकरणिक नियम होते है। भाषा के कौशलों के व्यवहार के निश्चित मानक होते हैं जो संबंधित समाज में सर्वस्वीकृत होते हैं। जब कभी भाषाई व्यवहार में इन भाषिक मानकों का उल्लंघन होता है तो उसे भाषाई त्रुटि मानते हैं। निदानात्मक परीक्षण एवं उपचारात्मक शिक्षण का मूल उद्देश्य शिक्षार्थियों के भाषिक व्यवहार में त्रुटियों का निदान करना और

उनमें अपेक्षित सुधार लाना है। अतः शैक्षणिक निदान की प्रक्रिया का पहला चरण है — शिक्षार्थी की न्यूनताओं और कमजोरियों की पहचान। भाषा-शिक्षण में इन न्यूनताओं का संबंध मुख्यतः भाषा-कौशलों से होता है क्योंकि भाषा मूलतः एक कौशल-केन्द्रित विषय हैं। आप जानते हैं कि भाषा में प्रमुख कौशल हैं - सुनना, बोलना, पढ़ना और लिखना। इन अलग-अलग कौशलों की त्रुटियाँ भी अलग-अलग होती हैं। अतः भाषा के क्षेत्र में शैक्षणिक निदान के लिए हमें अलग-अलग कौशलों से संबंधित त्रुटियों की पहचान करनी होगी। इन त्रुटियों का पता लगाने के लिए निदानात्मक परीक्षण एक प्रधान साधन है।

सस्वर पठन के क्षेत्र में निदानात्मक परीक्षण का एक नमूना यहाँ दिया जा रहा है :

शिक्षक कक्षा-8 के छात्रों को निम्नलिखित गद्य खंड के सस्वर पठन का आदेश देता है :

"इस नगर में अठारह प्राथमिक विद्यालय हैं। उनमें से जनक विद्यालय भी एक है। इस विद्यालय में के. जी. से लेकर कक्षा सात तक की पढ़ाई होती है। यहाँ प्रधानाध्यापक, सहायक अध्यापक और चौदह अध्यापक कार्यरत हैं। प्रधानाध्यापक और अध्यापकों के कठोर परिश्रम का ही परिणाम है कि यह विद्यालय सर्वश्रेष्ठ विद्यालय के रूप में जाना जाता हैं। विद्यालय में प्रवेश हेतु कोई विशेष प्रविधि न अपना कर सामान्य प्रविधि ही अपनाई जाती है, जिसमें समाज के सभी बच्चे बिना किसी भेद-भाव के प्रवेश पाते हैं। इस प्रकार सरस्वती नगर में नागरकिों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति का सही प्रतिनिधित्व यह विद्यालय करता है।"

शिक्षार्थी द्वारा उपर्युक्त गद्यांश का पठन इस प्रकार हो सकता है :

"इस नगर में अठारह **प्रथमिक विध्यालय** हैं। उनमें से जनता **विध्यालय** भी एक है। इस **विध्यालय** में के. जी. से लेकर कक्षा सात की पढ़ाई होती है। यहाँ **परधानाध्यापक,** सहायक अध्यापक और **चौदा** अध्यापक कार्यरत हैं। **परधानाध्यापक** और अध्यापकों के कठोर परिश्रम का ही परिणाम है कि यह **विध्यालय** सर्वश्रेष्ठ **विध्यालय** के रूप में जाना जाता है। **विध्यालयों** में परबेस हेतु कोई **विशेष परिबिधि** न अपनाकर सामान्य **परबिधि** ही अपनाई जाती है, जिसमें समाज के सभी बच्चे बिना किसी भेद-भाव के परबेस पाते हैं। इस प्रकार सरस्वती नगर के नागरिकों की **समाजिक, अर्थिक इसतिथि** का सही **परतिनिधित्त्व** यह **विध्यालय** करता है।"

ऊपर गद्यांश में बड़े आकार में मुद्रित अंश शिक्षार्थियों द्वारा सस्वर पठन में सामान्यतः की जाने वाली त्रुटियों को दर्शाति हैं। किंतु सस्वर पठन में उच्चारण के अतिरिक्त और भी क्षेत्रों में त्रुटियाँ हो सकती हैं। किसी भी गद्यांश या कविता के पठन में मात्र अशुद्ध उच्चारण ही दोष नहीं होता। पठन में बोधन, गति, विराम आदि अन्य बातें हो जो शिक्षार्थी की पठन योग्यता को प्रभावित करती हैं। अतः रूप में पठन दोषों से अवगत होना आवश्यक हैं। इस दिशा में निम्नलिखित उपागम उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं —

(i) छात्रों के पठन का निरंतर निरीक्षण

(ii) रुचि अभिज्ञापन प्रश्नावली का प्रयोग

(iii) पठन के समय आंखों की गति का निरीक्षण

(iv) प्रमाणीकृत पठन परीक्षण

(v) शिक्षक निर्मित पठन परीक्षण

उपर्युक्त उपागमों का प्रयोग करते हुए शिक्षार्थियों की त्रुटियों की पहचान कर लेने के बाद यह प्रश्न उठता हैं कि शिक्षार्थी अमुक-अमुक त्रुटियाँ क्यों करता है। इसलिए शैक्षणिक-निदान प्रक्रिया का अगला महत्त्वपूर्ण चरण होता है। त्रुटियों और दोषों से संबंधित कारणों का ज्ञान। अतः हम पहले इन कारणों को जानने का ही प्रयास करते है।

त्रुटियों और दोषों से संबंधित कारण

ऊपर कहा जा चुका है कि अलग-अलग भाषाई कौशलों की अलग-अलग त्रुटियाँ हो सकती हैं और इसीलिए उनके कारण भी अलग-अलग हो सकते हैं। इस दृष्टि से पठन दोषों के कारण ढूंढने पर हमें निम्नलिखित प्रमुख कारण दिखाई देते हैं :

(i) अस्वस्थता, (ii) ज्ञानेन्द्रियों में दोष, (iii) प्रतिकूल परिवेश, (iv) कम बुद्धि या बुद्धि मंदता, (v) बायें हाथ का प्रयोग, (vi) संवेगात्मक तनाव, (vii) रूचि का अभाव, (viii) पठन का कम अभ्यास, (ix) पृष्ठभूमि या अनुभव की कमी, एवं (x) हाथ-आंख का सही तालमेल न होना।

इन सभी कारणों में सबसे प्रमुख 'पठन अभ्यास में कमी' हैं। अच्छे पठन वाले अधिक पढ़ते हैं, और दोषपूर्ण पठन वाले बहुत ही कम पढ़ते हैं, किंतु कुछ छात्र कम पढ़ते हैं और कुछ अधिक, इसका उत्तर छात्रों की शारीरिक तथा संवेगात्मक भिन्नता में खोजा जा सकता है। यह घर के परिवेश पर भी निर्भर गो सकता है। अतएव त्रुटिपूर्ण पठन का निदान इस बात से प्रारंभ करना चाहिए कि छात्रों को पढ़ने में रुचि क्यों नहीं है। इसके साथ-साथ इस बात का भी निदान होना चाहिए कि उनकी अन्य रूचियां क्या हैं ? इनके उपयोग से शिक्षार्थी की पठन में रुचि बढ़ाई जा सकती हैं।

जैसा कि पहले कह चुके है कि अलग-अलग कौशलों की अलग-अलग त्रुटियाँ और उनके अलग-अलग कारण हो सकते हैं। प्रभावी नैदानिक शिक्षण के लिए आवश्यक है कि प्रत्येक कौशल से संबंधित त्रुटियों के बारे में विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण अपनाया जाए।

शिक्षार्थियों की कठिनाइयों का पता लगाने के साथ-साथ शिक्षक शिक्षण संबंधी अपनी न्यूनताओं का भी पता लगाएँ। सस्वर वाचन में अपने उच्चारण, स्पष्टता, गति, यति, स्वर प्रवाह आदि के प्रति सतर्कता बरतें और देखें कि कहीं उनमें कोई दोष तो नहीं है। यदि है तो सबसे पहले उन दोषों का निवारण करें।

इसके साथ-साथ शिक्षक अपने व्यवहार पर भी ध्यान दे कि कहीं उसका व्यवहार तो ऐसा नहीं है जो शिक्षार्थी में भय, निराशा या अरुचि को जन्म देता हो अथवा वह अपने व्यवहार में कमजोर बालकों के प्रति अपेक्षा तो नहीं दर्शाता। इस प्रकार अनेक दृष्टियों से शिक्षार्थियों की कठिनाइयों को पहचानना ही शैक्षणिक निदान है।

बोध प्रश्न :

1. नैदानिक परीक्षण से क्या आशय है। उत्तर तीन पंक्तियों में दे।

   ....
   ....
   ....

2. भाषिक त्रुटियों के किन कारणों की चर्चा शिक्षणशास्त्रियों ने की हैं ? पांच कारण लिखें।

   (i) ....
   (ii) ....
   (iii) ....
   (iv) ....
   (v) ....

3. पठन दोषों से अवगत होने के लिए किन उपागमों का उपयोग किया जा सकता है। पांच उपागम लिखें।

   (i) ....
   (ii) ....
   (iii) ....
   (iv) ....
   (v) ....

2.4 उपचारात्मक शिक्षण

सामान्यतः शिक्षण दो प्रकार का होता है : विकासात्मक शिक्षण और उपचारात्मक शिक्षण।

विकासात्मक शिक्षण :

नाम से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि छात्र किसी विषय या कौशल में उत्तरोत्तर आगे बढ़ रहा है। अधिगम प्रक्रिया में वह अपने ज्ञान और अनुभव में नया आयाम जोड़ता जा रहा है। प्रशिक्षण तथा अनुभव के माध्यम से अपने व्यवहारों को संशोधित तथा संवर्धित करता जा रहा है। वह निर्धारित पाठ्यक्रम के माध्यम से क्रमिक रूप में अपने व्यक्तित्त्व का विकास करता जा रहा है। सामान्य शिक्षार्थियों का कक्षा में शिक्षण विकासात्मक शिक्षण कहलाता है।

उपचारात्मक शिक्षण :

कमजोर शिक्षार्थियों के शिक्षण अधिगम को दोषपूर्ण प्रभावों को दूर करने की प्रक्रिया उपचारात्मक शिक्षण कहलाती हैं। ऐसा शिक्षण दोषों के निदान पर आधारित होता है और शिक्षार्थी की कमजोरियों को दूर करता हैं। उपचारात्मक शिक्षण का प्रयोग एक विस्तृत अर्थ में भी होता है, वह है विकासात्मक रूप। बहुत से छात्र ऐसे होते हैं जिनमें भाषा का प्रयोग एक विस्तृत अर्थ में भी होता है, वह है विकासात्मक रूप। बहुत से छात्र ऐसे होते हैं जिनमें भाषा संबंधी कोई दोष तो नहीं होते किंतु उनको वाचन करने एवं अन्य पक्षों में अधिक कुशलताएं प्राप्त करने के लिए सहायता आवश्यकता होती है। उपचारात्मक शिक्षण द्वारा उनको यह सहायता दे दी जाती है। इस प्रकार उपचारात्मक शिक्षण दो प्रकार की क्रियाओं की ओर संकेत करता है। ये क्रियाएं हैं :

- दूषित मनोवृत्ति एवं त्रुटिपूर्ण आदतों को समाप्त करना और गलत ढंग से सीखी गई अधिगम-सामग्री का पुनः शिक्षण।
- ऐसी आदतों, कौशलों एवं मनोवृत्तियों को सिखाना जो सीखी जानी चाहिए।

2.4.1 उपचारात्मक शिक्षण के उद्देश्य

उपर्युक्त विवरण के आधार पर उपचारात्मक शिक्षण के संक्षेप में निम्नलिखित उद्देश्य हो सकते है —

(i) प्राप्त ज्ञान में कमियों का निराकरण करना,

(ii) कौशलों की अधिगम प्रक्रिया के दौरान त्रुटियों एवं दोषों को सुधारना,

(iii) समुचित दिशा में विकास का मार्ग प्रशस्त करना,

(iv) समाज से स्वीकृत आदतों का परिमार्जन करना, और

(v) विषय विशेष को सीखने में अक्षमताओं को दूर करना।

किसी भी विषय से संबंधित उपचारात्मक शिक्षण की व्यवस्था में उपर्युक्त उद्देश्य ही प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कार्य करते हैं।

भाषा-शिक्षण में जो क्षेत्र निदान के है वे सभी उपचार के भी हैं। शैक्षणिक निदान सदैव उपचारात्मक शिक्षण के संदर्भ में ही किया जाता है। उपचारात्मक शिक्षण की प्रक्रिया बहुमुखी होती है वह शैक्षणिक निदान से पता लगाए गए कारणों पर निर्भर करती है। यह निरंतर विकासशील प्रक्रिया है। शैक्षणिक निदान के पश्चात् उपचार और उस उपचार की प्रभाविकता की जांच के लिए पुनः परीक्षण और निदान। इसीलिए उपचार को प्रयोग, परीक्षण और पुनः प्रयोग की अभ्यासपूर्ण प्रक्रिया कहा गया है।

उपचारात्मक शिक्षण की समस्त प्रक्रिया में शिक्षक शिक्षार्थियों को यह आभास न होने दे कि उपचारात्मक शिक्षण की दृष्टि से शैक्षणिक निदान किया जा रहा है। कोई शिक्षार्थी यह नहीं चाहेगा कि उसे कमजोर समझा जाए और उसका कोई उपचार किया जाए। निदान और उपचार दोनों ही व्यक्ति केन्द्रित हो सकते हैं और समूह केन्द्रित भी।

व्यक्ति की विशिष्ट त्रुटियों का उपचार वैयक्तिक विधि से होता है और वे त्रुटियाँ जो अधिकांश व्यक्ति करते हैं, सामूहिक रूप से दूर की जाती है। इनके शिक्षण के लिए पाठ योजना भी भिन्न-भिन्न प्रकार से बनाई जाती है।

2.4.2 उपचारात्मक शिक्षण — कुछ आधारभूत सिद्धांत

व्यक्ति-केन्द्रित या समूह-केंन्द्रित उपचारात्मक शिक्षण दोनों ही में निम्नांकित सिद्धांतों का पालन प्रभावी सिद्ध होगा :

- उपचारात्मक शिक्षण शिक्षार्थी के वास्तविक शैक्षिक स्तर से आरंभ किया जाए चाहे कक्षा कोई भी हो।
- छात्र को समय-समय पर रेखाचित्र या अन्य प्रकार से यह बताते रहना चाहिए कि उसने कितनी प्रगति कर ली है।
- यह ध्यान रखा जाए कि जो अभ्यास छात्र को दिये जाएं, वे उसके मूल प्रयोजन की संतुष्टि करें।
- शिक्षार्थियों को उनके अभ्यास कार्य के लिए निरंतर सराहा जाए ताकि उन्हें उपयुक्त प्रोत्साहन मिलता रहे।
- उसको दिए जाने वाले कार्यों एवं अभ्यासों में विभिन्नता हो ताकि उसका कार्य रूखा एवं थकावट उत्पन्न करने वाला न हो जाए।

प्रत्येक भाषा कौशल की त्रुटियों के उपचार के लिए विशिष्ट विधियाँ और नियम हो सकते हैं। उदाहरण के लिए सस्वर पठन संबंधी कठिनाइयाँ दूर करने के लिए नीचे दी गई विधियाँ अपनाई जा सकती हैं —

- शिक्षक द्वारा अपने वाचन को आदर्श बनाना।
- छात्रों के अशुद्ध उच्चारण को शुद्ध कराना।
- शुद्ध उच्चारण सिखाने के बाद अनुतान, गति, यति में प्रशिक्षित करना।
- शब्दार्थ संबंधी कठिनाइयों को दूर करना और अर्थग्रहण की योग्यता विकसित करना।
- अच्छे-अच्छे अनुच्छेदों का चयन कर वाचन कराना।

इसी प्रकार अन्य कौशलों की भी विधियाँ हैं। उपचारात्मक कार्यों में इन विधियों को ध्यान में रखकर छात्रों के विकासात्मक शिक्षण में आने वाले दोषों को दूर किया जा सकता है।

बोध प्रश्न :

4. उपचारात्मक शिक्षण के पांच उद्देश्य बताइए ?

   (i) ....

   (ii) ....

   (iii) ....

   (iv) ....

   (v) ....

5. उपचारात्मक शिक्षण के पांच सिद्धांतों का उल्लेख कीजिए।

   (i) ....

   (ii) ....

   (iii) ....

   (iv) ....

   (v) ....

6. सस्वर पठन संबंधी कठिनाइयाँ दूर करने की पांच विधियाँ बताइए ?

   (i) ....

   (ii) ....

   (iii) ....

   (iv) ....

   (v) ....

2.5 नैदानिक तथा उपचारात्मक कार्य

नैदानिक तथा उपचारात्मक कार्य एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। यह दोनों एक-दूसरे से सम्बद्ध हैं। नैदानिक शिक्षण शिक्षार्थी की कमियों तथा उनके कारणों को प्रकाश में लाता है और उपचारात्मक शिक्षण उन कमियों को दूर करने का प्रयास करता है। नैदानिक एवं उपचारात्मक कार्यों को निम्नलिखित बिन्दुओं के द्वारा जान सकते हैं :

— प्रक्रिया

— अभ्यास-माध्यम

— भाषा कौशलों का उपचार कार्य

2.5.1 प्रक्रिया

हम पढ़ चुके है कि नैदानिक परीक्षण पूर्व पठित किसी विषय में छात्रों की कमजोरियों, कमियों, त्रुटियों अथवा दोषों का पता लगाने की एक प्रक्रिया है। शिक्षक इस प्रक्रिया से यह जानने में सफल हो जाता है कि जो विषय वह पढ़ाता रहा है या पढ़ा रहा है, उसमें कौन-सा शिक्षार्थी क्या-क्या त्रुटियाँ कर रहा है, उसके सीखने में क्या कमी रह गई है। इसका पता लगाने के बाद शिक्षक उन कमियों को दूर करने के लिए विभिन्न प्रकार के सुधारात्मक कार्य करता है, इसी को हम उपचारात्मक शिक्षण कार्य कहते हैं।

उपचारात्मक शिक्षण में हर छोटी-छोटी गलती को लेकर अभ्यास कराना असंभव है, अवांछित भी। कभी-कभी किसी छात्र विशेष की त्रुटियों को तो दूर किया जा सकता है, जिसको हमने व्यक्ति केंद्रित उपचार कहा है, लेकिन प्राय: उपचारात्मक शिक्षण समूह केन्द्रित होता है। अब समझना यह है कि नैदानिक परीक्षण के बाद किन छात्रों को उपचारात्मक शिक्षण में सम्मिलित किया जा सकता है। मान लीजिए छात्रों की इ-ई संबंधी (हस्व-दीर्ध) वर्तनीगत दोषों को जानने के लिए एक गद्यांश का श्रुत लेख देते हैं। संभव है छात्र अनेक प्रकार की त्रुटियाँ करें। प्रश्न यह है कि किन-किन छात्रों को आप उपचारात्मक शिक्षण देंगे। इसके लिए निश्चित मानदंड नहीं है। सामान्यत: यह माना जाता है कि किसी विशेष बिंदु के किसी प्रश्न या मद (आइटम) को 10 प्रतिशत या इससे अधिक छात्रों ने गलत किया है और प्रत्येक छात्र तीन या इससे अधिक त्रुटियाँ करता है तो उसे अंतिम निदानात्मक परीक्षण में सम्मिलित किया जाना चाहिए और उसके उपचार के लिए अभ्यास कराया जाना चाहिए। तात्पर्य यह है कि किसी त्रुटि की संख्या अथवा आवृत्ति के आधार पर ही उपचारात्मक कार्य कराना समूह शिक्षण की पद्धति में अधिक उपयोगी होता है। जैसे - स्थिति शब्द लिखने में सिथति या स्थीति अथवा इस्थिति जैसी वर्तनीगत त्रुटियाँ मिलती हैं, ऐसी त्रुटियाँ यदि 10 प्रतिशत से अधिक छात्र करते हैं, तो 'स्थिति' शब्द का शुद्ध रूप सिखाने के लिए उपचारात्मक कार्य करवाया जाना चाहए।

2.5.2 अभ्यास-माध्यम

उपचारात्मक कार्य कई प्रकार के अभ्यासों के माध्यमों से कराया जाता है। ये माध्यम दो प्रकार के हो सकते हैं —

— भाषिक माध्यम

— यांत्रिक माध्यम

भाषिक माध्यम में भाषा के तत्त्वों द्वारा शिक्षार्थी के भाषिक स्तर में सुधार लाया जाता है जैसे — उच्चारण सुधार के लिए शिक्षक के मानक उच्चारण का अनुकरण, शुद्ध वर्तनी सिखाने के लिए श्रुत लेख, अनुलेख, सुलेख आदि का प्रयोग, संरचना या व्याकरण की त्रुटियाँ दूर करने के लिए अभ्यास तथा नियम का यशेष्ट ज्ञान कराना।

पहचान, विभेदीकरण, पुन: स्मरण आदि अभ्यासों के लिए पहचानिए, अंतर बताइए, तुलना कीजिए, सही-गलत छांटिए, रिक्त स्थान भरिए, सही उत्तर चुनिए आदि युक्तियों का प्रयोग किया जाता है। तात्पर्य यह है कि शिक्षण की प्रकृति के अनुरूप यशास्थान अलग-अलग युक्ति का प्रयोग करते हुए सुधारात्मक या उपचारात्मक शिक्षण कराया जाए।

यांत्रिक माध्यम तीन प्रकार के होते हैं :

— श्राव्य माध्यम

— दृश्य माध्यम

— दृश्य-श्राव्य माध्यम

उपचारात्मक भाषा शिक्षण में उच्चारण सिखाने के लिए टेपरिकार्डर वर्तनी और व्याकरण सिखाने के लिए श्यामपट्ट, चार्ट, स्लाइड-प्रोजेक्टर आदि का प्रयोग किया जाता है। फिल्म, टि.वी. आदि दृश्य-श्राव्य माध्यम से त्रुटिपूर्ण भाषा का सुधार किया जा सकता है।

आपने नैदानिक परीक्षण के उपरांत कार्य की प्रक्रिया तथा युक्तियों के संबंध में अपेक्षित जानकारी प्राप्त कर ली है। अब आपको इन युक्तियों का उपयोग करते हुए प्रायोगिक अभ्यास कराने की आवश्यकता है। इसी दृष्टि से उपचारात्मक कार्य के लिए कुछ प्रायोगिक अभ्यासों का उल्लेख आगे किया जा कहा है।

2.5.3 भाषा कौशलों का उपचारात्मक कार्य

विद्यालयों में शिक्षार्थी हिन्दी को एक विषय के रूप में पढ़ते हैं। हिन्दी के पाठ्यक्रमों में प्रारंभिक कक्षाओं में भाषा व्यवहार पर अधिक ध्यान दिया जाता है। बड़ी कक्षाओं में साहित्य अर्थात् गद्य, पद्य, नाटक, कहानी, एकांकी, उपन्यास आदि के रसास्वादन की क्षमता पैदा की जाती है।

भाषा के दैनंदिन व्यवहारों में भाषा के कौशल ही काम आते हैं। यों कहा जा सकता है कि साहित्य की रचना भी कौशलों में ही होती है। इसलिए जब छात्र साहित्य का अध्ययन करता रहता है तो परोक्षरूप से वह भाषा कौशलों को सीखता रहता है। अतः हम कह सकते है कि भाषा शिक्षण का अर्थ है कौशलों का अध्यापन करना। छात्रों के इन कौशलों के अधिगम में ही उनकी कमियों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

आप जानते है कि भाषा के चार कौशल माने जाते हैं –

- श्रवण कोशल
- कथन कोशल
- पठन कोशल
- लेखन कोशल

प्रकृति और स्वरूप के अनुसार ये कौशल अपने में अलग-अलग हैं अतः इनके सीखने न सीखने की छात्रों की समस्याएं भी विविध हैं। इस विविधता के स्वरूप को समझकर ही उनके दोषों का उपचार किया जा सकता है। अब हम प्रत्येक कौशल में छात्रों की संभाव्य त्रुटियों को सुधारने के लिए उपचारात्मक कार्य के अभ्यास के नमूने देखेंगे।

श्रवण कौशल : श्रवण अर्थात् सुनना। इसका स्वरूप ध्वन्यात्मक है। मुख्य शरीरांग कान है। वक्ता की बात को कान द्वारा ग्रहण करके अर्थ या आशय को समझ जाता है। इस प्रक्रिया में कई कारणों से छात्रों में श्रवण-बोधन की निम्नलिखित दोषों की संभावना होती हैं **:**

- वक्ता की बात की ध्वनि व्यवस्था को ठीक न समझ पाना,
- विभिन्न ध्वनियों में भेद न कर पाना,
- बलाघात अर्थात् वक्ता किस वर्ण/शब्द पर जोर देना चाहता है, उसे न समझ पाना,
- अनुतान अर्थात् वक्ता सामान्य कथन कर रहा है, प्रश्न पूछ रहा है अथवा आश्चर्य प्रकट कर रहै है, इस बात को न समझ पाना,
- किस प्रसंग में वक्ता किस शब्द का प्रयोग कर रहा है, इस बात को न समझ कर अर्थ का अनर्थ करना।

छात्रों को कक्षा में पढ़ाने, प्रश्न पूछने या बातचीत करने के प्रसंग में उनकी श्रवण संबंधी त्रुटियाँ यहा कदा देखी जा सकती हैं। इन त्रुटियों का निदान करके तत्काल उनका उपचार करना चाहिए।

उदाहरण :

निदान : ट और त ध्वनियों को सुनकर दोनों में अंतर न कर पाना। जैसे – पत्ता को पट्टा, और पट्टा को पत्ता समझना।

उपचार : 'ट' से बनने वाले कुछ शब्द सुनाना –

टमाटर – कट्टर – कट्टा

टट्टू – पटकना – आटा इत्यादि

'त' से बनने वाले कुछ शब्द सुनाना –

ताला – कतल – माता

तोता – कातना – पिता, पित्त इत्यादि

शिक्षार्थी इन शब्दों को सुनेगा और ट तथा त ध्वनियों में अंतर समझने का प्रयास करेगा।

परिक्षण : सुधार का अनुमान लगाने के लिए शिक्षक इन ध्वनियों को पहचानने के लिए आदेश देगा :

शिक्षक : सुनिए और किन-किन शब्दों में ट और त ध्वनियों को पहचानने के लिए आदेश देगा :

शिक्षक : सुनिए और किन-किन शब्दों में ट और त ध्वनियाँ हैं, उन्हें पहचानिए –

1. तोता, 2. टोकना, 3. काटना।

छात्र : पहले में त

दूसरे-तीसरे में ट

शिक्षक : कुट्टी – पत्ती – पित्ती

छात्र : पहले में ट

दूसरे-तीसरे में त

दूसरा उदाहरण

निदान : व – ब ध्वनियों को सुनने में व को ब, या ब को व सुनता है।

उपचार : व से बनने वाले कुछ शब्द सुनने के लिए आदेश देना –

आदि	**मध्य**	**अंत**
वन	धनवान	चुनाव
वीणा	आवाज	पाँव

ब से बनने वाले शब्द

बात	कबाब	किताब
बेर	कबीर	हिसाब

इन शब्दों को सुनाकर शिक्षक व – ब में अंतर समझाएगा।

परीक्षण : छात्रों की प्रगति जानने के लिए शिक्षक ध्वनियों को पहचानने के लिए आदेश देगा।

शिक्षक : सुनिए, किस शब्द में व ध्वनि है, पहचानिए –

वात – बात (छात्र – पहले में)

बाद – वाद (छात्र – दूसरे में)

वास – बास (छात्र – पहले में)

शिक्षक : इनमें किस शब्द में 'ब' है, पहचानिए –

सवेरा बार दवा

छात्र : दूसरे शब्द में।

इसी प्रकार सभी श्रवण त्रुटियों को शब्द, पदबंध, वाक्य के स्तर पर छात्रों को सुनाकर उनमें ध्वनियों को पहचानने और अंतर करने की क्षमता का विकास किया जा सकता है।

यंत्रों का प्रयोग

श्रवण कौशल बढ़ाने या उसे त्रुटि रहित बनाने के लिए छात्र को निरंतर मानक उच्चारण सुनना अनिवार्य

है। इसके लिए शैक्षणिक उद्देश्य से बनाए गए श्राव्य माध्यम टेप आदि का भाषा प्रयोगशाला में या शिक्षक के माध्यम से प्रयोग कर ध्वनि विभेदीकरण का अभ्यास कराया जाना चाहिए। रेडियो, टेलीविजन से निरंतर भाषा सुनना भी इस कार्य में सहायक हो सकता है।

कथन कौशल (मौखिक अभिव्यक्ति कौशल) : कथन कौशल को भाषण कौशल भी कहते है। भाषण अर्थात् बोलना। बोलना एक उत्पादक कौशल है। इसका स्वरूप ध्वन्यात्मक है। ध्वनि के उत्पादन में वागिंद्रियाँ (जिह्वा, कंठ, ओष्ठ आदि) सम्मिलित हैं। भाषण कौशल मौखिक अभिव्यक्ति है। वार्तालाप, व्याख्यान, प्रवचन, आदेश, निर्देश आदि इसके रूप हैं। मौखिक अभिव्यक्ति विचारों के आदान-प्रदान का प्रमुख माध्यम है। कई कारणों से भाषा-कौशलों में संभाव्य त्रुटियाँ इस प्रकार की हो सकती हैं **:**

- ध्वनियों, शब्दों का गलत उच्चारण,
- यथास्थान बलाघात का न होना,
- गलत अनुतान या अनुतानहीनता,
- उचित स्थान पर विराम न देना,
- व्याकरण के नियमों का उल्लंघन,
- शब्दों का गलत प्रसंग में प्रयोग।

छात्रों के साथ निरंतर रहने वाले शिक्षक उनके मौखिक भाषा व्यवहारों का निरीक्षण कर उपर्युक्त त्रुटियाँ देख सकते हैं।

उदाहरण

निदान : छात्र स और श, ष के उच्चारण में गलतियाँ करते हैं। जैसे – स को श, या प्रायः श को स बोलते हैं।

उपचार : अभ्यास–1

शिक्षक : सुनिए और बोलिए –

साला	शाला
सेर	शेर
सकल	शकल
सूर	शूर
सोलह	शोला

छात्र शिक्षक का अनुकरण करके इन शब्दों का सही उच्चारण करेगा।

उपचार : अभ्यास–2

शिक्षक : सुनिए और बोलिए –

मोहन सरकारी पाठशाला में पढ़ता है।

छात्र दोहराता है।

शिक्षक : शूरवीरों की पूजा होती है।

छात्र दोहराता है।

इसी प्रकार व-ब, श-ष, ज-ज़, फ-फ़ संबंधी दोषों का उपचार किया जाना चाहिए।

परीक्षण : सुनिए और गलत शब्द को 'गलत', सही शब्द को 'सही' कहिए –

शिक्षक :	1. साबास	छात्र **:** गलत
	2. आशा	छात्र **:** सही
	3. विस्वास	छात्र **:** गलत
	4. आकास	छात्र **:** गलत

5. श्रृंगार छात्र : सही

6. असोक छात्र : गलत

उपर्युक्त उपचारात्मक कार्य पदबंध, वाक्य आदि के स्तर पर भी कराया जा सकता है।

यंत्रों का प्रयोग

यदि शिक्षक का उच्चारण मानक है, तो उसे छात्रों के दोषों को दूर करने का सर्वोत्तम साधन मानकर शिक्षक पर भरोसा किया जा सकता है। अन्यथा शिक्षण सामग्री को टेपांकित कर उसको बार-बार सुनना और उसका अनुकरण करके अपनी भाषा को टेपांकित कर सुनना तथा अपनी त्रुटियों को दूर करते हुए बार-बार इस प्रकार का अभ्यास कर अपनी मौखिक अभिव्यक्ति को सुधारा जा सकता हैं। भाषा प्रयोगशाला के माध्यम से उच्चारण दोंषो को व्यवस्थित और मनौवैज्ञानिक विधि से दूर किया/कराया जा सकता है।

पठन कौशल : पठन का अर्थ है लिखित सामग्री को सस्वर या मौन रूप से पढ़कर अर्थ समझना। इस प्रक्रिया में आंख का प्रमुख स्थान है। शिक्षार्थी पठन क्रियाओं में सामान्यत: निम्नांकित त्रुटियाँ कर सकते हैं :

- अशुद्ध उच्चारण के साथ पढ़ना,
- रुक-रुक कर पढ़ना (मंदगति),
- विराम चिह्नों का ध्यान न रखना,
- कथ्य या संदेशों को ठीक प्रकार से न समझ पाना,
- भावानुरूप उतार-चढ़ाव (अनुतान) के साथ न पढ़ पाना।

पठन में उपर्युक्त कमियां सस्वर वाचन में पाई जाती हैं। इनका निदान और उपचार करना सरल कार्य है। मौन पठन के दोषों का निदान करना कठिन काम है। मौन पठन में संभाव्य त्रुटियाँ इस प्रकार हो सकती है :

- दृष्टि दोष या अभ्यास की कमी के कारण धीरे-धीरे पढ़ना अर्थात् उचित गति का अभाव।
- पाठ्य सामग्री के मुख्य विचारों को न समझ पाना।
- मुख्य या कठिन शब्दों को न पकड़ पाना।
- पर्यायवाची/विलोमवाची शब्दों को न बता पाना।
- प्रश्नों के उत्तर न दे पाना।

उदाहरण

निदान

स्कूल - सकूल, श्लोक - शलोक

प्रेम - परेम, नरेंद्र - नरेंदर

स्थान - अस्थान, स्थिति - इस्थिति

स्नान - अस्नान, प्राप्त - प्रापत

उपचार

उपर्युक्त उदाहरण में उच्चारण संबंधी त्रुटियाँ हैं। इनके सुधार के लिए उसी प्रकार के अभ्यास कराए जाएंगे, जिस प्रकार पीछे भाषण कौशल के संदर्भ में कराए गए हैं।

यंत्रों का प्रयोग

ओवर हेड प्रोजेक्टर द्वारा पारदर्शियों पर लिखित सामग्री का उपयोग किया जा सकता है। श्यामपट्टट लेखन भी उपयोगी और सस्ता होता है। सरल और रोचक शैली में लिखित पुस्तकें भी पठन अभ्यास के लिए अति उपयोगी होती हैं।

लेखन कौशल : मौखिक (ध्वन्यात्मक) भाषा का लिपिबद्ध करना लेखन कौशल है। लेखन भी उत्पादक कौशल माना जाता है। लेखन के विविध स्तर हैं — लिपि चिह्नों को सुंदर-सुडौल लिखना, मानक लिपि

लिखना, लिपि चिह्नों को मिलाकर संयुक्ताक्षर और शब्द लिखना। इसके उपरांत पत्र, निबंध, कहानी, प्रश्नोत्तर आदि लिखना लेखन कौशल के उदाहरण हैं।

लेखन कौशल में संभाव्य त्रुटियाँ इस प्रकार की हो सकती हैं :

- लेख का सुपाठ्य न होना,
- वर्तनी की त्रुटियाँ होना,
- व्याकरण के नियमों का उल्लंघन होना,
- विराम चिह्नों का उपयोग न करना,
- उचित परिच्छेद न बना पाना।

उदाहरण–1

निदान : अमानक संयुक्ताक्षर बनाना :

मानक	-	**अमानक**	**मानक**	-	**अमानक**
क्त	-	क्त,	ल्ल	-	ल्ल
द्व	-	व्द,	ह्‌य	-	ह्य
ट्‌ठ	-	ट्ठ,	च्च	-	च्च

उपदार : इनमें प्रथम संयुक्ताक्षर मानक है। छात्रों की जानकारी के लिए इस पद्धति और नियमों को समझाना चाहिए।

उदाहरण–2

निदान : अज्ञानतावश प्रायः शिक्षार्थी वर्तनी की निम्नांकित त्रुटियाँ करते हैं :

शुद्ध	-	**अशुद्ध**
विद्या	-	विध्या
विद्यालय	-	विध्यालय
अध्यापक	-	अद्यापक
अध्ययन	-	अद्ययन
आशीर्वाद	-	आर्शीवाद
स्वयं	-	स्वंय
करेंगे	-	करेगें

उपचार : इन त्रुटियों को दूर करने के लिए शिक्षार्थियों को श्रुतलेखन, अनुलेख, सुलेख आदि का अभ्यास कराया जाना चाहिए।

अर्थग्रहण : अर्थग्रहण बोधन की प्रक्रिया है। भाषा के सभी कौशलों में बोधन साथ-साथ चलता है। इसलिए कौशल संबंधी त्रुटियों के अध्ययन में बोधन संबंधी दोषों या कमियों पर भी उचित ध्यान देना आवश्यक है। बोधन मोटे रूप में चार स्तरों पर होता हैं :

- शब्द स्तर
- वाक्य स्तर
- अनुच्छेद स्तर
- संपूर्ण पाठ स्तर

इन स्तरों पर शिक्षार्थियों की शैक्षिक योग्यता के अनुसार अर्थग्रहण के परीक्षण किए जाते हैं। अर्थग्रहण भी चार स्तरों पर होता है :

सूचनात्मक : किसी भी गद्यांश या पद्यांश पर पूछे गए - कौन, क्या, कहाँ, किसे, किसमें, कहां से आदि से प्रारंभ होने वाले प्रश्न अर्थग्रहण में सहायता होते हैं तथा उसका परीक्षण करते हैं।

अवबोधात्मक : क्यों, कैसे आदि प्रश्न अवबोध स्तर का परीक्षण करते हैं।

आलोचनात्मक : ऐसा क्यों नहीं, ऐसा क्यों आदि प्रश्न इस स्तर पर पूछे जाते हैं।

सृजनात्मक : यदि वह ऐसा तो क्या होता ?, यदि तुम वहाँ होते तो क्या करते ?, आदि प्रश्न सृजनात्मक स्तर पर अर्थग्रहण में सहायक होते हैं।

बोध प्रश्न :

नीचे दिए गए प्रश्नों का उत्तर दी गई पंक्तियों में लिखिए।

7. श्रवण बोधन में किन दोषों की संभावना होती है :

   (i) ....

   (ii) ....

   (iii) ....

   (iv) ....

   (v) ....

8. भाषण कौशल में छात्रों की संभाव्य त्रुटियाँ इस प्रकार की हो सकती है :

   (i) ....

   (ii) ....

   (iii) ....

   (iv) ....

   (v) ....

9. बोधन के चार स्तर हैं :

   (i) ....

   (ii) ....

   (iii) ....

   (iv) ....

10. किसी एक कौशल की त्रुटियों के निदान और उपचार का उदाहरण दीजिए।

    दोष का निदान :

    ....

    ....

    ....

    उपचार :

    ....

    ....

    ....

2.6 सारांश

उद्देश्यों के आधार पर शिक्षण और परीक्षण के दो प्रकार माने जाते हैं : विकासात्मक और उपचारात्मक। पूर्व ज्ञान को समृद्ध करना और नये ज्ञान एवं अनुभवों को सिखाना, विकासात्मक शिक्षण है। मंद बुद्धि, खराब परिवेश, शिक्षण के अभाव या उसके अवैज्ञानिक होने के कारण या अस्वस्थता के कारण छात्रों के अधिगम में कमिया, दोष अथवा त्रुटियाँ होती रहती है। भाषा शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में इस प्रकार की त्रुटियाँ मातृभाषा या परिवेश की अन्य भाषाओं के प्रभाव के कारण अधिक ही पाई जाती हैं। उदाहरण के लिए पंजाबी, उर्दू, ब्रज, भोजपुरी आदि भाषाओं के व्याघात से खड़ी बोल हिंदी के उच्चारण, वर्तनी,

व्याकरण आदि में अनेक त्रुटियाँ हो जाती हैं । इन त्रुटियों को दूर करके शुद्ध भाषा सिखाने के लिए निदानात्मक परीक्षण तथा उपचारात्मक शिक्षण की व्यवस्था विद्यालयों में होनी चाहिए। भाषा शिक्षकों को इसकी पूरी प्रक्रिया का प्रशिक्षण मिलना चाहिए । इसी उद्देश्य से इस इकाई में त्रुटियों के कारण और प्रकार, निदानात्मक परीक्षण की प्रक्रिया तथा उपचारात्मक कार्यो, अभ्यासों के नमूने देकर उपचार की पद्धति को अधिक स्पष्ट किया गया है। इस पद्धति से शिक्षार्थियों को भाषा कौशलों एवं अन्य भाषा तत्त्वों को शुद्ध और मानक प्रयोग सिखाए जा सकते हैं ।

2.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. भाषाई त्रुटियों का पता लगाना तथा उनके कारणों का निर्धारण ।
2. (i) शारीरिक तथा मानसिक कारण
   (ii) त्रुटिपूर्ण शिक्षण
   (iii) भ्रम तथा अज्ञानता
   (iv) अभ्यास की कमी
   (v) अरुचि तथा उपेक्षा भाव
3. (i) छात्रों के पठन का निरंतर निरीक्षण
   (ii) रुचि अभिज्ञापन प्रश्नावली का प्रयोग
   (iii) पठन के समय आंखों की गति का निरीक्षण
   (iv) प्रमाणीकृत पठन परीक्षण
   (v) शिक्षक निर्मित पठन परीक्षण
4. (i) ज्ञान प्राप्ति के मार्ग में कमियों का निराकरण करना
   (ii) कौशलों की अधिगम प्रक्रिया में घटित त्रुटियों एवं दोषों को सुधारना
   (iii) समुचित दिशा में विकास का मार्ग प्रशस्त करना
   (iv) समाज से स्वीकृत आदतों का परिमार्जन करना
   (v) विषय विशेष को सीखने में अक्षमताओं को दूर करना ।
5. उपचारात्मक शिक्षण के सिद्धांत **:**
   (i) जहाँ पर छात्र है वहाँ से कार्यक्रम प्रारंभ किया जाए।
   (ii) छात्र को समय-समय पर रेखाचित्र आदि से प्रगति बताई जाए।
   (iii) दिए गए अभ्यास छात्र के मूल प्रयोजन की संतुष्टि करें ।
   (iv) अच्छे कार्यों के लिए छात्रों की सराहना की जाए।
   (v) कार्यों एवं अभ्यासों में विभिन्नता हो ।
6. (i) सर्वप्रथम शिक्षक द्वारा अपना आदर्श वाचन सभी दृष्टियों से आदर्श बनाना।
   (ii) छात्रों के अशुद्ध उच्चारण को शुद्ध कराना।
   (iii) शुद्ध उच्चारण सिखाने के बाद अनुतान, गति, यति में प्रशिक्षित करना।
   (iv) शब्दार्थ संबंधी कठिनाइयों को दूर करना और अर्थग्रहण की योग्यता बढ़ाना।
   (v) अच्छे-अच्छे अनुच्छेदों का चयन कर वाचन कराना।
7. (i) वक्ता की बात की ध्वनि व्यवस्था को ठीक न समझ पाना।
   (ii) विभिन्न ध्वनियों में भेद न कर पाना।
   (iii) बलाघात अर्थात् वक्ता किस बात पर जोर देना चाहता है, उसे न समझ पाना।
   (iv) अनुतान को न समझ पाना।
   (v) प्रसंग में शब्द प्रयोग को न समझना।

8. (i) ध्वनियों, शब्दों का गलत उच्चारण

(ii) यथास्थान बलाघात का न होना

(iii) गलत अनुतान या अनुतानहीनता

(iv) उचित स्थान पर विराम न देना

(v) व्याकरण के नियमों का उल्लंघन

(vi) शब्दों का गलत प्रसंग में प्रयोग

9. (i) शब्द स्तर

(ii) वाक्य स्तर

(iii) अनुच्छेद स्तर

(iv) संपूर्ण पाठ स्तर

10. दोष का निदान :

वर्तनी की त्रुटियाँ :

विद्या	–	विध्या	आशीर्वाद	–	आर्शीवाद
विद्यालय	–	विध्यालय	स्वयं	–	स्वंय
अध्यापक	–	अद्यापक	अध्ययन	–	अद्ययन

उपचार :

(i) कारण बताना।

(ii) अनुलेख, श्रुतलेख, प्रतिलेख आदि विधियों से वर्तनी दोष ठीक करना।

2.8 उपयोगी पुस्तकें

रस्तोगी, कृष्णागोपाल : भाषा संप्राप्ति मूल्यांकन, केन्द्रिय हिन्दी संस्थान, आगरा।

रस्तोगी, कृष्णागोपाल : भाषा शिक्षण में निदान और उपचार, अर्चना प्रकाशन, दिल्ली।

पांडेय, रामशकल : त्रुटि विश्लेषण : सिद्धांत और व्यवहार, केन्द्रिय हिन्दी संस्थान, आगरा।

माथुर एस. एस. : शिक्षण कला – शिक्षण तकनीक एवं नवीन पद्धतियाँ

श्रीवास्तव, राजेन्द्र प्रसाद : हिन्दी शिक्षण, 147 बी, अमर कालोनी, लाजपत नगर, नई दिल्ली–24

Narsimha Rao : *Evaluation in Language,* cÅentral Institute of India Languages, Mysore.

2.9 उपचारात्मक पाठ योजना

पाठ योजना

कक्षा : आठवीं **विषय :** हिन्दी

अवधि : 40 मिनट **पाठ :** श – स ध्वनियों का उच्चारण

उद्देश्य : सामान्य उद्देश्य

शिक्षार्थी –

1. मौखिक अभिव्यक्ति को सुधार सकेंगे।
2. उच्चारणगत त्रुटियों को दूर कर सकेंगे।
3. शुद्ध भाषा का प्रयोग कर सकेंगे।
4. हिन्दी ध्वनियों के मानक उच्चारण का अभ्यास कर सकेंगे।

विशिष्ट उद्देश्य :

शिक्षार्थी –

1. श और स ध्वनियों के उच्चारण में अंतर समझ सकेंगे।
2. श – स ध्वनियों के शुद्ध उच्चारण का अभ्यास करेंगे।

पूर्वज्ञान

छात्र हिन्दी भाषा भाषी है। उनको हिन्दी भाषा का ज्ञान है। किंतु व्यवहार में कहीं-कहीं उच्चारण में गलती करते हैं। उसका मुख्य कारण उनकी मातृबोली (ब्रज) का व्याघात या सही जानकारी का अभाव है।

शिक्षण सामग्री

शिक्षक द्वारा निर्मित पाठ जिसमें निम्नलिखित प्रकार के शब्दों का अभ्यास कराया जाएगा।

1. शाला – साला,
   शाम – साम,
   शेर – सेर,
   शादी – सादी,
   कोश – कोस,
   पाश – पास,
   शीशा – सीसा (अर्थभेद बाले शब्द)
2. मुश्किल, शूरवीर, शाबाश,
   शोर-शराबा, केश, कुशलता, कौशल
   शब्द कोश, शरारत इत्यादि।

सहायक सामग्री

शब्दों के चार्ट

प्रस्तावना

श्यामपट्ट पर निम्नलिखित वाक्यों का शिक्षार्थियों से उच्चारण कराया जाएगा :

1. कक्षा में शोर मत करो।
2. शाबाश, तुमने अच्छा लिखा।
3. शूरों री पूजा होती है।
4. भाषा के चार कौशल होते है।

साथ ही शेर-सेर, शाला-साला जैसे कुछ शब्दों को भी श्यामपट्ट पर लिख कर शिक्षार्थियों से उनका उच्चारण करावाया जाएगा।

संभाव्य त्रुटियाँ : 'श' ध्वनि वाले शब्दों का उच्चारण कुछ छात्र 'स' के रूप में करेगे।

उद्देश्य कथन

आप लोगों में से कुछ ने 'श' का उच्चारण 'स' किया है। इससे कभी-कभी शब्द का अर्थ भी बदल जाता है। जैसे श्यामपट्ट पर लिखे इन शब्दों का – शेर – सेर, शाला – साला इत्यादि।

आज 'श' और 'स' के शुद्ध उच्चारण के लिए हम अभ्यास कार्य करेगे।

प्रस्तुतीकरण

अभ्यास–1

इन शब्दों के उच्चारण को ध्यान से सुनिए और अनुकरण कीजिए :

शाला – साला, शाम – साम
पाश – पास, शीशा – सीसा
शादी – सादी, शेर – सेर

अभ्यास–2

इन वाक्यों को पढ़िए :

1. श्याम पाठशाला जाता है।
2. सोहन की कल शादी है।
3. शोभा शीशे में अपनी शक्ल देखती है।

इन अभ्यासों के बाद शिक्षक, छात्रों को समझाएगा कि 'श' को 'स' बोलने में शब्दों का अर्थ कैसे बदल जाता है।

अभ्यास–3

उपर्युक्त प्रकार के अन्य शब्दों और वाक्यों तथा अनुच्छेदों का अभ्यास कराया जाएगा।

पुनरावृत्ति : शिक्षक छात्रों को शुद्ध उच्चारण का महत्त्व समझाकर श-स के शुद्ध उच्चारण के अभ्यास के लिए आदेश देगा।

मूल्यांकन

1. कुछ शब्दों और वाक्यों का उच्चारण करवाकर 'श' और 'स' के उच्चारण में अंतर की जांच की जाएगी।
2. श्राव्य टेप द्वारा श – स ध्वनियों में अंतर पूछा जाएगा।

गृहकार्य

1. पठित पाठ से 'श' और 'स' ध्वनियों से युक्त 20–20 शब्द चुन कर लिखिए।
2. चुने हुए शब्दों के शुद्ध उच्चारण का अभ्यास करिए।

इकाई 3

क्रियात्मक शोध

: रूपरेखा :

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 क्रियात्मक शोध का अर्थ एवं महत्त्व
3.4 क्रियात्मक शोध के सोपान
3.5 क्रियात्मक शोध एवं मूलभूत शोध में अंतर
3.6 भाषिक संदर्भ में क्रियात्मक शोध के विभिन्न क्षेत्र
3.6.1 श्रवण एवं मौखिक अभिव्यक्ति
3.6.2 पठन एवं अर्थघटन
3.6.3 भाषा लेखन
3.7 क्रियात्मक शोध के विभिन्न अभिकल्प
3.7.1 एकल समूह अभिकल्प
3.7.2 समानांतर समूह अभिकल्प
3.7.3 चक्र समूह अभिकल्प
3.8 क्रियात्मक शोध आख्या (रिपोर्ट)
3.9 आख्या प्रस्तुतीकरण शैली
3.10 भाषा कार्य से संबंधित क्रियात्मक शोध के कतिपय शीर्षक
3.11 क्रियात्मक शोध संबंधी उदाहरण
3.11.1 क्रियात्मक शोध की रूपरेखा
3.12 परियोजना निर्माण एवं क्रियान्वयन में आने वाली कठिनाइयाँ एवं निराकरण
3.13 सारांश
3.14 बोध प्रश्नों के उत्तर
3.15 उपयोगी पुस्तकें

3.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में आप अध्ययन करेंगे कि भाषा-शिक्षण में आने वाली समस्याओं के समाधान के लिए भाषा शिक्षक किस प्रकार अपने शिक्षण कार्य के साथ-साथ प्रयोग एवं परीक्षण पर आधारित शोध कार्य भी कर सकता है। इस प्रकार का क्रियागत अनुसंधान व्यावहारिक तथा उपयोगी तो होगा ही, साथ ही अन्य भाषा शिक्षकों के लिए प्रेरणादायी भी सिद्ध होगा। ऐसा शोधकार्य शिक्षार्थियों की भाषागत उपलब्धियों से उन्नयन तथा भाषा अधिगम में आने वाली विभिन्न बाधाओं के निराकरण तथा उपचार में सहायक होगा। भाषा शिक्षण की प्रक्रिया का अंग बन जाने तथा प्रस्तुत समस्याओं के समाधान हेतु शिक्षण के साथ-साथ चलने वाले शोध कार्य के कारण ही इसे क्रियात्मक शोध कहा जाता है।

क्रियात्मक शोध संबंधी इस अध्ययन से आप अपनी शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में आवश्यक सुधार हेतु शोध परियोजनाओं का निर्माण एवं क्रियान्वयन कर सकेंगे और शिक्षार्थियों के भाषा अधिगम की क्रिया को अधिक सुगम एवं सुग्राह्य बना सकेंगे।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- क्रियात्मक शोध का अर्थ एवं महत्त्व बता सकेंगे।
- भाषा-शिक्षण के विभिन्न क्षेत्रों से संबंधित समस्याओं और प्रकरणों का चयन कर सकेंगे।
- क्रियात्मक शोध के विभिन्न सोपानों को समझकर किसी विषय पर क्रियात्मक शोध की रूपरेखा का निर्माण कर सकेंगे।
- क्रियात्मक शोध अभिकल्पों का विवेचन कर सकेंगे।
- शोध आख्या (रिपोर्ट) को प्रभावी ढंग से प्रस्तुत कर सकेंगे।

3.3 क्रियात्मक शोध का अर्थ एवं महत्त्व

हम सब भली-भाँति जानते है कि किसी भी शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया का केन्द्र बिन्दु शिक्षार्थी होता है। हमारे समस्त शैक्षणिक कार्य, सारी चेष्टाएं, सारे प्रयत्न शिक्षार्थी को ध्यान में रखकर ही किए जाते हैं क्योंकि उन सबका प्रतिफलन शिक्षार्थी में ही सार्थक होता है। किंतु यह भी एक निर्विवाद सत्य है कि समस्त शिक्षण-प्रक्रिया का स्रोत शिक्षक है और हर सफल शैक्षणिक प्रयोग के पीछे शिक्षक का सजग चिंतन उसका सतत प्रयोगधर्मी दृष्टिकोण और अपने शिक्षण-कार्य को अधिकाधिक सार्थक बनाने की लगन एवं प्रयत्न होते हैं। शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में प्रयोगधर्मी दृष्टिकोण ने ही शैक्षिक अनुसंधान के क्षेत्र में एक ऐसी समस्याएं होती हैं जिनका हल खोजने में ऐसे व्यक्ति अधिक महत्त्वपूर्ण योगदान कर सकते हैं जो उसी क्षेत्र में कार्य कर रहे हों। ये लोग अपनी शैक्षिक समस्याओं से भली-भांति परिचित होने के कारण उनका हल खोजने में और प्राप्त समाधानों का प्रयोग द्वारा मूल्यांकन करने में अधिक सक्षम होते हैं। अतः उनके द्वारा किए गए शोध-कार्यों से शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में सार्थक सुधार आ सकेगा। शिक्षा-शास्त्रियों के इसी चिंतन के फलस्वरूप शैक्षिक अनुसंधान के क्षेत्र में 'क्रियात्मक शोध' का जन्म हुआ। स्टीफन एम. कोरे के अनुसार क्रियात्मक शोध एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत शिक्षक तथा शिक्षा से सम्बन्ध अन्य व्यक्ति अपनी कल्पना शक्ति का सृजनात्मक एवं रचनात्मक प्रयोग करते हुए साहसपूर्वक उन क्रियाकलापों का परीक्षण करते हैं जिनसे अधिक सफलता मिलने की आशा होती है और फिर उनकी उपयोगिता की जांच के लिए विधिवत् एवं व्यवस्थित रूप से प्रमाण इकट्ठे करते हैं।

कुर्ग के मतानुसार "क्रियात्मक अनुसंधान" का तात्पर्य है, ऐसा अनुसन्धान जिसका संचालन उन लोगों द्वारा हो जो अध्ययन की जाने वाली समस्याओं से प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित हों, न कि बाह्य अनुसन्धानकर्ताओं व विशेषज्ञों द्वारा। इसका प्रमुख उद्देश्य है शैक्षिक अभ्यास का विकास करना एवं कार्य पद्धति में सुधार लाना।

दूसरे शब्दों में क्रियात्मक शोध एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें शिक्षाकर्मी शिक्षण-कार्य में सुधार लाने के लिए अपनी शैक्षिक समस्याओं का वैज्ञानिक ढंग से हल खोजने के लिए प्रमाण इकट्ठे करता है, प्रयोग और परीक्षण करता है और उनका मूल्यांकन करता है।

3.4 क्रियात्मक शोध के सोपान

क्रियात्मक अनुसंधान की आवश्यकता, उसके अर्थ एवं स्वरूप से अवगत हो जाने के उपरांत प्रश्न यह उठता है कि इस अनुसंधान प्रक्रिया को किस प्रकार व्यवहार में लाया जाए अर्थात् क्रियात्मक शोधकार्य के लिए क्या क्रियाविधि अपनाई जाए। सामान्यतया क्रियात्मक शोध की निम्नांकित क्रियाविधि एवं सोपान माने जाते हैं —

- समस्या का चयन
- समस्या की सीमांकन
- समस्या के संभाव्य कारणों का निदान एवं विश्लेषण
- क्रियात्मक परिकल्पनाओं का निर्माण
- कार्य योजना का निर्माण और उसका प्रयोग
- क्रियात्मक परिकल्पनाओं का परीक्षण एवं प्रमाणीकरण।

समस्या का चयन : समस्या की स्पष्ट पहचान के बिना समस्या का समाधान पाना संभव नहीं होगा क्योंकि क्रियात्मक शोध में समस्या ही वह विषय है जिसका अनुसंधान द्वारा समाधान ढूंढा जा रहा है। भाषा शिक्षक के नाते क्रियात्मक शोध के अन्तर्गत आपकी समस्या का संबंध भाषा शिक्षण अधिगम के क्षेत्र से होना चाहिए। इस दृष्टि से उच्चारण, वर्तनी, शब्द प्रयोग, शब्द-रचना, वाक्य-रचना, पठन, लेखन आदि के क्षेत्र में विविध समस्याएं हो सकती हैं जिनका क्रियात्मक शोध द्वारा समाधान भाषा-शिक्षण के कार्य को प्रभावी बना सकता है। समस्या की पहचान एवं चुनाव करने में निम्नलिखित बिंदुओ पर ध्यान देना उपयोगी होगा :

- समस्या शिक्षण की वास्तविक आवश्यकता एवं उद्देश्य की पूर्ति में सहायक हो।
- समस्या सार्थक एवं व्यावहारिक हो।
- समस्या के चयन में शोधकर्ता महत्वाकांक्षी न हो अपितु अपनी योग्यता, कार्य-क्षमता को ध्यान में रखे।
- समस्या के चयन में आधार सामग्री, समय तथा घन की उपलब्धता को ध्यान में रखे।
- समस्या की पृष्ठभूमि में शोधकर्ताओं की अपनी रुचि का ध्यान भी रखना चाहिए।
- समस्या संभावित परिकल्पनाओं के निर्माण द्वारा परीक्षणीय हो।

उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखकर समस्या की पहचान करना ही क्रियात्मक शोध का पहला चरण है।

समस्या का सीमांकन : समस्या के व्यापक रूप को पहचानने के बाद उसमें से एक निश्चित विशिष्ट समस्या को चुनकर उस समस्या की सीमाएं निर्धारित करना समस्या का सीमांकन कहलाता है। उदाहरण के रूप में वर्तनी संबंधी त्रुटियों का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। इस व्यापक क्षेत्र में से एक विशिष्ट समस्या जैसे श, स से संबंधित वर्तनी-त्रुटियों को शोध के लिए चुनना समस्या का सीमांकन है। यही एक प्रकार से समस्या का परिभाषी कारण है। व्हिटनी के मतानुसार – किसी समस्या को परिभाषित करने का अर्थ है उसके चारों ओर बांड (सीमाएं) लगाना।

समस्या के संभाव्य कारणों का निदान एवं विश्लेषण : समस्या चयन के बाद शोधकर्ता को यह देखना चाहिए कि समस्या के संभाव्य कारण क्या हैं और क्यों हैं ? इसका पता लगाने के लिए शोधकर्ता को प्रमाणों का सहारा उसी प्रकार लेना पड़ता है जिस प्रकार चिकित्सक को रोग के लक्षणों आदि का। जिस प्रकार रोग के कारणों का ठीक-ठीक पता लग जाने पर ही रोग का ठीक उपचार संभव होता है उसी प्रकार समस्या के प्रासंगिक कारणों के ज्ञान से ही समाधान संभव हो सकेगा।

क्रियात्मक परिकल्पनाओं का निर्माण : समस्या के कारणों के निदान एवं विश्लेषण के बाद अगला चरण है क्रियात्मक परिकल्पनाओं का निर्माण अर्थात् उन क्रियाओं के बारे में विचार करना जिनसे समस्या का निराकरण संभव हो। ये क्रियात्मक परिकल्पनाएं आनुमानिक समाधान हैं। इनकी प्रामाणिकता प्रयोग और परीक्षण की कसौटी पर ही मालूम हो सकती हैं। परिकल्पनाएं हमें क्रियात्मक शोध के लिए दिशा प्रदान करती हैं, वे हमें ऐसी संभावित क्रियाएं सुझाती है जो समस्या के हल निकालने में सहायक होती हैं।

कार्य योजना का निर्माण और उसका प्रयोग : क्रियात्मक परिकल्पनाओं के निर्माण के बाद शोधकर्ता कार्य योजना तैयार करता है। परिकल्पनाओं की परीक्षा के लिए उपयुक्त रूपरेखा तैयार करता है जिसमें कार्य योजना को संपादित करने के लिए अपेक्षित साधन, विधियाँ, आधार-सामग्री प्राप्त करने के लिए उपकरणों आदि का उल्लेख होता है और उनकी उपयुक्तता के कारणों पर प्रकाश डाला जाता है।

क्रियात्मक परिकल्पनाओं का परीक्षण एवं प्रमाणीकरण : कार्य योजना बनाने के उपरांत शोधकर्ता परीक्षण विधियों का प्रयोग करते हुए परिकल्पनाओं की उपयोगिता व सार्थकता का पता लगाता है अर्थात् समस्याओं के निराकरण के लिए जिन समाधानों का अनुमान लगाया गया था, उनकी सत्यता-असत्यता की परख करता है। यदि कार्य योजना के सम्पादन से शोधकर्ता के लक्ष्य की पूर्ति होती है तो उस समाधान को स्वीकार कर लिया जाता है अन्यथा उसे छोड़ दिया जाता है। कार्य सम्पादन के समय शोधकर्ता आवश्यकतानुसार परिकल्पनाओं में सुधार भी कर सकता हैं।

बोध प्रश्न :

1. क्रियात्मक शोध से क्या आशय है ? चार पंक्तियों में उत्तर लिखें।

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

   ....

3.5 क्रियात्मक शोध एवं मूलभूत शोध में अंतर

अनुसन्धान के प्रमुख दो प्रकार हैं — मूलभूत (फण्डामैन्टल) एवं अनुप्रयुक्त (एप्लाइड)। अनुप्रयुक्त अनुसन्धान ही क्रियात्मक शोध है। यद्यपि दोनों की क्रिया-विधि एक ही है लेकिन उद्देश्य, क्षेत्रों एवं परिमाण की दृष्टि से इन में अन्तर निहित है।

उद्देश्य की दृष्टि से

'मौलिक शोध' में आप शोधकर्ता के रूप में सर्वमान्य नियमों एवं सिद्धान्तों की खोज करते हैं, जबकि क्रियात्मक शोध में आप अपने भाषा शिक्षण के क्षेत्र में ही कक्षा कार्यों में सुधार लाने के लिए अपनी समस्याओं का समाधान ढूंढते हैं। उदाहरणार्थ - मौखिक अभिव्यक्ति के क्षेत्र में 'उच्चारण सम्बन्धी अशुद्धियों का अन्वेषण एवं उनका सुधार'।

समस्या के स्वरूप एवं महत्त्व की दृष्टि से

मौलिक शोध में आप की समस्या का सैद्धान्तिक कठिनाइयों से अधिक सम्बन्ध होता है, जबकि क्रियात्मक अनुसन्धान में समस्याएं कक्षा/विद्यालयगत व्यावहारिक कठिनाइयों से सम्बन्धित होती हैं। अतः समस्या के स्वरूप में पर्याप्त अन्तर पाया जाता है।

आधारभूत न्यादर्श की दृष्टि से

मौलिक अनुसन्धान में न्यादर्श का आकार क्रियात्मक अनुसन्धान की अपेक्षा बड़ा होता है और न्यादर्श का चुनाव भी बहुत ही सावधानी से किया जाता है, ताकि न्यादर्श पूरी जनसंख्या का प्रतिनिधि बन सके, जबकि क्रियात्मक शोध में न्यादर्श किसी कक्षा के छात्र तथा कभी-कभी कुछ विशिष्ट विद्यार्थियों तक ही सीमित हो पाता है।

सामान्यीकरण की दृष्टि से

क्रियात्मक शोध की अपेक्षा मौलिक अनुसन्धान के सामान्यीकरण की प्रामाणिकता अधिक होती है, यहाँ सामान्य नियमों का निर्धारण किया जाता है, नवीन सत्यों एवं तथ्यों को खोज निकाला जाता है, जबकि क्रियात्मक शोध में स्थानीय सन्दर्भ में सामान्य निष्कर्ष मात्र निकाले जाते है और वे भी विषयगत कक्षानुरूप कार्य पद्धति सुधारने हेतु। उदाहरणार्थ, यदि भाषा शिक्षक के रूप में आप अंग्रेजी माध्यम से पढ़ने वाले कक्षा 9 के विद्यार्थियों की हिन्दी उच्चारण सम्बन्धी अशुद्धियों के कारण एवं उनके सुधार सम्बन्धी शोध कार्य करना चाहते हैं तो सामान्यीकरण की दृष्टि से जो भी निष्कर्ष आयेंगे, वे केवल आपके

विद्यालय एवं कक्षा के सन्दर्भ में ही लागू हो पायेंगे, अन्य प्रकार के विद्यार्थियों एवं कक्षा पर नहीं, क्योंकि अन्य परिस्थितियों में कारण एवं उपचार दोनों ही दूसरे होंगे।

शोध रूपरेखा की दृष्टि से

शोध कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व आप जो भी शोध कार्य की संक्षिप्त रूपरेखा प्रस्तुत करते हैं, क्रियात्मक शोध में यह रूपरेखा वास्तविक कक्षा एवं विद्यार्थीगत परिस्थितियों के अनुसार लचीली एवं परिवर्तनशील होती है, जबकि मौलिक अनुसन्धान में यह रूपरेखा जटिल होती है, उसमें परिवर्तन शीघ्रतापूर्वक नहीं लाया जा सकता।

3.6 भाषिक संदर्भ में क्रियात्मक शोध के विभिन्न क्षेत्र

भाषा के चार कौशलों - सुनना, बोलना, पढ़ना एवं लिखना को हम क्रियात्मक शोध के परिप्रेक्ष्य में चार प्रमुख क्षेत्र मान सकते हैं। इनके संबंध में आई हुई कठिनाइयों को दूर करने के लिए हम विषयों का चयन कर सकते हैं। आइए, विचार करें कि सुनने (श्रवण), बोलने (मौखिक अभिव्यक्ति), पढ़ने तथा लिखने के क्षेत्र में कौन सी कठिनाइयाँ एवं समस्याएं उत्पन्न होती हैं जिनका निराकरण भाषा अधिगम की दृष्टि से आवश्यक है।

3.6.1 श्रवण एवं मौखिक अभिव्यक्ति

श्रवण तथा बोलना दोनों का अन्योन्याश्रय संबंध है। बालक का प्रारंभिक भाषार्जन तो सुनने के माध्यम से ही होता है। किन्तु श्राव्य सामग्री को बालक ने कहाँ तक ग्रहण किया इसका पता हमें उसके बोलने के माध्यम से ही चलेगा। अत: सुनना तथा बोलना दोनों कौशलों में अनुभूत समस्याओं को क्रियात्मक शोध के लिए एक साथ लेना अधिक उपयुक्त होता है। श्रवण कौशल से संबंधित कुछ दोष हो सकते हैं - मौखिक रूप से दिए गए निर्देशों को न समझना, स्वराघात, बलाघात, स्वर के उतार-चढ़ाव के अनुसार अर्थग्रहण न कर पाना, श्राव्य सामग्री का केन्द्रीय भाव न बता पाना, आदि। क्रियात्मक शोध द्वारा इन समस्याओं का वैज्ञानिक अध्ययन-विश्लेषण करके तदनुरूप सुधार कार्य किया जा सकता है।

यदि बालक शुद्ध एवं स्पष्ट भाषा में अपने विचारों एवं भावों को प्रकट करने में कठिनाई का अनुभव करता है तो शिक्षक को इसके कारणों की भी खोज करनी पड़ेगी। ये कठिनाइयाँ कई प्रकार की हो सकती है - (1) अशुद्ध उच्चारण, (2) उपयुक्त शब्दों का प्रयोग न होना, (3) वाक्य में पदक्रम सम्बन्धी दोष, (4) लिंग, वचन, कारक के अशुद्ध प्रयोग, (5) विषय-सामग्री का क्रमबद्ध संयोजन न होना आदि। विभिन्न प्रकार के क्रियाकलापों भाषण, वार्ता, कहानी, संवाद, वाद-विवाद आदि के समय हम उनकी त्रुटियाँ जान सकते हैं और उनसे संबंधित क्रियात्मक शोध की योजनाएं तैयार कर सकते हैं।

3.6.2 पठन एवं अर्थग्रहण

पाठ्यपुस्तक में अनेक नए शब्दों का समावेश होता है। शिक्षार्थी उन्हें पढ़ते समय अर्थग्रहण में कठिनाई अनुभव करते हैं। अर्थग्रहण के अनेक स्तर हो सकते है, जैसे शब्दार्थ ग्रहण करना, सरलार्थ ग्रहण करना, भावार्थ ग्रहण करना, कार्य-कारण संबंध जानना, निष्कर्ष निकालना आदि। शिक्षार्थी अनेक बार पाठ का सरलार्थ तो समझ लेते हैं किन्तु उसके निहितार्थ जैसे पाठ्यं सामग्री का विश्लेषण, मूल्यांकन तथा लेखक के उद्देश्य को नहीं समझ पाते। इसके विभिन्न कारण हो सकते हैं, जैसे विचारों की जटिलता, भाषा-शैली की जटिलता अथवा शिक्षार्थियों में अपेक्षित पठन योग्यता का अभाव आदि। अर्थग्रहण संबंधी इन कठिनाइयों को जानने के लिए क्रियात्मक शोध विधि अपनाई जा सकती है।

सस्वर पठन

हिन्दी पढ़ते समय प्राय: शिक्षार्थी अनेक कारणों से शब्दों का सही उच्चारण नहीं कर पाते। अशुद्ध उच्चारण के कारणों का पता लगाना क्रियात्मक अनुसंधान का क्षेत्र हो सकता है। इसी प्रकार यदि वाचन की गति उपयुक्त नहीं है अथवा विराम चिन्हों पर उचित ध्यान न देने की समस्या हो तो उसके कारणों का पता लगाने के लिए क्रियात्मक अनुसंधान का सहारा लेना उपयुक्त होगा।

पठन अभिरुचि एवं आदत

पठन की दक्षता के विकास के लिए शिक्षार्थियों में पठन अभिरुचि तथा आदत का विकास करना भी आवश्यक हैं। प्राय: देखा जाता है कि छात्र पाठ्य पुस्तक के अतिरिक्त साहित्य सामग्री का अध्ययन

उपयुक्त मात्रा में नहीं करते। इसके अनेक कारण हो सकते हैं, जैसे उपयुक्त पुस्तकों का उपलब्ध न होना, उनकी रुचि तथा स्तर के अनुरूप साहित्य की जानकारी न होना आदि। क्रियात्मक अनुसंधान द्वारा हम जान सकते हैं कि पठन में इस प्रकार के दोषों के क्या कारण हो सकते हैं तथा कारणों को जान कर उनके निवारण के उपाय भी खोजे जा सकते हैं।

3.6.3 भाषा लेखन

लेखन कौशल के अपेक्षित गुण हैं — सुन्दर लेख, शुद्ध वर्तनी, उपयुक्त वाक्य रचना, अनुच्छेद निर्माण, सुसंगत अभिव्यतक्ति एवं सृजनात्मक लेखन। हर स्तर के शिक्षार्थी लिखने में कुछ सामान्य अशुद्धियाँ करते हैं। लेखन की इन अशुद्धियों के कारणों का सर्वेक्षण क्रियात्मक शोध के माध्यम से किया जा सकता हैं।

उदाहरण के लिए हम वर्तनी की अशुद्धियों के कारणों पर विचार करें। सामान्यत: वर्तनी की अशुद्धियाँ तीन कारणों से होती हैं। मानक वर्णमाला का सही ज्ञान न होना, अशुद्ध उच्चारण, व्याकरण नियमों की अनभिज्ञता। अत: इनके संदर्भ में हम वर्तनी संबंधी अशुद्धियों का विश्लेषण कर अशुद्धियों के कारणों का पता लगाएं और उन्हें दूर करने का उपाय खोजें। इसी प्रकार सुलेख तथा रचना संबंधी कठिनाइयों का भी पता लगाएं और उनके कारणों का विश्लेषण करें और इन्हें दूर करने के लिए क्रियात्मक शोध की योजना बनाएं।

संक्षेप में श्रवण, मौखिक-अभिव्यक्ति, पठन एवं लेखन के क्षेत्रों में अनेक प्रकार की अधिगम सम्बन्धी समस्याएं उठती रहती हैं। आपके सामने जो समस्या प्रस्तुत हो उससे संबंधित कठिनाइयों और कारणों की खोज के लिए क्रियात्मक शोध विधि का उपयोग करें।

बोध प्रश्न :

चार पंक्तियों में उत्तर दें।

2. क्रियात्मक शोध व मूलभूत शोध में क्या अन्तर हैं ?

   ....
   ....
   ....
   ....

3. पठन-कौशल से संबंधित कौन-कौन से तीन क्षेत्र हैं जहाँ क्रियात्मक अनुसंधान किया जाना आवश्यक हैं ?

   ....
   ....
   ....
   ....

4. मौखिक अभिव्यक्ति के क्षेत्र में किस प्रकार के दोष शिक्षार्थियों में देखे जाते हैं ?

   ....
   ....
   ....
   ....

5. भाषा-लेखन संबंधी क्रियात्मक शोध कौन-कौन से हो सकते हैं ?

   ....
   ....
   ....
   ....

3.6 भाषिक संदर्भ में क्रियात्मक शोध के विभिन्न क्षेत्र

क्रियात्मक शोध के अनेक सोपानों के अध्ययन से पता चलता है कि क्रियात्मक शोध का मूल तत्त्व वैज्ञानिक विधि का प्रयोग है। इस वैज्ञानिक विधि को कार्यरूप देने के लिए जो व्यूह रचना की जाती है उसे अनुसंधान की भाषा में 'अभिकल्प' कहा जाता है। अभिकल्प 'क्रियात्मक शोध' में अनुसंधान की एक विशिष्ट योजना की ओर संकेत करता है जिसके द्वारा अनुसंधान की समस्या का वैज्ञानिक ढंग से हल खोजने का प्रयास किया जाता है।

क्रियात्मक शोध की दृष्टि से उपयुक्त एवं तर्कसंगत अभिकल्प निम्नलिखित हैं –

- एकल समूह अभिकल्प
- समानान्तर समूह अभिकल्प
- चक्र समूह अभिकल्प

3.7.1 एकल समूह अभिकल्प

क्रियात्मक अनुसन्धान में इस अभिकल्प का सर्वाधिक प्रयोग किया जाता है। इस अभिकल्प के अन्तर्गत समस्या का अध्ययन करने के लिए शिक्षार्थियों या प्रयोज्यों का एक ही समूह लिया जाता है। किसी समस्या पर एकल समूह प्रयोग द्वारा अध्ययन के लिए भाषा शिक्षक कक्षा में किसी एक प्रमुख भाषा समस्या यथा अशुद्ध उच्चारण / अशुद्ध वाचन की तीव्रता का अनुमान लगाता है। उदाहरणार्थ वह देखता है कि कितने शिक्षार्थी कविता का भावानुसार एवं लय सहित पाठ नहीं कर पाते। इसके पश्चात् भाषा शिक्षक इस समस्या के शोधन हेतु कार्य योजना निर्मित करता है और तदनुसार अशुद्ध उच्चारण के निवारणार्थ अपेक्षित उपायों को प्रयोग में लाता है।

समस्या निवारणार्थ प्रयुक्त उपायों को क्रियान्वित करने के पश्चात् निश्चित अवधि तक उसी समस्या में शिक्षार्थियों की स्थिति को पुनः उसी प्रकार मापा जाता है जैसा कि निवाराणार्थ उपायों को करने से पूर्व मापा गया था। इस प्रकार प्राप्त परिमाणों के आधार पर यह देखा जाता है कि निवारणार्थ प्रयुक्त उपाय कहाँ तक कारगर हुए हैं, समस्या का समाधान किस सीमा तक हो सका है।

इसे निम्नांकित उदाहरण द्वारा सुस्पष्ट किया जा सकता है।

समस्या

शिक्षार्थियों द्वारा आदर्श वाचन में अशुद्ध उच्चारण।

मूल्यांकन

मूल्यांकन के लिए प्रदत्तों को निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया जाएगा :-

क्र.सं.	आदर्श वाचन में शब्दों के अशुद्ध उच्चारण करने वाले शिक्षार्थियों के नाम	क्रियात्मक शोध के पूर्व अशुद्ध उच्चारित शब्दों की संख्या	क्रियात्मक शोध के पश्चात् अशुद्ध उच्चारित शब्दों की संख्या	उच्चारण शोधन उपायों के परिणाम	
				सकारात्मक	निषेधात्मक
1.					
2.					
3.					
4.					
5.					
6.					

योग ....

मध्यमान ....

उपर्युक्त प्रायोगिक अभिकल्प में एक माह के अन्दर विभिन्न उपायों को लागू करने के पश्चात् शब्दों के अशुद्ध उच्चारण की तालिका के मध्यमान और शोध कार्य से पूर्व शब्दों के अशुद्ध उच्चारण की तालिका के मध्यमान में अंतर को अंकित किया जाएगा।

3.7.2 समानान्तर समूह अभिकल्प

इस अभिकल्प को 'तुलनात्मक अभिकल्प' के नाम से भी जाना जाता है। इसमें अशुद्ध उच्चारण करने वाले शिक्षार्थियों के दो या तीन एक समान लघु समूह बनाए जाते हैं। इनमें एक समूह को प्रयोगात्मक समूह तथा दूसरे समूह को नियन्त्रित समूह कहा जाता है। नियन्त्रित समूह में उच्चारण शोधन संबंधित वही सामान्य कक्षागत क्रियाकलाप आयोजित होते रहते हैं, जिन्हें शिक्षक पहले भी करता था, लेकिन प्रयोगात्मक समूह के उच्चारण शोधन हेतु सामान्य क्रियाकलापों के स्थान पर कुछ विशेष क्रियाकलापों का आयोजन किया जाता है जैसे टेप आधारित अभ्यास आदि। 'प्रायोगिक समूह' में प्रयुक्त उपायों के आधार पर शिक्षार्थियों के उच्चारण में आए हुए परिवर्तन/परिणाम की तुलना नियंत्रित समूह से प्राप्त परिणाम के आधार पर की जाती है।

3.7.3 चक्र समूह अभिकल्प

क्रियात्मक अनुसन्धान का यह अभिकल्प समानांतर समूह अभिकल्प से थोड़ा भिन्न है। इस अभिकल्प के आधार पर दो समानांतर समूहों की कार्य पद्धति में एक निश्चित अवधि के पश्चात् परिवर्तन कर दिया जाता है। इस निश्चित अवधि को प्रथम चक्र का नाम दिया जा सकता है। प्रथम चक्र में भाषा शिक्षक ने जिस एक समूह को 'नियंत्रित समूह' का नाम दिया था, एक निश्चित अवधि के पश्चात् दूसरे चक्र में वह प्रायोगिक समूह बना दिया जाता है, और द्वितीय चक्र में जो द्वितीय समूह 'प्रायोगिक समूह' था, उसे नियंत्रित समूह बना दिया जाता है। पूर्व में अपनाई गई शिक्षण प्रक्रिया की पुनरावृत्ति की जाती है, केवल विषय वस्तु के स्वरूप को बदला जाता है, लेकिन इसका स्तर वही रहता है तथा भाषा शिक्षक भी वही रहता है। देखना वह होता है कि द्वितीय चक्र में बनाए गए 'प्रायोगिक समूह' ने इस बार निर्मित 'नियंत्रित समूह' की तुलना में कितनी कुछ उपलब्धियाँ अर्जित की जिससे प्रथम चक्र के नियंत्रित समूह को भी प्रायोगिक समूह की भांति अतिरिक्त शिक्षण विधियों, क्रियाकलापों का लाभ मिल सके।

बोध प्रश्न :

6. शोध अभिकल्प के प्रकारों का उल्लेख कीजिए। इनमें से किस अभिकल्प का प्रयोग भाषा शिक्षकों द्वारा अधिक किया जाता है ? चार पंक्तियों में उत्तर दें।

   ....

   ....

   ....

   ....

7. 'एकल समूह अभिकल्प' में जिस विशेषता पर हमें क्रिया का प्रभाव देखना होता हैं उसकी माप कब की जाती है ? सही विकल्प छांटिए।

   (i) क्रिया करने से पूर्व

   (ii) क्रिया करने के पश्चात्

   (iii) क्रिया करने के पूर्व एवं पश्चात्

   (iv) क्रिया से कोई सम्बन्ध नहीं

3.8 क्रियात्मक शोध आख्या (रिपोर्ट)

भाषा कार्य से संबंधित किसी भी विषय पर शोध परियोजना को विधिवत् सम्पन्न करने के पश्चात् आपको उसकी रिपोर्ट लिखने की भी आवश्यकता महसूस होगी। रिपोर्ट प्रस्तुतीकरण की एक निश्चित विधि है। शोध की रिपोर्ट को पांच भागों में विभाजित किया जाता है :

– प्रस्तावना

– विधि

– आधार सामग्री का प्रस्तुतीकरण, विश्लेषण एवं विवेचन

– सारांश एवं निष्कर्ष

– सन्दर्भ सामग्री

प्रस्तावना

प्रस्तावना में अध्ययन संबंधी समस्या का निरूपण किया जाता है। प्रस्तावना में संबंधित शोध साहित्य की समीक्षा द्वारा उन अनुसन्धान योग्य बिन्दुओं को प्रदर्शित किया जाता हैं, जिनके समाधान हेतु प्रस्तुत क्रियात्मक शोध किया गया है। यहाँ आपको अनुसंधान की आवश्यकता एवं महत्त्व पर प्रकाश डालना आवश्यक होता है। तत्पश्चात् शोध के उद्देश्यों तथा तत्सम्बन्धी परिकल्पनाओं का भी उल्लेख करना होता है।

विधि

अनुसंधान रिपोर्ट के प्रस्तुतीकरण में शोध कार्य विधि का विस्तार से वर्णन किया जाता है। वर्णन की प्रस्तुति इस प्रकार की जाए कि यदि कोई अन्य शोधकर्ता इस प्रक्रिया की पुनरावृत्ति करना चाहे तो वह बिना किसी कठिनाई से कर सके। इस दृष्टि से शोध अध्ययन के लिए न्यादर्श का चयन 'उनके चयन का आधार' उनकी आयु, लिंग, सामाजिक स्तर, परिस्थिति, नियंन्त्रित-अनियन्त्रित दिशाएं, प्रदत्त संग्रह स्थान, समय, अनुसंधान की प्रक्रिया में कोई परिवर्तन आदि सभी कुछ को बिन्दुवार सम्मिलित किया जाए। आधार सामग्री के संग्रह के लिए आवश्यक उपकरणों जैसे परीक्षण, प्रश्नावलियों आदि का परिचय भी आवश्यकतानुसार दिया जाए। परीक्षा-पत्र या प्रश्नावली आदि का समावेश भी किया जाना आवश्यक है।

आधार सामग्री का प्रस्तुतीकरण एवं विश्लेषण

रिपोर्ट में प्रदत्तों के प्रस्तुतीकरण एवं विश्लेषण की प्रक्रिया भी बताई जाती है। भाषा के क्षेत्र में आधार सामग्री को सामान्यतः सारणियों, रेखाचित्र तथा कभी-कभी फोटोग्राफ के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है तथा उसके विश्लेषण के लिए सांख्यिकीय विधि का प्रयोग किया जाता है। विश्लेषण के आधार पर ही व्याख्या और उनसे प्राप्त निष्कर्षो की विवेचना की जाती है। यहाँ अपनी उपलब्धियों की तुलना अन्य संबंधित अनुसंधानों के परिणामों से भी करते हैं तथा समानता एवं असमानता के संभावित कारणों को प्रस्तुत किया जाता है।

सारांश एवं निष्कर्ष

यहाँ अध्ययन की समस्या एवं प्रक्रिया का संक्षेप में वर्णन करते हुए निष्कर्षो की विवेचना करनी होती है तथा निर्धारित परिकल्पनाओं की पुष्टि करनी होती है।

सन्दर्भ सामग्री

संदर्भ सामग्री के अंतर्गत शोध में प्रयुक्त पुस्तकों, पत्रिकाओं तथा अन्य सामग्री का उल्लेख किया जाता है।

(1) सन्दर्भ ग्रंथ सूची

शोध अध्ययन से संबंधित संदर्भ पुसतकों, शोध पत्रिकाओं आदि की सूची मुख्य आख्या के पश्चात् प्रस्तुत की जाती है।

(2) परिशिष्ट

अध्ययन में प्रयुक्त स्वनिर्मित परीक्षण-प्रश्नावलियों, मूल्यांकन प्रपत्र तथा लंबी सारणियों या बड़े चित्र आदि को परिशिष्ट में सम्मिलित किया जाता है।

3.9 आख्या प्रस्तुतीकरण शैली

आख्या के प्रस्तुतीकरण में निम्नलिखित महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं को ध्यान में रखना चाहिए :

- भाषा सुबोध एवं सरल हो।
- शोध आख्या प्रस्तुत करते समय शीर्षक छोटा हो। यदि लंबा है, तो विभिन्न पंक्तियों को उल्टे पिरैमिड के क्रम में व्यवस्थित करना चाहिए अर्थात् दूसरी पंक्ति पहली से छोटी हो तथा तीसरी दूसरी से छोटी हो।

- वर्णन में 'मैं', 'हम', 'मैंने' आदि का प्रयोग करना उचित नहीं होता। इनके स्थान पर 'शोधकर्ता' शब्द का प्रयोग उचित होता है।
- अध्ययन के लिए अपनाई गई प्रक्रिया को भूतकाम तथा आधार सामग्री की व्याख्या में वर्तमान कार्य में प्रयोग किया जाना ही उचित रहता है।
- छोटे उद्धरणों को वाक्य के अन्तर्गत प्रस्तुत किया जाना उपयुक्त रहता है, जबकि चार या चार से अधिक पंक्तियों वाले उद्धरण के लिए अलग से पैराग्राफ दिया जाना उचित होता है।
- वर्णन को दौरान उल्लेखनीय संदर्भों का विवरण पाद-टिप्पणी (फुट-नोट्स) अथवा अंत में दिया जाना उचित रहता है। इसके लिए वाक्य के अन्त में ऊपर क्रमांक लिखकर पृष्ट के नीचे अथवा अंत में उसका संदर्भ दिया जाता है।

बोध प्रश्न

8. शोध आख्या को कितने भागों में विभाजित किया जाता है ? उनके नाम लिखें।

   1. .... 2. ....

   3. .... 4. ....

   5. ....

9. (क) संदर्भ-सामग्री में किस किस सामग्री का उल्लेख होता है ? कौन-कौन से दो तत्व समाहित होते है ?

   ....

   ....

   (ख) शोधकर्ता द्वारा कौन-कौन से प्रमुख माध्यमों से शोध कार्य के प्रदत्तों का प्रस्तुतीकरण किया जाता है ?

   ....

   ....

3.10 भाषा कार्य से संबंधित क्रियात्मक शोध के कतिपय शीर्षक

- हिन्दी भाषा शिक्षण कौशलों (श्रवण-अभिव्यक्ति आदि) के प्रोन्नयन हेतु उपयुक्त क्रियाकलापों का आयोजन एवं परीक्षण।
- वर्तनी शिक्षण में श्रुतलेख विधि तथा अनुलेख विधि का तुलनात्मक अध्ययन।
- काव्य शिक्षण विधियों की प्रभावकारिता का अध्ययन।
- विद्यालय पुस्तकालय के सुनियोजित उपयोग द्वारा छात्रों की पठन-प्रवृत्ति का समुन्नयन।
- भाषागत उपलब्धि के संदर्भ में पिछड़े छात्रों के लिए क्रमायोजित गृहकार्य का नियोजन।
- भाषागत उपलब्धि के आधार पर प्रबुद्ध एवं पिछड़े हुए बच्चों के लिए अलग-अलग शैक्षिक कार्यक्रमों की रचना एवं उनका प्रयोग।
- ग्रामीण एवं शहरी विद्यार्थियों की पठन गति का तुलनात्मक अध्ययन।
- ध्वनि भेद आधारित सुनियोजित अभ्यासों द्वारा विद्यार्थियों का उच्चारण शोधन।

3.11 क्रियात्मक शोध संबंधी उदाहरण

क्रियात्मक शोध के विभिन्न पहलुओं एवं सोपानों पर चर्चा के पश्चात् अब आपके सम्मुख छात्रों की अशुद्ध वर्तनी से संबंधित एक क्रियात्मक शोध की रूपरेखा को उदाहरण के रूप में प्रस्तुत करते हैं।

3.11.1 क्रियात्मक शोध की रूपरेखा

शोधकर्ता **:** कक्षा 7 का भाषा शिक्षक

कक्षा **:** 7

समस्या : शिक्षार्थी वर्तनी की अशुद्धियाँ बहुत करते हैं।

समस्या का सीमांकन एवं विशिष्टीकरण - श, ष, स, वर्णों से संबंधित वर्तनीगत अशुद्धियाँ।

शिक्षार्थी श, ष, स के उच्चारणगत अंतर को स्पष्ट रूप से नहीं समझते और बोलने तथा पढ़ने में इन वर्णों वाले शब्दों का अशुद्ध उच्चारण करते हैं। इसका प्रभाव उनकी वर्तनी पर भी पड़ता है। लिखने में 'श' की जगह 'ष' या 'स' की जगह 'श' या 'ष' तथा 'ष' की जगह 'श' या 'स' लिख देते हैं।

निदान-समस्या के कारण

- शिक्षार्थी श, ष, स का स्पष्ट अन्तर नहीं समझते हैं।
- श, ष, स का अशुद्ध उच्चारण करते हैं।
- विसर्ग संधि संबंधी उन नियमों से परिचित नहीं हैं जहाँ विसर्ग का 'श' या 'ष' या 'स' हो जाता है।
- शिक्षक 'श', 'ष', 'स' संबंधी इन त्रुटियों के उचित संशोधन की ओर ध्यान नहीं देते।
- 'श', 'ष', 'स' वाले शब्दों के लिखित अभ्यास पर्याप्त मात्रा में नहीं कराए जाते।
- स्थानीय बोलियों का प्रभाव।

क्रियात्मक परिकल्पनाएं

- यदि शिक्षार्थियों को 'श', 'ष', 'स' वर्णों का स्थान एवं प्रयत्नगत अंतर स्पष्ट करते हुए शुद्ध उच्चारण कराया जाए और तदनुसार उनका लिखित रूप भी ज्ञात करा दिया जाए तो वे त्रुटियाँ नहीं करेंगे।
- 'श', 'ष', 'स' वाले शब्दों के अधिकाधिक लिखित अभ्यास दिए जाएं तो शिक्षार्थी अशुद्धियाँ नहीं करेंगे। ये अभ्यास कई प्रकार के हो सकते हैं जैसे —
  - केवल 'स' का प्रयोग - हास, उल्लास, विकास, आवास, पड़ोस, प्रयास, रस, नीरस, आदि।
  - केवल 'श' का प्रयोग - अवकाश, आशा, निराशा, आदेश, गणेश, विदेश, वेश, केश, आकाश, विवश, आदि।
  - केवल 'ष' का प्रयोग - घोष, दोष, घनुष, विष, दुष्ट, दृष्टि, निष्ठा, निष्ठुर, निषेध आदि।
  - ऐसे शब्द जिनमें 'श', 'ष', 'स' में से किन्हीं दो का प्रयोग हुआ हो जैसे - शेष, शासन, प्रशंसा, शीर्षक, शोषण, विश्वास आदि।
  - नि: एवं दु: उपर्युक्त शब्द - निष्कपट, निष्पक्ष, निष्फल, निश्चल, निश्छल, निश्शंक, निस्संकोच, निस्संदेह, दुष्कर्म, दुष्परिणाम, दुस्साहस, दुश्चरित्र।

    शिक्षार्थियों को यदि यह अच्छी तरह ज्ञात करा दिया जाए कि विसर्ग का क, ट, ठ, प, फ, के साथ सदा 'ष', च, छ, श के साथ सदा 'श' और त, स के साथ सदा 'स' होता हैं तो वे श, ष, स, की वर्तनी संबंधी अशुद्धियां नहीं करेंगे।
- यदि शिक्षक लिखित रचना में 'श', 'ष', 'स' संबंधी त्रुटियों के संशोधन पर विशेष ध्यान दें और शिक्षार्थी शुद्ध रूप का अभ्यास करते रहें तो ये त्रुटियाँ नहीं होंगी।
- यदि शिक्षार्थियों को प्रतियोगिता के रूप में अथवा कक्षा परीक्षण के रूप में निम्न प्रश्न दिए जाएं -
  - ऐसे शब्दों को लिखो जिनके अंत में 'श' का प्रयोग हो।
  - ऐसे शब्दों को लिखो जिनके अंत में 'ष' का प्रयोग हो।
  - ऐसे शब्दों को लिखो जिनके अंत में 'स' का प्रयोग हो।
  - ऐसे शब्दों को लिखो जिनके अंत में 'श' और 'ष' दोनों का प्रयोग हो।
  - ऐसे शब्दों को लिखो जिनके अंत में 'श' और 'स' दोनों का प्रयोग हो।
  - ऐसे शब्दों को लिखो जिनके अंत में 'श' और 'श' दोनों का प्रयोग हो।
  - ऐसे शब्दों को लिखो जिनके अंत में 'स' और 'स' दोनों का प्रयोग हो।
  - नि: और दु: लगा कर शब्द बनाओं जिनमें विसर्ग को श, ष, अथवा स् हो जाता है।
  - विसर्ग संधि के कुछ उदाहरण लिखो जिनमें विसर्ग को श्, ष् अथवा स् हो जाता है।

क्रियात्मक परिकल्पनाओं पर आधारित कार्य योजना

क्रियात्मक परिकल्पना संख्या		क्रियाएँ	विधि	अपेक्षित साधन	अपेक्षित समय
1.	(i)	केवल 'श' युक्त शब्दों का उच्चारण और लेखन	शिक्षक द्वारा शुद्ध उच्चारण एवं आदर्श बालकों	'श' युक्त शब्दों की सूची	4 सप्ताह, पठन एवं रचना के घण्टों मे
	(ii)	केवल 'स' युक्त शब्दों का उच्चारण और लेखन	द्वारा अनुकरण एवं लेखन	'स' युक्त शब्दों की सूची	
	(iii)	केवल 'ष' युक्त शब्दों का उच्चारण और लेखन		'ष' युक्त शब्दों की सूची 'श', 'स' एवं 'ष' के उच्चारण स्थान का चार्ट	
2.		ऐसे शब्दों के उच्चारण एवं लेखन जिनमें श, ष, स में किन्हीं दो का प्रयोग	आदर्श बालकों द्वारा अनुकरण एवं लेखन	ऐसे शब्दों की सूची एवं श, ष, स के शुद्ध उच्चारण का टेप	4 सप्ताह, पठन पठन एवं रचना के घंटों में
3.		निः, दुः उपसर्ग युक्त शब्दों की रचना	शिक्षक द्वारा व्याकरण के घंटे में शिक्षण	ऐसे शब्दों की सूची एवं चार्ट	2 सप्ताह, व्याकरण के घंटे में।
4.		श, ष, स वाले शब्दों के लिखित अभ्यास	शिक्षक द्वारा श्रुतलेखन एवं शब्द रचना के अभ्यास दिए जाएंगे।	रचना पुस्तिका, ऐसे चुने हुए अनुच्छेद जिनमें श, ष, स का प्रयोग हुआ हो।	4 सप्ताह, रचना के घंटे में।
5.		स्वतंत्र रचना में श, ष, स युक्त शब्दों के शुद्ध लेखन का अवसर	शिक्षक छात्रों के लेखादि रचना कार्यों को देखेगा और आवश्यक संशोधन करेगा	रचना पुस्तिका	4 सप्ताह, रचना के घंटे में
6.		श, ष, स वाले शब्दों के लिखने की प्रतियोगिता, सर्वोच्च अंक प्राप्त करने वाले शिक्षार्थी को पारितोषिक, अधिक त्रुटियाँ करने वाले शिक्षार्थियों को अतिरिक्त अभ्यास	शिक्षक पर्यवेक्षण मूल्यांकन करेगा	उत्तर पुस्तिका एवं पारितोषिक सामग्री	4 सप्ताह, प्रति सप्ताह एक दिन

क्रियात्मक परिकल्पनाओं का परीक्षण एवं प्रतिफल : पर्यवेक्षण एवं मूल्यांकन द्वारा उपर्युक्त परिकल्पनाओं की व्यावहारिक सफलता सिद्ध होने पर शोधकर्ता इन्हें प्रयोग में लाएगा। शिक्षक किसी समस्या के एक पक्ष को अपने क्रियात्मक शोध का विषय बना सकता है और उस समस्या के निराकरण के लिए क्रियात्मक शोध संबंधी उपर्युक्त प्रक्रिया को अपना सकता है। यह भी ध्यान रखने की बात है कि प्रक्रिया या क्रियाविधि साधन मात्र है, साध्य नहीं। साध्य तो समस्या का निराकरण है।

क्रियात्मक शोध की सबसे बड़ी उपयोगिता यह है कि दैनिक शिक्षण योजना में बिना किसी व्यतिक्रम या व्यवधान के शिक्षक समस्या के समाधान का प्रयत्न करता है और उचित फल के आधार पर अपनी शिक्षण क्रिया में सुधार करता है।

3.12 परियोजना निर्माण एवं क्रियान्वयन में आने वाली कठिनाइयां एवं निराकरण

क्रियात्मक शोध परियोजना के निर्माण और क्रियान्वयन में प्राय: निम्नलिखित कठिनाईयाँ आती हैं :

- पर्याप्त उत्प्रेरणा का अभाव।
- पर्याप्त निर्देशन एवं परामर्श का अभाव।
- क्रियात्मक अनुसंधान संचालित किए जाने से संबंधित विद्यालय स्तर पर विशेषज्ञों का अभाव।
- भाषा-शिक्षण में कार्यरत साथी शिक्षकों का असहयोगात्मक रवैया।
- घनाभाव।

शोध परियोजना के निर्माण तथा संचालन में आने वाली उपर्युक्त कठिनाइयों के निराकरण हेतु हमें निम्न प्रयास करने होंगे -

- भाषा-शिक्षण कक्षा में पर्याप्त उत्प्रेरणा प्रदान करने हेतु विद्यालय स्तर पर ऐसे शिक्षक-शिक्षिकाओं के समय विभाजन चक्र में अभिनव प्रयोग के संचालन हेतु समय का निर्धारण।
- सफलतापूर्वक प्रयोजनाओं के संचालन के पश्चात् उनका मूल्यांकन कराया जाए तथा उत्प्रेरणास्वरूप शिक्षकों के सेवा-अभिलेख में इसे उनकी विशिष्ट उपलब्धि के रूप में अंकित किया जाए।
- परियोजनाओं के मूल्यांकन के पश्चात् उनके शोध कार्य को प्रचारित एवं प्रसारित करने हेतु विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित भी कराया जाए ताकि अन्य शिक्षक भी उनसे लाभान्वत हों।
- राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (एन.सी.ई.आर.टी.) नई दिल्ली का शिक्षक-शिक्षा एवं प्रसार विभाग प्रतिवर्ष ऐसे प्रयोग एवं परीक्षणरत अनुभवी शिक्षक वर्ग हेतु 'सेमिनार रीडिंग प्रोग्राम' आयोजित करता है, जिनमें राष्ट्रीय स्तर पर शिक्षकों एवं प्रधानाचार्यों से प्राप्त लेखों का मूल्यांकन कराया जाता है और उत्कृष्ट प्रविष्टियों को प्रशस्त्रि-पत्र प्रदान किए जाते हैं। धनराशि के रूप में उत्प्रेरणा प्रदान की जाती हैं तथा उनके लेखों को 'द टीचर स्पीक्स' पत्रिका के अंतर्गत प्रकाशित एवं प्रसारित किया जाता है। राजस्थान शिक्षा विभाग भी 'नया शिक्षक' तथा 'शिविरा' पत्रिका निकाल कर शिक्षक, प्रधानाचार्य आदि के लेखों को प्रताशित एवं प्रसारित करता है। उत्तर प्रदेश शिक्षा-विभाग भी इस प्रकार के अभिनव-प्रयोगों के संचालन एवं संवर्धन हेतु प्रयासरत है।
- प्रत्येक राज्य में स्थित राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (एन.सी.ई.आर.टी.) भी शिक्षक वर्ग के ऐसे प्रयोगों एवं परीक्षणों के लिए विभिन्न उत्प्रेरणाएं प्रदान करते हैं। वे इस संबंध में शिक्षण-प्रशिक्षण, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों के शिक्षा-संकायों में कार्यरत विद्वानों तथा विशेषज्ञों से भी आवश्यक सहायता लेते हैं।

बोध प्रश्न :

10. आपके विचार से शोध परियोजनाओं के संचालन में कौन-कौन सी कठिनाइयाँ आ सकती हैं। उत्तर तीन पंक्तियों में दे।

    ....

    ....

    ....

3.13 सारांश

क्रियात्मक शोध एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें शोधकर्ता अपनी समस्याओं का वैज्ञानिक ढंग से अध्ययन करने का प्रयास करता है ताकि वह अपने कार्यों का मूल्यांकन कर सके व उनमें संशोधन कर सके। समस्या का वैज्ञानिक अध्ययन, समस्या के कारणों पता लगाना, उचित परिकल्पनाओं का निर्माण, प्रयोग करना, सफलता-असफलता के आधार पर सही प्रयोगों का प्रतिपादन, निष्कर्षो के आधार पर सामान्यीकरण और सही समाधान द्वारा शिक्षण प्रक्रिया में सुधार लाना ही क्रियात्मक शोध की क्रियाविधि है। क्रियात्मक शोध मौलिक शोध से अपने उद्देश्य, समस्या के महत्त्व, न्यादर्श, सामान्यीकरण व रूपरेखा की दृष्टि से

भिन्न होता है क्योंकि क्रियात्मक शोध की समस्या सामान्य न होकर विशिष्ट होती है, इसका संबंध शिक्षार्थियों की व्यावहारिक कठिनाइयों से होता है, उसके निष्कर्ष भी विद्यालय विशेष अथवा कक्षा विशेष के शिक्षार्थियों पर ही लागू होते हैं। भाषिक संदर्भ में क्रियात्मक शोध के क्षेत्र मुख्यत: भाषा-कौशलों से संबंधित होते हैं। यों तो क्रियात्मक शोध अभिकल्प के प्रमुखत: तीन प्रकार हैं - एकल समूह अभिकल्प, चक्र समूह अभिकल्प, समानान्तर समूह अभिकल्प लेकिन भाषा सिक्षक सामान्यत: एकल समूह अभिकल्प का ही उपयोग करते हैं।

3.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. क्रियात्मक शोध एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें शिक्षाकर्मी शैक्षणिक समस्याओं का हल ढूंढने के लिए वैज्ञानिक ढंग से प्रमाण एकत्र करते हैं, उनकी जांच, परीक्षण व मूल्यांकन करते हैं।

2. क्रियात्मक शोध का विशेष संबंध होता है कक्षा एवं विद्यालय में सामने आने वाली समस्याओं से, जबकि मौलिक शोध समस्त शिक्षा क्षेत्र से संबंधित होता है।

   मौलिक शोध में प्राप्त निष्कर्ष सर्वमान्य एवं स्थायी होते हैं जबकि क्रियात्मक शोध निष्कर्ष केवल विशिष्ट क्षेत्र में सार्थक सिद्ध होते हैं।

   मौलिक शोध की क्रियान्विति अधिक जटिल एवं निश्चित होती है जबकि क्रियात्मक शोध विधि शिक्षक की आवश्यकता एवं परिस्थिति के अनुकूल होती है।

3. पठन से संबंधित तीन क्षेत्रों पर अनुसंधान कार्य आवश्यक है - (1) सस्वर पठन (2) पठन एवं अर्थग्रहण (3) पठन अभिरुचि एवं आदत।

4. मौखिक अभिव्यक्ति संबंधी दोष - अशुद्ध उच्चारण, उपयुक्त शब्दों का प्रयोग न होना, पदक्रम संबंधी दोष, लिंग, वचन, कारक के अशुद्ध प्रयोग, विषय-सामग्री का क्रमबद्ध संयोजन न होना।

5. भाषा लेखन के सम्बन्ध तीन परीयता शोध क्षेत्र हैं -

   (i) छात्रों की लेख सुधार योजना

   (ii) सृजनात्मक लेखन कार्यक्रम

   (iii) छात्रों के गृहकार्य की जांच

6. शोध अभिकल्प के तीन प्रमुख प्रकार निम्न हैं : (अ) एक समूह अभिकल्प, (ब) समानान्तर वर्ग समूह अभिकल्प, (स) चक्र समूह अभिकल्प। इनमें एकल समूह अभिकल्प का भाषा शिक्षकों द्वारा सबसे अधिक प्रयोग किया जाता है।

7. (i) क्रिया करने से पूर्व एवं पश्चात्।

8. पांच भागों में -

   1. प्रस्तावना

   2. विधि

   3. आधार सामग्री का प्रस्तुतीकरण, विश्लेषण एवं विवेचन

   4. सारांश एवं निष्कर्ष

   5. संदर्भ सामग्री

9. (क) संदर्भ सामग्री के दो प्रमुख तत्त्व हैं : (1) संदर्भ ग्रंथ सूची, (2) परिशिष्ट।

   (ख) शोध कार्य प्रदत्तों के प्रस्तुतीकरण के माध्यम हैं :

   (1) सारणि, (2) चित्र, (3) ग्राफ, (4) फोटोग्राफ

10. चार प्रकार की कठिनाइयाँ - (1) ऐसे शिक्षक वर्ग को पर्याप्त उत्प्रेरणा का अभाव, (2) पर्याप्त निर्देशन का अभाव - विशेष रूप से शोध परियोजनाओं की रूपरेखा निर्माण एवं संचालन में, (3) विद्यालय स्तर पर विशेषज्ञों का अभाव, (4) उपलब्ध शोध संबंधी साहित्य की प्रमुख हिन्दी पत्रिकाओं की अनुपलब्धि

    इसके अतिरिक्त शोध परियोजनाओं के संचालन में - संस्था के प्रधानाचार्य, प्रबंध समिति तथा

शिक्षा अधिकारियों का उदासीनता से युक्त दृष्टिकोण, साथी अध्यापक वर्ग का असहयोग, छात्र वर्ग तथा अभिभावक वर्ग की उदासीनता से युक्त दृष्टिकोण एवं घनाभाव।

3.15 उपयोगी पुस्तकें

कौशिक, जयनारायण : हिन्दी शिक्षण, हरियाणा साहित्य अकादमी

कौशिक, एस. एल. : विद्यालयों में प्रयोग एवं परियोजनाएं, विष्णु प्रकाशन, आगरा

तिवारी, पुरुषोत्तम : हिन्दी शिक्षण, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर

पाण्डेय, के. पी. : शिक्षा में क्रियात्मक अनुसंधान, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा

लाल, रमन बिहारी : हिन्दी शिक्षण, रस्तोगी पब्लीकेशन, मेरठ

सफाया, रघुनाथ : हिन्दी शिक्षण विधि, पंजाब किताबघर, जालंधर

सिंह, निरंजन कुमार : माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, तिलक नगर, जयपुर

सिंह, सावित्री : हिन्दी शिक्षण, लायल बुक डिपो, मेरठ

श्रीवास्तव, राजेन्द्र प्रसाद : हिन्दी शिक्षण, बी–147, अमर कालोनी, लाजपत नगर, नई दिल्ली–110024

इकाई 4

समुन्नयन कार्य

: रूपरेखा :

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 समुन्नयन का महत्त्व

4.4 हिन्दी साहित्य का क्रमिक विकास

4.4.1 आदिकाल (1000 से 1400 ई. तक)

4.4.2 भक्तिकाल (1400 से 1700 ई. तक)

4.4.3 रीतिकाल (1700 से 1850 ई. तक)

4.4.4 आधुनिक काल (1850 ई. से .....)

4.5 हिन्दी साहित्य में प्रयुक्त कुछ प्रमुख अन्तः कथाएं

4.6 रंगमंचोपयोगी एकांकी

4.7 समभावी कविताओं का संकलन

4.8 पाठ्य पुस्तक में प्रयुक्त मुहावरे एवं लोकोक्तियाँ

4.9 शब्द भंडार वृद्धि के लिए शब्द सूची

4.9.1 उपसर्ग

4.9.2 प्रत्यय

4.9.3 सन्धि

4.9.4 समास

4.10 शब्दकोश तथा अन्य संदर्भ ग्रंथों से अपेक्षित सामग्री ढूंढने का कौशल

4.11 सारांश

4.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.13 उपयोगी पुस्तकें

4.1 प्रस्तावना

यह इकाई हिन्दी शिक्षण प्रविधि के खण्ड 4 की चतुर्थ इकाई है। इस इकाई में आप हिन्दी भाषा और साहित्य के अध्ययन से संबंधित समुन्नयन कार्य का अध्ययन करेंगे।

भाषा एक ऐसा विषय है जिसमें ज्ञान तथा कौशल दोनों ही का महत्त्व होता है। शिक्षक को शिक्षार्थियों में ज्ञान तथा कौशल दोनों से संबंधित योग्यताओं के विकास के लिए सतत प्रयत्नशील रहना होता है। भाषा के पाठ अपनी विषयवस्तु की दृष्टि से अलग-अलग क्षेत्रों से संबंधित होते हैं और पाठ-शिक्षण के समय पाठों में निहित विषय विशेष से संबंधित तथ्यों, संदर्भों आदि को स्पष्ट करने के लिए शिक्षार्थियों को तत्सम्बन्धी जानकारी के अपेक्षा होती है। उदाहरण के लिए पाठ में यदि कोई प्रसिद्ध ऐतिहासिक या पौराणिक, सांस्कृतिक संदर्भ हो अथवा किसी दार्शनिक, वैज्ञानिक, राजनीतिज्ञ महान व्यक्ति से संबंधित घटना का उल्लेख हो तो उसके संबंध में शिक्षार्थियों को जानकारी देना आवश्यक हो जाता है। यह भी हो सकता है कि शिक्षार्थियों को उससे संबंधित सामग्री का अध्ययन करने के लिए निर्देशित करने की आवश्यकता हो। इसी प्रकार किसी साहित्यकार की रचना पढ़ाते समय उसकी समकालीन साहित्यिक प्रवृत्तियों, उसके जीवन को प्रभावित करनेवाली परिस्थितियों का भी दिग्दर्शन आवश्यक हो जाता है। इन सभी अपेक्षाओं की पूर्ति के लिए आवश्यक है कि शिक्षक के पास स्वयं भी अपेक्षित जानकारी उपलब्ध हो। भाषा पाठों की बहुआयामी प्रकृति के कारण ये जानकारी एक साथ किसी एक स्रोत से नहीं मिल सकती। उसे विविध स्रोतों से प्राप्त करना पड़ता है। प्रस्तुत इकाई में इस प्रकार की जानकारी का एक साथ संयोजन करने का प्रयत्न किया गया है।

भाषिक एवं साहित्यिक योग्यता विस्तार तथा संवर्धन के लिए भाषा शिक्षण-प्रक्रिया में शिक्षार्थियों को जो अतिरिक्त अध्ययन सामग्री प्रदान की जाती है, जो विविध प्रयोग, अभ्यास तथा कार्यकलाप कराए जाते हैं, उन्हें समुन्नयन कार्य की संज्ञा दी जाती है।

समुन्नयन कार्य का तात्पर्य है - कक्षा-शिक्षण के माध्यम से शिक्षार्थियों द्वारा संप्राप्त भाषिक एवं साहित्यिक योग्यताओं के संवर्धन तथा विस्तार की दृष्टि से आयोजित पाठ संबंधित तथा पाठेतर अध्ययन, प्रयोग और अभ्यास सम्बन्धी क्रियाकलाप। ये कार्यक्रम शैक्षिक तथा सहशैक्षिक अर्थात् साहित्यिक एवं सांस्कृतिक सभी प्रकार के हो सकते हैं।

आप इस तथ्य से भली भांति परिचित हैं कि किसी भी साहित्यिक पाठ के शिक्षण में मुख्यत: भाषिक पक्ष एवं साहित्यिक पक्ष द्रष्टव्य होते हैं। साहित्यिक क्षेत्र मे विचारात्मक तथा भावात्मक पक्ष प्रमुख होते हैं। ये दोनों पक्ष परस्पर सम्बन्ध तथा अविच्छन्न हैं। माध्यमिक स्तर पर कविता, निबन्ध, कहानी, जीवनी, संस्मरण, रेखाचित्र, यात्रावृत्त, एकांकी आदि साहित्यिक पाठ भाषिक तत्त्वों की शिक्षा के आधार तथा माध्यम होते हैं। वस्तुत: भावों और विचारों की अभिव्यक्ति के लिए भाषा का ललित और कलात्मक प्रयोग ही साहित्य कहलाता है। मातृभाषा शिक्षण में माध्यमिक स्तर से ही भाषा का साहित्यिक रूप उभरने लगता है तथा उसमें धीरे धीरे सूक्ष्मता, चित्रात्मकता और व्यंजकता बढ़ती जाती है। भाषा शिक्षक से यह अपेक्षा होती है कि वह माध्यमिक स्तर पर भाषिक तथा साहित्यिक दोनों ही पक्षों के लिए समुन्नयन कार्य की योजना बनाए तथा उसको कुशलतापूर्वक सम्पन्न करे। इस इकाई में हम कुछ ऐसे ही समुन्नयन कार्यों का उल्लेख कर रहे हैं।

निस्सन्देह समुन्नयन कार्यो की सूची विस्तृत हो सकती है क्योंकि भाषिक तत्त्वों और साहित्य के विभिन्न अंग, भेदों एवं उनके उपभेदों की संख्या विशाल है। प्रस्तुत इकाई में उदाहरण के लिए कतिपय समुन्नयन कार्यो का संकेत दिया गया है। आप कक्षा स्तर के अनुकूल शिक्षार्थियों के समुन्नयन के लिए इस प्रकार के कार्यो को अपना सकते हैं।

आप इन समुन्नयन कार्यो को केवल संकेत और दिशा निर्देश के रूप में स्वीकार करें। अच्छा होगा कि आप अपनी शिक्षण प्रक्रिया में समाहित विविध भाषिक तथा साहित्यिक शिक्षण बिन्दुओं के आधार पर उपयुक्त समुन्नयन कार्यो की परिकल्पना करें और इन कार्यों का उपयोग शिक्षार्थियों के भाषिक तथा साहित्यिक विकास के लिए करें।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई पढ़ने के बाद आप :

- भाषिक एवं साहित्यिक योग्यताओं के विकास में समुन्नयन कार्यो का महत्त्व बता सकेंगे।

- भाषिक तत्त्वों के ज्ञान, भाषिक कौशलों के विकास तथा साहित्यकारों की कृतियों के अध्ययन से संबंधित योग्यताओं के विकास के लिए उपयुक्त समुन्नयन कार्य की योजना बना सकेंगे तथा शिक्षण में उसका यथोचित उपयोग कर सकेंगे।
- हिन्दी साहित्य के विकास क्रम को समझते हुए विभिन्न कालों की सामान्य साहित्यिक प्रवृत्तियों का उल्लेख कर सकेंगे।
- पाठ में निहित अंत:कथाओं का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- साहित्यिक तथा भाषिक योग्यता विस्तार की दृष्टि से भाषिक तत्त्वों के ज्ञान की उपयोगिता का महत्त्व समझा सकेंगे।
- शिक्षार्थियों को अतिरिक्त सामग्री के अध्ययन के लिए प्रेरित कर सकेंगे।

4.3 समुन्नयन कार्य का महत्त्व

भाषा मूलत: व्यवहार, प्रयोग और क्रिया है। केवल व्याकरणिक ज्ञान से भाषा पर अधिकार नहीं हो पाता, उसके प्रयोग, व्यवहार और क्रियात्मक रूप के अभ्यास की भी आवश्यकता होती है। इसी प्रकार साहित्य शास्त्र के सिद्धांत, साहित्य के विविध रूप, छंद, रस, अलंकार, आदि के ज्ञान मात्र से साहित्य सृजन या रचना का कार्य नहीं हो सकता, जब तक लिखित रचना के विभिन्न रूपों में लिखने का अभ्यास नहीं किया जाता। अत: सिद्धांत, नियम और ज्ञान को व्यवहार, प्रयोग और क्रिया रूप में परिणत करने के लिए शिक्षार्थियों से भाषिक और साहित्यिक अध्ययन, प्रयोग और अभ्यास संबंधी कार्य कराना आवश्यक होता है। 'भाषिक तत्त्वों के ज्ञान' के प्रकरण में आप मानक हिन्दी के उच्चारण, वर्तनी, शब्द रचना, शब्द प्रयोग, वाक्य रचना आदि से संबंधित कुछ समुन्नयन कार्यों की झलक पा चुके हैं। इससे समुन्नयन कार्य का महत्त्व स्वत: स्पष्ट हो जाता है।

भाषा कौशलों में एक प्रमुख कौशल है – बोलना। यदि शिशु शारीरिक और मानसिक दृष्टि से स्वस्थ है, उसकी ज्ञानेन्द्रियाँ ठीक काम कर रही हैं, तो वह श्रवण और अनुकरण की प्रकृति प्रदत्त शक्ति द्वारा अपनी भाषा में बोलना सहज ही सीख लेता है। चार पाँच वर्ष का बालक अपनी बात सहज ही बोलकर प्रकट कर लेता है और दूसरों द्वारा कही हुई बात को समझ लेता है। किन्तु बोलना यही नहीं है, उसका स्तर धीरे–धीरे ऊँचा होता जाता है और इसके लिए विधिवत शिक्षा की आवश्यकता पड़ती है। किस अवसर पर किस प्रकार बोलें, किस भाषा का प्रयोग करें, इसके लिए सचेत प्रयास भी करना पड़ता है। साधारण बातचीत से लेकर उच्चकोटि की वक्तृत्व कला की दक्षता इसके अंतर्गत शामिल है। इस उच्च स्तर तक बोलने की दक्षता प्रदान करने के लिए शिक्षक को अनेक प्रकार के समुन्नयन कार्यों का सहारा लेना पड़ता है।

मौखिक अभिव्यक्ति की दक्षता के विकास में भी समुन्नयन कार्य का विशेष महत्त्व है। मौखिक अभिव्यक्ति के प्रकरण में आपने पढ़ा है कि वार्तालाप, चित्रों पर आधारित कथा–वर्णन, घटना–वर्णन, दृश्य–वर्णन, वाचन, कथोपकथन, परिसंवाद, भाषण, वाद–विवाद आदि के द्वारा मौखिक अभिव्यक्ति की दक्षता विकसित की जा सकती है। इस दृष्टि से शिक्षार्थियों को विशेष रूप से प्रशिक्षित करना होता है, अच्छे वार्तालाप, भाषण, कविता वाचन आदि के रेकार्ड सुनाए जाते हैं, उन्हें विषय सामग्री के चयन संयोजन और प्रस्तुतीकरण की विधि से परिचित कराया जाता है। पूर्वाभ्यास द्वारा उनमें आत्मविश्वास पैदा किया जाता है। इसी प्रकार लिखित अभिव्यक्ति के विभिन्न रूपों की दक्षता बढ़ाने में समुन्नयन कार्यों का महत्त्व विशेष रूप से परिलक्षित होता है। माध्यमिक स्तर पर पत्र–प्रपत्र से लेकर घटना, दृश्य–वर्णन, व्याख्या, सार–लेखन, संवाद, जीवनी आदि लिखने की शैलियों का विकास किया जाता है। कक्षा में दी हुई रूपरेखा के आधार पर कहानी, निबंध लिखने के लिए शिक्षार्थियों को प्रोत्साहित किया जाता है। रचना संबंधी इन विविध क्रियाकलापों में समुन्नयन कार्य उपयोगी सिद्ध होते हैं, इस दृष्टि से आप महापुरुषों और साहित्यकारों के पत्र व्यवहार और उसकी शैलियों से शिक्षार्थियों को परिचित कराएं, कहानी, जीवनी, आत्मकथा, निबंध, एकांकी आदि विद्याओं की विशेषताओं और शैलियों की सामान्य जानकारी दें और तत्संबंधी सरल साहित्य पढ़ने के लिए प्रोत्साहित करें। शिक्षार्थियों को पुस्तक पढ़कर सामग्री चयन करने, नोट लेने और उस सामग्री को अपनी भाषा में लिखने के लिए कहें। किसी संवादात्मक पाठ या एकांकी को कहानी के रूप में अथवा कहानी को संवाद के रूप में लिखने का कार्य भी दिया जा सकता है।

शिक्षक के पास कक्षा स्तर के अनुकूल ऐसी रचनाओं का संकलन होना चाहिए अथवा विद्यालय के

पुस्तकालय में सुलभ होना चाहिए जिन्हें पढ़कर शिक्षार्थी उन पर चर्चा करें और अपनी लिखित रचनाओं में उनका उपयोग करें।

लिखित रचना की दक्षता बढ़ाने के लिए शिक्षार्थियों के सम्मुख आदर्श रचनाओं के उदाहरण बड़े उपयोगी सिद्ध होते हैं। समुन्नयन कार्य की यह एक अच्छी विधि हैं। शिक्षार्थी उनसे प्रेरित होकर लिखने के लिए तत्पर हो जाते हैं। पाठ्य पुस्तक के अतिरिक्त अन्य पुस्तकों तथा पत्र-पत्रिकाओं से रचना संबंधी अच्छे उदाहरण संकलित करने के लिए भी शिक्षार्थियों को प्रोत्साहित किया जा सकता है। इस प्रकार के समुन्नयन कार्य से शिक्षार्थी केवल कक्षा में दी गई रचना को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए ही प्रयास नहीं करते, अपितु स्वतंत्र रूप से मौलिक रचना करने की दिशा में भी अग्रसर होते हैं।

पठन कौशल की दक्षता साहित्यानुशीलन का आधार है। वस्तुतः भाषिक कौशलों में बौद्धिक और मानसिक विकास की दृष्टि से पठन कौशल का सर्वाधिक महत्त्व है। आजीवन अध्ययन की वह आधारशीला है। पठन कौशल के समुन्नयन से ही साहित्यिक सौंदर्य तत्त्वों का बोध, सराहना, रसानुभूति, विवेचन और विश्लेषण संभव हैं। अन्य भाषिक कौशलों – सुनकर समझने, बोलने और लिखने की दक्षता के विकास में भी पठन कौशल का विशेष योगदान रहता है। हम जितना ही अधिक पढ़ते है उतना ही अधिक हमारा ज्ञान बढ़ता है और उस आधार पर हम उतना ही अच्छा बोलते और लिखते हैं। अतः पठन दक्षता के विकास के लिए हमें तत्संबंधी समुन्नयन कार्यों के उपयोग पर विशेष बल देना चाहिए।

माध्यमिक स्तर पर आते-आते शिक्षार्थियों से अपेक्षा की जाती है कि उन्होंने सस्वर वाचन संबंधी दक्षताएं प्राप्त कर ली हैं और अब उन्हें मौन पठन द्वारा तीव्र गति से तत्काल अर्थग्रहण की दक्षता का अधिकाधिक विकास करना है। अर्थग्रहण में केवल तथ्यों और विचारों का ही बोध नहीं, अपितु साहित्यिक सौंदर्य तत्त्वों का बोध, उनकी सराहना, पठित अंश में निहित जीवन मूल्य और संदेश को भी समझना है। साथ ही भाषा शैली की विशेषताओं को भी ध्यान में रखना है। इस प्रकार की योग्यताओं के विकास के लिए उनसे अनेक कार्य कराए जा सकते है। पठन-कौशल के प्रकरण में आपने ऐसे उपायों के संबंध में पढ़ा है। फिर भी सांकेतिक रूप से कुछ कार्यों का उल्लेख किया जा रहा है –

- अर्थग्रहण के साथ द्रुत गति से पढ़ने के लिए विविध अभ्यास।
- किसी विशेष संदर्भ से संबंधित सामग्री का चयन, उसके लिए पुस्तकालय से उपयोगी पुस्तक ढूंढना और उसमें से अपेक्षित अंश देखकर नोट करना।
- पाठ्य पुस्तक के दिए गए पाठों के लेखकों, साहित्यकारों की जीवनी तथा उनकी अन्य कृतियों की यथासंभव सामान्य जानकारी।
- पाठ्य पुस्तक के पाठों की विधागत विशषताओं की सामान्य जानकारी के लिए आवश्यक सामग्री का अध्ययन।
- मनोविनोद के लिए पठन सामग्री-ललित गद्यांश, अन्य प्रेरणाप्रद गद्यांश और पद्यांश को पढ़ना और शिक्षक के निर्देशन में उन पर चर्चा करना।
- आवश्यकतानुसार शब्दकोश और संदर्भ पुस्तकों से सामग्री की जानकारी प्राप्त करने का अभ्यास।
- पत्र-पत्रिकाओं से अभीष्ट सामग्री का चयन।

इस प्रकार के समुन्नयन कार्य शिक्षार्थियों की पठन रुचि के विस्तार तथा पठन कौशल को विकसित करने में उपयोगी सिद्ध होते हैं। यही नहीं, अपितु वे उन्हें अधिकाधिक पठन के लिए प्रेरित करते हैं। पठन के प्रति अनुराग के संबंध में जॉन काटना डैना की निम्नलिखित उक्ति बहुत ही प्रेरक है –

"पढ़ो, पढ़ो, कुछ और पढ़ो, प्रत्येक विषय के संबंध में पढ़ो, मनोरंजक सामग्री पढ़ो, तुम्हें जो रुचिकर हो उसे पढ़ो, पढ़ो और पठित सामग्री के संबंध में चर्चा करो, कुछ सामग्री सावधानी से पढ़ो, अधिकतर सामग्री सरसरी रूप से पढ़ो, पढ़ने के विषय में झिझक मत करो, बस पढ़ो।"

अतः समुन्नयन कार्य द्वारा शिक्षार्थियों की पठन-दक्षता के विकास का प्रयास करना चाहिए और उनके अध्ययनार्थ उपयोगी पठन-सामग्री सुझानी चाहिए जिससे उनकी पठन-रुचि का विकास हो और पढ़ना उनका व्यसन बन जाए।

इस इकाई में समुन्नयन कार्य की दृष्टि से शिक्षार्थियों के अध्ययनार्थ कुछ सामग्री सुझाई गई है। इस अध्ययन से पाठ्य पुस्तक के संदर्भ में योग्यता के साथ-साथ पठन के प्रति अनुराग उत्पन्न होगा। आप भी इस प्रकार के अन्य समुन्नयन कार्यों के बारे में सोचें और भाषा-शिक्षण में यशाप्रसंग उनका उपयोग करें।

बोध प्रश्न :

1. भाषिक एवं साहित्यिक योग्यताओं की समृद्धि के लिए समुन्नयन कार्य का क्या महत्त्व है ? चार पंक्तियों में लिखें।

....

....

....

....

4.4 हिन्दी साहित्य का क्रमिक विकास

'साहित्य समाज का दर्पण है', 'साहित्य जन चित्तवृत्ति का इतिहास है', 'साहित्य में उस गुण का सत्य अभिव्यंजित होता है', ये कथन आपने पढ़े और सुने होंगे। ये इस बात के द्योतक हैं कि साहित्यकार की रचना में उसके युग के सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक जीवन तथा समस्याओं की झलक मिलती है और तत्कालीन सामान्य साहित्यिक प्रवृत्तियों तथा प्रचलित भाषा और शैली का परिचय भी मिलता है। अतः किसी भी साहित्यकार की कृति को पढ़ाते समय उसके समय की सामान्य साहित्यिक प्रवृत्तियों का परिचय आवश्यक हो जाता है, तभी हम उस कृति का सही अध्ययन कर सकते हैं और आनंद ले सकते हैं।

यह प्रकरण समुन्नयन कार्य का एक उदाहरण मात्र हैं। वस्तुतः इसे शिक्षार्थियों की साहित्यिक योग्यता के विस्तार की दृष्टि से कई समुन्नयन कार्यों में बांट सकते हैं, जैसे –

- कबीर, सूर, तुलसी, मीरा, रहीम, रसखान की कविताओं को पढ़ाते समय 'भक्तिकालीन हिन्दी साहित्य की सामान्य प्रवृत्तियों का परिचय' संबंधी समुन्नयन कार्य।
- बिहारी, भूषण, पद्माकर आदि की कविताओं को पढ़ाते समय 'रीतिकालीन हिन्दी साहित्य की सामान्य प्रवृत्तियों का परिचय' संबंधी समुन्नयन कार्य।
- आधुनिक हिन्दी साहित्य के संबंध में हमें यह ध्यान में रखना होगा कि आधुनिक हिन्दी साहित्य का क्षेत्र बहुत बड़ा है। इस युग में कविता के साथ-साथ गद्य साहित्य का बहुत विस्तार और विकास हुआ। गद्य की अनेकानेक विद्याएं विकसित हुई। अतः इसे पढ़ाते समय आप आवश्यकतानुसार कई समुन्नयन कार्यों का अवलंबन कर सकते हैं, जैसे –

  — आधुनिक युग की कविता की सामान्य प्रवृत्तियों का परिचय

  — आधुनिक युग में निबंध, ललित निबंध, व्यंग्य विनोद, यात्रावृत्तांत आदि विद्याओं का विकास

  — आधुनिक युग में जीवनी, आत्मकथा, रेखाचित्र, संस्मरण विद्याओं का विकास

  — कहानी, उपन्यास, एकांकी एवं नाटक की विकासात्मक प्रवृत्तियों का परिचय

यह आवश्यक नहीं कि उपर्युक्त सभी विद्याओं को लिया जाए। पाठ्य पुस्तक में आए हुए पाठों के आधार पर ही समुन्नयन कार्यों की योजना बनाना समीचीन होगा। जो विद्याएं पाठ्य पुस्तक में नहीं हैं, उन्हें छोड़ देना ही उचित है।

यहाँ विभिन्न कालीन हिन्दी साहित्य की सामान्य प्रवृत्तियों का सुसंबद्धता और समग्रता की दृष्टि से अतिसंक्षेप में परिचय प्रस्तुत किया जा रहा है और आप से यह अपेक्षा है कि इस आधार पर आवश्यकतानुसार समुन्नयन कार्यों का उपयोग करें।

हिन्दी साहित्य के विकास को ऐतिहासिक दृष्टि से चार कालों में बांटा जाता है –

- आदिकाल (वीरगाथा काल) सन् 1000 से 1400 ई. तक
- भक्तिकाल (पूर्व मध्य काल) सन् 1400 से 1700 ई. तक
- रीतिकाल (उत्तर मध्य काल) सन् 1700 से 1550 ई. तक
- आधुनिक काल सन् 1850 से ....

4.4.1 आदिकाल (वीरगाथा काल) (1000 से 1400 ई. तक)

सन् 1000 के आसपास से हिन्दी साहित्य का आरंभ माना जाता है। आदिकाल में कोई विशेष साहित्यिक प्रवृत्ति निर्धारित नहीं की जा सकती। हिन्दी भाषा का भी कोई स्वरूप निखर कर सामने नहीं आया था। इस काल में स्वयंभू, प्रबंधदत्त, हेमचंद्र आदि जैन कवियों की रचनाएं अपभ्रंश भाषा में हैं, पर साथ ही जन साधारण की बोली में कविता लिखना शुरू हो गया था। इस भाषा को विद्वानों ने 'देशी भाषा', 'पुरानी हिन्दी' कहा है। इसे ही हिन्दी भाषा का प्रारंभ मानना चाहिए। उस काल के भाट-चारण कवि अपने आश्रयदाता राजाओं के शौर्य-पराक्रम का वर्णन बहुत बढ़ा-चढ़ाकर करते थे। कविता का विषय होता था - युद्ध, प्रेम, विवाह, आखेट आदि। वीररस की प्रधानता के कारण हिन्दी साहित्य के इतिहास में इस काल को वीरगाथा काल भी कहा जाता है।

इस काल की रचनाएं दो रूपों मे मिलती हैं - **प्रबंध काव्य** के रूप में, जैसे चंदबरदाई रचित 'पृथ्वीराज रासो', नरपतिनाल्ह रचित 'बीसल देव रासो' आदि। दूसरा रूप है **वीर गीतों** का, जैसे जगनिक रचित 'परमाल रासो'। यह मूल रूप में उपलब्ध नहीं है लेकिन उसके आधार पर विकसित लोकगीत 'आल्हाखंड' बहुत ही लोकप्रिय रचना है जो आज भी साधारण जनता के बीच गायी जाती है।

इस काल के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और बहुमुखी प्रतिभा के घनी कवि हैं - अमीर खुसरो। उनकी पहेलियाँ, मुकरियाँ आज भी लोगों की जुबान पर हैं। उनकी हिन्दी रचनाओं में स्पष्ट रूप से हिन्दी भाषा के प्रारंभिक रूप की झलक मिलती है।

आदिकाल की काव्य शैली तथा प्रमुख प्रवृत्तियाँ :

- आश्रयदाताओं की प्रशंसा, उनके युद्ध, विवाह, प्रेम, आखेट का वर्णन।
- वीररस की प्रधानता, ओजमयी भाषा का प्रयोग।
- ऐतिहासिक गाथाओं का सहारा लेकर कल्पना के सहारे अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन।
- (ध्यान दीजिए कि इस काल की कोई रचना हाई स्कूल स्तर तक की पाठ्यपुस्तक में नहीं रखी जाती, अतः आदिकाल की प्रवृत्तियों का यह संक्षिप्त परिचय ही यथाप्रसंग पर्याप्त है।)

4.4.2 भक्तिकाल (1400 से 1700 ई. तक)

माध्यमिक स्तर पर पाठ्य पुस्तकों में भक्तिकालीन हिन्दी कवियों की रचनाएँ अवश्य ही रखी जाती हैं, जिनमें मुख्यतः कबीर, सूर, तुलसी, मीरा, रहीम, रसखान, विशेष उल्लेखनीय हैं। इनकी कविताएं पढ़ाते समय भक्तिकालीन हिन्दी काव्य की सामान्य प्रवृत्तियों का परिचय शिक्षार्थियों की साहित्यिक योग्यता विस्तार की दृष्टि से उपयोगी सिद्ध होगा।

हिन्दी साहित्य के आदिकाल के बाद काव्य के वर्ण्य-विषय और भाषा-शैली में परिवर्तन हुआ। वीररस की रचनाओं की जगह ईश्वर भक्ति की काव्य-धारा प्रवाहित हुई। इसीलिए इस काल का नाम भक्तिकाल पड़ा।

भक्तिकाल की कविता मुख्यतः ईश्वर भक्ति संबंधी दो प्रकार कि विचारधाराओं पर आधारित हैं - **निर्गुण भक्ति** और **सगुण भक्ति।**

निर्गुण और सगुण भक्ति का मुख्य अंतर यह है कि निर्गुण मत के ईश्वर अवतार नहीं ग्रहण करते। वे निराकार है। सगुण मत के ईश्वर अवतार लेते हैं, दुष्टों का दमन करते हैं, संतों की रक्षा करते हैं और अपनी लीला से भक्तों के चित्त का रंजन करते हैं।

निर्गुण भक्ति धारा के दो रूप है - **ज्ञानाश्रयी शाखा** और **प्रेममार्गी शाखा।**

सगुण भक्ति धारा के भी दो रूप हैं - **रामशक्ति शाखा** और **कृष्णभक्ति शाखा।**

निर्गुण भक्ति की ज्ञानाश्रयी शाखा में रामानंद के शिष्य कबीर का स्थान सर्वो परि है। उन्होंने निर्गुण, निराकार ईश्वर की भक्ति से संबंधित कविताएं लिखीं। उन्होंने ईश्वर के लिए राम का नाम अवश्य लिया है, पर उनके राम दशरथ पुत्र राम नहीं हैं, अपितु ईश्वर के ही द्योतक हैं। कबीर ने अपनी कविताओं में सामाजिक और धार्मिक कुरीतियों - पूजा पाठ, कर्मकांड, तीर्थाघाट, व्रत, नमाज, रोज़ा और जातिगत भेदभाव पर बड़ा ही तीखा प्रहार किया है। उन्होने काज़ी, पंडित, मुल्ला को बड़े तिरस्कार से संबोधित किया। आंडबरों से उन्हें बड़ी चिढ़ थी। कबीर ने मानवीय गुणों और नैतिकता पर बल दिया। कबीर की

कविताओं का संग्रह 'बीजक' कहलाता है। इसके तीन भाग है – रमैनी, सबद और साखी। रमैनी और सबद में गेय पद हैं, साखी दोहों में है। रमैनी और सबद ब्रज भाषा में हैं। साखी में पूर्वी प्रयोग अधिक हैं।

निर्गुण भक्त अन्य कवियों में नानक, दादू, मलूकदास, रैदास के नाम उल्लेखनीय हैं। ये मूलतः संत कवि थे। यद्यपि ये भी आडंबरों और पाखंड़ों, सामाजिक–धार्मिक कुरीतियों के विरोधी थे पर इन्होंने कबीर की भांति उनपर खुलकर प्रहार नहीं किया।

प्रेममार्गी शाखा के कवि प्रेम को ही ईश्वर प्राप्ति का मूल आधार मानते हैं। इन कवियों ने अपनी रचनाओं में इस्लाम की सूफ़ी विचारधारा के अनुसार ईश्वर को निर्गुण, निराकार मानते हुए लौकिक प्रेम गाथाओं के माध्यम से अध्यात्मिक प्रेम का चित्रण किया है। इस शाखा के अधिकतर कवि मुसलमान थे। जायसी, कुतुबन, मंझन आदि इस शाखा के मुख्य कवि हैं। मलिक मुहम्मद जायसी रचित महाकाव्य 'पद्मावत' हिन्दी साहित्य की अमूल्य कृति मानी जाती है।

इन कवियों की काव्य भाषा अवधी है और दोहा–चौपाई मुख्य छंद हैं।

सगुण भक्ति के कवियों ने राम और कृष्ण को ईश्वर का अवतार मानकर भक्ति काव्य का सृजन किया है।

रामभक्ति शाखा के सबसे महान कवि तुलसीदास हैं। उन्होंने राम को ईश्वर का अवतार मानकर उनके सगुण स्वरूप का प्रतिपादन 'रामचरित मानस' महाकाव्य में बड़े विस्तार से किया है। उन्होंने शक्ति, शील और सौंन्दर्य तीनों गुणों से विभूषित राम का इस प्रकार चित्रण किया कि 'रामचरित मानस' आज भारतीय जनता के गले का हम बना हुआ है। तुलसीदास के अन्य ग्रंथों में कवितावली, गीतावली और विनयपत्रिका विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं।

भक्तिकालीन कवियों में तुलसीदास का स्थान अनेक दृष्टियों से सर्वोच्च माना जाता है। उस समय की काव्य भाषाओं – ब्रज और अवधी दोनों पर उनका समान अधिकार था। 'रामचरित मानस' अवधी भाषा में है, जबकि कवितावली, गीतावली और विनयपत्रिका ब्रज भाषा में हैं। वे प्रबंध और मुक्तक दोनों शैलियों की काव्य रचना में कुशल थे। रामचरित मानस उच्चकोटि का प्रबंध काव्य है तो गीतावली और कवितावली में रामकथा मुक्तकों में कही गई है। तुलसीदास ने सभी काव्य रूपों और छंदो का उपयोग किया है। छप्पय पद्धति, गीत पद्धति, कवित्त–सवैया पद्धति, बरवै, दोहे और चौपाई आदि सभी प्रकार के छंदों का सुन्दर प्रयोग किया। आचार्य शुक्ल ने लिखा है – "हिन्दी काव्य की सब प्रकार की रचना शैली के ऊपर गोस्वामीजी (तुलसीदास)ने अपना ऊंचा आसन प्रतिष्ठित किया है। यह उच्चता और किसी को प्राप्त नहीं।"

रामभक्ति शाखा के अन्य कवियों में अग्रदास, नाभादास, ह्दयराम आदि हैं। केशवदास ने 'रामचंद्रिका' काव्य लिखकर रामभक्ति का परिचय दिया है।

कृष्णभक्ति शाखा के कवियों ने कृष्ण को अपना आराध्य देव माना। उन्होंने कृष्ण की ब्रज लीलाओं का बड़े विस्तार से वर्णन किया। कृष्णभक्त कवियों में सूरदास का स्थान सर्वोच्च है। उन्होंने 'सूरसागर' नामक विशाल काव्य की रचना की, जिसमें श्रीकृष्ण की बाललीला और गोपियों के प्रेम, संयोग और वियोग का विशद वर्णन है। यह वर्णन इतना सुन्दर हैं कि सूरदास को वात्सल्य और श्रृंगार का अप्रतिम कवि माना जाता है।

वल्लभाचार्य के प्रभु बिट्ठलनाथ ने आठ कृष्णभक्त कवियों को चुनकर उन्हें 'अष्टछाप' की संज्ञा दी। ये कवि हैं – सूरदास, कुंभनदास, परमानंद दास, कृष्णदास, छीतस्वामी, गोविंद स्वामी, चतुर्भुजदास और नंद दास। इनमें सूरदास सबसे प्रसिद्ध और लोकप्रिय कवि हैं। इन कवियों ने ब्रजभाषा में गीत शैली का बड़ा ही मनोहारी उपयोग किया है।

अष्टछाप के कवियों के अतिरिक्त कृष्णभक्त कवियों में मीरा, रसखान और रहीम के नाम प्रसिद्ध हैं। मीराने अपने इष्टदेव गिरधरनागर (कृष्ण) का जो रूप चित्र अंकित किया है, वह बड़ा ही मोहक है – कृष्ण या तो मुरली बजाते हैं, या मंद–मंद मुस्काते है या मीरा की गली में प्रवेश करते हैं। विरह मीरा के जीवन का सबसे बड़ा यशार्थ है जो उनके काव्य में सजीव रूप से अभिव्यंजित होता है। उनकी कविता में कृष्ण के प्रति मिलन की व्याकुलता, वेदना और समर्पण की भावना बड़े ही मार्मिक रूप में व्यक्त हुई है। उनके पद भजन गीतों के रूप में आज भी संगीतज्ञों में बहुत प्रिय हैं और उन्हें सुनकर श्रोता भी मंत्रमुग्ध हो उठते हैं।

रसखान का नाम अष्टछाप के कवियों में नहीं है किन्तु कहा जाता है कि वे भी गोसाई बिट्ठलनाथ के शिष्य थे। रसखान ने कृष्ण का लीलागान गेय पदों में नहीं, सवैयों में किया है। जितने सरस, सहज और प्रवाहमय सवैये रसखान के हैं, उतने शायद ही किसी अन्य हिन्दी कवि के हों। ब्रजभाषा की ऐसी सहज मधुरिमा अन्यत्र दुर्लभ हैं। कृष्ण प्रेम के कारण ब्रजभूमि के प्रति जो प्रबल मोह और आकर्षक रसखान की कविताओं में दिखाई पड़ता है, वह तो उनकी अनोखी विशेषता है।

रहीम (अब्दुलरहीम खानखाना) की गणना भी कृष्णभक्त कवियों में ही की जाती है, पर वे अपने नीति के दोहों के लिए अधिक प्रसिद्ध और लोकप्रिय हैं। उनके भक्ति परक दोहे उनके हृदय की सरसता व्यक्त करते हैं। वे अरबी, फारसी, संस्कृत आदि कई भाषाओं के जानकार थे। उनकी मुख्य रचनाएं हैं – रहीम दोहावली या सतसई, रास पंचाध्यायी आदि। रहीम ने तुलसी की ही भाँति अवधी और ब्रज दोनों भाषाओं में काव्य रचना की है। रहीम के भक्ति और नीति परक दोहे बहुत ही लोकप्रिय हैं और पाठ्य पुस्तकों में उनका स्थान अक्षुण्ण है।

भक्तिकालीन कविता की प्रमुख साहित्यिक प्रवृत्तियाँ

- निर्गुण ज्ञानाश्रयी शाखा के कवि निराकार ईश्वर के उपासक, गुरु की महत्ता में विश्वास रखने वाले, विकृत रूढियों और परम्पराओं के विरोधी, जातिपाँति के बंधन को न मानने वाले, मानवीय गुणों पर बल देने वाले तथा सरल सादे जीवन के पक्षधर थे। उनके काव्य की भाषा सीधी-सादी, अलंकार विहीन तथा अनेक जन-भाषाओं और बोलियों का मिश्रण होती थी। इसी कारण इस भाषा को सधुक्कड़ी भाषा कहते हैं।
- निर्गुण प्रेममार्गी शाखा के कवि भारतीय आख्यानों, चरित काव्यों के आधार पर प्रेम गाथाएं लिखने वाले कवि थे। इनकी भाषा अवधी है और दोहा, चौपाई मुख्य छंद हैं।
- सगुण भक्त कवियों ने राम और कृष्ण को अवतार मानकर उनका गुणगान और लीला वर्णन किया। तुलसी ने अवधी और ब्रज दोनों भाषाओं में काव्य रचना की। कृष्णभक्त कवियों ने ब्रज भाषा में कविता की। रामभक्ति में दास्य और शांत भाव की प्रधानता है, पर कृष्णभक्ति में वात्सल्य और श्रृंगार की प्रधानता है।

बोध प्रश्न :

2. भक्तिकाल की किन्हीं तीन साहित्यिक विशेषताओं का उल्लेख तीन पंक्तियों में कीजिए।

....

....

....

4.4.3 रीतिकाल (1700 से 1850 ई. तक)

इस काल के कवियों में बिहारी और भूषण को माध्यमिक स्तर की पाठ्य पुस्तकों में रखा जाता है। अत: इनकी कविताओं को पढ़ाते समय योग्यता विस्तार की दृष्टि से रीतिकालीन साहित्यक प्रवृत्तियों का परिचय दिया जा सकता हैं।

रीतिकाल में अधिकतर कवि राजदरबारों के आश्रय में रहकर श्रृंगारिक कविता करने लगे। ये कविताएं प्राय: काव्य शास्त्र के लक्षणों – रस, अलंकार, छंद आदि के उदाहरण रूप में लिखी गई। इसीलिए इन्हें रीतिग्रंथ भी कहते हैं और इस काल को रीतिकाल। श्रृंगार और प्रेम ही रीतिकालीन कविता का वर्ण्य विषय हैं। इन कवियों ने कविता में भावपक्ष की अपेक्षा कलापक्ष को विशेष महत्त्व दिया।

रीतिकालीन कवियों ने ब्रजभाषा में कविता की। कवित्त सवैया और दोहा इस काल के प्रसिद्ध छंद हैं। रीतिकाल के प्रमुख कवि केशवदास, जिनके ग्रंथ कवि प्रिया, रसिक प्रिया, रामचंद्रिका, वीरसिंह चरित, विज्ञानगीता, रतन बावनी तथा जहांगीर-जस चन्द्रिका हैं, संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित थे तथा हिन्दी के प्रथम साहित्यचार्य थे। सेनापति, बिहारी, देव, भूषण, मतिराम, पद्‌माकर, गंग, घनानंद, आलम, बोघा, ठाकुर आदि अन्य अनेक प्रसिद्ध कवि थे।

ये कवि श्रृंगार रस के उत्कृष्ट कवि हैं। इस काल में कविता की एक दूसरी प्रवृत्ति वीररस की भी थी। बिहारी रीतिकाल के प्रतिनिधि कवि माने जाते हैं। बिहारी सतसई उनकी प्रसिद्ध कृति हैं। इसकी श्रेष्ठता और लोकप्रयियता इसी बात से सिद्ध है कि इसकी पचासों टीकाएं लिखी जा चुकी हैं। श्रृंगार रस के

अतिरिक्त बिहारी ने कुछ भक्ति एवं नीतिपरक दोहे भी लिखे हैं। बिहारी का समग्र साहित्य अत्यधिक मार्मिक तथा लोकप्रिय हैं। माध्यमिक स्तर की सभी पाठ्य पुस्तकों में प्राय: ये दोहे संकलित किए जाते हैं।

भूषण ने शिवाजी एवं छत्रसाल की वीरता की प्रशंसा में 'शिवा बावनी' तथा 'छत्रसाल दशक' काव्य ग्रंथ लिखे। भूषण की कविता का प्रधान स्वर वीररस है। वे ओज के कवि हैं, इसीलिए रीतिकाल के विशिष्ट कवि हैं।

रीतिकालीन कविता की प्रमुख प्रवृत्तियाँ निम्नलिखित हैं :

- इस काल के कवियों ने राज्याश्रम में रहकर अपने आश्रयदाताओं को संतुष्ट करने के लिए काव्य रचना की जिसका प्रमुख रस श्रृंगार है।
- इस काल में काव्य-शास्त्र के लक्षण तथा उदाहरण प्रस्तुत करने वाली रचनाएं लिखी गई। श्रृंगार को रसराज मानकर उसका विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया। नायक-नायिका भेद, षड्ऋतु वर्णन, बारहमासा आदि का विशेष वर्णन किया गया।
- इस काल में ब्रजभाषा ही काव्य भाषा थी। इन कवियों ने उसे बहुत मधुर, कोमल और सुगम बनाने का प्रयास किया।
- काव्य का प्रधान स्वर श्रृंगार था परन्तु भक्ति, नीति एवं वीररस का भी काव्य रचा गया।
- इस काल में मुख्य रूप से मुक्तक काव्य ही लिखे गए। दोहा, कवित्त, सवैया छंदों की प्रधानता रही।

4.4.4 आधुनिक काल (1850 ई. से ....)

19वीं सदी के उत्तरार्ध में सामाजिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक आंदोलनों के फलस्वरूप हिन्दी साहित्य में नई चेतना आई। इस काल को नवजागरण काल भी कहा जाता है। देशवासियों में राष्ट्रीय भावना, प्राचीन भारतीय दर्शन, संस्कृति के प्रति गौरव की भावना और विदेशी (अंग्रेजी) सत्ता के विरुद्ध संघर्ष की भावना का संचार हुआ। अत: इस समय की कविता में स्वदेश, स्वधर्म और स्वभाषा के प्रति अनुराग की भावना को अभिव्यक्ति मिली। भारतेंदु इस नव आंदोलन के अग्रणी थे। इस युग को उनके नाम पर भारतेन्दु युग कहते हैं। इस समय खड़ी बोली के गद्य का विकास होने लगा, किन्तु कविता की भाषा ब्रजभाषा ही बनी रही।

आधुनिक युग के पूर्ववर्ती युगों - आदि, भक्ति, रीति - में हिन्दी साहित्य कविता का साहित्य था, किन्तु आधुनिक युग में कविता के साथ-साथ गद्य साहित्य का भी प्रचुर विकास हुआ। यहीं नहीं अपितु, इस युग को गद्य प्रधान युग माना गया क्योंकि गद्य साहित्य में अनेक विद्याओं का विकास हुआ और प्रचुर मात्रा में उच्चकोटि का साहित्य रचा गया। दूसरा मुख्य अंतर भाषा में परिवर्तन का है। गद्य साहित्य तो प्रारंभ से ही खड़ी बोली में रचा जाने लगा पर कविता कुछ समय (भारतेंदु युग) तक ब्रजभाषा में होती रही।

आधुनिक युग के द्वितीय उत्थान (द्विवेदी युग - 1900-1920 तक) से कविता भी खड़ी बोली में लिखी जाने लगी। महावीर प्रसाद द्विवेदी, श्रीधर पाठक, अयोध्या सिंह उपाध्याय, मैथिलीशरण गुप्त आदि ने खड़ी बोली में कविता की और प्राचीन कथाओं को नए रूपमें लिखा। अतीत गौरव और राष्ट्रप्रेम इस युग के प्रधान स्वर हैं।

छायावाद की कविता जीवन की यथार्थता और वास्तविक संघर्ष से दूर जा पड़ी थी और उसमें सूक्ष्म भावनाओं तथा काल्पनिक विचारों को ही विशेष अभिव्यक्ति मिली। सामाजिक जीवन से भी उसका संबंध नहीं था। संभवत: इसकी प्रतिक्रियास्वरूप प्रगतिवाद (सन् 1936 से) का आरंभ हुआ। किसान, मजदूर, शोषित वर्ग तथा सर्वसामान्य की जीवन काव्य के विषय बन गए। प्रगतिवादी कविता साम्यवादी विचारधारा से प्रभावित है। विषय की भांति भाषा के क्षेत्र में भी परिवर्तन हुआ और वह जन सामान्य के निकट आ गई। पंत की 'युगवाणी' और 'ग्राम्या' इस प्रकार की प्रतिनिधि रचनाएं हैं।

प्रगतिवाद के बाद हिन्दी कविता ने एक नई दिशा ग्रहण की, जिसे प्रयोगवाद के नाम से अभिहित किया गया। इस काम की कविता को 'नई कविता' कहा गया। सन् 1943 में अज्ञेय द्वारा संपादित तार सप्तक का प्रकाशन हुआ। इस कविता में अभिव्यक्ति के लिए उन प्रतीकों, बिम्बों और साधनों के प्रयोग पर बल दिया गया जो यथार्थ जीवन से उत्पन्न होते हैं। इन कविताओं में वैयक्तिक अनुभूति की ही प्रधानता है। अज्ञेय, गिरिजाकुमार माथुर, धर्मवीर भारती, भवानी प्रसाद मिश्र, शमशेर बहादुर सिंह, नरेश मेहता,

रघुबीर सहाय, प्रयाग नारायण त्रिपाठी, कुंवर नारायण, कीर्ति चौधरी, केदारनाथ सिंह, विजयदेव नारायण साही, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना आदि इसके प्रतिनिधि कवि है।

दिनकर, बच्चन, अंचल, नरेन्द्र शर्मा, भगवती चरण वर्मा आदि आधुनिक युग के ऐसे प्रसिद्ध कवि हैं जिन्होंने किसी विशेष वाद का आश्रय नहीं लिया। स्वतंत्र रूप से आधुनिक जीवन की समस्याओं और भावनाओं को सशक्त रूप से व्यक्त करने वाले कवियों में दिनकर और सोहनलाल द्विवेदी का विशेष महत्त्व हैं।

आधुनिक युग की प्रमुख प्रवृत्तियाँ और शैलीगत विशेषताएं संक्षेप में निम्नलिखित हैं :

- **भारतेंदु युग :** रीतिकाल में साहित्य यर्थाथ और सर्वमान्य जीवन से अलग जा पड़ा था, भारतेंदु युग में वह जीवन से जुड़ गया। देशोद्धार, राष्ट्रप्रेम, अतीत-गौरव आदि विषयों की ओर कवियों का ध्यान गया और उनकी कविता से जनता में भी नई चेतना का स्फुरण हुआ।
- **द्विवेदी युग :** भारतेंदु युग के बाद द्विवेदी युग में खड़ी बोली को काव्य भाषा के रूप मे प्रतिष्ठा प्राप्त हुई। तत्सम पदावली का प्रयोग बढ़ा। धीरे-धीरे उसमे सरलता और सुकुमारता भी आई। संस्कृत के छंदों का हिन्दी में प्रयोग होने लगा। प्रतीकात्मक शैली का काव्य भी खड़ी बोली में लिखा जाने लगा। विषय की दृष्टि से इस काल की कविता सामाजिक या पौराणिक ही है।
- **छायावाद :** द्विवेदी युग के बाद छायावाद में नई प्रवृत्ति और काव्य शैली का विकास हुआ। मुक्तक गीतात्मक शैली की कविताएं रची गई। सूक्ष्म भावनाओं का निरूपण और प्रतीकात्मक शैली का विकास विशेष रूप से हुआ। शब्दावली और छंदों के प्रयोग में नवीनता आई। इस युग में नए प्रतीकों की प्रधानता परिलक्षित हुई। भाषा का लाक्षणिक प्रयोग भी बढ़ा। प्रकृति के प्रति नया दृष्टिकोण बना और उसे मानवीय रूप में चित्रित किया गया। सौंदर्य, प्रेम और श्रृंगार इस कविता के वर्ण्य-विषय रहे।
- **प्रगतिवाद :** प्रगतिवाद कविता में राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक शोषण से मुक्ति का स्वर प्रधान है। इसमें साम्यवादी विचारधारा का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। किसान, मजदूर, शोषित वर्ग का पक्ष लेकर बौद्धिक धरातल पर कविता में भावों की अभिव्यक्ति की गई।
- **प्रयोगवाद :** इस सदी के पांचवे दशक में प्रयोग के नाम पर भाव, विचार, प्रक्रिया, छंद, प्रतीक, अलंकार सब में परिवर्तन की प्रवृत्ति पैदा हुई। यह प्रवृत्ति आजकल नई कविता के नाम से भी जानी जाती है।

  1960 के बाद अकविता का दौर आया। इसमें परंपरा को पूरी तरह से नकारने का भाव था। इस प्रवृत्ति के मुख्य कवि मुक्तिबोध और धूमिल माने जाते हैं।

  आज की हिन्दी कविता किसी विशिष्ट विचारधारा या 'वाद' के घेरे से मुक्त होकर स्वतंत्र रूप से विषय, भाषा, शैली और विद्याओं की दृष्टि से विकसित हो रही है और सामाजिक तथा राष्ट्रीय चेतना के साथ-साथ विकास के पथ पर अग्रसर हो रही है।

बोध प्रश्न :

3. आधुनिक काल की विभिन्न प्रवृत्तियों के नामों तथा उनकी प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख चार पंक्तियों में कीजिए।

   ....

   ....

   ....

   ....

4.5 हिन्दी साहित्य में प्रयुक्त कुछ प्रमुख अन्तः कथाएँ

साहित्यिक रचनाओं का अध्ययन करते समय अनेक ऐसे संदर्भ आ जाते हैं जिनका समुचित ज्ञान न होने पर अर्थ स्पष्ट नहीं होता। इनमें से कुछ संदर्भ साहित्यिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक या महान विभूतियों से संबंधित होते हैं जैसे वाल्मीकि, कालिदास, भवभूति, वशिष्ट, विश्वामित्र, अशोक, चाणक्य आदि। कुछ महान व्यक्तियों के साथ तो साहित्यिक प्रयोग ही बन गए हैं। यथा दधीचि सा त्यागी, हरिश्चन्द्र सा सत्यवादी, कर्ण सा दानी, अर्जुन सा धर्नुधर आदि। अतः अर्थ स्पष्टता के लिए इनकी

जानकारी आवश्यक हो जाती है। ऐसे ही अनेक नाम कविता या गद्य रचनाओं में आते हैं जिनके साथ पौराणिक अथवा ऐतिहासिक कथाएं जुड़ी होती हैं। इन्हें स्पष्ट करना आवश्यक होता हैं। समुन्नयन कार्य के माध्यम से शिक्षार्थियों को इन अंत: कथाओं के बारे में जानने के लिए प्रोत्साहित करें। वे पाठ्य पुस्तक में आए हुए ऐसे प्रसंगो को संकलित करें, तथा उन पर टिप्पणी करके आपको दिखाएं।

उदाहरण के लिए कुछ महत्त्वपूर्ण अंत: कथाएं हैं :

अज : राजा रघु का पुत्र तथा दशरथ का पिता। ब्रह्मा को अज कहते है अत: रघु ने ब्रह्मा के नाम पर अपने पुत्र का नाम अज रखा। अज का विवाह इंदुमती से हुआ था जो वस्तुत: एक अप्सरा थी और शाप वश नारी बनी थी।

अजामिल : कान्यकुब्ज देश का एक ब्राह्मण, इस ने वैश्या के मोह में माता-पिता तथा विवाहिता पत्नी का त्याग कर दिया। इसने लूटमार को अपनी जीविका का साधन बनाया। वैश्या के दस पुत्रों का पालन पोषण किया। किसी सत्पुरुष के उपदेश से उसने अपने पुत्र का नाम नारायण रखा। मृत्यु के कष्ट से पीड़ित अजामिल अपने पुत्र नारायण का नाम अनेक बार लेकर पुकारने लगा। दयालु भगवान ने नाम स्मरण से उस पर कृपा की और वह मुक्त हो गया।

उर्वशी : एक प्रसिद्ध अप्सरा जिसने पुरूरवा को आकर्षित किया। राजा पुरूरवा को उसने नारी स्वभाव का अच्छा ज्ञान दिया तथा वचन दिया कि मृत्यु के पश्चात् जब वह स्वर्ग में जाएगा तब उसे उसका सहवास प्राप्त होगा। राष्ट्रकवि दिनकर कृत 'उर्वशी' महाकाव्य में उर्वशी का विशेष अध्ययन कीजिए।

कालनेमि : लंका का एक राक्षस था। युद्ध में लक्ष्मण के मूर्छित होने पर उनके लिए जब हनुमान संजीवनी लेने जा रहे थे तब यह मुनि के वेश में हनुमान के मार्ग में आ बैठा। हनुमान ने इसका कपट समझ लिया तथा इसका वध कर दिया।

जटायु : गरुड़ जाति का मानव था। यह विनता का पुत्र था। अरुण को श्येनी से उत्पन्न दो पुत्रों में से यह एक था। यह एक श्रेष्ठ राजा था। यह दशरथ का मित्र भी था। रावण द्वारा सीता को ले जाया जाता देखकर यह क्रोधित हो उठा और अपनी पुत्रवधू की तरह सीता की रक्षा करने के प्रयास में इसने रावण पर आक्रमण कर दिया। रावण ने इसे घायल कर पंख-विहीन कर दिया। इसने सीता सीता को खोजते हुए श्रीराम को रावण द्वारा सीता के अपहरण की सूचना दी। श्रीराम ने इसे मोक्ष प्रदान किया तथा इसकी मृत्यु का समाचार पाकर इसके भाई संपाति ने भी सीता की खोज के प्रयास में हनुमान की सहायता की।

निषाद : यह एक राजा था। मृत्यु की मानसी कन्या सुरथा का पौत्र एवं वेन राजा का पुत्र था। बनवास के समय श्रीराम का आतिथ्य किया तथा उनकी यथासंभव सहायता की।

समुद्र मंथन : अमृत प्राप्त करने के लिए देवों और दैत्यों ने मिलकर समुद्र का मंथन किया।

समुद्र मंथन के समय 'कालकूट' विषय निकला, जिसे शिव ने ग्रहण किया। तत्पश्चात् ऐरावत हाथी, उच्चैं श्रवस नामक अश्व, धन्वन्तरि, पारिजातक, कामधेनू तथा अप्सरा इन रत्नों का उद्‌भव हुआ। अगले दिन क्षी लक्ष्मी उत्पन्न हुई जिनका विवाह श्री विष्णु ने स्वीकार किया। तत्पश्चात् चन्द्र एवं अमृत उत्पन्न हुए।

गतिविधियां

- अंत: कथाओं की संख्या विपुल है। 'भारतवर्षीय प्राचीन चरित्र कोश' एक श्रेष्ठ संदर्भ ग्रंथ है। यह ग्रंथ विनायक सिद्धेश्वर शास्त्री चित्राय, कार्यवाह, भारतीय चरित्र कोश मंडल, 1206 अ/45, जंगली महाराज पथ, पूना-4 द्वारा प्रकाशित है। आप इसे अपने विद्यालय के पुस्तकालय हेतु अथवा अपने लिए मंगवाइए। किसी भी पाठ्य पुस्तक में यदि अन्त:कथा निहित हैं तब अवश्य ही समाधान होगा।
- अपनी पाठशाला में प्रयुक्त पाठ्य पुस्तकों में परिगणित नामों से सम्बन्धित किन्हीं 20 अन्त: कथाओं का अध्ययन कीजिए तथा लगभग 50-60 शब्दों में प्रत्येक अन्त: कथा लिखिए।

4.6 रंगमंचोपयोगी एकांकी

'एकांकी' का रंगमंच पर प्रदर्शन वर्ष में अनेक बार किया जाता है। जब-जब सांस्कृतिक कार्यक्रम करेंगे तब-तब एकजांकी अथवा नृत्य नाटिका की प्रस्तुति अपेक्षित है। नृत्य नाटिकाओं के लिए भारतीय संस्कृति के साहित्यिक महत्त्व के अनेक विषय, महाभारत, रामायण आदि के विषय तथा वर्तमान मानव समाज की समस्याओं के विषय तथा दहेज आदि के विषय भी प्रस्तुत किए जा सकते हैं।

एकांकी के क्षेत्र में हिन्दी में सराहनीय प्रयास हुए हैं। पौराणिक, दार्शनिक, वैज्ञानिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक तथा सामाजिक महत्त्व के एकांकियों का मंचन प्रभावापूर्ण होता हैं परन्तु हास्य-व्यंग्य के माध्यम से भी सामाजिक विकृतियों को उजागर करके दर्शकों में स्वस्थ जीवन मूल्यों का विकास किया जा सकता है।

डॉ. रामकुमार वर्मा के एकांकियों की श्रृंखला में भवनेश्वर प्रसाद, गणेश प्रसाद द्विवेदी, उदयशंकर भट्ट, उपेन्द्रनाथ अश्क, लक्ष्मीनाराण मिश्र, जगदीश चन्द्र माथुर, गोविन्द वल्लभ पंत, भगवतीचरण वर्मा, वृन्दावनलाल वर्मा, सेठ गोविंददास, डॉ. सत्येन्द्र, विष्णु प्रभाकर, डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, श्रीमती विमला लूथरा, अर्जुन चौबे, पृथ्वीनाथ शर्मा, देवेन्द्रनाथ शर्मा, राजेन्द्र कुमार शर्मा, सुमित्रानंद पंत, देवराज दिनेश, हंसकुमार तिवारी, श्रीमती रत्नाकुमारी, चिरंजीत आदि अनेक अत्कृष्ट साहित्यकारों ने रंगमंच के लिए एकांकियों की रचना की है।

जयनाथ नलिन के एकांकी लस्सी का गिलास, देश की मिट्टी, लाल दिन, फिलास्फर, मेहमान, कन्वेंसिंग, सागर तट पर, फिल्मी कहानी, नवाबी सनक, चित्त भी मेरी पट भी मेरी, संवेदना सदन, बाबू उधारचन्द्र, शर्बत सम्मेलन, वर निर्वाचन, मेल मिलाप आदि अनेक ऐसे एकांकी हैं जिनमें खुशामद की आदत, धन का लोभ, भाई भतीजावाद आदि अनेक सामाजिक विकृतियों पर कुठाराघात किया गया है। रंगमंचीय कौशल की दृष्टि से सभी एकांकी सफल हैं।

4.7 समभावी कविताओं का संकलन

समभावी कविताओं का प्रयोग कविताओं के अध्यापन में उपयोगी सिद्ध होता हैं क्योंकि एक कविता की प्रस्तुति में दूसरी कविता को आधार बनाया जा सकता है, प्रस्तावना रूप में उसे प्रस्तुत किया जा सकता है। साथ ही समभावी कविताओं का संकलन शिक्षार्थियों में साहित्य के प्रति अनुराग उत्पन्न करता हैं, उनकी पठन-पाठन के प्रति रुचि उत्पन्न होती हैं तथा उन्हें कविता वाचन आदि के लिए पर्याप्त सामग्री भी प्राप्त हो जाती है। इसलिए समुन्नयन की दृष्टि से समभावी कविताओं का संकलन एक अत्यन्त प्रभावी क्रियाकलाप हैं। उदाहरण के लिए :

किशोर भारती (भाग - 1) की कविता 'देश गान' लें।

इस कविता के लिए निम्नलिखित समभावी कविताओं का संकलन किया जा सकता है :

(क) तन समर्पित, मन समर्पित और यह जीवन समर्पित।
चाहता हूँ देश की धरती, तुझे कुछ और भी दूं।

(ख) हिमालय के आंगन में उसे प्रथम किरणों का दे उपहार।
उषा ने हँस अभिनंदन किया और पहनाया हीरक हार।
जगे हम लगे लगाने विश्व, लोक में फैला फिर आलोक।
व्योन तम पुंज हुआ तब नष्ट, अखिल संसृति हो उठी अशोक।

(ग) जय गान भारत, जनमन अभिमत जन जणतंत्र विधाता।
गौरव भाल हिमाचल उज्जवल हृदय हार गंगाजल।
कटि विंध्याचल, सिंधु चरणतल महिमा शाश्वत गाता।

इसी प्रकार कविता 'मुक्ति की आकांशा' को लें :

चिड़िया को लाख समझाओ
कि पिंजड़े के बाहर

घरती बहुत बड़ी है, निर्मम है
वहाँ हवा में उन्हें
अपने जिस्म की गंध तक नहीं मिलेगी
यूं तो बाहर समुद्र है, नदी है, झरना है
पर पानी के लिए भटकना है
यहाँ कटोरी में भर जल गटकना है ....

इस कविता के भाव साम्य की कविता 'हम पंछी उन्मुक्त गगन के' को लिया जा सकता है :

हम बहता जल पीने वाले,
मर जाएंगे भूखे प्यासे
कहीं भली है कटुक निबौरी
कनक कटोरी की मैदा से।

पुस्तकीय दोहा –

पानी केरा बुदबुदा, अस मानुस की जात।
देखत ही छिप जाएगा, ज्यों तारा परभात।

समभावी दोहा –

कबीर गर्व न कीजिए अस जीवन की आस।
टेसू फूला दिवस दस खंखर भया पलास।

गतिविधि

वर्षा ऋतु से सम्बन्धित सुमित्रानंदन पंत की 'बादल' एवं 'पावस ऋतु थी पर्वत प्रदेश' निराला की 'बादल राग', भवानी प्रसाद मिश्र की 'मेघदूत', केदारनाथ सिंह की 'बादल ओ' जैसे अन्य समभावी कविताओं का संकलन कीजिए।

भाषिक समुन्नयन की दृष्टि से कार्यक्रम

- भाषण प्रतियोगिता – समसामयिक विषयों का चयन कीजिए जिनसे विद्यार्थीयों में आदर्श जीवन मूल्यों का विकास हो सके।
- वाद-विवाद प्रतियोगिता – समसामयिक विषय जिनमें तर्क की पूरी संभावना हो, विषय शिक्षार्थियों के स्तर के अनुकूल हों, विषयवस्तु, भाषा तथा अभिव्यक्ति के आधार पर मूल्यांकन किया जाना चाहिए।
- काव्य-पाठ प्रतियोगिता – भाव, लय, रस आदि की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण कविताओं का पाठ ही अपेक्षित है।
- निबन्ध लेखन प्रतियोगिता – निबन्ध लेखन के लिए सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनैतिक, वैज्ञानिक, दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक एवं जीवन मूल्यपरक विषय चुनने चाहिए।
- एकांकी प्रतियोगिता – एकांकी का चुनाव रंगमंच पर अभिनेयता की दृष्टि से किया जाना चाहिए।

4.8 पाठ्य पुस्तक में प्रयुक्त मुहावरे एवं लोकोक्तियाँ

"मुहावरा" शब्द से तात्पर्य

हर भाषा में मुहावरें उस समाज की संरचना तथा भाषा के अनुसार होते हैं अर्थात् मुहावरों का संबंध किसी भाषा विशेष से होता है।

प्रत्येक मुहावरा किसी विशिष्ट अर्थ की अभिव्यक्ति की क्षमता रखता है। सामान्य अर्थ की प्रतीति कराने वाले वाक्यांश मुहावरों की कोटि में नहीं आ सकते।

मुहावरों का अर्थ शाब्दिक न लेकर किसी विशिष्ट अभिव्यक्ति के अर्थ के रूप में लिया जाना चाहिए। कहने का तात्पर्य यह है कि मुहावरे किसी भाषा विशेष के उन प्रयोगों, वाक्यांशों या पदों के समूह को

कहते हैं जो लक्षित अर्थ तो व्यक्त करते ही हैं साथ ही साथ उस भाषा-भाषी समुदाय की मानसिकता (सोच) को भी प्रतिबिंबित करने में सहायक होते हैं। नीचे कुछ मुहरों के उदाहरण दिए जा रहे हैं। आप पाठ्य पुस्तक में आए मुहावरों का संकलन शिक्षार्थियों को करवाएं।

आंखो का तारा - (बहुत प्यारा)	- वह बालक अपने माता-पिता की आँखों का तारा है।
सिर पर कफन बांधना - (मरने के लिए तैयार होना)	- स्वतंत्रता आन्दोलन में कूदने वाले सिर पर कफन बांध कर निकले थे।
दाँतो तले अंगुली दबाना (बहुत हैरान होना)	- उनकी बातें सुन कर सब दांतों तले अंगुली दबाने लगे।
अंगारे उगलना (क्रोध में कटु वचन बोलना)	- अपने शत्रु को देखते ही वह अंगारे उगलने लगा।
छाती पर मूंग दलना (दु:खी करना)	- जो भाई भाभी तुम्हारे हितैषी हैं, उनकी छाती पर मूंग मत दलो।
काम आना (मारा जाना)	- इस युद्ध में अनेक वीर काम आये।
अंग अंग मुस्काना (बहुत प्रसन्न होना)	- परीक्षा में अपनी सफलता का समाचार सुनकर निशा का अंग-अंग मुस्काने लगा।

"लोकोक्ति" शब्द से तात्पर्य

लोकोक्ति का सीधा अर्थ है - लोक की उक्ति, अर्थात् यह लोक में प्रचलित उक्ति है। विभिन्न प्रकार के अनुभवों, पौराणिक तथा ऐतिहासिक कथाओं, प्राकृतिक नियमों और लोक-विश्वासों आदि पर आधारित चुटीली, सारगर्भित, संक्षिप्त लोक-प्रचलित उक्तियों को लोकोक्ति कहते हैं।

लोकोक्तियों के प्रमुख लक्षण

समय के लंबे फैलाव के बावजूद लोकोक्ति के स्वरूप में कोई परिवर्तन नहीं होता है। व्याकरण के नियम भी लोकोक्ति पर लागू होना आवश्यक नहीं है।

लोकोक्ति अपने आप में पूर्ण होती है। भले ही व्याकरण की दृष्टि से उसका स्वरूप पूरे वाक्य का न हो, किन्तु अभिव्यक्ति की दृष्टि से इसमें परिपूर्णता होती है। लोकोक्तियाँ संक्षिप्त हुआ करती हैं। यह इतनी कसी हुई होती हैं कि इनका कोई भी शब्द बेमानी नहीं होता, जिसे निकाल दिया जा सके। लोकोक्ति ऐसे अनुभवों को समेटती है, जो बहु-जातीय, बहु-देशीय, बहु-क्षेत्रीय और बहु-कालिक होते हैं।

लोकोक्तियाँ सारगर्भित और साभिप्राय होती हैं। इसे लोकोक्ति का प्राणतत्त्व कहा जा सकता है।

लोकोक्तियाँ सत्य का उद्घाटन करने वाली होती है। उनकी कथन शैली आकर्षक होती हैं, जिसमें सजीवता विद्यमान रहती है।

लोकोक्तियों की एक विशेषता उनका लोकप्रिय होना है। वास्तव में यह कथन की उपयोगिता है, जो उसे लोकप्रियता देती है।

लोकोक्तियाँ चुटीली होती हैं। अपने पैनेपन के कारण लोक-मानस में यह ऐसे घंस जाती हैं कि निकल नहीं पाती। यह कारण है कि अपनी किसी बात को सिद्ध करने या प्रभावशाली बनाने के लिए हम किसी लोकोक्ति का ही सहारा लेते हैं। नीचे उदाहरणार्थ कुछ लोकोक्तियाँ दी गई हैं।

- अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता - (अकेला व्यक्ति कुछ भी नहीं कर सकता) - यदि एक व्यक्ति ईमानदार हो तो बेईमानी समाप्त नहीं कर सकता, सच है कि कभी अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता।
- आम के आम गुठलियों के दाम - (एक साधन से अनेक लाभ) - मैंने जितने में पुस्तकें खरीदी थी पढ़ने के पश्चात् उतने में ही बेच दीं, हुए न आम के आम गुठलियों के दाम।
- आसमान से गिरा खजूर पर अटका - (एक के बाद दूसरी विपत्ति में फंसना) - मुकदमें में जीत जाने के पश्चात् उसे रिहा तो कर दिया पर दूसरे वर्ग ने उसे घमकी दी कि उसे जिंदा नहीं छोड़ेगा। यह सचमुच आसमान से गिरा खजूर पर अटका वाली बात हैं।

- आगे कुंआ पीछे खाई – (दोनों ओर मुसीबत) – भाई को मकान बनाने में सहायता करता हूँ तो पत्नी नाराज होती है, यदि पत्नी की बात मानता हूँ तो भाई नाराज होता है। मेरी तो वही स्थिति है कि आगे कुंआ पीछे खाई।
- जाको राखे साइयाँ, मार सके ना कोए – (जिसकी रक्षा ईश्वर करता है उसे कोई मार नहीं सकता) – वह बच्चा तिमंजले मकान से गिरा फिर भी उसे खरोंच तक नहीं आई, सच कहा है कि जाको राखे साइयाँ, मार सके न कोए।

मुहावरों और लोकोक्तियों में अन्तर

मुहावरों में वाक्य की पूर्णता नहीं होती है। जैसे 'नौ दो ग्यारह होना', 'आँख लगना' – इसके विपरीत लोकोक्तियाँ अपने आप में पूर्ण होती हैं। भाषा में प्रयोग की दृष्टि से उनकी अपनी सत्ता सदैव विद्यामन रहती है। जैसे 'आम के आम गुठलियों के दाम' प्रयोग में कुछ घटाया या बढ़ाया नहीं जाता।

मुहावरें जब वाक्य रचना में ढल जाते हैं तब उनमें लिंग, वचन, पुरुष आदि के अनुरूप परिवर्तन आते हैं। किन्तु लोकोक्तियों में इस प्रकार का कोई परिवर्तन नहीं होता है। उदाहरण के लिए दो नमूने देखिए:

1. मुहावरा : 'अंग अंग फूले न समाना'

   वाक्य : नियुक्ति पत्र मिलने पर मोहन अंग अंग फूले न समाया।

2. लोकोक्ति : 'घर का भेदी लंका ढावै'

   वाक्य : नरेश ने ही आयकर विभाग वालों को भाई की अतिरिक्त आय के सम्बन्ध में बताया तभी उसके घर छापा पड़ा है। सच ही कहा गया है, घर का भेदी लंका ढावै।

3. मुहावरों का अंत प्राय: 'ना' से होता है, किन्तु लोकोक्तियों के लिए ऐसी कोई अनिवार्यता नहीं है।

लोकोक्ति में जीवंत अनुभव सा अनुभूत सत्य को व्यक्त किया जाता हैं। जबकि मुहावरे में क्रिया, स्थिति या दिशा की अभिव्यक्ति होती है।

लोकोक्ति के जरिए किसी कथन का समर्थन या खंडन होता है, किन्तु मुहावरे से प्राय: सामान्य क्रिया की पूर्ति होती हैं। मुहावरे कथ्य को रुचि पूर्ण बनाते हैं, किन्तु लोकोक्तियाँ कथ्य की पुष्टि करती हैं।

बोध प्रश्न :

4. निम्नलिखित मुहावरों का अपने बनाए वाक्यों में प्रयोग कीजिए :

   आँखे दिखाना –

   आँखो में धूल झोंकना –

   कान पर जूं न रेंगना –

   खून पसीना एक करना –

   टस से मस न होना –

5. नीचे लिखि लोकोक्तियों को पूर्ण कीजिए :

   1. नाच न जानें ....
   2. होनहार बिरवान के ....
   3. चोर की दाढ़ी में ....
   4. रस्सी जल गई पर ....
   5. घोबी का कुत्ता न ....

4.9 शब्द भंडार वृद्धि के लिए शब्द सूची

शब्द भंडार भाषा के खजाने के समान होता है। जिस प्रकार व्यक्ति के पास पर्याप्त खजाना / धन सम्पत्ति होने पर उसका जीना आसान हो जाता है उसी प्रकार पर्याप्त शब्द भंडार का जानकार व्यक्ति भाषा प्रयोग में सुविधा अनुभव करता है। हिन्दी भाषा में तत्सम, तद्भव, देशी, विदेशी शब्दों के कारण शब्द भंडार अथाह है। विशेषकर संस्कृत जैसी शब्द समृद्धि वाली भाषा से पोषित होने के कारण हिन्दी के पास शब्दों की एक बड़ी शक्तिशाली टकसाल है जिस में उपसर्गो, प्रत्ययों, सन्धि समास आदि के माध्यम से अनन्त

शब्दों का निर्माण किया जा सकता है। संस्कृत के अतिरिक्त अन्य देशी एवं विदेशी भाषाओं से भी शब्द पर्याप्त मात्रा में हिन्दी में आए हैं और आज भी आ रहे हैं। हिन्दी के अपने उपसर्ग, प्रत्ययन, संधि तथा समास भी शब्द भंडार में वृद्धि करने में सक्षम हैं। नीचे हिन्दी के शब्द भंडार की वृद्धि के आधारों की चर्चा की जा रही है।

4.9.1 उपसर्ग

जो शब्दांश शब्द से पूर्व जुड़कर शब्द के अर्थ को परिवर्तित कर देते हैं, उन्हें उपसर्ग कहते हैं। उदाहरणार्थ वन से पूर्व 'उप' उपसर्ग लगकर उपवन शब्द बना जिसका अर्थ वन से भिन्न हैं।

हिन्दी शब्द–रचना में संस्कृत के उपसर्गों की प्रधानता है। संस्कृत के निम्नलिखित उपसर्गों द्वारा हिन्दी में अनेक शब्दों का संवर्धन हुआ है। अव – अवगुण, अति – अतिरिक्त, अधि – अधिपति, दुर् – दुर्बल, नि – निवास, निर् – निरपराध, परा – पराजय, प्र – प्रबल, वि – विदेश, सु – सुरक्षित।

संस्कृत के ही अपभ्रंश रूप में प्रयुक्त उपसर्गों को हिन्दी उपसर्गों की संज्ञा दी जाती हैं। हिन्दी में अनेक शब्दों की रचना हिन्दी उपसर्गो के माध्यम से भी की जाती हैं। उदाहरण देखिए :

अन – अनपढ़, अध – अधपका, नि – निडर, दु – दुपहिया।

कभी कभी एक से अधिक उपसर्गों द्वारा शब्द–रचना की जाती हैं जैसे –

प्रति + उप + कार	–	प्रत्युपकार
सम + आ + लोचना	–	समालोचना
वि + अव + हार	–	व्यवहार
दुर् + वि + अव + हार	–	दुर्व्यवहार

हिन्दी में अव्यय एवं विशेषण भी उपसर्गों के रूप में प्रयुक्त होते हैं। कुछ उदाहरण द्रष्टत्व हैं :

अधः – अधःपतन, अन्तः – अन्तः करण, सह – सहपाठी, स्व – स्वदेश।

बोध प्रश्न :

6. प्रति, सम, वि तथा दुर् उपसर्गों से तीन–तीन नवीन शब्द बनाइए।

....

....

....

....

4.9.2 प्रत्यय

जो शब्दांश शब्दों के पीछे जुड़कर उनके अर्थ को परिवर्तित कर देते हैं उन्हें प्रत्यय कहा जाता है। प्रत्ययों के योग से एक शब्द विभिन्न शब्दों में परिवर्तित हो सकता है।

प्रत्यय दो प्रकार के होते है – कृत तथा तद्धित।

'कृत' प्रत्यय वे हैं जो क्रिया पदों के पीछे लगते हैं। इन्हें कृदन्त कहा जा ता है, उदाहरण देखिए :

क्रियापद	**प्रत्यय**	**शब्द**
भिक्ष	उक	भिक्षुक
नै	अक	नायक
नी	ता	नेता
दा	ता	दाता
तैरना	अक	तैराक

संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण शब्दों के साथ मिलकर जो प्रत्यय नए शब्दों की रचना करते हैं, उन्हें तद्धित प्रत्यय कहा जाता हैं। ऐसे प्रत्ययों से निर्मित शब्द देखिए :

शब्द	प्रत्यय	नवनिर्मित शब्द
कृपा	आलु	कृपालु
संसार	इक	सांसारिक
प्रभु	ता	प्रभुता
महत्	त्व	महत्त्व
पूजा	आरी	पुजारी

बोध प्रश्न :

7. निम्नलिखित शब्दों के प्रत्यय छांटिए।

   शेरनी, देवरानी, पुत्री, नागिन, मिलावट, अमरता, गुरुत्व, पारलौकिक, जातीय, दयालु।

8. आलु, इक, ता, त्व, आरी, तद्धित प्रत्ययों से नए शब्द बनाइए।

4.9.3 सन्धि

समीपस्थ दो वर्णों के मेल से जो परिवर्तन होता है वह सन्धि कहलाता है। विभिन्न वर्णो के मेल के आधार पर सन्धि के तीन वर्ग हैं **:**

1. स्वर सन्धि 2. व्यंजन सन्धि 3. विसर्ग सन्धि

1. स्वर सन्धि

दो स्वरों के योग से जो परिवर्तन होता है उसे स्वर सन्धि कहते है। स्वर सन्धि के निम्नलिखित पांच भेद हैं **:**

दीर्घ सन्धि

जब प्रथम शब्द के अन्त में ह्स्व या दीर्घ (अ, आ, इ, ई, उ, ऊ) तथा द्वितीय शब्द के आरम्भ में वही ह्स्व या दीर्ध स्वर हो तो क्रमश**:** आ, ई, ऊ हो जाता है तब दीर्घ सन्धि होती है।

प्रधानाध्यापक – प्रधान + अध्यापक (अ + अ – आ)

शिवालय – शिव + आलय (अ + आ – आ)

मुनीश – मुनि + ईश (इ + ई – ई)

लघूर्मि – लघु + उर्मि (उ + उ – ऊ)

गुण सन्धि

प्रथम शब्द के अन्त में ह्स्व या दीर्घ 'अ' तथा द्वितीय शब्द के आरम्भ में ह्स्व या दीर्घ इ, उ, ऋ हो तब क्रमश**:** ए, ओ तथा अर् हो जाता है। उसे गुण सन्धि कहा जाता है **:**

सुर + ईश – सुरेश (अ + ई – ए)

महा + ईश – महेश (आ + ई – ए)

महा + उत्सव – महोत्सव (आ + उ – ओ)

देव + ऋषि – देवर्षि (अ + ऋ – अर्)

वृद्धि सन्धि

प्रथम शब्द के अन्त में ह्स्व या दीर्घ 'अ' हो तथा द्वितीय शब्द के आरम्भ में ए, ऐ, ओ, औ, हो तो क्रमश**:** ऐ एवं औ हो जाता है। इसे वृद्धि सन्धि कहते हैं।

मत + एक्य – मतैव्य (अ + ए – ऐ)

तथा + एव – तथैव (आ + ए – ऐ)

परम + औषध – परमौषध (अ + ओ – औ)

यण सन्धि

ह्स्व अथवा दीर्घ इ, उ एवं ऋ के पश्चात् असमान स्वर आए तब इन्हें क्रमशः य, व तथा र हो जाने के कारण यण सन्धि बनती है।

यदि + अपि – यद्यपि (इ + अ – य)

इति + आदि – इत्यादि (इ + आ – या)

सु + आगत – स्वागत (उ + आ – वा)

मातृ + आज्ञा – मात्राज्ञा (ऋ + आ – रा)

प्रति + एक – प्रत्येक (इ + ए – ये)

अनु + एषण – अन्वेषण (उ + ए – वे)

अयादि सन्धि

ए, ऐ, ओ, औ के पश्चात् कोई स्वर आए तो क्रमशः इन्हें क्रमशः अय्, आय्, अव्, आव हो जाने से अयादि सन्धि बनती है।

ने + अन – नयन (ए + अ – अय)

नै + अक – नायक (ऐ + अ – आय)

भो + अन – भवन (ओ + अ – अव)

पौ + अक – पावक (औ + अ – आव)

नौ + इक – नाविक (औ + इ – आव)

पो + इत्र – पवित्र (ओ + इ – अव)

भौ + उक – भावुक (औ + उ – आव)

2. व्यंजन सन्धि

व्यंजन के साथ स्वर अथवा व्यंजन का संयोजन होने से जो परिवर्तन होता है वह व्यंजन सन्धि कहलाता है। सन्धि के प्रमुख नियम निम्नलिखित हैं **:**

1. वर्गो के प्रथम वर्ण से आगे स्वर अथवा तृतीय या चतुर्थ वर्ण या य, र, ल, व का मेल हो तो प्रथम वर्ण के स्थान पर उसी वर्ग का तृतीय वर्ण हो जाता है।

   सत् + आनंद – सदानन्द (त् + आ – दा)

   वाक् + ईश – वागीश (क् + ई – गी)

   जगत् + ईश – जगदीश (त् + ई – दी)

   षट् + आनन – षडानन (ट् + आ – डा)

2. तवर्ग के बाद यदि चवर्ग आए तो उस के स्थान पर चवर्ग हो जाता है।

   उत् + चारण – उच्चारण (त् + च – च्च)

3. वर्गो के प्रथम वर्ण के पश्चात् यदि किसी वर्ग का पंचम वर्ण हो तो प्रथम वर्ण के स्थान पर उसी वर्ग का पंचम वर्ण हो जाता है।

   जगत् + नाथ – जगन्नाथ (त् + ना – न्ना)

4. स् के साथ श या च का मेल होने पर स् का श् हो जाता है।

   दुस् + चरित्र – दुश्चरित्र

5. स के बाद ट् वर्ग का कोई वर्ण हो तो स् का ष् हो जाता है।

   दुस् + ट – दुष्ट

6. किसी स्वर के साथ छ का मेल होने पर छ का च्छ हो जाता है।

   आ + छादित – आच्छादित

7. प्रथम शब्द के अन्त में ष् तथा दूसरे शब्द के आरंभ में त् या थ् हो तो त् का ट् तथा थ् का ठ् हो जाता है।

आविष् + त - आविष्ट

8. वर्गों के प्रथम वर्ण से परे न् या म् वर्ण हो तो वर्ग के प्रथम वर्ण के स्थान पर उसी वर्ण का पंचम वर्ण हो जाता है।

वाक् + मय - वाङ्मय

षट् + मास - षण्मास

9. त् के पश्चात् यदि ह हो तो त् का द् तथा ह् का ध् हो जाता है।

उत् + हार - उद्धार

उत् + हरण - उद्धरण

10. म् के पश्चात् पांचो वर्गों का कोई भी व्यंजन हो तो म् के स्थान पर उस वर्ण के वर्ग का अन्तिम व्यंजन हो जाता है।

किम् + चित - किञ्चत्

3. विसर्ग सन्धि

विसर्ग (:) के साथ किसी स्वर या व्यंजन के संयोग से जो परिवर्तन होता है उसे विसर्ग सन्धि कहते हैं।

विसर्ग के पहले अ, उसके पश्चात् वर्गों के तृतीय, चतुर्थ, पंचम वर्ण अथवा य, र, ल, व, ह, में से कोई वर्ण हो तो अ तथा विसर्ग का 'ओ' हो जाता है।

अधः + गति - अधोगति

वयः + वृद्ध - वयोवृद्धि

विसर्ग से पूर्व अ तथा ओ को छोड़कर कोई स्वर हो और तत्पश्चात् 'र' हो तो विसर्ग का लोप हो जाता है और स्वर दीर्घ हो जाता है।

निः + रस - नीरस

विसर्ग से पूर्व कोई स्वर हो तथा उसके पश्चात् त् या स् हो तो विसर्ग का स् हो जाता है।

नमः + ते - नमस्ते

बोध प्रश्न :

9. निम्नलिखित में सन्धि करिए :

हरि + ईश, महा + ऋषि, विवाह + उत्सव, वाक् + देवी, शरत् + चन्द्र, मनः + रथ

4.9.4 समास

दो या दो से अधिक शब्दों (पदों) के मेल को समास कहते हैं। पदों के मेल से बने ऐसे शब्दों को समस्त पद कहते हैं। समस्त पद को पुनः अलग-अलग करने को विग्रह करना कहते है। किसी समस्त पद में पूर्व पद प्रधान होता है जैसे 'यशाशक्ति' में 'यथा' तथा किसी में उत्तर पद प्रधान होता है जैसे मालगाड़ी में गाड़ी। कहीं दोंनो पद प्रधान होते हैं जैसे 'माता-पिता' में माता और पिता। कहीं कोई अन्य पद भी प्रधान हो सकता है यथा 'दशानन'। यहाँ 'दश' और 'आनन' दोनों में से कोई भी पद प्रधान न होकर अन्य पद अर्थात् 'रावण' प्रधान हो गया है। अतः पदों की प्रधानता के आधार पर ही समासों का वर्गीकरण किया जाता है। समास के चार भेद हैं।

अव्ययीभाव

जिस समास में पहला पद प्रधान हो तथा समूचा पद क्रिया-विशेषण अव्यय हो, उसे अव्ययी भाव समास कहते हैं। उदाहरण के लिए :

समस्त पद	**विग्रह**
प्रतिदिन	हर दिन / दिन-दिन

यथाशक्ति	शक्ति के अनुसार
रातों-रात	रात ही रात में
यथावसर	अवसर के अनुसार

तत्पुरुष समास

जिस समास में दूसरा पद प्रधान हो तथा पहले पद के साथ कर्ता तथा संबोधन विभक्ति छोड़कर कोई भी अन्य विभक्ति चिह्न जुड़ा हो, उसे तत्पुरुष समास कहते हैं। उदाहरण के लिए :

राजपुत्र	राजा का पुत्र
वनवास	वन में वास
मालगाड़ी	माल के लिए गाड़ी
गृहप्रवेश	गृह में प्रवेश

द्वन्द्व समास

जिस समास में दोनों पद प्रधान होते हैं उसे द्वन्द्व समास कहते हैं। विग्रह करने पर संयोजक शब्द 'और' सामने आता है। जैसे :

भाई-बहन	भाई और बहन
माता-पिता	माता और पिता
दिन-रात	दिन और रात
सुख-दुख	सुख और दुःख

बहुव्रीहि

जिस समास में दोनों पद आपस में मिलकर दोनों से भिन्न अर्थ वाला पद बनाते हैं उसे बहुव्रीहि समास कहते है। जैसे :

लम्बोदर	लम्बा है उदर जिसका अर्थात् गणेश
पीताम्बर	पीले हैं वस्त्र जिसके अर्थात् विष्णु
दशानन	दश है आनन जिसके अर्थात् रावण

कुछ वैयाकरण निम्नलिखित दो समासों को तत्पुरुष समास के अंतर्गत मानते हैं कुछ इन्हें स्वतंत्र भेद मानते हैं उनकी दृष्टि में समास के छह भेद होते हैं।

कर्मधारय

जिस समास में विशेषण-विशेष्य या उपमेय-उपमान के योग से समस्त पद बनता है उसे कर्मधारय समास कहते हैं। इस में उत्तर पद प्रधान होता है। इसमें अधिकतर पहला शब्द विशेषण और दूसरा विशेष्य होता है जैसे :

नील कमल	नीला है जो कमल
चन्द्रमुख	चन्द्र के समान मुख
कुपुत्र	बुरा पुत्र

द्विगु

जिस समास में पहला पद संख्यावाचक विशेषण होता है तथा समस्त पद समुदायबोधक होता है, उसे द्विगु समास कहते हैं, जैसे :

त्रिलोक	तीन लोकों का समूह
सप्तर्षि	सात ऋषियों का समूह
पंचवर्षीय	पांच वर्षों का समूह

गतिविधि : किसी एक गद्यपाठ में आए सामासिक शब्द छांटिए और उनका विग्रह कीजिए।

4.10 शब्दकोश तथा अन्य संदर्भ ग्रंथों से अपेक्षित सामग्री ढूंढने का कौशल

साहित्य पुस्तकों में अनेक कठिन शब्द अथवा संदर्भ होते हैं, जिनका उपयुक्त ज्ञान प्राप्त करने के लिए शब्दकोश अथवा अन्य अनेक संदर्भ ग्रंथ यथा साहित्य शास्त्र ग्रंथ, हिन्दी साहित्य का इतिहास, चरित्र कोश, मुहावरा कोश, लोकोक्ति कोश देखने की आवश्यकता होती है।

आइए, शब्दकोश को देखने की प्रविधि ज्ञात की जाए। आप जानते है कि हिन्दी एक ध्वन्यात्मक भाषा है। ध्वन्यात्मक भाषा का यह नियम है कि भाषा के उच्चारण एवं लेखन में परस्पर साम्य होता है। जो ध्वनि जिस स्थान पर लिखी जाती हैं, उसी स्थापर उच्चरित भी होती है। हिन्दी में 'इ' ध्वनि के उच्चारण एवं लेखन की स्थिति में अन्तर है क्योंकि जब हम 'किसी' बोलते हैं तब लिखित में 'कीसी' नहीं लिखते।

अकारादि क्रम से शब्दकोश का अवलोकन करते समय अ, अं, अँ, अ, आ, आं, आँ, ओं, इ, इं, ई, इ इसी क्रम में ह, हं, हँ, ह को उनकी मात्राओं के क्रम का ध्यान रखते हुए देखना चाहिए। आप सोचरहे होंगे कि यहां अ, आ, इ, ह दो बार दर्शाए गए हैं एक बार प्रारम्भ में एक बार अंत में। वस्तुतः प्रारम्भ में वर्ण का केवल परिचय दिया जाता है। वर्ण से बने अक्षर अंत में दिए गए वर्ण से प्रारम्भ किए जाते है। अपने शब्दकोश देख कर इस प्रक्रिया को समझने का प्रयास कीजिए। आप स्वर तथा व्यंजनों की संख्या एवं उनके क्रम से भलीभांति परिचित हैं उसी क्रम से शब्दों को देखिए। शब्दकोश का प्रयोग करने की कला अपने विद्यार्थियों को भी सिखाइए। शिक्षार्थियों को यह बताना आवश्यक है कि वे शब्दकोश में जो शब्द देखने लगे हैं उसे ही देखें अन्यत्र न भटकें अन्यथा उनका बहुत सा समय व्यर्थ चला जाएगा। माध्यमिक कक्षाओं में शब्दकोश-निर्माण कौशल विद्यार्थियों को सिखाने की प्रविधि निम्नलिखित हैं :-

1. पाठ्य पुस्तक में दिए गए महत्त्वपूर्ण शब्दों की सूची बनाइए।
2. शब्दों को अलग-अलग कार्डों पर लिख लीजिए।
3. कार्डों को अकारादि क्रम से लगाइए।
4. क्रम से लगाए हुए कार्डों की सामग्री को अपनी अभ्यास पुस्तक में लिखिए।
5. शब्दकोश का पुनः अध्ययन कीजिए। यदि कोई त्रुटि हो तो शुद्ध कीजिए। आपका सब्दकोश तैयार हो जाएगा।

संदर्भ ग्रंथ :

1. संस्कृत शब्दकोश - वामन शिवराम आप्टे
2. हिन्दी शब्दकोष - रामचन्द्र वर्मा
3. ब्रजभाषा सूर कोश - विश्वविद्यालय हिन्दी प्रकाशन, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
4. हिन्दी-अंग्रेजी शब्दकोष - तिवारी एवं चतुर्वेदी
5. अन्य कोई भी कोश यथा मुहावरा कोश, लोकोक्ति कोश आदि।

गतिविधि

आप एक शब्द कोश लीजिए तथा उसके अनुसार किसी एक पाठ्यपुस्तक के आधार पर शब्दकोश का निर्माण कीजिए।

4.11 सारांश

भाषा का व्याकरणिक ज्ञान, भाषा कौशलों का विकास तथा पाठ्य पुस्तक का सामान्य अध्यापन भाषा-शिक्षण के लिए पर्याप्त नहीं है। भाषा ज्ञान को व्यावहारिक तथा वास्तविक बनाने के लिए शिक्षक तथा शिक्षार्थी दोनों को विशेष प्रयास करना अपेक्षित है। यह प्रयास ही समुन्नयन कार्य कहलाता है। अध्यापक पढ़ाते समय विशेष कार्यकलापों का आश्रय लेकर तथा विषय का विस्तृत ज्ञान देकर छात्रों के भाषा-अधिकार को समृद्ध बनाता है। शिक्षार्थी स्वयं भाषा की गहराइयों को तथा विषयवस्तु के गंभीर पक्षो को साहित्य के अध्ययन से समझने का प्रयास करता है तथा शब्द कोष आदि के प्रयोग से अपने ज्ञान को विस्तृत करता है। शिक्षक, शिक्षार्थियों को सम्बन्ध साहित्य पढ़ने की प्रेरणा देकर तथा विविध साहित्य-प्रतियोगिताओं, एकांकी नाटकों के अभिनय तथा संगीत नाटिकाओं के आयोजन से शिक्षार्थियों की साहित्य

में रुचि जागृत कर सकता है। इस अकाई में शिक्षक के लिए समुन्नयन कार्य की सामग्री प्रस्तुत की गई है। हिन्दी साहित्य के क्रमिक विकास की चर्चा की गई है। वीरगाथा काल, भक्तिकाल, रीतिकाल और आधुनिक काल। इन चार कालों में हिन्दी साहित्य के विकास को विभक्त किया गया है।

शिक्षार्थियों को पाठ में आई अत:कथाओं का परिचय होने से विषय सरलता से समझ आ जाता है। कुछ अंत: कथाओं का परिचय इकाई में दिया गया है। शिक्षार्थियों को विद्यालय के विभिन्न विशेष-अवसरों पर एकांकी नाटकों के अभिनय के लिए तैयार किया जाना चाहिए। कविता पाठ की समझ एवं आनन्दाभूति के लिए समभावी कविताओं का संकलन समुन्नयन कार्य के अंतर्गत आता है। कुछ समभावी कविताओं का संकलन करके दिखाया गया है। मुहावरों, लोकोक्तियों का महत्त्व एवं अंतर स्पष्ट करके दोनों के उदाहरण दिए गए है। हिन्दी के शब्द भंडार की वृद्धि छात्रों के भाषा ज्ञान के लिए आवश्यक है। शब्द निर्माण के लिए उपसर्ग, प्रत्यय, संधि एवं समास की जानकारी दी गई है तथा उदाहरण भी दिए गए हैं। शब्दकोश देखना तथा निर्माण करना समुन्नयन कार्य के अंतर्गत सिखाया गया है।

4.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. भाषिक एवं साहित्यिक योग्यताओं की समृद्धि के लिए समुन्नयन कार्य से -
   - मौखिक अभिव्यक्ति की दक्षता का विकास होता है,
   - विषय सामग्री के चयन, संयोजन एवं प्रस्तुतीकरण की दक्षता विकसित होती है,
   - लिखित अभिव्यक्ति के विभिन्न रूपों की दक्षता का विकास होता है,
   - सृजनात्मकता में वृद्धि होती है, तथा
   - साहित्यिक सौंदर्य तत्त्वों के बोध व सराहना करने की क्षमता में बढ़ोतरी होती है।
2. - भक्तिभाव की प्रधानता,
   - मानवीय गुणों का साहित्य में समावेश तथा रूढ़ियो का खण्डन,
   - गुरु की महत्ता मे विश्वास।
3. आधुनिक काल की विभिन्न प्रवृत्तियां तथा उनकी विशेषताएं निम्नलिखित हैं -
   - भारतेन्दु युग - नई चेतना का उद्‌भव, देशोद्धार, राष्ट्रप्रेम व अतीत गौरव का वर्णन।
   - द्विवेदी युग - खड़ी बोली की काव्य-भाषा रूप में प्रतिष्ठा, तत्सम शब्दावली का प्रयोग, सामाजिक विषयों का चयन
   - छायावाद - सूक्ष्म भावनाओं का निरूपण, मुक्तात्मक गीत शैली, नए लाक्षणिक प्रतीकों का प्रयोग। प्रकृति का मानवीय रूप में चित्रण।
   - प्रगतिवाद - राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक शोषण से मुक्ति का स्वर प्रबल। साम्यवादी विचारधारा का प्रभाव।
   - प्रयोगवाद - भाव, विचार, छंद, प्रतीक आदि सभी दृष्टियों से नवीनता।
4. - राजकुमार बड़ा क्रोधी स्वभाव का व्यक्ति है वह जरा-तरा सी बात पर आंखे दिखाने लग जाता है।
   - आज हर व्यक्ति दूसरे की आंखों में धूल झोंक कर अपना काम निकालना चाहता है।
   - मैने केवल कृष्ण को कई बार अपनी पुस्तक लौटाने के लिए कहा पर उस के कान पर जूं न रेंगी।
   - किसान अनाज उगाने के लिए खून और पसीना एक करता है।
   - दीन दयाल को कई बार अपना निर्णय बदलने को कहा पर वह टस से मस न हुआ।
5. 1. नाच न जाने आंगन टेढा।
   2. होनहार बिरवान के होत चीकने पात।
   3. चोर की दाढ़ी में तिनका।

4. रस्सी जल गई पर बल न गया।

5. धोबी का कुत्ता न घर का न घाट का।

6. – प्रतिवेदन, प्रतिकार, प्रतिकूल

– सामादर, समावेश, समाहित

– विशेष, विकार, विगत

– दुर्बल, दुर्मुख, दुराचार

7. नी, आनी, ई, इन, आवट, ता, त्व, इक , ईय, आलु

8. दयालु, व्यापारिक, लघुता, देवत्व, भिखारी

9. हरीश, महर्षि, विवाहोत्सव, वाग्देवी, शरच्चन्द्र, मनोरथ

4.11 उपयोगी पुस्तकें

त्रिपाठी, विश्वनाथ : हिन्दी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास, रा.शै.अनु.प्र. परिषद, नई दिल्ली

रा.शै.अनु.प्र.परिषद, नई दिल्ली : हिन्दी व्याकरण और रचना

श्रीवास्तव, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद : हिन्दी शिक्षण, बी–147, अमर कालोनी, लाजपत नगर, नई दिल्ली–24।

सिंह, निरंजन कुमार : माध्यमिक विद्यालयों में हिन्दी शिक्षण, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।

श्री वास्तव, डॉ. पुष्पलता :

और वर्मा, डॉ. राजकुमार : हिन्दी एकांकी, पराग प्रकाशन, दिल्ली–110 024

अंग्रेजी समानक शब्द

अंक प्रभार	–	Weightage
अंतर्दृष्टि	–	Insight
अनुकरण	–	Imitation
अनुप्रयुक्त अनुसंधान	–	Applied Research
अभिकल्प	–	Design
अभ्यनुकूलन	–	cÅonditioning
आख्या	–	Report
उदात्तीकरण	–	Sublimation
उपागम	–	Approach
एकल समूह अभिकल्प	–	Single Group Design
क्रियात्मक परिकल्पना	–	Working Hypothesis
क्रियात्मक शोध	–	Action Research
चक्रसमूह अभिकल्प	–	cÅompound Group Design
जाँच सूची	–	cÅheck List
निदानात्मक परीक्षण	–	Diagnostic Test
निबन्धात्मक प्रश्न	–	Essay Type Question
नियन्त्रित समूह अभिकल्प	–	cÅontrolled Group Design
निर्धारण मापनी	–	Rating Scale
न्यादर्श	–	Sample
पठन अभिरुचि	–	Reading Interest
प्रत्यभिज्ञान	–	Recognition
प्रयत्न एवं त्रुटि	–	Trial and Error
प्रयोगात्मक समूह	–	Experimental Group
प्रत्यास्मरण	–	Recall
प्रश्नावली	–	Questionnaire
प्रभार	–	Weightage
प्रेक्षण	–	Observation
बहुविकल्पी	–	Multiple cÅhoice
मातृभाषा	–	Mother Tongue
मिलान पद	–	Matching Type
मूलभूत शोध	–	Fundamental Research
लघूत्तर प्रश्न	–	Short Answer Type Question
वस्तुनिष्ठ प्रश्न	–	Objective Type Question
वस्तुनिष्ठता	–	Objectivity
विभेदीकरण	–	Discrimination
विश्वसनीयता	–	Reliability
वैद्य	–	Valid

वैधता	–	Validity
व्यक्तिनिष्ठता	–	Subjectivity
शोध रूपरेखा	–	Research Synopsis
संचयी आलेख	–	cÅumulative Record
समानान्तर समूह अभिकल्प	–	Parallel Group Design
समुन्नयन कार्य	–	Enrichment Work
सामान्यीकरम	–	Generalisation
साक्षात्मकार	–	Interview
सीमांकन	–	Delimitaion
सुधारात्मक शिक्षण	–	Remedial Teaching

TOTES